राजस्थान के संग्रहालय एवं अभिलेखागार

डॉ. मोहनलाल गुप्ता



संग्रहालय एवं अभिलेखागार किसी भी नृवंश, देश, प्रांत अथवा नगर के इतिहास, संस्कृति, विज्ञान, कला, लेखन आदि विभिन्न क्षेत्रों में हुए विकास को दिखाने वाला विश्वसनीय दर्पण है। यह दर्शक के समय, श्रम एवं धन की बचत करता है, उसकी बौद्धिक उत्सुकता को परिष्कृत करता है एवं जिज्ञासाओं को शांत करता है। वर्तमान युग में संग्रहालय, सम्पूर्ण विश्व में पर्यटकों के आकर्षकण का मुख्य केन्द्र बनते जा रहे हैं।

विश्व भर के अनेक देशों से 1 करोड़ से अधिक पर्यटक प्रतिवर्ष भारत आते हैं। विदेशी पर्यटक भारत की आय में 27 बिलियन अमरीकी डॉलर का योगदान करते हैं। यह योगदान भारत के सकल घरेलू उत्पाद में 6.88 प्रतिशत का होता है। प्रत्येक विदेशी पर्यटक भारत में एक-दो अथवा कुछ संग्रहालयों का अवलकोन अवश्य करता है। इस कारण संग्रहालय विदेशी मुद्रा अर्जित करने के सशक्त एवं विश्वसनीय स्रोत बनते जा रहे हैं।

कहा जा सकता है कि संग्रहालय, विदेशी पर्यटकों के लिए सच्चे राजदूत का काम करते हैं। विदेशी पर्यटकों के साथ-साथ देशी पर्यटक, इतिहास, कला एवं विज्ञान के विद्यार्थी, शिक्षक एवं जनसाधारण भी अपने जीवन में संग्रहालयों का भ्रमण एवं अवलोकन अवश्य करते हैं। संग्रहालयों को देखने से ज्ञान समृद्ध होता है और यह एक अनूठा अनुभव भी होता है। वर्तमान समय के कई महान नगर अपने श्रेष्ठ संग्रहालयों के कारण विश्व भर में जाने जाते हैं।

मुझे आशा है प्रस्तुत पुस्तक शिक्षकों, शोधार्थियों, विद्यार्थियों, पर्यटकों एवं विभिन्न वर्गों के पाठकों के लिए उपयोगी सिद्ध होगी।

- डॉ. मोहनलाल गुप्ता





राजस्थान के संग्रहालय एवं अभिलेखागार

डॉ. मोहनलाल गुप्ता

राजस्थानी ग्रन्थागार, जोधपुर

प्रकाशक :

राजस्थानी ग्रन्थागार

प्रकाशक एवं वितरक

प्रथम माला, गणेश मन्दिर के सामने,
सोजती गेट के बाहर, जोधपुर (राज.)
फोन : 0291-2657531, 2623933 (O)
E-mail : info@rgbooks.net
Web : www.rgbooks.net

प्रथम संस्करण : 2022

ISBN : 978-93-91446-31-4

मूल्य : ₹ 700.00 (सात सौ रुपये मात्र)

राजस्थानी ग्रन्थागार के लिए एम.एस. कम्प्यूटर्स द्वारा टाइपसेटिंग

मुद्रक: नागणेचियां ऑफसेट प्रिण्टर्स, जोधपुर

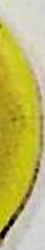
Rajasthan Ke Sangrahalaya Evam Abhilekhagar

by - **Dr. Mohanlal Gupta**

Publisher - **Rajasthani Granthagar**, Sojati Gate, Jodhpur (Raj.)

First Edition 2022 • **Price Rupees : 700.00**

माननीय श्री विपिनचन्द्रजी पाठक के लिए।



अनुक्रमणिका

कोटा संभाग के संग्रहालय

जयपुर संभाग के संग्रहालय

जोधपुर संभाग के संग्रहालय

बीकानेर संभाग के संग्रहालय

भरतपुर संभाग के संग्रहालय

राजस्थान के अभिलेखागार

भूमिका

संग्रहालय एवं अभिलेखागार किसी भी नृवंश, देश, प्रांत अथवा नगर के इतिहास, संस्कृति, विज्ञान, कला, लेखन आदि विभिन्न क्षेत्रों में हुए विकास को दिखाने वाला विश्वसनीय दर्पण है। यह दर्शक के समय, श्रम एवं धन की बचत करता है, उसकी बौद्धिक उत्सुकता को परिष्कृत करता है एवं जिज्ञासाओं को शांत करता है। वर्तमान युग में संग्रहालय, सम्पूर्ण विश्व में पर्यटकों के आकर्षण का मुख्य केन्द्र बनते जा रहे हैं।

विश्व भर के अनेक देशों से 1 करोड़ से अधिक पर्यटक प्रतिवर्ष भारत आते हैं। विदेशी पर्यटक भारत की आय में 27 बिलियन अमरीकी डॉलर का योगदान करते हैं। यह योगदान भारत के सकल घरेलू उत्पाद में 6.88 प्रतिशत का होता है। प्रत्येक विदेशी पर्यटक भारत में एक-दो अथवा कुछ संग्रहालयों का अवलोकन अवश्य करता है। इस कारण संग्रहालय विदेशी मुद्रा अर्जित करने के सशक्त एवं विश्वसनीय स्रोत बनते जा रहे हैं।

कहा जा सकता है कि संग्रहालय, विदेशी पर्यटकों के लिए सच्चे राजदूत का काम करते हैं। विदेशी पर्यटकों के साथ-साथ देशी पर्यटक, इतिहास, कला एवं विज्ञान के विद्यार्थी, शिक्षक एवं जनसाधारण भी अपने जीवन में संग्रहालयों का भ्रमण एवं अवलोकन अवश्य करते हैं। संग्रहालयों को देखने से ज्ञान समृद्ध होता है और यह एक अनूठा अनुभव भी होता है। वर्तमान समय के कई महानगर अपने श्रेष्ठ संग्रहालयों के कारण विश्व भर में जाने जाते हैं।

राजस्थान में प्रतिवर्ष लगभग 15 लाख विदेशी एवं 4 करोड़ स्वदेशी पर्यटक आते हैं। इन पर्यटकों की सुविधा के लिए पूरे राज्य में सरकारी क्षेत्र में 18 संग्रहालय स्थापित किए गए हैं। अनेक निजी संस्थाएं, व्यक्ति एवं परिवार भी अपने संग्रहालयों का संचालन करते हैं। इस पुस्तक में इन संग्रहालयों में संग्रहित सामग्री के साथ-साथ उनकी विशेषताओं को भी समाहित करने का प्रयास किया गया है।

पाठकों की सुविधा के लिए पुस्तक के प्रारंभ में संग्रहालय की अवधारणा का विकास, आदिम संग्रहालयों के चिह्न, परग्रही जीवों द्वारा छोड़े गए संग्रहालय, राजस्थान में संग्रहालयों की स्थापना का इतिहास तथा राजस्थान के संग्रहालयों की आधारभूत सामग्री का परिचय दिया गया है।

अभिलेखागारों का भ्रमण एवं अवलोकन प्राय: शोधार्थियों द्वारा किया जाता है।

विश्व के बहुत से देशों के शोधार्थी प्रतिवर्ष भारत आते हैं। वे विश्व के प्राकृतिक इतिहास, कला एवं संस्कृति के विविध पक्षों पर शोध करते हैं। भारत के अनेक राज्यों के शोधार्थी भी प्रतिवर्ष राजस्थान के अनेक अभिलेखागारों का भ्रमण करते हैं तथा यहाँ कई दिन रुककर अध्ययन एवं शोधकार्य करते हैं। इसलिए पुस्तक में राजस्थान के अभिलेखागारों को भी पर्याप्त स्थान देने का प्रयास किया गया है।

जहाँ राज्य के प्राच्य विद्या प्रतिष्ठानों में प्राचीन पाण्डुलिपियों, चित्रमालाओं, बीजक एवं यंत्रों को संग्रहित किया गया है, वहीं राजस्थान राज्य अभिलेखागार एवं उसकी शाखाओं में रियासती दस्तावेजों, बहियों आदि को रखा गया है। राजस्थान के ठिकाना अभिलेख विश्व भर में सबसे अनूठे हैं। उन्हें भी इस पुस्तक में समेटने का प्रयास किया गया है। साथ ही बहुत से व्यक्तियों एवं परिवारों द्वारा भी प्राचीन एवं मध्यकालीन अभिलेखों का संग्रहण किया गया है। प्रस्तुत पुस्तक में उनका भी परिचय दिया गया है।

आशा है यह पुस्तक शिक्षकों, शोधार्थियों, विद्यार्थियों, पर्यटकों एवं विभिन्न वर्गों के पाठकों के लिए उपयोगी सिद्ध होगी।

– डॉ. मोहनलाल गुप्ता
63, सरदार क्लब योजना
वायुसेना क्षेत्र, जोधपुर

अध्याय – 1

संग्रहालय की अवधारणा का विकास

जब भी मनुष्य में यह समझ विकसित हुई होगी कि अपने द्वारा संचित ज्ञान को उसके प्रमाणों, चिह्नों एवं प्रतीकों के साथ, भविष्य में आने वाली पीढ़ियों के लिए सहेज कर रखा जाए, उसी समय संग्रहालय की भी नींव पड़ी होगी।

आदिम संग्रहालय एवं चित्रशालाएं

आदिम युगीन शैल-चित्रों को संग्रहालयों अथवा चित्रशालाओं का सबसे प्रारंभिक रूप माना जा सकता है। भारत के विभिन्न प्रांतों में स्थित पर्वतीय गुफाओं में ये शैल-चित्र देखने को मिलते हैं जिनमें पशु-पक्षी, मानव, शिकारी, खेत आदि का चित्रण किया गया है। जम्मू-काश्मीर राज्य के श्रीनगर की मदानी मस्जिद में चट्टान के एक टुकड़े पर 5000 साल पुराने भित्ति चित्र मिले हैं, जिनमें एक ओर तारे बने हुए हैं तथा दूसरे छोर पर ड्रैगन जैसा सिर है। इस स्थान का मूल भित्तिचित्र धुंधला पड़ चुका है, किंतु उसकी एक प्रति कश्मीर विश्वविद्यालय में सहेजकर रखी गई है। इस भित्तिचित्र में भारतीय खगोल की एक दुर्लभ घटना का चित्रांकन किया गया है तथा इसमें दो सूर्य एक साथ दिखाए गए हैं। इस भित्तिचित्र में दिखाई दे रहा दूसरा सूर्य वास्तव में एक सुपरनोवा है, जो किसी पुराने तारे के टूटने से उत्पन्न हुई ऊर्जा होती है। भीषण विस्फोट के बाद यह कई दिनों तक चमकदार दिखाई देता है, जो दूसरे सूर्य के समान लगता है। इस चित्र में तारों के साथ सूर्य दिखाने का आशय है कि यह सुपरनोवा तब भी चमक रहा था, जब रात्रि में तारे चमक रहे थे।

राजस्थान में शेखवाटी क्षेत्र के अजीतगढ़, डोकन, सोहनपुरा, गुढागौड़जी में शैलचित्र खोजे गए हैं। रावतभाटा से 33 किलोमीटर दूर दर्रा अभ्यारण्य में तिपटिया नामक स्थान पर प्रागैतिहासिक काल के शैल-चित्र मिले हैं। धरती से लगभग 500 फुट ऊँचा तीन मंजिल वाला शैलाश्रय है, जिसकी दूसरी एवं तीसरी मंजिलें चित्रित हैं। उत्तरपाषाण कालीन मानवों द्वारा चित्रित इन शैल-चित्रों में बैल, गाय, हिरण, सूअर एवं काल्पनिक पशुओं के चित्रों का अंकन किया गया है। इन चित्रों का रंग गहरा कत्थई तथा लाल रंग का है तथा ये रेखाओं के माध्यम से बनाए गए हैं। प्रागैतिहासिक काल के अनेक चित्रों के ऊपर ही ऐतिहासिक काल के चित्र भी बना दिए गए हैं। इस काल के चित्रों में देवी-देवता, योद्धा, घुड़सवार एवं ऊँट सवार प्रमुख हैं। ये पीले रंग तथा गेरू से

बने हैं। इस काल के चित्रों में गौपालक द्वारा गायों को चराने, कहारों द्वारा वधू की डोली ले जाने एवं एक नृत्यांगना द्वारा नृत्य करने के दृश्य भी अंकित हैं, जिनसे स्पष्ट है कि इस काल में मानव सभ्यता काफी आगे बढ़ चुकी थी। आहू नदी के तट पर झालावाड़ जिले में आमझीरी नाला के निकट कई शैलाश्रय खोजे गए हैं, जिनमें प्रस्तर युगीन मानवों द्वारा बनाई गई चित्रशाला देखी जा सकती है। इन चित्रों में बैल, हिरण, बकरी, बारहसिंघा, नीलगाय, चीता, मानव आकृतियां, धनुष-बाण, पशु-शिकार के दृश्य आदि अंकित हैं।



आदिम सभ्यताओं द्वारा उकेरे गए शैलचित्र, जिनमें घोड़ों द्वारा खींची जा रही गाड़ी दिख रही है, यह किसी राजा या सेना के प्रयाण का दृश्य लगता है

पूर्वोत्तर भारत की कुछ आदिम जातियों की बस्तियों में उन मनुष्यों की खोपड़ियों के संग्रह पाये गए हैं, जिन्हें इन आदिम जातियों द्वारा मारकर खा लिया गया था। ये खोपड़ियां जातीय गौरव एवं शौर्य प्रदर्शन के लिए संग्रहित की गईं। इन्हें भी संग्रहालयों का आदिम रूप माना जा सकता है। इसी प्रकार मनुष्यों द्वारा विविध पशुओं के सिर, सींग, खाल आदि के संग्रहालय भी बनाए जाते रहे हैं।

परग्रही जीवों द्वारा छोड़े गए संग्रहालय

विश्व के कुछ देशों में मिले शैल-चित्रों में अंतरिक्ष यानों एवं अंतरिक्ष यात्रियों जैसी आकृतियां देखी गई हैं। वर्ष 2017 में फ्रांस में 38 हजार वर्ष पुराना एक ऐसा चित्र पाया गया है, जिसमें पिक्सल्स की सहायता से आकृतियां उकेरी गई हैं। आधुनिक कम्प्यूटर भी इसी पिक्सल तकनीक का प्रयोग करते हैं। इसे विश्व का सबसे पुराना शैलचित्र माना गया है। उस समय धरती पर उत्तर-पाषाण काल चल रहा था तथा होमोसेपियन मानवों द्वारा पिक्सल्स का उपयोग करके चित्रों का निर्माण करना संभव नहीं था। इसलिए अनुमान है कि शैल-चित्रों में मिले अंतरिक्ष यानों तथा अंतरिक्ष यात्रियों के

चित्रों और इस पिक्सल युक्त चित्र में कोई सम्बन्ध होना चाहिए। ये संभवत: उस काल में धरती पर परग्रही मनुष्यों की हलचल का परिणाम थे, जो इनके माध्यम से अपनी कहानी धरती पर भविष्य में आने वाली मानव प्रजातियों के लिए छोड़कर गए थे। यद्यपि धरती पर परग्रही जीवों के आवागमन को अभी तक अकादमिक स्तर पर स्वीकार नहीं किया गया है, किंतु इस दिशा में अनुसंधान कार्य अनवरत चल रहे हैं। कुछ स्थानों पर पत्थरों की विशालाकाय रचनाएं एवं पत्थरों के माध्यम से धरती पर बनाई गई ज्यामितीय रचनाएं पाई गई हैं, इन्हें भी परग्रही जीवों द्वारा छोड़े गए संग्रहालय माना जा सकता है। कुछ विद्वान मिश्र, चीन, कम्बोडिया सहित अनेक देशों में मिलने वाले पिरामिडों को भी परग्रही जीवों द्वारा एक विशिष्ट क्रम में बनाए गए संग्रहालय एवं अंतरिक्ष से आने वाले मानवों के लिए दिशा सूचक अथवा संकेतक मानते हैं। मिश्र के पिरामिडों में शवों के साथ मिली बहुमूल्य सामग्री भी एक प्रकार के संग्रहालय ही हैं।

धार्मिक संग्रहालयों का विकास

सभ्यता के विकास के साथ जब कलात्मक मंदिरों का निर्माण आरम्भ हुआ तो संग्रहालयों को एक नया आयाम प्राप्त हुआ। भारतीय देवालय स्वयं ही देव-विग्रहों के संग्रहालयों के रूप में सामने आए। मंदिरों की प्रत्येक वस्तु पवित्र मानी जाती थीं। इसलिए मंदिर में कुछ समय तक उपयोग होने के बाद अनुपायोगी हो गई सामग्री यथा-कलात्मक प्रस्तर, शिखर खण्ड, स्तम्भ, देव-प्रतिमाएँ, धर्म-ग्रंथ, धार्मिक चित्र, लोक साहित्य, बर्तन तथा अन्य वस्तुएं कचरे में नहीं फैंकी जाती थीं, वरन् मंदिर परिसर किसी स्थान पर रख दी जाती थीं, धीरे-धीरे यह सामग्री संग्रहालय का रूप ले लेती थी। भारतीयों की इसी प्रवृत्ति के कारण अजमेर में स्थित ढाई दिन का झौंपड़ा (मूलत: बारहवीं शताब्दी का सरस्वती मंदिर) से अनेक महत्वपूर्ण शिलालेख, पत्थर पर उत्कीर्ण नाटक एवं दुर्लभ देव-प्रतिमाएँ प्राप्त हुईं, जिनमें से कुछ आज भी इस परिसर में बने कक्षों में देखी जा सकती हैं। इसमें से कुछ सामग्री अजमेर के राजकीय संग्रहालय में संजोई गई हैं तथा भारतीय संग्रहालय कलकत्ता को भेजी गई है। बीकानेर के तैंतीस करोड़ देवी-देवताओं के मंदिर में बहुत सी दुर्लभ प्रतिमाएँ संग्रहित की गई हैं। बीकानेर के दसवें राठौड़ शासक अनूपसिंह (ई.1638-98) ने मुगलों की ओर से दक्षिण में अनेक लड़ाइयां लड़ीं एवं उस दौरान दक्षिण भारत से अनेक प्रतिमाओं को सुरक्षित बचाकर बीकानेर भेज दिया। अन्यथा ये मूर्तियां औरंगजेब द्वारा नष्ट कर दी जातीं।

राज्याश्रित संग्रहालयों का विकास

रियासती काल में राजाओं-महाराजाओं द्वारा अपने पुरखों के चित्रों, तलवारों, बंदूकों, भालों, ढालों, पालकियों, रथों, शिरस्त्राणों, कवचों, तूणीरों, वस्त्राभूषणों आदि विविध राजसी सामग्री को नष्ट नहीं करके, उन्हें एक स्थान पर संजो लिया जाता था, ताकि उन पुरखों की स्मृति बनी रहे। इन संग्रहालयों तक जन-सामान्य की पहुंच नहीं

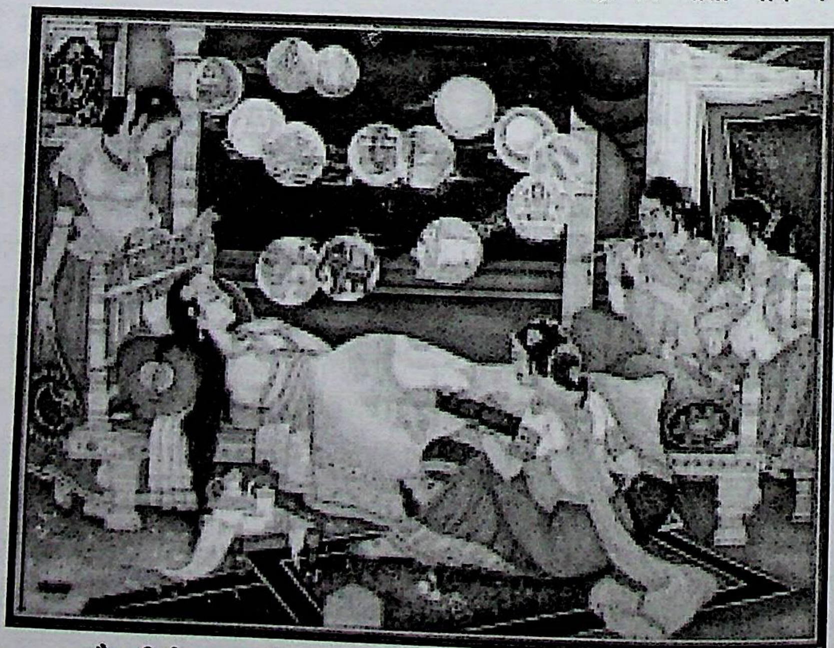
होती थी। ये केवल राजसी व्यक्तियों द्वारा देखे जाने के लिए होते थे। इस तरह के संग्रहों का उल्लेख प्राचीन भारतीय इतिहास एवं साहित्य में हुआ है।

चित्रशालाएं एवं चित्रित पोथियाँ



जैन पोथी चित्रण, मारवाड़

रामायण एवं महाभारत नामक महाकाव्यों में रंगशाला, चित्रशाला एवं विश्वकर्मा मन्दिर का उल्लेख मिलता है। कृष्ण-धर्मोत्तर पुराण में चित्रशालाओं का उल्लेख हुआ है जहाँ चित्र संग्रहित किए जाते थे। गुरुकुलों, ऋषि-आश्रमों, हिन्दू मंदिरों, जैन स्थानकों एवं बौद्ध उपाश्रयों आदि में भी सचित्र पोथियाँ लिपिबद्ध की जाती थीं। ये चित्र

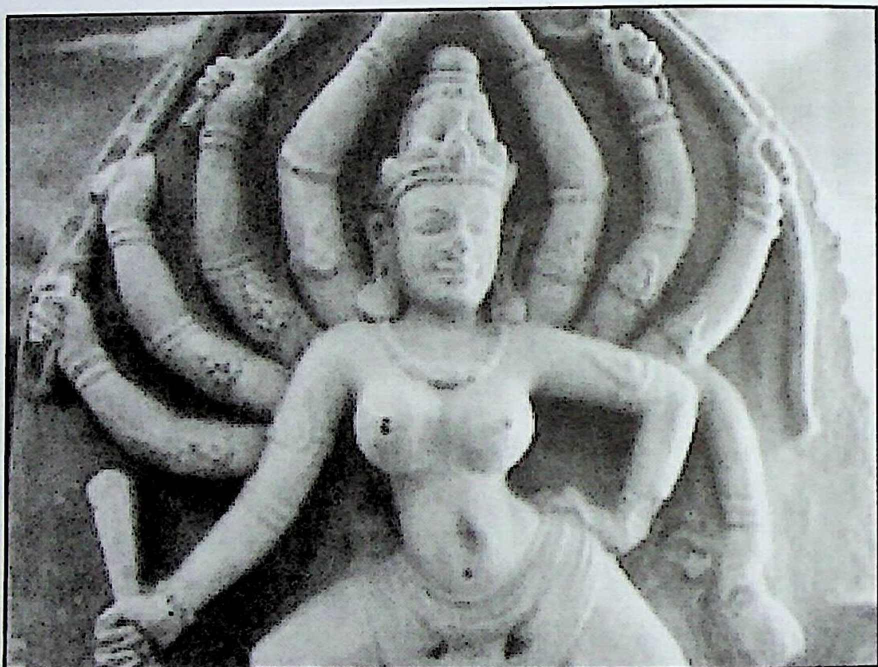


जैन तीर्थंकर महावीर स्वामी की माता त्रिशला द्वारा स्वप्न दर्शन

पौराणिक एवं धार्मिक कथाओं के अंकन के साथ-साथ कला के अप्रतिम उदाहरण भी हैं। भारतीय शासकों ने अपने दरबारी चित्रकारों से साहित्यिक एवं धार्मिक विषयों के चित्र बनवाए तथा उनका संग्रह किया, राजाओं-महाराजाओं के संग्रहालय पुस्तक प्रकाश, सरस्वती भण्डार, सूरतखाना आदि नामों से जाने जाते थे। मुगल शासकों के पुस्तकालय कुतुबखाना एवं चित्रसंग्रह तस्वीरखाना के नाम से जाने जाते थे। इन्हें पोथीखाना तथा कारखाना भी कहा जाता था और इनमें चित्रित एवं अचित्रित ग्रंथों का प्रतिलिपिकरण एवं संग्रहण होता था। मुगलकाल में भी अरबी, फारसी, संस्कृत, हिन्दी, ब्रज, डिंगल आदि विविध भाषाओं के लेखकों और कवियों की कृतियों को संरक्षण प्रदान किया गया।

भारत के लगभग सभी प्राचीन एवं मध्यकालीन मंदिरों एवं राजमहलों में भित्तिचित्रों का अंकन किया गया। ये उस काल की चित्रशालाओं एवं चित्रवीथियों का ही रूप हैं। बीकानेर के भांडाशाह जैन मंदिर में रंगमंडप की चित्रकारी बीकानेर के प्रसिद्ध मथेरण, उस्ता एवं चूनगर जाति के चित्रकारों द्वारा की गई है जिनमें जैन कथा साहित्य, नरक यातना, रोहणियाचार, उग्रसेन का महल और गिरनार आदि के अनेक चित्र अंकित हैं। बीकानेर के सुप्रसिद्ध चित्रकार मुराद बख्श ने इस मंदिर की दीवारों पर स्वर्णयुक्त मीनाकारी का कार्य किया। मीनाकारी के माध्यम से ही चित्रकार द्वारा पशु-पक्षियों और फूल-पत्तियों के आकर्षक एवं अद्‌भुत चित्र बनाए गए हैं। बीकानेर के जूनागढ़, जोधपुर के मेहरानगढ़, नागौर के स्थल दुर्ग, शेखावाटी की हवेलियों में बनाए गए भित्तिचित्रों पर कई शोध ग्रंथ लिखे जा सकते हैं।

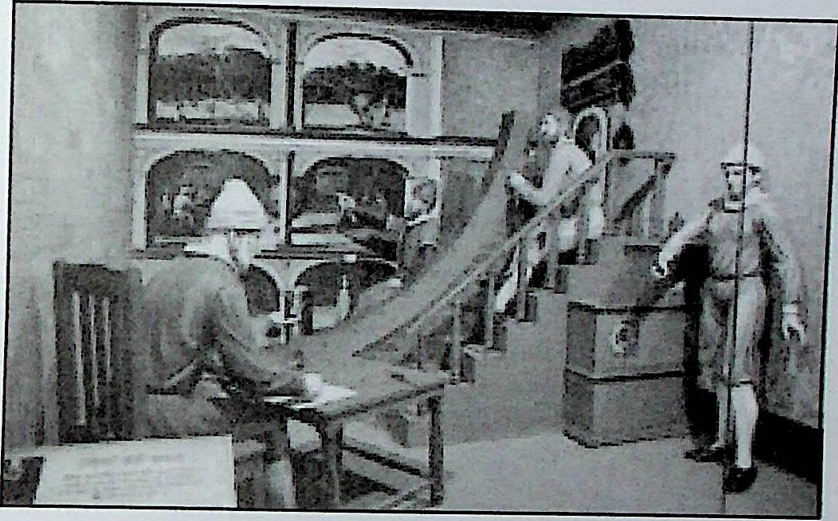
बीकानेर के जूनागढ़ के महलों में सोने और मीने की कारीगरी देखकर लगता है मानो महंगे एवं सुंदर फारसी गलीचों को काटकर ही छतों और दीवारों पर चिपका दिया गया है। दीवारों, छतों एवं खम्भों पर तरह-तरह के बेल-बूटे, फूलपत्ती, पशु-पक्षी और भांति-भांति के चित्र बने हुए हैं। छतों एवं खम्भों के बीच की दीवारों पर लम्बी-लम्बी चित्रकथाएं भी अंकित हैं। अनूप महल के दरवाजों एवं किवाड़ों की चित्रकारी देखते ही बनती है। बादल महल की छतें कड़कड़ाती हुई बिजली से चित्रांकित हैं तथा दीवारों पर पानी की धाराएं गिरती हुई दिखाई देती हैं। बीकानेर की रामपुरिया हवेली में बने आयातकार आंगन के बरामदे में लगभग तीन दर्जन धार्मिक चित्र बने हुए हैं। इस हवेली के अतिथि गृह में बीकानेर शैली के लगभग एक दर्जन चित्र बने हुए हैं। राजपूताना की बहुत से रियासतों में बनी साधु-संतों एवं राजा-रानियों की छतरियों के भीतर भी चित्र बनाए गए हैं, जो चित्रवीथियों का काम करते थे। जोधपुर एवं जालोर के नाथ सम्प्रदाय के मंदिरों में नाथ साधुओं एवं नाथ सम्प्रदाय से सम्बन्धित देवी-देवताओं के चित्र बने हुए हैं। मेहरानगढ़ दुर्ग में भी नाथशैली के चित्र देखे जा सकते हैं। इस प्रकार पूरे राज्य में स्थित मध्यकालीन दुर्गों, महलों, मंदिरों, हवेलियों आदि में चित्रवीथियां एवं चित्रशालाएं बनी हुई हैं। शेखावाटी की हवेलियों में भारत की सर्वश्रेष्ठ चित्रशालाएं बनी हुई हैं।



महिषासुर मर्दिनी, प्रस्तर प्रतिमा

ब्रिटिश काल में संग्रहालयों की विषय-वस्तु का विस्तार

अंग्रेजों के आगमन के साथ ही संग्रहालयों की विषय-वस्तु का विस्तार होने लगा। उनकी विषय-वस्तु निजी न होकर सार्वजनिक होने लगीं। संग्रहालयों का आयाम राजसी वस्त्राभूषणों तथा अस्त्र-शस्त्रों आदि से ऊपर उठकर सामाजिक परम्पराओं, क्षेत्रीय संस्कृतियों एवं हस्तकला सामग्रियों आदि के लिए भी खुलने लगा। उन्होंने प्राकृतिक इतिहास को संग्रहालयों की विषय वस्तु का आधार बनाया तथा संग्रहालयों के दरवाजे विश्व भर के देशों से संग्रहित की गई सामग्री के लिए खोल दिए। 17वीं शताब्दी से 19वीं शताब्दी तक संग्रहालय शब्द का आशय प्राय: एक ऐसे भवन से लगाया जाता था जिसमें पुरावस्तुओं, प्राकृतिक इतिहास तथा परम्परागत कलाकृतियों जैसी पुरानी वस्तुओं को रखा जा सके। समय के साथ विश्वभर में संग्रहालयों की भूमिका और उद्देश्य में परिवर्तन आया। इसे कला को सीखने की इच्छा को समर्पित भवन के रूप में देखा गया। संग्रहालय शब्द को पहचान मिली और समाज में संग्रहालय की भूमिका महत्वपूर्ण बन गयी। आज का संग्रहालय न केवल विविध वस्तुओं को संकलित करके रखने वाला भवन है, अपितु यह सीखने और सिखाने का प्रमुख संस्थान भी है। इस प्रकार आधुनिक संग्रहालय ज्ञान के संरक्षण के साथ-साथ ज्ञान के विस्तार एवं शोध केन्द्र के रूप में विकसित हो रहे हैं।



आधुनिक संग्रहालयों की विषय-वस्तु

आधुनिक संग्रहालय एक ऐसा स्थान है, जहां, विभिन्न युगों में घटित घटनाओं के चिह्न, अवशेष, चित्र, मॉडल आदि का संग्रहण किया जाता है। अर्थात् संग्रहालय में धरती के किसी भी भाग में अथवा ब्रह्माण्ड के किसी भी पिण्ड पर किसी भी कालखण्ड में विकसित मिट्टी, चट्टान, शैवाल, खनिज, वनस्पति, पुष्प, तितली, कीट, पक्षी, विविध प्रकार के जीव-जन्तु, उनके जीवाश्म, जीवों के अस्थि-पंजर, मानवों द्वारा प्रयुक्त उपकरण, औजार, शिल्प, स्थापत्य आदि विविध सामग्री का संग्रह किया जाता है। साथ ही खगोलीय घटनाओं से लेकर भौगोलिक, ऐतिहासिक, सामरिक, आर्थिक, वैज्ञानिक, दार्शनिक एवं सांस्कृतिक जगत में घटी घटनाओं तथा उनसे सम्बद्ध महापुरुषों आदि के चित्र, प्रतिमाएँ, चार्ट, ग्राफ, यंत्र, वेशभूषा आदि का संकलन किया जाता है।

सरल शब्दों में कहा जा सकता है कि विविध कालखण्डों में प्रकृति एवं जीवों द्वारा छोड़े गए अवशेष ही संग्रहालय की मुख्य विषय-वस्तु होते हैं। मानव द्वारा अर्जित ज्ञान का जिस किसी भी प्रकार से निरूपण किया जा सके, वह सब, संग्रहालय की विषय वस्तु बन सकती है। डाक टिकटों से लेकर माचिस की डिब्बियों, सिगरेट केस, कुर्सियों, रेलवे इंजन एवं डिब्बे, बाथरूम यूटेंसिल्स, ताले, घड़ियाँ, बंदूकें, तोपें, कारें, हस्तलिखित पोथियां, चित्रित पोथियां, ताड़पत्र, जन्म कुण्डलियाँ, शिलालेख, मूर्तियां, मिट्टी के बर्तन, ग्रामीण जीवन में काम आने वाली सामग्री, कृषियंत्र, झाड़ू, ग्रामोफोन, रेडियो, गुड़ियाएं, पेपरवेट आदि विभिन्न प्रकार की सामग्री को विश्व भर के संग्रहालयों एवं भारत के संग्रहालयों की विषय-वस्तु बनाया गया है। अमरीका में फर्स्ट लेडी (अर्थात् अमरीकी राष्ट्रपति की पत्नी) के गाउन भी संग्रहालय को दान किए गए तथा उनका प्रदर्शन आज भी किया जा रहा है।



जैसलमेर के थार मरुस्थल से प्राप्त फॉसिल

आधुनिक संग्रहालयों की स्थापना के उद्देश्य

सामान्यत: संग्रहालय के माध्यम से युग-युगीन मानवीय कार्यकलापों, इतिहास एवं पर्यावरण की विरासतों के संरक्षण के लिए उनका संग्रह, शोध, प्रचार या प्रदर्शन किया जाता है। इस सामग्री का उपयोग इतिहास लेखन, शिक्षण, अध्ययन और मनोरंजन आदि विविध उद्देश्यों के लिए होता है। संग्रहालयों के माध्यम से देशी-विदेशी पर्यटकों के बीच क्षेत्र विशेष की संस्कृति का प्रदर्शन करके लाभार्जन किया जाता है।

आधुनिक संग्रहालयों का वर्गीकरण

आज किसी भी विषय-वस्तु को लेकर संग्रहालय स्थापित कर दिया जाता है। विषय वस्तु के आधार पर संग्रहालयों का निम्नलिखित प्रकार से वर्गीकरण किया जा सकता है-

(1.) कला संग्रहालय : चित्रकला, संगीत कला, लोक वाद्ययंत्र, शास्त्रीय वाद्ययंत्र, हस्तकलाओं के नमूने, नृत्यकला से सम्बन्धित सामग्री आदि।

(2.) ऐतिहासिक संग्रहालय : स्वतंत्रता संग्राम का इतिहास, देशी रजवाड़ों का इतिहास, संवैधानिक प्रगति का इतिहास, धार्मिक सम्प्रदायों का इतिहास आदि।

(3.) पुरातत्व संग्रहालय : प्राचीन सभ्यता के स्थलों से प्राप्त बर्तन, मूर्तियां, भवन सामग्री, आभूषण, सिक्के, खेत, कुएं आदि।

(4.) विज्ञान और प्रौद्योगिकी संग्रहालय : मिट्टियां, पुष्प, तितलियां, खनिज, अंतरिक्ष विज्ञान, विज्ञान के सिद्धांत आदि।

(5.) नृशास्त्रीय संग्रहालय : विभिन्न काल खण्डों के आदिमानवों के कंकाल,

खोपड़ी, ममी आदि।

(6.) महापुरुषों पर केन्द्रित संग्रहालय : सुभाषचंद्र बोस, बालगंगाधर तिलक, अरविंद घोष, महाराजा अग्रसेन, महाराजा रणजीतसिंह आदि पर केन्द्रित संग्रहालय।

(7.) पुस्तक मुद्रण कला संग्रहालय : प्रारंभिक मुद्रण कला, ट्रेडल मुद्रण मशीन, ऑफसेट मुद्रण मशीन आदि।

(8.) डाक टिकट संग्रहालय : भारत में अब तक केवल दिल्ली में ऐसा संग्रहालय स्थापित किया गया है। निजी संग्रहकर्ताओं के पास अपने छोटे-छोटे डाक टिकट संग्रह हैं।

(9.) बाल संग्रहालय : बालोपयोगी विज्ञान, कला सामग्री, खिलौने, ट्राइसाइकिल, फोटोग्राफ, पेंटिंग आदि।

(10.) स्वास्थ्य संग्रहालय : स्वच्छता, स्वास्थ्य समस्याएं, घातक बीमारियां, चिकित्सा पद्धतियां, आदि।

(11.) अस्त्र-शस्त्र संग्रहालय : तोपें, बंदूकें, भाले, तलवार, ढालें, खुकरी, चाकू, छुरे, टैंक, लड़ाकू विमान आदि। जोधपुर दुर्ग में प्राचीन तोपों का संग्रहालय है।

(12.) दैनिक उपयोग की वस्तुएं : वस्त्र, जूते, टोपियां, पगड़ियां, साफे, कोट, ताले, घड़ियां, कैंचियां, बागवानी के उपकरण, खेती के उपकरण आदि। जोधपुर में पाग-पगड़ियों का संग्रहालय अपने आप में अनूठा है। उदयपुर में बागोर की हवेली में भी पाग-पगड़ियों का संग्रहालय है।

(13.) चित्रशालाएं : इस प्रकार के संग्रहालयों में विविध कालखण्डों में, विविध क्षेत्रों अथवा प्रांतों में, विविध शैलियों अथवा उपशैलियों में एवं विविध कलाकारों द्वारा



निर्मित चित्रों अर्थात् पेंटिंग एवं फोटोग्राफ प्रदर्शित किए जाते हैं।

(14.) राष्ट्रीय संग्रहालय : इस प्रकार के संग्रहालय में देश-विदेश के दर्शकों को सम्पूर्ण देश का प्रतिनिधित्व करने वाली एवं जीवन के लगभग प्रत्येक पक्ष से सम्बन्ध रखने वाली सामग्री का प्रदर्शन किया जाता है तथा उसे पुरातत्व, कला, पेंटिंग्स, अस्त्र-शस्त्र, वस्त्र एवं वेशभूषा आदि विभागों में विभक्त किया जाता है। इन संग्रहालयों में देश से बाहर से भी सामग्री प्राप्त कर प्रदर्शित की जाती है।

संग्रहालयों की समस्याएं

संग्रहालयों की स्थापना, संरक्षण एवं संचालन का कार्य कठिनाइयों से भरा हुआ है। इसके लिए दक्ष व्यक्तियों, विपुल धन एवं विस्तृत भवन आदि की आवश्यकता होती है। संग्रहालयों में संकेतकों की स्थापना करने, दस्तावेजीकरण करने और श्रेणीकरण करने के लिए उत्साही एवं योग्य व्यक्ति बहुत कम संख्या में उपलब्ध हो पाते हैं। संग्रहालयों का परिवेश आकर्षक एवं उत्साहवर्धक बनाया जाना आवश्यक है, जहाँ दर्शक बिना किसी तनाव एवं संकोच के पहुंच सके। भारतीय संग्रहालयों के लिए इसी प्रकार के आधारभूत ढांचे की आवश्यकता है, ताकि यह विश्व भर के संग्रहालयों की तुलना में स्वयं को स्तरीय सिद्ध कर सकें। संग्रहालय में प्रदर्शित प्रत्येक सामग्री का विवरण, साधारण दर्शक को सहज रूप से उपलब्ध कराया जाना आवाश्यक है। बहुभाषी प्रदर्शकों (गाइड) की उपलब्धता भी एक बड़ी समस्या है। प्रशिक्षित एवं योग्य गाइड के बिना संग्रहालय को देखने का कोई अर्थ नहीं है। जब तक दर्शकों को संग्रहालय में प्रदर्शित प्रमुख वस्तुओं की विस्तृत और सटीक जानकारी नहीं मिलेगी, तब तक दर्शक का संग्रहालय से समुचित जुड़ाव होना संभव नहीं है।

राजस्थान का निर्माण होने के बाद राजस्थानी शोध संस्थान चौपासनी (जोधपुर) की स्थापना ई.1955 में, साहित्य संस्थान राजस्थान विद्यापीठ उदयपुर की स्थापना ई. 1955 में तथा प्रताप शोध प्रतिष्ठान की स्थापना ई.1967 में हुई थी। राजस्थान में इस प्रकार की संस्थाओं की स्थापना का उद्देश्य इतिहास एवं पुरातत्व के विद्यार्थियों को शोध सामग्री के मूल स्रोत उपलब्ध करवाना था। इन संस्थाओं को राजस्थान सरकार द्वारा 60 से 90 प्रतिशत तक अनुदान उपलब्ध करवाया जाता था, किंतु लगभग 50 वर्ष तक राजकीय संरक्षण देने के बाद, सरकार की नीतियों में परिवर्तन आने के कारण वर्ष 2011 में राजकीय अनुदान बंद कर दिया गया। इन संस्थाओं के प्रशिक्षित एवं अनुभवी कर्मचारियों एवं अधिकारियों को अन्य कार्यों में लगा दिया गया। राज्य सरकार के इस कदम के कारण प्रदेश में शोध कार्य को धक्का लगा है।

संग्रहालयों से अपेक्षाएं

संग्रहालय संचालकों का पहला और अंतिम उद्देश्य केवल यही होना चाहिए कि वे

संग्रहालय में आने वाले प्रत्येक दर्शक की जिज्ञासाओं का समाधान करें। दर्शकों को संग्रहालय में लम्बी अवधि व्यतीत करने का अवसर दिया जाना चाहिए, जिससे वे शिक्षा और ज्ञान की अपनी जिज्ञासाओं का शमन कर सकें। साथ ही, वे कला, विज्ञान एवं विविध विषय पर आधारित सामग्री को भलीभांति समझ सकें। जन साधारण के लिए संग्रहालय किसी अजूबे से कम नहीं होता। उसके इस भाव को स्थायी बने रहने देने के लिए यह आवश्यक है कि संग्रहालय का संयोजन किसी अजूबाघर की ही तरह किया जाए। तभी जनसाधारण का जुड़ाव संग्रहालयों से बना रह सकेगा और वह अपने अतीत की सुनहरी एवं गौरवमयी परम्परा से भिज्ञ रह सकेगा।

भारत में सार्वजनिक संग्रहालयों की स्थापना

भारत के अनेक देशी रजवाड़ों में पुराने एवं नए हथियारों को एक स्थान पर एकत्रित करके रखने की परम्परा थी। जब ईस्ट इण्डिया कम्पनी का आगमन हुआ तो इस परम्परा को और अधिक बढ़ावा मिला। ई.1784 में सर विलियम जोन्स ने कलकत्ता में एशियाटिक सोसायटी बंगाल की स्थापना की। सोसायटी द्वारा अपने पुस्तकालय में हस्तलिखित पोथियों, मानचित्रों, मुद्राओं, आवक्ष आकृतियों, चित्रों तथा अन्य सामग्री का संकलन किया गया। इस छोटे से संग्रहालय की स्थापना, देश में भावी संग्रहालयों की स्थापना के लिए मील का पत्थर सिद्ध हुई तथा इसे व्यापक लोकप्रियता मिली। इस प्रकार अठारहवीं शताब्दी ईस्वी में भारत में पहली बार व्यवस्थित रूप से सार्वजनिक संग्रहालय ने जन्म लिया।

उन्नीसवीं शताब्दी संग्रहालयों की स्थापना की दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण सिद्ध हुई। एशियाटिक सोसायटी के प्रयासों से ई.1814 में भारतीय संग्रहालय कलकत्ता की स्थापना हुई, जिसे भारत का प्रथम संग्रहालय होने का गौरव प्राप्त है। इसके बाद अन्य संग्रहालयों की स्थापना आरम्भ हुई। ई.1851 में केन्द्रीय संग्रहालय मद्रास की स्थापना हुई। इसी वर्ष बम्बई के ग्रांट मेडिकल कालेज में एशिया का प्रथम मेडिकल संग्रहालय स्थापित किया गया। ई.1863 में राजकीय संग्रहालय लखनऊ की स्थापना हुई। यह उत्तर प्रदेश का पहला संग्रहालय था। ई.1865 में राजकीय संग्रहालय मैसूर, ई.1868 में दिल्ली नगर पालिका संग्रहालय और ई.1874 में मथुरा संग्रहालय की स्थापना हुई। ई. 1887, 1888, 1890 तथा ई.1894-95 में त्रिचूर, उदयपुर, भोपाल, जयपुर, राजकोट, पूना, बड़ौदा, भावनगर एवं त्रिचनापल्ली इत्यादि शहरों में विभिन्न संग्रहालयों की स्थापना हुई।

बीसवीं शताब्दी में संग्रहालयों की स्थापना का काम और तेजी से आगे बढ़ा। ई. 1914 में प्रिन्स ऑफ वेल्स म्यूजियम मुम्बई, ई.1920 में भारत कला भवन बनारस, हिन्दू विश्वविद्यालय संग्रहालय वाराणसी, ई.1929 में बॉटनीकल म्यूजियम इन्दौर तथा

ई.1931 में इलाहाबाद संग्रहालय आदि संग्रहालयों की स्थापना हुई। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् देश में संग्रहालयों की नई भूमिका अनुभव की जाने लगी और अनेक बहुआयामी संग्रहालयों की स्थापना हुई। आजादी के दो वर्ष बाद ई.1949 में नई दिल्ली में राष्ट्रीय संग्रहालय स्थापित किया गया। आज यह बैद्धिक और शैक्षणिक गतिविधियों का बड़ा केन्द्र है। भारत में अब तक सरकारी क्षेत्र में 400 से अधिक संग्रहालयों की स्थापना हो चुकी है। निजी क्षेत्र के संग्रहालयों की संख्या अलग है।

आधुनिक भारत के निर्माता भारत के ऐतिहासिक अतीत से अवगत थे और वे इसकी समृद्धि, इसके महत्व तथा भावी पीढ़ियों के लिए इसकी उत्सुकता से भी परिचित थे। उन्हें संग्रहालय जैसी महत्वपूर्ण संस्थाओं के निर्माण करने की प्रासंगिकता का भी ज्ञान था। संग्रहालयों की यह यात्रा निश्चित रूप से आने वाले समय में अपने कलेवर और विषय-वस्तु में और भी बड़े परिवर्तन करेगी।

भारत में संग्रहालयों का वैज्ञानिक पद्धति से विकास

भारत सरकार द्वारा देश में वैज्ञानिक पद्धति से संग्रहालयों का विकास किया गया है। राष्ट्रीय स्तर के प्राकृतिक इतिहास संग्रहालयों की स्थापना एवं नियंत्रण का कार्य भारत सरकार के संस्कृति मंत्रालय द्वारा किया जाता है। देश में संस्कृति मंत्रालय के अधीन सात राष्ट्रीय संग्रहालय स्थापित किए गए हैं-

(1.) इलाहाबाद संग्रहालय,

(2.) भारतीय संग्रहालय, कलकत्ता,

(3.) राष्ट्रीय आधुनिक कला वीथी, नई दिल्ली

(4.) राष्ट्रीय आधुनिक कला संग्रहालय, मुम्बई

(5.) राष्ट्रीय आधुनिक कला संग्रहालय, बैंगलुरू

(6.) सालारजंग संग्रहालय, हैदराबाद

(7.) विक्टोरिया मेमोरियल, कलकत्ता।

देश में विज्ञान के प्रति रुचि जाग्रत करने एवं वैज्ञानिक दृष्टिकोण को बढ़ावा देने के लिए राष्ट्रीय विज्ञान संग्रहालय परिषद के अधीन 25 संग्रहालय स्थापित किए गए हैं। साथ ही राष्ट्रीय विज्ञान संग्रहालय परिषद द्वारा राज्य सरकारों के लिए 18 रीजनल साइंस सेंटर, साइंस सेंटर एवं सबसेंटर भी स्थापित किए गए हैं। भारत सरकार द्वारा 44 संग्रहालय भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण विभाग के अधीन स्थापित किए गए हैं। देश में बहुत से संग्रहालय राज्य सरकारों द्वारा स्थापित एवं संचालित किए जा रहे हैं।



देश में विभिन्न सामाजिक, धार्मिक, शैक्षणिक एवं औद्योगिक संगठनों द्वारा भी अनेक संग्रहालय स्थापित किए गए हैं। कुछ धार्मिक सम्प्रदायों ने अपने प्राचीन गौरव का स्मरण बनाए रखने एवं आगामी पीढ़ियों को इस गौरव से परिचित कराने के उद्देश्य से भी संग्रहालय स्थापित किए हैं, जिनमें सेंट्रल सिक्ख म्यूजियम हरमिंदर साहिब अमृतसर, महाराजा रणजीतसिंह मार्ट्रियल आर्ट म्यूजियम अमृतसर, शहीद ए आजम सरदार भगतसिंह म्यूजियम कपूरथला, पंजाब स्टेट वार हीरोज मेमोरियल एण्ड म्यूजियम अमृतसर, विरासत ए खालसा आनंदपुर साहिब, द पार्टीशन म्यूजियम अमृतसर तथा इंटरनेशनल सिक्ख म्यूजियम लुधियाना विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं।



अध्याय - 2

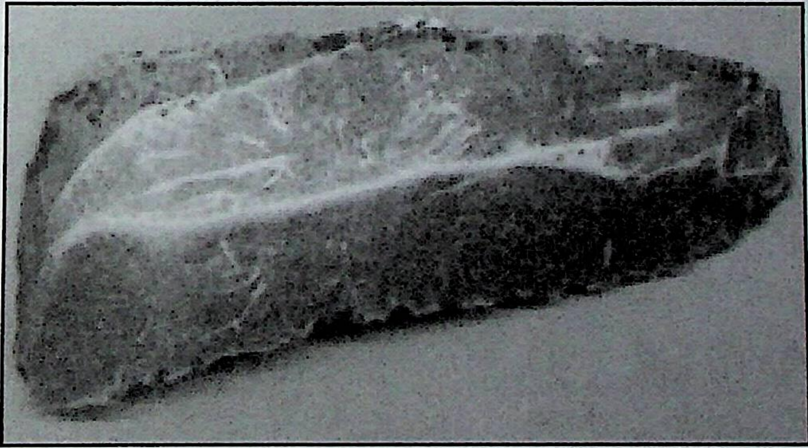
राजस्थान के संग्रहालयों की आधारभूत सामग्री

किसी भी देश, प्रदेश अथवा क्षेत्र की सांस्कृतिक एवं ऐतिहासिक विरासत से अवगत कराने में संग्रहालयों की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। संग्रहालय की सफलता अथवा लोकप्रियता इस बात पर निर्भर करती है कि उसमें किस प्रकार की सामग्री संजोई गई है तथा आमजन की उस सामग्री तक पहुंच कितनी है! आधुनिक काल में पुरातत्व, इतिहास, विज्ञान, प्रकृति आदि विविध विषयों पर आधारित संग्रहालयों की स्थापना की जाती है। संग्रहालयों के लिए विश्वसनीय, स्तरीय एवं प्रामाणिक सामग्री की उपलब्धता अत्यंत संवेदनशील विषय है। इसके लिए विविध स्रोतों पर निर्भर रहना पड़ता है तथा सतर्क रहकर सामग्री का चयन करना होता है। राजस्थान के संग्रहालयों में पाषाण कालीन सभ्यताओं के प्रस्तर उपकरणों से लेकर प्राचीन एवं मध्य काल की ऐतिहासिक सामग्री एवं कलाकृतियों से लेकर हस्तलिखित ग्रंथ, ताड़पत्र, पाण्डुलिपियां, चित्रित ग्रंथ, चित्रमालाएं, तांत्रिक यंत्र आदि सामग्री संजोई गई है। इस विशद् सामग्री का परिचय प्राप्त करने से पहले राजस्थान के उन स्थलों के बारे में जानना आवश्यक है, जहाँ से यह विविध सामग्री प्राप्त की गई है।

पाषाण कालीन सभ्यता स्थल

राजस्थान में मानव सभ्यता पुरा-पाषाण, मध्य-पाषाण तथा उत्तर-पाषाण काल से होकर गुजरी। राजस्थान में आदि मानव द्वारा प्रयुक्त जो प्राचीनतम पाषाण उपलब्ध हुए हैं, वे लगभग डेढ़ लाख वर्ष पुराने हैं। पुरा-पाषाण काल डेढ़ लाख वर्ष पूर्व से पचास हजार वर्ष पूर्व तक का काल समेटे हुए है। इस काल में हैण्ड एक्स, क्लीवर तथा चॉपर आदि का प्रयोग करने वाला मानव बनास, गंभीरी, बेड़च, बाधन तथा चम्बल नदियों की घाटियों में (आज जहाँ बांसवाड़ा, डूंगरपुर, उदयपुर, भीलवाड़ा, बूंदी, कोटा, झालावाड़ तथा जयपुर जिले हैं) रहता था, जहाँ प्रस्तर युगीन मानव के चिह्न मिले हैं। इस युग के भद्दे तथा भौंडे हथियार अनेक स्थानों से मिले हैं, जिनके आधार पर कहा जा सकता है कि लगभग पूरे प्रदेश में इस युग का मानव फैल गया था। इन उपकरणों एवं औजारों का उपयोग करने वाला मनुष्य शिकार से प्राप्त वन्य पशु, प्राकृतिक रूप से प्राप्त कन्द, मूल, फल, पक्षी, मछली आदि खाता था। नगरी, खोर, ब्यावर, खेड़ा, बड़ी, अनचर, ऊणचा देवड़ी, हीराजी का खेड़ा, बल्लू खेड़ा (चित्तौड़ जिले में गंभीरी नदी के तट पर), भैंसरोड़गढ़, नगघाट (चम्बल और बामनी के तट पर) हमीरगढ़, सरूपगंज, बीगोद,

जहाजपुर, खुरियास, देवली, मंगरोप, दुरिया, गोगाखेड़ा, पुर, पटला, संद, कुंवारिया, गिलूंड (भीलवाड़ा जिले में बनास के तट पर), लूणी (जोधपुर जिले में लूनी के तट पर), सिंगारी और पाली (गुड़िया और बांडी नदी की घाटी में), समदड़ी, शिकारपुरा, भावल, पीचक, भांडेल, धनवासनी, सोजत, धनेरी, भेटान्दा, धुंधाड़ा, गोलियो, पीपाड़, खींवसर, उम्मेदनगर (मारवाड़ में), गागरोन (झालवाड़), गोविंदगढ़ (अजमेर जिले में सागरमती के तट पर), काकोनी, (बारां जिले में परवन नदी के तट पर), भुवाणा, हीरो, जगन्नाथपुरा, सियालपुरा, पच्चर, तारावट, गोगासला, भरनी (टोंक जिले में बनास तट पर) आदि स्थानों से उस काल के पत्थर के हथियार प्राप्त हुए हैं।



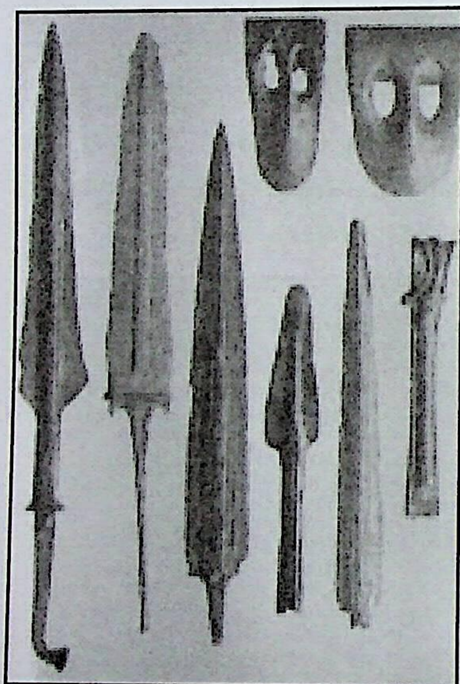
पाषाण युग की पत्थर से बनी ब्लेड

राजस्थान में मध्य-पाषाण काल आज से लगभग 50 हजार वर्ष पूर्व आरंभ हुआ। इस काल के उपकरणों में स्क्रैपर तथा पाइंट विशेष उल्लेखनीय हैं। ये औजार लूनी और उसकी सहायक नदियों की घाटियों में, चित्तौड़गढ़ जिले की बेड़च नदी की घाटी में और विराटनगर में भी प्राप्त हुए हैं। इस समय तक भी मानव को पशुपालन तथा कृषि का ज्ञान नहीं हुआ था। उत्तर-पाषाण काल का आरंभ लगभग 10 हजार वर्ष पूर्व से माना जाता है। इस काल में पहले हाथ से और फिर से चाक से बर्तन बनाए गए। इस युग के औजार चित्तौड़गढ़ जिले में बेड़च एवं गंभीरी नदियों के तट पर, चम्बल और वामनी नदी के तट पर भैंसरोड़गढ़ एवं नवाघाट, बनास के तट पर हमीरगढ़, जहाजपुर, देवली एवं गिलूंड, लूनी नदी के तट पर पाली, समदड़ी, बनास नदी के तट पर टौंक जिले में भरनी आदि अनेक स्थानों से प्राप्त हुए हैं। इस युग के उपकरण उदयपुर के बागोर तथा मारवाड़ के तिलवाड़ा नामक स्थानों पर मिले हैं।

ताम्र युगीन दुर्लभ सामग्री

राजस्थान में प्राप्त प्राचीनतम ताम्र सामग्री ईसा से लगभग 3000 साल पुरानी है।

अर्थात् आज से लगभग 5000 साल पुरानी। सीकर जिले की नीमकाथाना तहसील में कांटली नदी के मुहाने पर स्थित गणेश्वर में हजारों की संख्या में ताम्बे के तीर, ताम्बे के 60 परशु, मछली पकड़ने के कांटे, ताम्बे के कंगन, ताम्बे की अंगुठियां आदि मिली हैं तथा इस क्षेत्र के आसपास ताम्र अयस्क को गलाकर ताम्बा निकालने की भट्टियां भी प्राप्त हुई हैं। किराडोत गांव से ताम्बे के छल्ले प्राप्त हुए हैं। ई.1934 में कुराड़ा (जिला नागौर) से ताम्बे की 103 वस्तुएं प्राप्त हुई थीं जिनमें से केवल 10 वस्तुएं नमूने के लिए रखकर शेष सामग्री जानकारी के अभाव में कबाड़ियों को नीलामी में बेच दी गई। ई.1982 में भरतपुर क्षेत्र में ताम्रयुगीन दुर्लभ अस्त्रों का खजाना मिला। इनमें चार जोड़े कांटे वाले हारपून-9, एक जोड़े कांटे वाले हारपून-3, ताम्रपरशु- सात, ताम्रछेणी-दो, ताम्रभालों के अग्रभाग-4 तथा ताम्बे की तलवारें-3, इस प्रकार कुल 33 वस्तुएं एक साथ प्राप्त हुई थीं। राजस्थान के अन्य स्थलों से भी ताम्रयुगीन सभ्यता की सामग्री प्राप्त हुई है। यह सभ्यता महाभारत काल के लगभग पांच सौ वर्ष बाद की तथा आज से लगभग 5000 साल पुरानी है।



ताम्र युगीन दुर्लभ सामग्री

ताम्र, कांस्य एवं लोह युगीन सभ्यताओं के स्थल

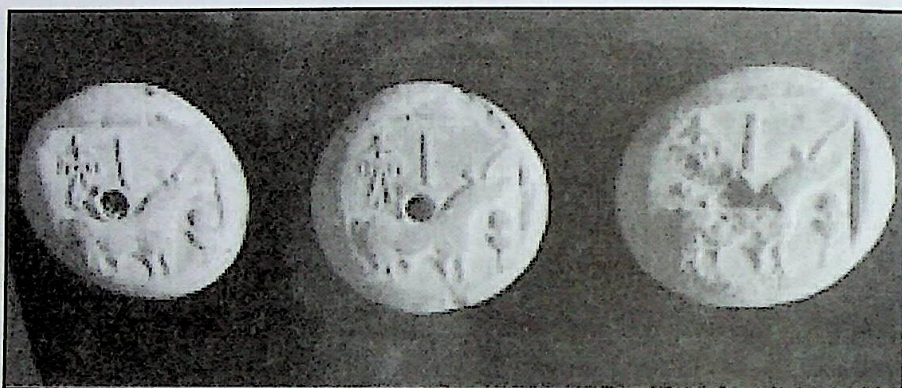
गणेश्वर (सीकर), आहड़ (उदयपुर), गिलूण्ड (राजसमंद), बागोर (भीलवाड़ा) तथा कालीबंगा (हनुमानगढ़) से ताम्र-पाषाण कालीन, ताम्रयुगीन एवं कांस्य कालीन सभ्यताएं प्रकाश में आयी हैं। ताम्रयुगीन प्राचीन स्थलों में पिण्डपाड़लिया (चित्तौड़), बालाथल एवं झाड़ोल (उदयपुर), कुराड़ा (नागौर), साबणिया एवं पूगल (बीकानेर), नन्दलालपुरा, किराड़ोत एवं चीथवाड़ी (जयपुर), ऐलाना (जालोर), बूढ़ा पुष्कर (अजमेर), कोल- माहोली (सवाईमाधोपुर) तथा मलाह (भरतपुर) विशेष उल्लेखनीय हैं। इन सभी स्थलों पर ताम्र उपकरण मिले हैं। लौह युगीन सभ्यताओं में नोह (भरतपुर), जोधपुरा (जयपुर) एवं सुनारी (झुंझुनूं) प्रमुख हैं।



ताम्र-कांस्य कालीन कुल्हाड़ियां

सिंधु घाटी सभ्यता के थेड़

सिंधु नदी हिमालय पर्वत से निकल कर पंजाब तथा सिंध प्रदेश में बहती हुई अरब सागर में मिलती है। इस नदी के दोनों तटों पर तथा इसकी सहायक नदियों के तटों पर



**कालीबंगा से प्राप्त सिंधु सभ्यता की मिट्टी की सीलें,
इन्हें डोरी में पिरोकर गले, कमर या बांह पर बांधा जाता होगा
तथा पहचान-पत्र के रूप में प्रयुक्त किया जाता होगा, 2000 ई.पू.**

जो सभ्यता विकसित हुई उसे सिंधु सभ्यता, हड़प्पा सभ्यता एवं मोहनजोदड़ो सभ्यता कहा जाता है। यह तृतीय कांस्यकालीन सभ्यता थी तथा इसका काल ईसा से 5000 वर्ष पूर्व से लेकर ईसा से 1750 वर्ष पूर्व तक माना जाता है। राजस्थान में इस सभ्यता के अवशेष कालीबंगा, पीलीबंगा एवं रंगमहल आदि में प्राप्त हुए हैं। गंगानगर जिले में नाईवाला की सूखी धारा, रायसिंहनगर से अनूपगढ़ के दक्षिण का भाग तथा हनुमानगढ़ से हरियाणा की सीमा तक के सर्वेक्षण में पाया गया है कि नाईवाला की सूखी धारा में स्थित 4-5 टीलों पर गाँव बस चुके हैं। दृषद्वती के सूखे तल में भी काफी दूर तक टीले स्थित हैं। इस तल में स्थित 7-8 थेड़ों में हड़प्पाकालीन, किंतु खुरदरे एवं कलात्मक कारीगरी रहित मिट्टी के बर्तन के टुकड़ों की बहुतायत थी। सरस्वती तल में हड़प्पाकालीन छोटे-छोटे एवं उन्हीं के पास स्लेटी मिट्टी के बर्तनों वाले उतने ही थेड़ मौजूद थे। हरियाणा की सीमा पर ऐसे थेड़ भी पाये गए, जिन पर रोपड़ की तरह दोनों प्रकार के हड़प्पा एवं स्लेटी मिट्टी के ठीकरे मौजूद थे। हनुमानगढ़ किले की दीवार के पास खुदाई करने पर रंगमहल जैसे ठीकरों के साथ कुशाण राजा हुविश्क का तांबे का एक सिक्का भी मिला, जो इस बात की पुष्टि करता है कि भाटियों का यह किला एवं अंदर का नगर कुशाण कालीन टीले पर बना है। बीकानेर के उत्तरी भाग की सूखी नदियों के तल में 4-5 तरह के थेड़ पाये गए।

सिंधु घाटी सभ्यता के हड़प्पाकालीन 30-35 थेड़, जिनमें कालीबंगा का थेड़ सबसे ऊँचा है, की खुदाई साठ के दशक में की गयी। हनुमानगढ़-सूरतगढ़ मार्ग पर स्थित पीलीबंगा से लगभग 5 किलोमीटर दूर स्थित कालीबंगा में पूर्व हड़प्पाकालीन एवं हड़प्पाकालीन सभ्यता के अवशेष प्राप्त हुए हैं। खुदाई के दौरान मिली काली चूड़ियों के टुकड़ों के कारण इस स्थान को कालीबंगा कहा जाता है। इस स्थान का पता पुरातत्व

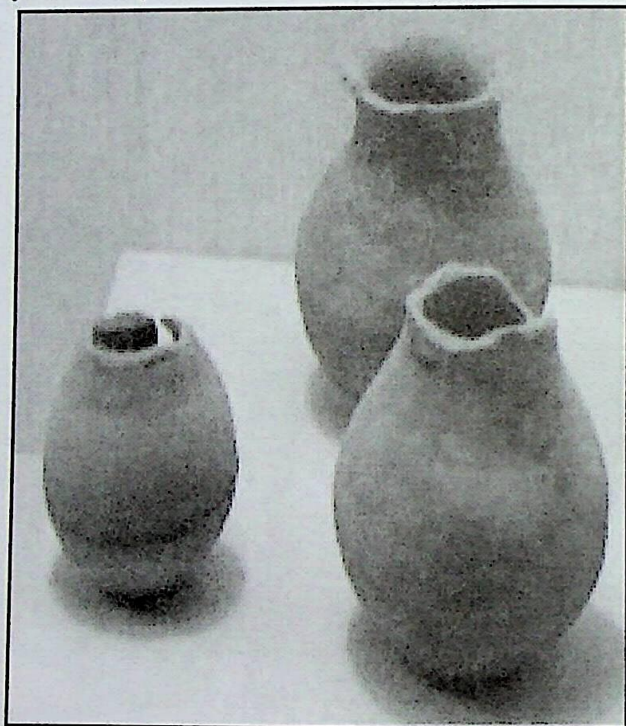


पगड़ी धारिणी महिला, शुंग कालीन टैराकोटा प्रतिमा, रैढ़, दूसरी शती ई.पू.

विभाग के निदेशक अमलानंद घोष ने ई.1952 में लगाया था। ई.1961-62 में बी. के. थापर, जे. वी. जोशी तथा वी. वी. लाल के निर्देशन में इस स्थल की खुदाई की गयी। कालीबंगा के टीलों की खुदाई में दो भिन्न कालों की सभ्यता प्राप्त हुई है। पहला भाग 2400 ई.पू. से 2250 ई.पू. का है तथा दूसरा भाग 2200 ई.पू. से 1700 ई.पू. का है। यहाँ से एक दुर्ग, जुते हुए खेत, सड़कें, बस्ती, गोल कुओं, नालियों, घरों एवं धनी लोगों के आवासों के अवशेष प्राप्त हुए हैं। घरों में चूल्हों के अवशेष भी मिले हैं। कालीबंगा के लोग मिट्टी की कच्ची या पक्की ईंटों का चबूतरा बनाकर घर बनाते थे। कालीबंगा से प्राप्त सामग्री में बर्तनों में खाना खाने की मिट्टी की थालियां, कुण्डे, नीचे से पतले एवं ऊपर से प्यालानुमा गिलास, लाल बर्तनों पर कलापूर्ण काले रंग की चित्रकारी, देवी की छोटी-छोटी मृदा-प्रतिमाएँ, बैल, बैलगाड़ी, गोलियां, शंख की चूड़ियां, चकमक पत्थर की छुरियां, शतरंज की गोटी तथा एक गोल, नरम पत्थर की मुद्रा आदि सम्मिलित हैं। बर्तनों पर मछली, बत्तख, कछुआ तथा हरिण की आकृतियां बनी हैं। यहाँ से मिली मुहरों पर सैंधव लिपि उत्कीर्ण है, जिसे पढ़ा नहीं जा सका है। यह लिपि दाहिने से बाएं लिखी हुई है। यहाँ से मिट्टी, तांबे एवं कांच से बनी हुई सामग्री भी प्राप्त हुई है। छेद

किये हुए किवाड़ एवं मुद्रा पर व्याघ्र का अंकन केवल इसी स्थल पर मिले हैं।

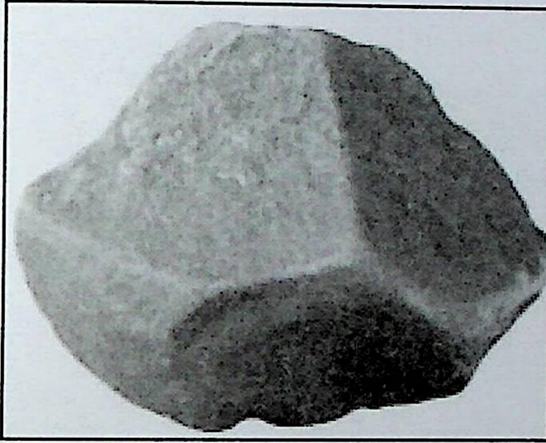
रंगमहल-बड़ोपल के थेड़



सूरतगढ़-हनुमानगढ़ क्षेत्र में रंगमहल, बड़ोपल, मुण्डा, डोबेरी आदि स्थलों के आसपास के क्षेत्र में कई थेड़ मौजूद हैं, जिनमें से कुछ की खुदाई की गयी है। इनमें रंगमहल का टीला सबसे ऊँचा है। ई.1952-54 के बीच स्वीडिश दल द्वारा रंगमहल के टीलों की खुदाई की गई। इस खुदाई से ज्ञात हुआ है कि प्रस्तर युग से लेकर छठी शताब्दी ईस्वी पूर्व तक यह क्षेत्र पूर्णतः समृद्ध था।यहाँ से प्रस्तर युगीन एवं धातु युगीन संस्कृति के अवशेष प्राप्त हुए हैं। रंगमहल के टीलों पर पक्की ईंटें एवं रोड़े, मोटी परत एवं लाल रंग वाले बर्तनों पर काले रंग के मांडने युक्त हड़प्पा कालीन सभ्यता के बरतनों के टुकड़े बिखरे हुए दिखाई देते हैं। यहाँ से ताम्बे के दो कुषाण कालीन सिक्के, गुप्त कालीन खिलौने एवं परवर्ती काल के तांबे के 105 सिक्के भी प्राप्त हुए हैं।

आहड़ सभ्यता

सरस्वती-दृषद्वती नदी सभ्यता से निकलकर इस प्रदेश के मानव ने आहड़, गंभीरी, लूनी, डच तथा कांटली आदि नदियों के किनारे अपनी बस्तियां बसाईं तथा सभ्यता का विकास किया। इन सभ्यताओं को पश्चिमी विद्वानों ने 7 हजार से 3 हजार वर्ष पुराना ठहराया है। कुछ भारतीय विद्वानों ने पश्चिमी विद्वानों द्वारा बताए गए ईसा पूर्व

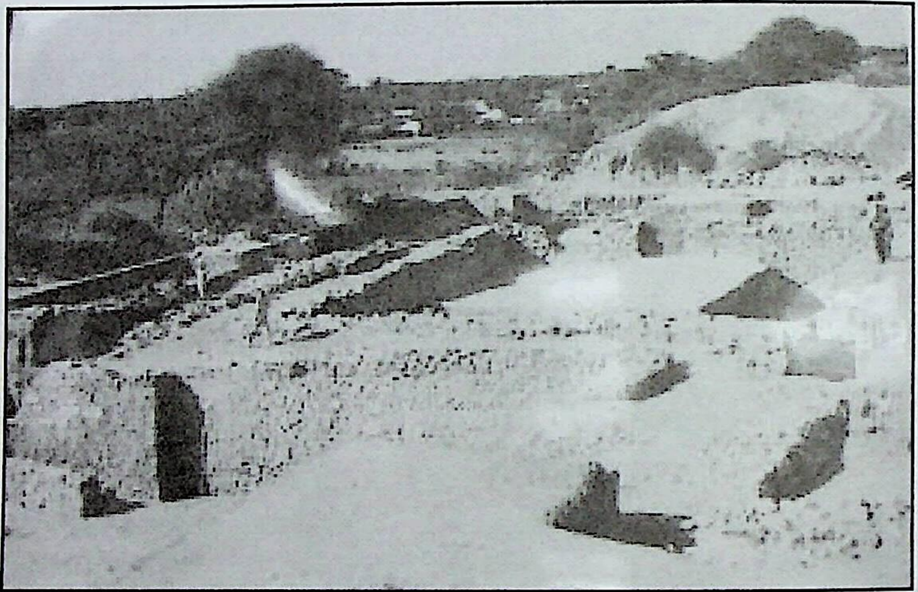


आहाड़ से प्राप्त पेलियोलिथिक स्क्रैपर, गंभीरी नदी चित्तौड़गढ़

के इतिहास को इन तिथियों से भी तीन हजार वर्ष पूर्व का होना सिद्ध किया है। यह सभ्यता उदयपुर जिले में आहड़ नदी के आस-पास, बनास, बेड़च, चित्तौड़गढ़ जिले में गंभीरी, वागन, भीलवाड़ा जिले में खारी तथा कोठारी आदि नदियों के किनारे अजमेर तक फैली थी। इस क्षेत्र में प्रस्तर युगीन मानव निवास करता था। आहड़ टीले का उत्खनन डॉ. एच. डी. सांकलिया के नेतृत्व में हुआ था। प्राचीन शिलालेखों में आहड़ का प्राचीन नाम ताम्रवती अंकित है। दसवीं एवं ग्यारहवीं शताब्दी में इसे आघाटपुर अथवा आघट दुर्ग कहा जाता था। बाद के काल में इसे धूलकोट भी कहा जाता था। उदयपुर से तीन किलोमीटर दूर 1600 फुट लम्बे और 550 फुट चौड़े धूलकोट के नीचे आहड़ की पुरानी बस्ती दबी हुई है, जहाँ से ताम्रयुगीन सभ्यता प्राप्त हुई है। ये लोग लाल, भूरे एवं काले मिट्‌टी के बर्तन काम में लेते थे, जिन्हें उलटी तपाई शैली में पकाया जाता था। घर पक्की ईंटों के होते थे। पशुपालन इनकी अर्थव्यवस्था का मुख्य आधार था। आहड़ से मानव सभ्यता के कई स्तर प्राप्त हुए हैं। प्रथम स्तर में मिट्‌टी की दीवारें और मिट्‌टी के बर्तन मिले हैं। दूसरा स्तर प्रथम स्तर के ऊपर स्थित है। यहाँ से बस्ती के चारों ओर दीवार भी मिली है। तीसरे स्तर से चित्रित बर्तन मिले हैं। चतुर्थ स्तर से ताम्बे की दो कुल्हाड़ियां प्राप्त हुई हैं। घरों से अनाज पीसने की चक्कियां, ताम्बे के औजार तथा पत्थरों के आभूषण मिले हैं। गोमेद तथा स्फटिक मणियां भी प्राप्त हुई हैं। तांबे की छः मुद्रायें एवं तीन मोहरें मिली हैं। एक मुद्रा पर एक ओर त्रिशूल तथा दूसरी ओर अपोलो देवता अंकित है जो तीर एवं तरकश से युक्त है। इस पर यूनानी भाषा में लेख अंकित है। यह मुद्रा दूसरी शताब्दी ईस्वी की है। यहाँ के लोग मृतकों को कपड़ों तथा आभूषणों के साथ गाड़ते थे।

बालाथल सभ्यता

बालाथल उदयपुर जिले की वल्लभनगर तहसील में स्थित है। यहाँ से ई.1993 में ई.पू. 3000 से लेकर ई.पू. 2500 तक की ताम्रपाषाण युगीन संस्कृति के बारे में पता चला है। यहाँ के लोग भी कृषि, पशुपालन एवं आखेट करते थे। ये लोग मिट्‌टी के बर्तन बनाने में निपुण थे तथा कपड़ा बुनना जानते थे। यहाँ से तांबे के सिक्के, मुद्रायें एवं



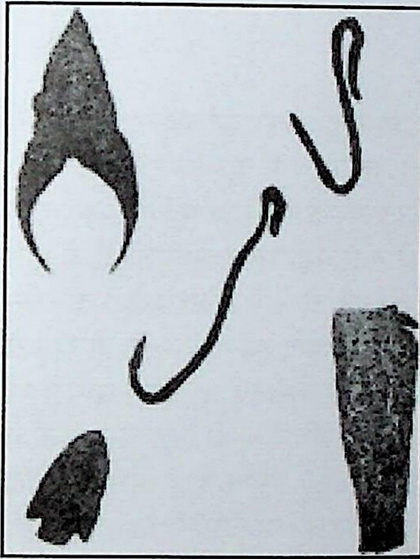
आभूषण प्राप्त हुए हैं। आभूषणों में कर्णफूल, हार और लटकन मिले हैं। यहाँ से एक दुर्गनुमा भवन भी मिला है तथा ग्यारह कमरों वाले विशाल भवन भी प्राप्त हुए हैं।

बागोर सभ्यता

भीलवाड़ा कस्बे से 25 किलोमीटर दूर कोठारी नदी के किनारे वर्ष ई.1967–68 में डॉ. वीरेंद्रनाथ मिश्र के नेतृत्व में हुई खुदाई में ई.पू. 3000 से लेकर ई.पू. 500 तक के काल की बागोर सभ्यता का पता लगा। यहाँ के निवासी कृषि, पशुपालन तथा आखेट करते थे। यहाँ से तांबे के पाँच उपकरण प्राप्त हुए हैं। घर पत्थरों से बनाए गए हैं। बर्तनों में लोटे, थाली, कटोरे, बोतल आदि मिले हैं।

गणेश्वर सभ्यता

सीकर जिले की नीम का थाना तहसील में कांटली नदी के तट पर गणेश्वर टीले की खुदाई ई.1979–87 के मध्य की गयी थी। यहाँ से तीन विभिन्न सांस्कृतिक चरणों की पहचान हुई है। निम्न स्तरों में सूक्ष्म पाषाण उपकरण प्राप्त हुए हैं, जिनका उपयोग बाणाग्र, मत्स्य कांटे, भालाग्र, सुए आदि के रूप में होता था। मध्य स्तरों से हस्तनिर्मित एवं चाक निर्मित मृणपात्र प्राप्त हुए हैं जिन्हें गणेश्वर–जोधपुरा मृदभाण्ड कहा जाता है। इनमें गोल एवं बल्ब के आकार के बड़े मटके, कैरीनेटेड घड़े, उथली परात एवं कटोरे आदि सम्मिलित हैं। अंतिम एवं ऊपरी स्तर से बड़ी संख्या में ताम्र वस्तुएं- बाणाग्र, छल्ले, चूड़ियां दरांती, गेंद, कुल्हाड़ियां आदि प्राप्त हुई हैं। ऊपरी चरण से प्राप्त कलश, तलसे, प्याले, हाण्डी आदि मृणपात्रों में चित्र सज्जा भी उपलब्ध है। यहाँ से प्राप्त बर्तन हड़प्पा सभ्यता एवं गेरूवर्णीय मृणपात्र सभ्यताओं से अलग हैं। यह सभ्यता लगभग



गणेश्वर से प्राप्त ताम्बे के कांटे, तीर, कुल्हाड़ी

2800 वर्ष पुरानी है। ताम्र युगीन सभ्यताओं में यह अब तक प्राप्त सबसे प्राचीन केन्द्र है। यह सभ्यता सीकर से झुंझुनूं, जयपुर तथा भरतपुर तक फैली थी। यहाँ से मछली पकड़ने के कांटे मिले हैं, जिनसे पता चलता है कि उस समय कांटली नदी में पर्याप्त जल था। यहाँ का मानव भोजन संग्रहण की अवस्था में था। यहाँ से ताम्र उपकरण एवं बर्तन बड़ी संख्या में मिले हैं। ऐसा संभवतः इसलिए संभव हो सका, क्योंकि खेतड़ी के ताम्र भण्डार यहाँ से अत्यंत निकट थे।

सरस्वती नदी सभ्यता के स्थल

राजस्थान में वैदिक काल तथा उससे भी पूर्व सरस्वती एवं दृषद्वती नदियाँ प्रवाहित होती थीं। दसवीं सदी के आसपास दक्षिणी-पश्चिमी राजस्थान की गणना सारस्वत मण्डल में की जाती थी। यह पूरा क्षेत्र लूणी नदी बेसिन का एक भाग है। लूनी नदी सरस्वती की सहायक नदी थी। सरस्वती आज भी राजस्थान में भूमिगत होकर बह रही है। कुछ विद्वान घग्घर (हनुमानगढ़-सूरतगढ़ क्षेत्र में बहने वाली नदी) को सरस्वती का परवर्ती रूप मानते हैं। सरस्वती के किनारे काम्यक नामक घना वन था। महाभारत में सरस्वती के मरुप्रदेश में विलीन हो जाने का उल्लेख है। हनुमानगढ़ जिले में घग्घर को नाली कहा जाता है। यहाँ पर एक दूसरी धारा जिसे नाईवाला कहते हैं, घग्घर में मिल जाती है, जो असल में सतलज का प्राचीन बहाव क्षेत्र है। यह सरस्वती नदी का पुराना हिस्सा था। तब तक सिंधु में मिलने के लिए सतलज में व्यास का समावेश नहीं हो पाया था। हनुमानगढ़ के दक्षिण पूर्व की ओर नाली के दोनों किनारे ऊंचे-ऊंचे दिखाई देते हैं। सूरतगढ़ से तीन मील पहले ही एक और सूखी हुई धारा आकर घग्घर में मिलती है। यह सूखी धारा वास्तव में दृषद्वती है। सूरतगढ़ से आगे अनूपगढ़ तक तीन मील की चौड़ाई रखते हुए नदी के दोनों किनारे और भी ऊंचे दिखाई देते हैं। बीकानेर जिले में पहुँच कर घग्घर जल रहित हो जाती है। दृषद्वती हिमालय की निचली पहाड़ियों से कुछ दक्षिण से निकलती है। पंजाब में इसे चितांग बोलते हैं। भादरा में फिरोजशाह की बनवाई हुई पश्चिम यमुना नहर, दृषद्वती के कुछ भाग में दिखाई पड़ती है। भादरा के आगे नोहर तथा दक्षिण में रावतसर के पास इसके रेतीले किनारे दिखते हैं। आगे अनुपजाऊ, किंतु हरा-भरा क्षेत्र है। इस पूरे क्षेत्र में जो थेड़ दिखाई देते हैं, उनके नीचे सरस्वती सभ्यता के स्थल दबे हुए

हैं जिनसे काले एवं सलेटी रंग के बर्तन मिलते हैं।

ऋग्वैदिक सभ्यता की सामग्री

सरस्वती और दृषद्वती के बीच के हिस्से को मनु ने ब्रह्मावर्त बताया है जो अति पवित्र एवं ज्ञानियों का क्षेत्र माना गया है। आगे उत्तर-पूर्व में कुरुक्षेत्र स्वर्ग के समान माना गया है। सरस्वती-दृषद्वती के इस क्षेत्र में अनूपगढ़ क्षेत्र से उत्तर पूर्व की ओर चलने पर हड़प्पा कालीन सभ्यता से बाद की सभ्यता के नगर बड़ी संख्या में मिलते हैं जो भूमि के नीचे दबकर टीले के रूप में दिखाई पड़ते हैं। इन टीलों में स्लेटी मिट्टी के बर्तन काम में लाने वाली सभ्यता निवास करती थी। यह सभ्यता हड़प्पा कालीन सभ्यता से काफी बाद की थी। अनूपगढ़ तथा तरखानवाला डेरा से प्राप्त खुदाई से इस सभ्यता पर कुछ प्रकाश पड़ा है। राजस्थान में इस सभ्यता का प्रतिनिधित्व करने वाले अन्य टीलों में नोह (भरतपुर), जोधपुरा (जयपुर) एवं सुनारी (झुंझुनूं) प्रमुख हैं, ये सभ्यताएं लौह युगीन सभ्यता का हिस्सा हैं। सुनारी से लौह प्राप्त करने की प्राचीनतम भट्टियाँ प्राप्त हुई हैं।

महाभारत कालीन सभ्यता की सामग्री

महाभारत काल के आने से पूर्व मानव बस्तियां सरस्वती तथा दृषद्वती क्षेत्र से हटकर पूर्व तथा दक्षिण की ओर खिसक आयीं थीं। उस काल में कुरु जांगला: तथा मद्र जांगला के नाम से पुकारे जाने वाले क्षेत्र आज बीकानेर तथा जोधपुर के नाम से जाने जाते हैं। इस भाग के आसपास का क्षेत्र सपादलक्ष कहलाता था। कुरु, मत्स्य तथा शूरसेन उस काल में बड़े राज्यों में से थे। अलवर राज्य का उत्तरी विभाग कुरुदेश के, दक्षिणी और पश्चिमी विभाग मत्स्य देश के और पूर्वी विभाग शूरसेन के अंतर्गत था। भरतपुर तथा ध ौलपुर राज्य तथा करौली राज्य का अधिकांश भाग शूरसेन देश के अंतर्गत थे। शूरसेन देश की राजधानी मथुरा, मत्स्य की विराट तथा कुरु की इन्द्रप्रस्थ थी। महाभारत काल में शाल्व जाति की बस्तियों का उल्लेख मिलता है जो भीनमाल, सांचोर तथा सिरोही के आसपास थीं।

जनपद काल सभ्यता की सामग्री

ई.पू. 1000 से लेकर ई.पू. 300 तक का समय जनपद काल कहलाता है। इस काल से इतिहास की आधारभूत सामग्री, सिक्के, आभूषण अभिलेख आदि मिलने लगते हैं। सिकंदर के आक्रमण के काल में और उसके बाद गुप्तों तक राजस्थान में अनेक छोटे-छोटे जनपदों का उल्लेख मिलता है। इनमें भरतपुर के आस-पास राजन्य जनपद तथा मत्स्य जनपद, नगरी का शिवि जनपद और अलवर के निकट शाल्व जनपद प्रमुख हैं।

मौर्यकालीन सभ्यता की सामग्री

मौर्यकाल में लगभग पूरा राजस्थान मौर्यों के अधीन था। चंद्रगुप्त मौर्य के समय से ही मौर्यों की सत्ता इस क्षेत्र में फैल गयी। कोटा जिले के कण्सवा गाँव से मिले शिलालेख से यह पता चलता है कि वहाँ मौर्य वंश के राजा 'धवल' का राज्य था। ई. 733 के लगभग जब बप्पा रावल ने चित्तौड़ विजय किया, तब वहाँ मौर्य राजा 'मान' का राज्य था। चित्तौड़गढ़ दुर्ग के पास पूठोली गाँव में मानसरोवर नामक तालाब के किनारे राजा मान का ई.713 का एक शिलालेख मिला है। मौर्यकाल में राजस्थान, सिंध, गुजरात तथा कोंकण का क्षेत्र अपर जनपद अथवा पश्चिम जनपद कहलाता था।

बैराठ सभ्यता की सामग्री

बैराठ सभ्यता मौर्य कालीन सभ्यता है। यहाँ से मौर्य कालीन सभ्यता के अवशेष बड़े स्तर पर प्राप्त हुए हैं। जयपुर से 85 किलोमीटर दूर विराटनगर की भब्रू पहाड़ी से मौर्य सम्राट अशोक का एक शिलालेख मिला है। ई.1840 में यह शिलालेख एशियाटिक सोसायटी ऑफ बंगाल (कलकत्ता) को स्थानांतरित कर दिया गया। ई.1909 में बीजक की पहाड़ी में एक बौद्ध विहार (गोलमंदिर) के अवशेष प्राप्त हुए। इस विहार को सम्राट अशोक के शासन काल के प्रारंभिक दिनों में निर्मित माना जाता है। इसमें पत्थरों के स्थान पर लकड़ी के स्तंभों तथा ईंटों का प्रयोग हुआ है। इस स्थान से अलंकारिक मृद्पात्र, पहिये पर त्रिरत्न तथा स्वस्तिक के चिह्न प्राप्त हुए हैं। जयपुर नरेश सवाई रामसिंह के शासन काल में यहाँ से एक स्वर्णमंजूषा प्राप्त हुई थी, जिसमें भगवान बुद्ध के अस्थि अवशेष थे। चीनी यात्री ह्वेनसांग ने इस क्षेत्र में 8 बौद्ध विहार देखे थे, जिनमें से 7 का अब तक पता नहीं चल पाया है। अशोक ने जिस योजना के अनुसार शिलालेख लगवाए थे, उसके अनुसार इन 8 बौद्ध विहारों के पास 128 शिलालेख लगवाए होंगे, किंतु इनमें से केवल 2 शिलालेख ही प्राप्त हुए हैं।

विदेशी शासकों के स्थलों से प्राप्त सामग्री

यूनानी राजा मिनेण्डर ने ई.पू. 150 में मध्यमिका नगरी पर अधिकार किया तथा अपने राज्य की स्थापना की। तब से भारत में विदेशी जातियों का शासन होना आरंभ हो गया। यूनानी राजाओं के सिक्के सांभर झील के पास स्थित मीठे पानी की झील नलियासर से प्राप्त हुए हैं। उनके कुछ सिक्के बैराठ तथा नगरी से भी प्राप्त हुए हैं। ई.पू. प्रथम शताब्दी में पश्चिमी राजस्थान पर सीथियनों के आक्रमण आरंभ हुए। कुषाण, पह्लव तथा शकों को सम्मिलित रूप से सीथियन कहा जाता है। ईसा से लगभग 90 वर्ष पहले राजस्थान से यूनानी शासकों का शासन समाप्त हो गया तथा सीथियनों ने अपने पांव जमा लिये। सौराष्ट्र से प्राप्त उषवदात के लेख के अनुसार शकों का राजा पुष्कर होता हुआ मथुरा तक पहुँचा। ये लोग ई.पू. 57 तक मथुरा पर शासन करते रहे। शक मूलतः एशिया में सिकंदरिया के रहने वाले थे। राजस्थान में नलियासर से शक शासक

हुविष्क की मुद्रा प्राप्त हुई है। उसका शासनकाल ई.95-127 के बीच था। पश्चिमी भारत में शकों की दो शाखायें- क्षहरात एवं चष्टन, कुषाणों के अधीन रहकर शासन करती थीं। कनिष्क के शिलालेख के अनुसार ई.83-119 तक कुषाण राजस्थान के पूर्वी भाग पर शासन करते रहे। ई.150 के सुदर्शन झील अभिलेख से ज्ञात हुआ है कि कुषाणों का राज्य मरुप्रदेश से साबरमती के आसपास तक फैला हुआ था।

देशी जनपदों के पुनरुत्थान काल की सामग्री

देशी जनपदों के सिर उठाने से, ई.176 के लगभग कुषाणों की कमर टूटने लगी तथापि वे ई.295 तक किसी न किसी रूप में शासन करते रहे। ई.226 में मालवों ने स्वयं को स्वतंत्र घोषित कर दिया। कर्कोट नगर से प्राप्त मुद्राओं पर 'मालवानाम् जयः' अंकित है। इसके बाद चौथी शताब्दी तक मालव, अर्जुनायन तथा यौधेयों की प्रभुता का काल है। ये सब जातियाँ अथवा जनपद वस्तुतः महाभारत कालीन जातियों के उत्तरकालीन अवशेष हैं। मालव जयपुर के आसपास के क्षेत्र में थे जो बाद में अजमेर, टोंक तथा मेवाड़ के क्षेत्र तक फैल गए। समुद्रगुप्त के काल तक मालव अपनी सत्ता गणतंत्रात्मक बनाए रहे। मालवों ने अर्जुनायनों के साथ मिलकर कुषाणों को परास्त किया। अर्जुनायन भरतपुर-अलवर क्षेत्र में फैले थे। राजस्थान के उत्तरी क्षेत्र के यौधेय (अब जोहिये) भी गणतंत्रात्मक अथवा अर्द्ध राजतंत्रात्मक व्यवस्था बनाकर रहते थे। यौधयों ने राजस्थान से कुषाण सत्ता को उखाड़ फैंका। इस युग में आभीर तथा मौखरी गणराज्य भी अपना अस्तित्व रखते थे। इनके प्रमाण स्वरूप कई मुद्राएं प्राप्त हुई हैं, जो विभिन्न संग्रहालयों में संग्रहित की गई है।



रंगमहल के टीलों से प्राप्त कॉर्क युक्त इत्रदानी जैसी सुराही का मुंह

गुप्तकालीन सामग्री

भारतीय इतिहास में ई.320-495 तक का काल गुप्तकाल कहलाता है। समुद्रगुप्त ने पश्चिमी भारत के गणराज्यों पर अपना प्रभुत्व स्थापित किया। इनमें से अधिकांश गणराज्यों ने बिना लड़े ही समुद्रगुप्त की अधीनता स्वीकार की। समुद्रगुप्त के पुत्र चंद्रगुप्त (द्वितीय) ने इन गणराज्यों को नष्ट कर इस सम्पूर्ण क्षेत्र को अपने राज्य में मिला लिया। उसके आक्रमणों से शक क्षत्रपों का अस्तित्व हमेशा के लिए नष्ट हो गया। पश्चिमी राजस्थान के नाग शासक भी गुप्तों के अधीन सामंत हो गए। गुप्त



रंगमहल से प्राप्त गुप्तकालीन उमा-महेश्वर, भगवान शिव के तीन मुख हैं, शिव अपने अनुचर सहित एवं उमा अपनी अनुचरी सहित विराजमान हैं, उमा की देह पर आभूषणों एवं गांधार शैली के घाघरे का अंकन है।

कालीन भवनों एवं मंदिरों के अवशेष जालोर जिले के भीनमाल तथा मण्डोर आदि स्थानों पर देखे जा सकते हैं। इस काल की मूर्तियां, सिक्के, कलात्मक तोरण, स्तम्भ तथा अभिलेख राजस्थान के विभिन्न संग्राहालयों में रखे गए हैं।

हूणों द्वारा नष्ट सभ्यता स्थलों से प्राप्त सामग्री

हूणों के आक्रमण गुप्त काल में आरंभ हुए। कई शताब्दियों तक गुप्त शासकों ने हूणों से देश की रक्षा की किंतु अंत में हूणों के कारण गुप्त साम्राज्य अस्ताचल को चला गया। हूण राजा तोरमाण ने ई. 503 में गुप्तों से राजस्थान छीन लिया। छठी शताब्दी के आसपास हूणों ने सभी गणतंत्रात्मक तथा अर्द्ध राजतंत्रात्मक राज्य छिन्न-भिन्न कर दिए तथा उस काल के सभ्यता के प्रमुख केन्द्र नष्ट कर दिए। इनमें बैराठ, रंगमहल, बड़ोपल और पीर सुल्तान की थड़ी आदि स्थान प्रमुख हैं। इन स्थलों से प्राप्त सामग्री विभिन्न संग्रहालयों में प्रदर्शित की गई है, जिनमें बीकानेर दुर्ग का संग्रहालय प्रमुख है।

हर्षवर्धन काल की सामग्री

सातवीं शताब्दी में पुष्यभूति वंश का राजा हर्षवर्धन प्रतापी सम्राट हुआ। उसका राज्य उत्तर में हिमालय पर्वत से लेकर दक्षिण में नर्मदा नदी तक तथा पश्चिम में सौराष्ट्र से लेकर पूर्व में आसाम तक फैला हुआ था। हर्ष के बारे में हमें दो ग्रंथों- बाणभट्ट द्वारा लिखित हर्षचरित तथा ह्वेनसांग द्वारा रचित सी-यू-की से जानकारी मिलती है। चीनी यात्री ह्वेनसांग, हर्ष के शासनकाल में भारत आया था। चीनी लेखक मा-त्वान-लिन ने भी हर्ष के विजय प्रसंगों का वर्णन किया है। नौसारी दानपत्र, खेड़ा से प्राप्त दद्द के

दानपत्र में हर्ष के वलभी युद्ध का उल्लेख है। कल्हण की राजतरंगिणी हर्ष के कश्मीर का राजा होने की पुष्टि करती है। हर्ष के दरबार में रहने वाले राजकवि बाणभट्ट ने कादम्बरी तथा हर्ष चरित की रचना की। हर्ष के दरबार में रहने वाले मतंग नामक कवि ने सूर्यशतक की रचना की। स्वयं हर्ष ने संस्कृत में तीन नाटक नागानंद, प्रियदर्शिका तथा रत्नावली लिखे। बाणभट्ट लिखता है कि हर्ष की संस्कृत भाषा की कविताओं में अमृत की वर्षा होती थी। हर्ष के काल में राजपूताना चार भागों में विभक्त था- (1.) गुर्जर, (2.) बघारी, (3.) बैराठ तथा (4.) मथुरा। बयालीस वर्ष तक सफलता पूर्वक शासन करने के बाद ई.648 में हर्षवर्धन की मृत्यु हुई। हर्ष कालीन समाज के चिह्न एवं कलाकृतियां राजस्थान के विभिन्न भागों से प्राप्त हुई हैं, जिन्हें विभिन्न संग्रहालयों में रखा गया है।

राजपूत काल एवं मुगल काल की सामग्री

राजस्थान के इतिहास पर ई.648 से ई.1206 तक राजपूत काल, ई.1206 से ई. 1526 तक दिल्ली सल्तनत काल तथा ई.1526 से ई.1737 तक मुगल काल का प्रभाव रहा। इस कालखण्ड की विभिन्न प्रकार की ऐतिहासिक सामग्री संग्रहालयों में रखी गई हैं। इस सामग्री में शिलालेख, ताम्रपत्र, मुद्राएं, ताड़पत्र, प्राचीन ग्रंथ, चित्रित ग्रंथ, नक्शे, अस्त्र-शस्त्र, बर्तन, वेशभूषाएं, आभूषण, सिक्के, पाण्डुलिपियां, रियासती दस्तावेज, पत्राचार, बहियां आदि प्रमुख हैं। शासकों के कोठारों, भण्डारों, शासकीय कार्यालयों की बहियों के साथ-साथ रावों एवं भाटों द्वारा लिखी गई बहियां एवं वंशावलियां भी संग्रहालयों के लिए महत्वपूर्ण सिद्ध हुई हैं।

मृणप्रतिमाओं का योगदान

राजस्थान में मृण प्रतिमाओं का इतिहास हजारों साल पुराना है। सिंधु सभ्यता के प्रमुख केन्द्र कालीबंगा से पांच हजार वर्ष पुरानी सैंकड़ों सुंदर मृणमूर्तियां प्राप्त हुई हैं। यहाँ से प्राप्त एक भद्र पुरुष के शीश की मृणमूर्ति अत्यंत सुंदर है। इस मूर्ति से उस काल के उच्च वर्गीय पुरुषों द्वारा किए जाने वाले केश विन्यास का ज्ञान होता है। इस काल में पुरुष दाढ़ी रखते थे। सैंधव सभ्यता के पश्चात् लगभग 2 हजार साल तक राजस्थान में अपेक्षाकृत कम संख्या में मृणप्रतिमाओं का निर्माण हुआ। उदयपुर जिले के आहाड़-धूलकोट के उत्खनन से ई.पू.1700 से ई.पू.1500 के समय के बैल, हाथी, घोड़ा आदि पशुओं की मृणमूर्तियां प्राप्त हुई हैं। आहड़ से प्राप्त इस श्रेणी का घोड़ा अत्यंत महत्वपूर्ण पुरावशेष है। भरतपुर जिले के नोह नामक स्थल के उत्खनन से प्राप्त चित्रित सलेटी रंग के पक्षी की मृण्मूर्ति पुरातत्व जगत की महत्वपूर्ण उपलब्धि है। यह मृणमूर्ति लगभग ई.पू.1100 की मानी जाती है। मौर्य युग की सैंकड़ों मृणमूर्तियां नोह क्षेत्र से प्राप्त हुई हैं। इनके सामने का भाग चपटा एवं चौड़ा है। इनमें उभरती नारी आकृतियों का घघरीदार पहनावा विलक्षण है। छाती का ऊपरी भाग चपटा एवं ऊंचा है।

कमर बिल्कुल पतली है, जबकि नितम्ब तथा जांघ के ऊपर का भाग भारी है। मूर्ति निर्माण की यह शैली उत्तर भारत में बहुत लम्बे समय तक प्रचलन में रही। नोह एवं बैराठ से मौर्यकालीन अनेक मृणमूर्तियां मिली हैं।

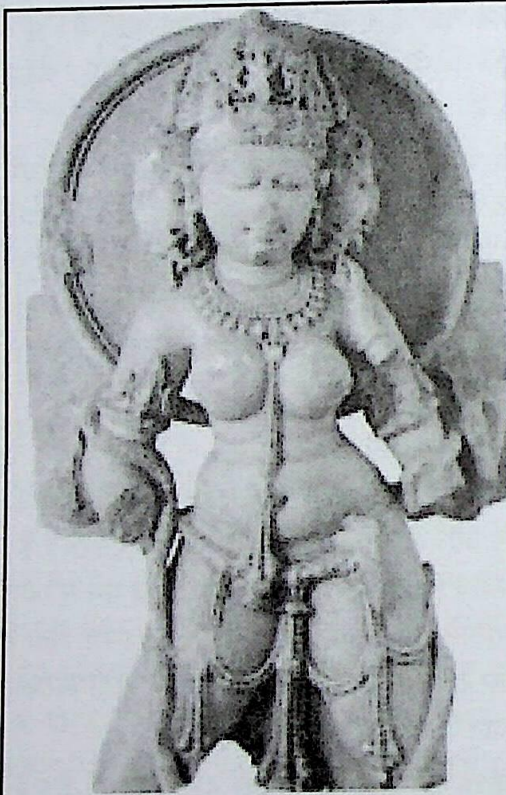
शुंग काल की मृणप्रतिमाओं की पहचान उनके परिधान के अंकन से होती है। इनमें दो गांठों वाली पगड़ी को भी स्थान मिला है। इस युग की प्रतिमाओं में पैरों के बीच धोती का तिकोना छोर धरती को स्पर्श करता है। राजस्थान में शुंग काल की कला के प्रमुख केन्द्र रैढ, सांभर, बैराठ और नगर थे। रैढ से प्राप्त एक स्त्री मूर्ति में उसे भी पगड़ी पहनाई गई है। उसने दो वेणियां बना रखी हैं। इससे केश विन्यास की परम्पराओं को समझने में सहायता मिलती है।

कुषाण कालीन मृणप्रतिमाओं की पहचान भी बड़ी आसानी से हो जाती है। ये अत्यधिक संख्या में मिलती हैं। ये भी चपटी हैं किंतु शुंग कालीन प्रतिमाओं से ही अधिक उभरी हुई हैं। इनका मुखमण्डल अधिक चौड़ा है, आकृति मोटी एवं सुघड़ है। नारी आकृतियां अधिक मांसल एवं कमनीय हैं। इनकी केश सज्जा पूर्व की एवं पश्चात् की प्रतिमाओं से अलग प्रकार की है। सामने झूलते हुए बालों की गोल बनावट होती है और नीचे से दोनों ओर बाल पीछे की ओर खींच लिए जाते हैं। चपटी एवं चौड़ी करघनी इस काल की प्रतिमाओं की मुख्य पहचान है।

गुप्त काल की मृणमूर्तियां, मूर्तिकला के चरम उत्कर्ष का दर्शन कराती हैं। इन प्रतिमाओं में सुघराई, अभिप्रायों की रुचि एवं अलंकरण की शोभा अनुपम है। मृणप्रतिमाओं का उभरा हुआ अण्डाकार चेहरा, पतला शरीर तथा सिर के घुंघराले बाल सजीवता का आभास देते हैं। राजस्थान में कुषाण काल, कुषाणोत्तर काल एवं गुप्त कालीन मिट्टी के खिलौने तथा मृणमूर्तियां रैढ़, सांभर, नगर, नगरी, आहाड़, रंगमहल आदि स्थलों से बड़ी संख्या में उपलब्ध हुए हैं, जो राजस्थान के विभिन्न संग्रहालयों में प्रदर्शित किए गए हैं।

उत्कीर्णित लेखों एवं अभिलेखों का योगदान

शिलाखण्डों, भित्तियों, गुफाओं, स्तम्भों, ताम्रपत्रों आदि पर खुदे हुए लेखों से मानव सभ्यता का प्रामाणिक इतिहास प्राप्त होता है। ऐसे अनेक लेख विभिन्न भवनों के खण्डहरों, मंदिरों, किलों एवं अन्य स्थलों से प्राप्त हुए हैं, जिनसे तत्कालीन भारतीय समाज और संस्कृति का दिग्दर्शन होता है। ये लेख राज-प्रशासन, दान-धर्म, भवन-मंदिर निर्माण एवं वीर-प्रशस्ति आदि से सम्बन्धित हैं। कुछ लेख जन कल्याणकारी कार्य और राज निर्देशन को इंगित करते हैं। इनमें राजाओं, राजपरिवार के सदस्यों एवं सामंतों आदि के नाम, वंश-परिचय, संधि-विग्रह, सामाजिक, धार्मिक तथा आर्थिक कार्य कलाप लिखे गए हैं। इनमें अशोक के अभिलेख, धौली शिलालेख, एर्रगुडी शिलालेख, ब्रईगिरि शिलालेख, दिल्ली-मेरठ स्तम्भलेख, रामपुरवा स्तम्भलेख,



ब्रह्माणी, संगमरमर प्रतिमा
11वीं शती ईस्वी

रूमिन्देई स्तम्भलेख, समुद्रगुप्त का प्रयाग अभिलेख, स्कन्दगुप्त का भीतरी अभिलेख, कलिंगराज खारवेल का हाथीगुम्फा अभिलेख तत्कालीन सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक इतिहास को उद्घाटित करते हैं।

राजस्थान के प्राचीन दुर्गों, मंदिरों, सरोवरों, बावड़ियों एवं महत्वपूर्ण भवनों की दीवारों, देव प्रतिमाओं, लाटों एवं विजय स्तंभों आदि पर राजाओं, राजकुमारियों, राजमहिषियों, सामंतों, दानवीरों, सेठों और विजेता योद्धाओं द्वारा समय-समय पर उत्कीर्ण करवाए गए शिलालेख मिलते हैं, जो लाखों की संख्या में हैं। अशोक के शिलालेख खरोष्ठी एवं ब्राह्मी लिपि में हैं। उसके बाद के शिलालेख संस्कृत एवं राजस्थानी भाषा में हैं। मुस्लिम शासकों के शिलालेख फारसी भाषा एवं अरबी लिपि में मिलते हैं। ई.608 का गोठ मांगलोद स्थित दधिमती माता मंदिर का अभिलेख, ई.661 का अपराजित का शिलालेख, ई.685 का मण्डोर शिलालेख, 8वीं ईस्वी का मान मोरी का शिलालेख, ई. 861 के घटियाला के शिलालेख, ई.956 का ओसियां शिलालेख, ई.1170 का बिजोलिया के पार्श्वनाथ मंदिर के निकट एक चट्टान पर उत्कीर्ण लेख, ई.1273 का चौखा शिलालेख, ई.1274 का रसिया की छतरी का शिलालेख, ई.1460 का चित्तौड़ दुर्ग का कीर्ति स्तंभ प्रशस्ति शिलालेख, ई.1285 का आबू पर्वत शिलालेख, ई.1434 का देलवाड़ा का शिलालेख, ई.1428 का श्रृंगी ऋषि का शिलालेख, ई.1428 का समिधेश्वर मंदिर का शिलालेख, ई.1439 की रणकपुर प्रशस्ति, ई.1460 की कुंभलगढ़ प्रशस्ति, ई.1613 का जमवा रामगढ़ का प्रस्तर लेख, ई.1594 की रायसिंह की बीकानेर प्रशस्ति, ई.1652 की उदयपुर के जगदीश मंदिर की जगन्नाथ राय की प्रशस्ति तथा ई. 1676 का राजसमंद झील के किनारे उत्कीर्ण राजप्रशस्ति महाकाव्य, राजस्थान के प्रमुख एवं अत्यन्त महत्वपूर्ण शिलालेखों में से हैं। इनमें से बहुत से शिलालेख प्रदेश के विभिन्न

संग्रहालयों में रखे गए हैं। कुछ शिलालेख राष्ट्रीय संग्रहालयों की शोभा बढ़ा रहे हैं।

मुद्राओं का योगदान



गुप्तकालीन स्वर्ण मुद्रा

प्रदेश के आर्थिक एवं सामाजिक इतिहास के निर्माण में मुद्राओं एवं सिक्कों का अभूतपूर्व योगदान है। इन मुद्राओं से तत्कालीन शासक और उसका समय तो ज्ञात होता ही है, साथ ही उस युग की भाषा, लिपि, धर्म, समाज और आर्थिक दशा का भी ज्ञान होता है। आहत अथवा पंचमार्क सिक्के सबसे पुराने हैं, जिनसे उस युग की राजनीतिक, धार्मिक और सामाजिक स्थिति का पता चलता है। राजस्थान से मिले पंचमार्का सिक्के, गधैया सिक्के, ढब्बू सिक्के, आहड़ उत्खनन से प्राप्त सिक्के, मालवगण के सिक्के और सीलें, राजन्य सिक्के, यौधेय सिक्के, रंगमहल से प्राप्त सिक्के, सांभर से प्राप्त मुद्राएं, सेनापति मुद्राएं, रेड से प्राप्त सिक्के, मित्र मुद्राएं, नगर मुद्राएं, बैराट से प्राप्त मुद्राएं, गुप्तकालीन सिक्के, गुर्जर प्रतिहारों के सिक्के, चौहानों के सिक्के तथा मेवाड़ी सिक्के राजस्थान के प्राचीन इतिहास को जानने के प्रमुख स्रोत हैं।

मौर्य युग के पश्चात् की मुद्राएं अधिक व्यवस्थित और सुन्दर हैं तथा विभिन्न राजाओं और राजवंशों की स्वर्ण, रजत और ताम्र मुद्राएं समय-समय पर मिलती रहती हैं, जिनसे समाज और धर्म की जानकारी प्राप्त होती है। यवन, पह्लव, शक, कुषाण एवं सातवाहन, गुप्त, राजपूत, मुगल इत्यादि विभिन्न राजवंशों के सिक्के मिले हैं, जो अपने-अपने युग पर प्रकाश डालते हैं। गुप्त सम्राटों के सोने के सिक्के अभूतपूर्व हैं, जो गुप्तों और लिच्छवियों के सम्बन्धों पर प्रकाश डालते हैं तथा उस युग की समृद्धि एवं राजकीय शक्ति की गाथा कहते हैं। गुहिल राजा कालाभोज का सोने का सिक्का उस युग के इतिहास को जानने का एकमात्र साधन है। अजमेर से मिले एक सिक्के में एक तरफ पृथ्वीराज चौहान का नाम अंकित है तथा दूसरी तरफ मुहम्मद गौरी का नाम अंकित है। इससे अनुमान होता है कि पृथ्वीराज चौहान को परास्त करने के बाद मुहम्मद गौरी ने उसके सिक्कों को जब्त करके उन्हें अपने नाम से दुबारा जारी किया था।



जहांगीर का राशि बोधक सिक्का

राजस्थान के संग्रहालयों में मुगल शासकों द्वारा जारी किए गए सिक्के बड़ी संख्या में मिलते हैं। इनमें जहांगीर द्वारा जारी किए गए राशि बोधक सिक्के विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। उसने सिक्कों पर अपने नाम के साथ नूरजहाँ का नाम भी उत्कीर्ण करवाया तथा सिक्कों पर अपना आवक्ष चित्र मुद्रित करवाया, जिसमें वह पालथी मारे बैठा है तथा उसके दाहिने हाथ में मदिरा का चषक है। उसकी ऐसी मुहरें हिजरी 1023 में अजमेर टकसाल में बनीं, जिन पर फारसी में शबीह-हजरत-शाह जहांगीर तथा पृष्ठभाग में सूर्य का चिह्न बना है एवं इसके चारों ओर फारसी में अल्लाहु अकबर-जरब-अजमेर लिखा है। यह सिक्का लंदन के ब्रिटिश म्यूजियम में संगृहीत है। हिजरी 1027 (ई.1618) अर्थात् अपने राज्य के 13वें वर्ष में उसने राशिबोधक सिक्के चलाए। प्रत्येक सिक्के को ढालते समय सूर्य जिस राशि में था, सिक्कों पर वही राशि उत्कीर्ण की गई। उससे पहले अकबर के समय में हिजरी सन् के साथ चंद्र माह का नाम सिक्कों पर लिखा जाता था। जहांगीर के इस आदेश से आगरा टकसाल से मुहरें तथा अहमदाबाद की टकसाल से चांदी के रुपए जारी किए गए। ये सिक्के बहुत कम संख्या में बनाए गए थे तथा जनता को इतने पसंद आए कि जनता द्वारा संग्रहित कर लिए गए और बाजार में चलन में नहीं आए। जहांगीर के बाद के बादशाहों ने इन सिक्कों को इस्लाम के खिलाफ मानकर बंद कर दिया। जहांगीर के राशि बोधक सिक्कों का पूरा सेट वर्तमान में ब्रिटिश म्यूजियम लंदन के अतिरिक्त और कहीं उपलब्ध नहीं है। वर्नियर के अनुसार स्वयं जहांगीर के शासन काल में दो या तीन राशि बोधक मुहरों को प्राप्त करना अत्यंत कठिन था। बीकानेर के गंगा गोल्डन जुबली म्यूजियम में मेष राशि बोधक एक मुहर (119 ग्रेन), सरदार संग्रहालय जोधपुर में मेष और कर्क राशि बोधक दो चांदी के रुपए और केन्द्रीय संग्रहालय जयपुर में सिंह राशि बोधक रुपया (154 ग्रेन) संग्रहित है।

भारत में ब्रिटिश शासन के दौरान निकाली गई विभिन्न प्रकार की मुद्राएं ईस्ट इण्डिया कम्पनी एवं ब्रिटिश क्राउन का भारत में विस्तार एवं देशी रियासतों से उनके

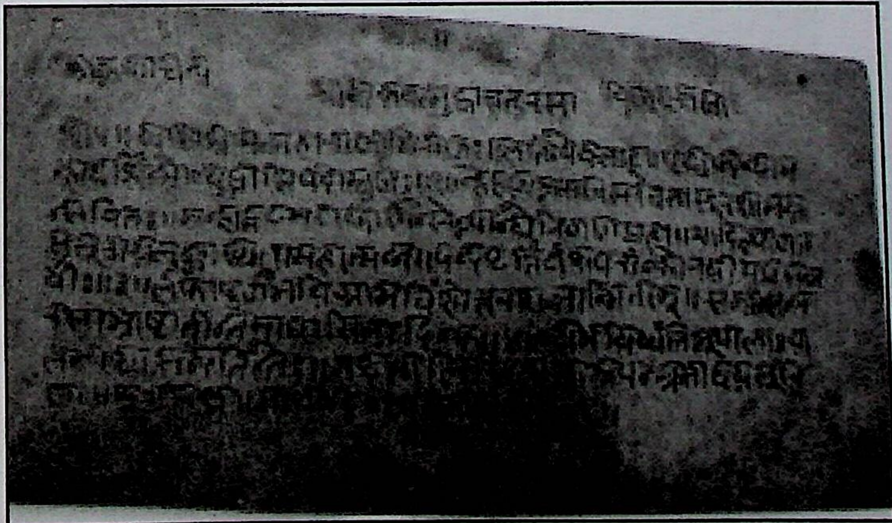
सम्बन्धों की गाथा तो कहते ही हैं, साथ ही भारत के सामाजिक विषयों के प्रति उनके दृष्टिकोण को भी समझाने में सहायक हैं। ईस्ट इण्डिया कम्पनी द्वारा जारी किए गए चांदी के सिक्कों पर भगवान राम, लक्ष्मण एवं वैदेही का चित्रांकन किया गया है। ये सिक्के भी देश के अनेक संग्रहालयों की शोभा बढ़ा रहे हैं।

ताम्रपत्रों का योगदान

जब शासक किसी महत्वपूर्ण अवसर पर भूमि, गाँव, स्वर्ण एवं रत्न आदि दान देते थे या कोई अनुदान स्वीकृत करते थे, तब वे इस दान या अनुदान को ताम्बे की चद्दर पर उत्कीर्ण करवाकर देते थे, ताकि पीढ़ियों तक यह साक्ष्य उस परिवार के पास उपलब्ध रहे। हजारों की संख्या में ताम्रपत्र उपलब्ध होते हैं। इन दानपत्रों से इतिहास की महत्वपूर्ण कड़ियों को जोड़ने में सहायता मिली है। अब तक सबसे प्राचीन ताम्रपत्र ई.679 का धूलेव का दानपत्र मिला है। ई.956 का मघनदेव का ताम्रपत्र, ई.1002 का रोपी ताम्रपत्र, ई.1180 का आबू के परमार राजा धारावर्ष का ताम्रपत्र, ई.1185 का वीरपुर दानपत्र, ई. 1194 का कदमाल गाँव का ताम्रपत्र, ई.1206 का आहाड़ ताम्रपत्र, ई.1259 का कदमाल ताम्रपत्र, ई.1287 का वीरसिंह देव का ताम्रपत्र तथा ई.1437 का नादिया गाँव का ताम्रपत्र प्रमुख हैं। इन ताम्रपत्रों को राजस्थान के विभिन्न संग्रहालयों में रखा गया है। कुछ ताम्रपत्र राष्ट्रीय अभिलेखागारों एवं संग्रहालयों में देखे जा सकते हैं।

अस्त्र-शस्त्रों का योगदान

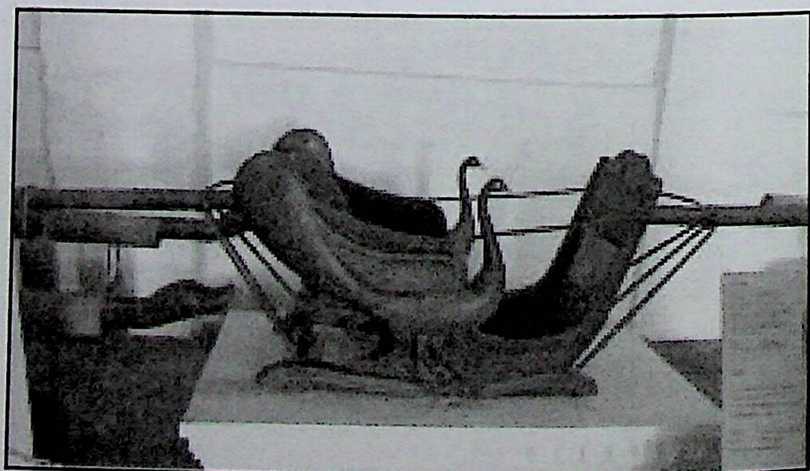
राजस्थान के राजा हजारों वर्षों से युद्ध लड़ते आए थे। इस कारण उनके शस्त्रागारों में ना-ना प्रकार के अस्त्र-शस्त्र उपलब्ध थे। राजस्थान में जयपुर, मारवाड़, मेवाड़, कोटा, बूंदी, अलवर, सिरोही आदि राज्यों में अलग-अलग प्रकार की तलवारें बनती थीं। राजपूताने में बनी तलवारों की पूरे देश में आपूर्ति होती थी। तलवारों को उनकी



बनावट एवं उनकी मारक क्षमता के आधार पर अलग-अलग नाम दिए गए थे। इनमें सांकेला, बट, असील, रोटी, कित्ती, काबरा, लहरिया, ईरानी, नलदार, कर्णशाही अथवा शाही कीरच, नागफनी, सोसणकत्ती, फलसी, खांडा, मोती लहर, जामा तलवार कहते थे। इनके अतिरिक्त जमधर, छुरी, कटार, गुप्ती आदि भी काम में लाई जाती थीं। सिरोही में नीलकण्ठ महादेव की बावड़ी के पानी और सिरोही की मिट्टी से धार देने पर तलवार की धार बहुत तीखी हो जाती थी, जिससे एक ही वार में पेड़ भी काटा जा सकता था। इन तलवारों की धार एवं नोक पर जहर भी लगाया जाता था। इनकी मूठें एवं म्यानें भी बहुत कलात्मक होती थीं तथा कई प्रकार की डिजाइनों में बनती थीं। भारत के कई राजा-महाराजा एवं बादशाह अपनी सेना के लिए सिरोही में तलवारें बनवाते थे। मध्यकाल में सिरोही में 500 लोहार एवं मियांगर कार्यरत थे। राजाओं की सेनाएं भाले, ढाल, बख्तरबंद, शिरस्त्राण (सिर के टोप), तीर-कमान, तरकश आदि का उपयोग करती थीं। युद्ध में काम आने वाले हाथी, घोड़े, ऊँट, बैल आदि के लिए भी कवच बनाए जाते थे। मुगलों के समय में तोपें, बंदूकें एवं अन्य आग्नेय अस्त्र बनने लगे थे। तोपों के साथ-साथ उनकी पहियेदार गाड़ियां, बारूद के गोले, मोटे रस्से भी कई प्रकार के बनाए जाते थे। संग्रहालयों में देशी रियासतों के शस्त्रागारों से प्राप्त अस्त्र-शस्त्रों को भी प्रमुख स्थान दिया गया है।

पालकियाँ एवं डोलियां

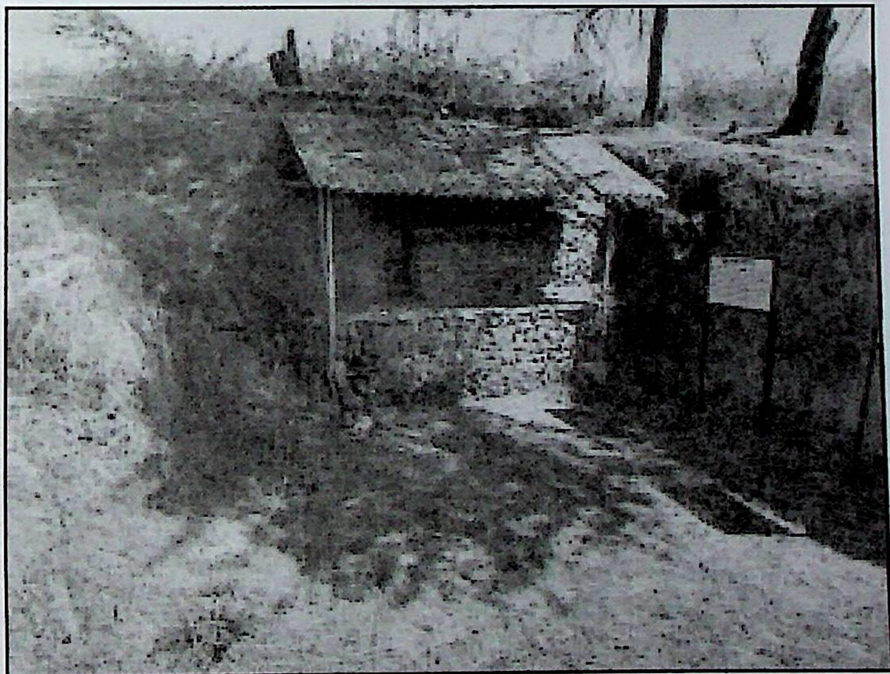
रियासती काल में महत्वपूर्ण पुरुषों एवं राजमहिषियों को लाने ले जाने के लिए पालकियों एवं डोलियों का प्रयोग किया जाता था। इन्हें भी बहुत कलात्मक ढंग से बनाया जाता था। राजस्थान के संग्रहालयों में विभिन्न रियासतों से प्राप्त पालकियाँ एवं डोलियां भी प्रदर्शित की गई हैं।





अध्याय - 3

पुरावशेष संग्रहण में भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण का योगदान



आहाड़ सभ्यता स्थल, उदयपुर नगर

ई.1861 में भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण (एएसआई) की स्थापना हुई। इसने पुरावशेषों की खोज एवं संग्रहण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। पुरातत्व सर्वेक्षण के माध्यम से सिन्धु सभ्यता के अवशेषों को पहली बार प्रकाश में लाया जा सका। राजस्थान में कालीबंगा एवं पीलीबंगा से प्रस्तर-मूर्तियाँ, धातु-मूर्तियाँ, मृण्मूर्तियाँ, मृदभाण्ड, मणियां, स्नानागार, अन्नागार, मुद्राएं, मुहरें आदि प्राप्त की गईं, जिनसे सिन्धु सभ्यता के सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक, राजनीतिक एवं व्यापारिक जीवन की जानकारी प्राप्त होती है तथा अनुमान होता है कि कालीबंगा, सिंधु सभ्यता के पूर्वी भाग की राजधानी थी। इस सामग्री को देश के विभिन्न संग्रहालयों में रखा गया, जिस पर वैज्ञानिकों, भाषाविदों, इतिहासकारों तथा शोधार्थियों द्वारा शोध कार्य किए जाते रहे हैं। कालीबंगा खुदाई स्थल के निकट एक संगहालय की स्थापना की गई है।



चन्द्रावती की खुदाई, आबूरोड

इसी प्रकार नगरी, खोर, ब्यावर, खेड़ा, बड़ी, अनचर, ऊणचा देवड़ी, हीराजी का खेड़ा, बल्लू खेड़ा (चित्तौड़ जिले में गंभीरी नदी के तट पर), भैंसरोड़गढ़, नगघाट (चम्बल और बामनी के तट पर) हमीरगढ़, सरूपगंज, बीगोद, जहाजपुर, खुरियास, देवली, मंगरोप, दुरिया, गोगाखेड़ा, पुर, पटला, संद, कुंवारिया, गिलूंड (भीलवाड़ा जिले में बनास के तट पर), लूणी (जोधपुर जिले में लूनी के तट पर), सिंगारी और पाली (गुड़िया और बांडी नदी की घाटी में), समदड़ी, शिकारपुरा, भावल, पीचक, भांडेल, धनवासनी, सोजत, धनेरी, भेटान्दा, धुंधाड़ा, गोलियो, पीपाड़, खींवसर, उम्मेदनगर (मारवाड़ में), गागरोन (झालवाड़), गोविंदगढ़ (अजमेर जिले में सागरमती के तट पर), कोकानी, (कोटा जिले में परवन नदी के तट पर), भुवाणा, हीरो, जगन्नाथपुरा, सियालपुरा, पच्चर, तारावट, गोगासला, भरनी (टोंक जिले में बनास तट पर) आदि स्थानों से पुरापाषाण कालीन पत्थर के हथियार प्राप्त हुए हैं जिन्हें विभिन्न संग्रहालयों में रखा गया है।

चित्तौड़गढ़ जिले में बेड़च एवं गंभीरी नदियों के तट पर, चम्बल और वामनी नदी के तट पर भैंसरोड़गढ़ एवं नवाघाट, बनास के तट पर हमीरगढ़, जहाजपुर, देवली एवं गिलूंड, लूनी नदी के तट पर पाली, समदड़ी, बनास नदी के तट पर टौंक जिले में भरनी, उदयपुर के बागोर तथा मारवाड़ के तिलवाड़ा आदि अनेक स्थानों से उत्तर-पाषाण काल के उपकरण प्राप्त हुए हैं। गणेश्वर (सीकर), आहड़ (उदयपुर), गिलूण्ड (राजसमंद), बागोर (भीलवाड़ा) तथा कालीबंगा (हनुमानगढ़) से ताम्र-पाषाण कालीन, ताम्रयुगीन एवं कांस्य कालीन सभ्यताएं प्रकाश में आई हैं। ताम्रयुगीन प्राचीन स्थलों में पिण्डपाड़लिया (चित्तौड़), बालाथल एवं झाड़ौल (उदयपुर), कुराड़ा (नागौर),

साबणिया एवं पूगल (बीकानेर), नन्दलालपुरा, किराड़ोत एवं चीथवाड़ी (जयपुर), ऐलाना (जालोर), बूढ़ा पुष्कर (अजमेर), कोल-माहोली (सवाईमाधोपुर) तथा मलाह (भरतपुर) से ताम्र उपकरणों के भण्डार मिले हैं। नोह (भरतपुर), जोधपुरा (जयपुर) एवं सुनारी (झुंझुनूं) से लौह युगीन सभ्यताओं के उपकरण प्राप्त हुए हैं। रंगमहल, बड़ोपल, मुण्डा, डोबेरी पीलीबंगा, आहाड़, नगरी, आदि अन्य भागों से शुंग कालीन सभ्यताओं के अवशेष प्राप्त हुए हैं। इस समस्त सामग्री को विभिन्न संग्रहालयों में रखा गया है।

राजस्थान पुरातत्व तथा संग्रहालय विभाग

ई.1950 में पुरातत्व तथा संग्रहालय विभाग की स्थापना की गई। यह विभाग प्रदेश में बिखरी हुई पुरा सम्पदा तथा सांस्कृतिक धरोहर की खोज, सर्वेक्षण एवं संग्रहण करता है तथा इस सामग्री का जनसामान्य में प्रचार-प्रसार भी करता है। इस विभाग में निदेशक, उपनिदेशक, क्षेत्रीय अधीक्षक, अधीक्षक खोज एवं उत्खनन, अधीक्षक स्थापत्य सर्वेक्षण, अधीक्षक कला सर्वेक्षण, अधीक्षक आमेर महल, अधीक्षक केन्द्रीय संग्रहालय जयपुर, मुख्य पुरारसायन वेत्ता, मुद्रा विशेषज्ञ आदि विभिन्न अधिकारी कार्यरत हैं। केन्द्र प्रवर्तित योजना में रजिस्ट्रीकरण अधिकारी राज्य के निजी स्वामित्व वाली पुरा सामग्री एवं कला संग्रहों का पंजीकरण करते हैं। विभाग द्वारा 222 स्मारक तथा पुरास्थल संरक्षित घोषित किए गए हैं। विभाग इनका जीर्णोद्धार भी करवाता है। प्राचीन दुर्गों, स्मारकों, देवालयों, प्रासादों, हवेलियों, भित्तिचित्रों, सिक्कों एवं अन्य कला तथा पुरा सामग्री का अधिग्रहण भी यही विभाग करता है। विभाग की उत्खनन शाखा पुरास्थलों की खुदाई करती है। मुद्रा शाखा सिक्कों का संरक्षण, रासायनिक उपचार तथा कैटलॉगिंग का कार्य करती है। संग्रहालयों के पुनर्गठन एवं विकास का कार्य भी यही विभाग करता है। पुरातत्व एवं संग्रहालय विभाग चित्रकला प्रदर्शनी, पुरासामग्री प्रदर्शनी तथा भाषणमाला का भी आयोजन करता है। विभाग 'द रिसर्चर' नाम से एक पत्रिका भी प्रकाशित करता है।

राजस्थान के संग्रहालयों के लिए पुरातत्व एवं इतिहास विषयक सामग्री जुटाने वाले पुरातत्ववेत्ता

राजस्थान के संग्रहालयों के लिए सामग्री जुटाने में भारत के कई प्रसिद्ध पुरातत्ववेत्ताओं का अमूल्य सहयोग रहा। इनमें अलेक्जेण्डर कनिंघम, टी. एच. हैण्डले, अमलानंद घोष, दयाराम साहनी, रत्नचंद्र अग्रवाल, मुनि जिन विजय आदि उल्लेखनीय हैं।

अलेक्जेण्डर कनिंघम

ब्रिटिश पुरातत्ववेत्ता अलेक्जेण्डर कनिंघम ने उन्नीसवीं सदी के अंत में जयपुर

रियासत के विविध स्थलों का भ्रमण एवं पुरातात्विक सर्वेक्षण कियो, जिससे जयपुर रियासत तथा राजपूताना के प्राचीन काल के इतिहास की विश्वसनीय शोध सामग्री उपलब्ध हो सकी।

टी. एच. हैण्डले

1880 के दशक में इन्होंने जयपुर रियासत के विविध स्थलों का भ्रमण करके पुरासामग्री जुटाकर कुछ लेख छपवाए। बाद में 1930 के दशक में दयाराम साहनी ने उन लेखों में रह गई त्रुटियों को ठीक किया।

अमलानंद घोष

अमलानंद घोष ने ई.1952 में कालीबंगा सभ्यता की खोज की। बाद में ई. 1961-69 के बीच कालीबंगा की खुदाई हुई। इस कार्य में देश के सुप्रसिद्ध पुरातत्वविदों- बी. बी. लाल, बी. के. थापर, एन. डी. खरे, के. एम. श्रीवास्तव तथा एस. पी. जैन की सेवाएं ली गईं।

दयाराम साहनी

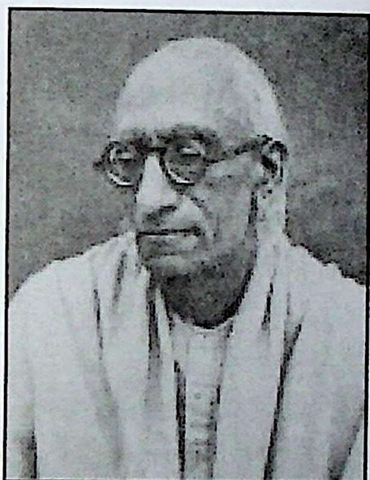
ये स्वतंत्रता प्राप्ति से पूर्व जयपुर रियासत में पुरातत्व विभाग के निदेशक थे। इन्होंने जयपुर रियासत के विविधि स्थलों का सर्वेक्षण करके पुरातात्विक महत्व के स्थलों की खोज की तथा पुरा सामग्री जुटाई जिससे जयपुर रियासत के इतिहास लेखन के लिए विश्वसनीय जानकारी एवं प्रमाण उपलब्ध हो सके।

रत्नचन्द्र अग्रवाल

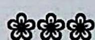
श्री रत्नचन्द्र अग्रवाल का जन्म 21 जून 1926 को साढ़ौरा, हरियाणा में हुआ था। वे राजस्थान के महत्त्वपूर्ण पुरातत्वविदों में से थे। वे राजस्थान सरकार के पुरातत्व एवं संग्रहालय विभाग के निदेशक पद से सेवानिवृत्त हुए। उन्होंने राजस्थान के प्राचीन शिल्प एवं मूर्ति विज्ञान पर महत्त्वपूर्ण कार्य किया। उनके प्रसिद्ध ग्रंथों में 'स्कल्पचर्स फ्रॉम उदयपुर म्यूजियम' तथा 'पॉटरी हैण्डल्स विद वुमन फिगराइन्स' प्रमुख हैं।

मुनि जिन विजय

मुनि जिन विजय का जन्म मेवाड़ रियासत के रूपाहेली गाँव में ई.1888 में हुआ। इनका बचपन का नाम रिणमल परमार था। वे 15 वर्ष की आयु में जैन धर्म में दीक्षित हो गये। उन्होंने तीन वर्ष तक सूत्र और आगम पढ़े तथा वडोदरा में रहकर कुमार पाल प्रतिबोध नामक ग्रंथ का संपादन किया। लोकमान्य तिलक के सम्पर्क से उन पर देशभक्ति का रंग चढ़ा तथा उन्होंने जैन साहित्य संशोधक समिति की स्थापना की। वे गुजरात पुरातत्व मंदिर के निदेशक रहे। उन्होंने जर्मनी जाकर इण्डो-जर्मन केन्द्र की



स्थापना की तथा वापस आकर दाण्डी कूच में भाग लिया। छह माह जेल में भी रहे। इसके बाद वे बम्बई में भारतीय विद्या भवन के संचालक बने। ई.1942 में उन्होंने जैसलमेर आकर 200 ग्रंथों की प्रतिलिपियां तैयार करवाईं। ई.1950 में उनके निर्देशन में राजस्थान पुरातत्व मंदिर की स्थापना की गयी। उनके द्वारा लिखित लेखों और ग्रंथों की संख्या सैंकड़ों में है। राजस्थान सरकार ने उन्हें पुरातत्व विभाग का निदेशक बनाया। ई.1976 में उनका निधन हुआ।



अध्याय – 4

राजस्थान में संग्रहालयों की स्थापना का इतिहास



राजस्थान में पुराप्रस्तर युगों से लेकर आधुनिक काल तक विकसित मानव सभ्यताओं की गाथा नदी घाटियों, पर्वतीय उपत्यकाओं एवं रेतीले धोरों में दबी हुई है। इसे पहचानना, खोजना, उसकी कालावधि का निर्धारिण करना, संग्रहण करना तथा दर्शकों तक उसकी पहुंच बनाना अत्यंत दुष्कर कार्य है। यह समस्त सामग्री राजस्थान में मनुष्य के उद्‌भव से लेकर सभ्य बनने तक का इतिहास कहती है जो उस काल में लिखित रूप में नहीं मिलता है। उस इतिहास के साक्ष्य उस काल के खेतों, कुओं, चूल्हों, घरों के अवशेषों एवं शवाधानों के साथ-साथ बर्तनों, आभूषणों, मणकों, मूर्तियों, कंकालों आदि के रूप में मिलते हैं। मानव सभ्यताओं की इससे आगे की गाथा शिलालेखों, सिक्कों, मुद्राओं, वस्त्रों, कीर्ति-स्तम्भों, दुर्गों, महलों, हवेलियों, मंदिरों, मूर्तियों, जलाशयों, कलात्मक कुओं, बावड़ियों, ताल-तलैयों, सर-सरोवरों, समाधियों, छतरियों, अभिलेखों, आदि के रूप में मिलती है। यह सब सामग्री हमारी सांस्कृतिक एवं ऐतिहासिक विरासत का हिस्सा है। इस विरासत में बहुत सी ऐसी है, जिसे संग्रहालयों तक नहीं लाया जा सकता है किंतु बहुत सी सामग्री ऐसी भी है, जिसे संग्रहालयों तक लाया जा सकता है और किसी विशिष्ट क्रम एवं विधि में प्रदर्शित कर मानव इतिहास को उसकी निरंतरता के साथ देखा, समझा एवं परखा जा सकता है।

राजपूताना की देशी रियासातें में अपने राजवंश एवं राज्य की ऐतिहासिक विरासत के संरक्षण एवं प्रदर्शन का विचार उन्नीसवीं सदी में विकसित होने लगा था। यही कारण

है कि राजस्थान निर्माण के पूर्व ही राजपूताना की विभिन्न रियासतों में दस संग्रहालय स्थापित हो गए थे। संग्रहालयों की स्थापना के क्रम में सर्वप्रथम ई.1870 के आसपास उदयपुर में संग्रहालय की स्थापना का काम आरम्भ हुआ, किंतु राजपूताना में प्रथम संग्रहालय की विधिवत् स्थाना का श्रेय जयपुर को जाता है। जयपुर में प्रथम संग्रहालय की नींव का पत्थर महाराजा सवाई रामसिंह (द्वितीय) (ई.1835-80) के शासनकाल में ई.1876 में प्रिंस अल्बर्ट ने रखा और उसी के नाम पर इस संग्रहालय का नाम अल्बर्ट म्यूजियम रखा गया। ई.1881 में जयपुर संग्रहालय का संग्रह अस्थायी रूप से किशनपोल बाजार में स्थित स्कूल आफ आर्ट में लाया गया और महाराजा माधोसिंह (ई. 1880-1922) के शासनकाल में ई.1886 में इसे वर्तमान संग्रहालय में स्थानान्तरित कर दिया गया। ई.1887 में सर एडवर्ड बेडफोर्ड ने इसका उद्घाटन कर विधिवत् रूप से इसे जनता के लिए खोल दिया। प्रदेश स्तर के इस संग्रहालय मे राजस्थान के जन-जीवन और शिल्प कौशल की जानकारी मिलती है।

मेवाड़ में महाराणा फतहसिंह (ई.1884-1930) के शासनकाल में संग्रहालय स्थापित करने का निर्णय लिया गया। इसके लिए गुलाब बाग (उदयपुर) में एक भव्य भवन का निर्माण किया गया। इस भवन निर्माण का निर्णय महारानी विक्टोरिया सिल्वर जुबली समारोह के दौरान लिया गया था। भवन निर्माण का कार्य पूर्ण हो जाने पर इसका नाम विक्टोरिया हॉल म्यूजियम रखा गया और ई.1890 में तत्कालीन वायसराय लार्ड लेंसडाउन द्वारा इसका उद्घाटन किया गया।

लार्ड कर्जन के समय संग्रहालयों की दिशा में महत्वपूर्ण प्रयास किए गए। संग्रहालयों को समुचित एवं व्यवस्थित स्वरूप प्रदान करने के लिए ई.1902 में सर जॉन मार्शल को आर्कियोलॉजिकल सर्वे आफ इण्डिया का डायरेक्टर जनरल नियुक्त किया गया। संग्रहालयों की परिकल्पना को मूर्तरूप देने के लिए पहली बार भारतीय विद्वानों की सेवाएं ली गईं और भारतीय संस्कृति एवं पुरासम्पदा की खोज कर उनके संरक्षण की दिशा में महत्वपूर्ण कार्य किया गया। गौरीशंकर हीराचन्द ओझा आदि विद्वानों के सक्रिय सहयोग एवं उनके द्वारा किए गए सर्वेक्षण से एकत्र पुरासम्पदा के फलस्वरूप अजमेर के ऐतिहासिक दुर्ग अकबर का किला में राजपूताना म्यूजियम की स्थापना की गई। ई. 1908 में राजपूताना के गर्वनर जनरल के एजेन्ट सर इलियट ग्राहम कोल्विन द्वारा इसका विधिवत् रूप से उद्घाटन किया गया। ओझाजी को राजपूताना म्यूजियम का प्रथम अध्यक्ष बनाया गया। ओझा अैर उसके सुयोग्य उत्तराधिकारी यू. सी. आाचार्य द्वारा विभिन्न स्थानों का विस्तृत सर्वेक्षण किया गया। पुरासामग्री का संकलन किया गया। आर. भण्डारकर द्वारा किए गए उत्खनन कार्य से नगरी (चित्तौड़गढ़) से शुंग और कुषाणकालीन टेराकोटाज, सरवानिया (बांसवाड़ा) से क्षत्रप सिक्कों का भण्डार तथा अढाई दिन के झौंपड़े से उत्कीर्ण पाषाण खण्ड प्राप्त किए गए और आगे भी संग्रहालय



सांभर से प्राप्त कुशाणकालीन
टैराकोटा भूदेवी
पहली शताब्दी ईस्वी

को समृद्ध करने के प्रयत्न जारी रहे।

जोधपुर में ई.1909 में संग्रहालय की स्थापना की गई। ई.1914 में पंडित विश्वेश्वर नाथ रेऊ संग्रहालय के सहायक अधीक्षक बने और उनके निर्देशन एवं सहयोग से संग्रहालय को नया स्वरूप प्रदान किया गया। ई.1916 में संग्रहालय को भारत सरकार की मान्यता मिली और आगे चलकर इसका नाम जोधपुर के महाराजा सरदार सिंह (ई. 1895-1911) की स्मृति में सरदार म्यूजियम रख दिया गया। रेऊजी की रुचि और रचनात्मक दृष्टिकोण से संग्रहालय में ओसियां, किराड़ू, मण्डोर, डीडवाना, सांभर, नागौर आदि स्थानों से सांस्कृतिक विरासत को एकत्र कर इस संग्रहालय को समृद्ध किया गया।

हाड़ौती क्षेत्र की सांस्कृतिक धरोहर को संरक्षित करने के लिए ई.1915 में झालावाड़ में क्षेत्र का पहला संग्रहालय स्थापित किया गया। झालावाड़ के तत्कालीन महाराजा भवानीसिंह (ई.1874-1929) की गहन रुचि एवं उनके संरक्षण में संग्रहालय में हाड़ौती क्षेत्र के विभिन्न स्थानों से पुरासामग्री का संकलन कर संग्रहालय की श्रीवृद्धि की गई। ई. 1929 में उम्मेद भवन पैलेस संग्रहालय की स्थापना की गई।

संग्रहालय स्थापना की दौड़ में बीकानेर भी पीछे नहीं रहा। रियासत ने इटली के विद्वान डॉ. एल. पी. टेस्सीटोरी को आमंत्रित कर एक विस्तृत सर्वेक्षण करवाया और उन्होंने गंगानगर-बीकानेर क्षेत्र से महत्वपूर्ण पुरासामग्री का संकलन किया। डॉ. टेस्सीटोरी के संग्रह का उपयोग करते हुए ई.1937 में गंगा गोल्डन जुबली म्यूजियम की स्थापना की गई। महाराणा फतहसिंह (ई.1884-1930) ने चित्तौड़गढ़ संग्रहालय का निर्माण करवाया।

संग्रहालय स्थापना की शृंखला में ई.1940 में अलवर और ई.1944 में भरतपुर रियासतों में संग्रहालय स्थापित किए गए। भरतपुर रियासत में महाराजा ब्रजेन्द्र सवाई वीरेन्द्र सिंह बहादुर जंग (ई.1929-47) की प्रेरणा से मूर्तिशिल्प, स्थापत्य, शिलालेख एवं अन्य पुरा सामग्री का संकलन कर इसे स्थानीय पुस्तकालय परिसर में प्रदर्शित किया

गया। संग्रहालय के संस्थापक क्यूरेटर रावत चतुर्भुजदास चतुर्वेदी के अथक प्रयासों से इस संग्रहालय में पुरासम्पदा की अभिवृद्धि की गई। आगे चलकर इसे दुर्ग में स्थित वर्तमान भवन में स्थानान्तरित किया गया तथा ई.1944 में जनता के लिए खोला गया। ई. 1951 में इसमें सिलहखाना और कमराखास भी जोड़ दिया गया। संग्रहालय को समृद्ध करने में भरतपुर के तत्कालीन शासकों तथा मेजर हार्वे का उल्लेखनीय योगदान रहा।

ई.1944 में कोटा और ई.1949 में आमेर संग्रहालय की स्थापना के साथ संग्रहालयों की संख्या बढ़ कर दस हो गई। राजस्थान निर्माण के बाद ई.1950 में पुरातत्व एवं संग्रहालय विभाग की स्थापना हुई और विभाग ने संग्रहालयों के विस्तार की दिशा में उल्लेखनीय कदम उठाए। इसके परिणाम स्वरूप ई.1957 में श्री बांगड़ राजकीय संग्रहालय पाली, ई.1959 में डूंगरपुर और ई.1961 में आहड़ संग्रहालयों की स्थापना संभव हो सकी। संग्रहालयों के पुनर्गठन एवं विकास की प्रक्रिया सतत रूप से चलती रही और ई.1965 में माउण्ट आबू संग्रहालय तथा ई.1968 में मण्डोर संग्रहालय स्थापित किए गए।

ई.1954 में बिड़ला तकनीकी म्यूजियम की, ई.1959 में जयपुर में सिटी पैलस संग्रहालय की तथा ई.1960 में श्रीरामचरण प्राच्य विद्यापीठ एवं संग्रहालय जयपुर की स्थापना हुई। ई.1964 में लोक संस्कृति शोध संस्थान नगरश्री, चूरू की स्थापना हुई।



कामदेव (बाए) एवं रति (दाए), रैढ़ से प्राप्त टैराकोटा प्रतिमा, 5वीं शती ईस्वी, कामदेव का कमर से ऊपर का भाग खण्डित है। रति ने हाथ में पुष्पकली ले रखी है। रति की क्षीण कटि, मांसल जंघाएं एवं स्थूल पयोधर इस प्रतिमा के गुप्तकालीन होने की पहचान हैं।

चित्तौड़गढ़ क्षेत्र की सांस्कृतिक विरासत और पुरासामग्री के प्रदर्शन के लिए ई. 1969 में चित्तौड़गढ़ संग्रहालय की स्थापना हुई। ई.1977 में आधुनिक कला प्रवृत्तियों को प्रदर्शित करने वाली राज्य की पहली कला दीर्घा स्थापित हुई, जिसे आगे चलकर राजस्थान ललित कला अकादमी को सौंप दिया गया। विभाग द्वारा पुरान्वेषण, पुरा सामग्री के संकलन-संग्रहण एवं संरक्षण का कार्य निरन्तर जारी रहा और ई.1983 में हवामहल संग्रहालय तथा ई.1984 में जैसलमेर संग्रहालय की स्थापना की गई। ई. 1985-86 में गंगानगर जिले में कालीबंगा के उत्खनन से प्राप्त सामग्री के लिए सभ्यता स्थल पर ही संग्रहालय का निर्माण किया गया। अब यह हनुमानगढ़ जिले में स्थित है। 30 दिसम्बर 1983 को माणिक्यलाल वर्मा जनजाति शोध संस्थान द्वारा उदयपुर में जनजाति संग्रहालय का निर्माण किया गया। इसका उद्देश्य जनजातियों की सांस्कृतिक, सामाजिक एवं आर्थिक व्यवस्था को प्रदर्शित करना था।

संग्रहालयों के विस्तार की श्रृंखला में ई.1987 में विराट नगर संग्रहालय तथा ई. 1991 में पाली संग्रहालय की स्थापना हुई। आमेर की सांस्कृतिक धरोहर के वैभव को प्रदर्शित करने के लिए ई.1992 में आमेर में कला दीर्घा स्थापित की गई। संग्रहालयों के विस्तार की यह धारा आज भी सतत रूप से प्रवाहमान है। राजस्थान के आधुनिक संग्रहालयों की यात्रा में सिटी पैलेस म्यूजियम उदयपुर, आहड़ संग्रहालय उदयपुर, राव माधोसिंह ट्रस्ट संग्रहालय कोटा, लोक कला संग्रहालय उदयपुर, मीरा संग्रहालय मेड़ता, हल्दीघाटी संग्रहालय राजसमंद आदि सम्मिलित हैं।

राजस्थान में संग्रहालयों की समस्या

राजस्थान, भारत का सबसे बड़ा प्रांत है। इसका 61.11 प्रतिशत भाग मरुस्थल है। इतने बड़े प्रदेश में पुरातात्विक सामग्री, प्राचीन भवन, दुर्ग, महल, देवालय, स्मारक, सरोवर, बावड़ियां, मूर्तियां, शिलालेख, प्राचीन ग्रंथ, शासकीय अभिलेख, सिक्के, ताड़पत्र, ताम्रपत्र आदि का विशाल भण्डार भरा पड़ा है। संग्रहालयोपयोगी सम्पूर्ण सामग्री को राज्य के विभिन्न संग्रहालयों में संजोने के लिए आवश्यक निपुण व्यक्तियों, धन, सुविधाओं तथा भवनों का अभाव है। इस कारण राजस्थान में प्राचीन ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक धरोहर को संजोकर रख पाना बहुत बड़ी समस्या है। राजस्थान सरकार ने राज्य में 18 राजकीय संग्रहालयों की स्थापना की है। इन संग्रहालयों में कर्मचारियों का अभाव है। राज्य में झालावाड़ राजकीय संग्रहालय जैसे कई संग्रहालय हैं जो केवल चपरासियों और लिपिकों के भरोसे छोड़ दिए गए हैं। बहुत से संग्रहालयों को भारत सरकार से सामग्री प्राप्त होती है किंतु वह स्थान, साधन एवं दृष्टि के अभाव में संग्रहालयों के अंधेरे बंद कमरों में पड़ी हुई है, दर्शक वहाँ तक चाह कर भी नहीं पहुंच सकते। वसुंधरा राजे सरकार (ई.2013-18) द्वारा राज्य के संग्रहालयों की बुरी तरह से

उपेक्षा किए जाने से यह समस्या और भी गंभीर हो गई है। राज्य सरकार द्वारा बीकानेर में राजस्थान राज्य अभिलेखागार तथा जोधपुर में प्राच्य विद्या संस्थान की स्थापना की गयी है। जयपुर, बीकानेर, चित्तौड़, जयपुर, अलवर, कोटा तथा उदयपुर में प्राच्य विद्या संस्थान की शाखाएं स्थापित की गयी हैं। राजस्थान में मौजूद पुराने दुर्गों एवं ऐतिहासिक भवनों का संरक्षण करने के लिए भी पर्याप्त संसाधन नहीं हैं, जिसके कारण कई दुर्ग, हवेलियाँ, मंदिर एवं महल उपेक्षित पड़े हैं। कुछ वर्ष पूर्व शेखावाटी की कलात्मक हवेलियों में भित्ति चित्रों की दुर्दशा देखकर एक विदेशी महिला नदीन ला प्रैन्स ने एक हवेली खरीदकर उसका पुनरुद्धार करवाया और वहाँ एक सांस्कृतिक केन्द्र बनाया। इसमें भारत और फ्रान्स के चित्रकारों की एक प्रदर्शनी भी लगाई गई। इससे शेखावाटी क्षेत्र की कला को अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर नई पहचान मिली। संस्कृति प्रेमियों, पर्यटन संस्थाओं तथा स्वयं सेवी संगठनों को इस दिशा में और भी प्रयास करने होंगे।



अध्याय - 5

राज्य में सरकारी क्षेत्र में प्रमुख संग्रहालय एवं अभिलेखागार

पुरातत्व एवं संग्रहालय विभाग द्वारा संचालित संग्रहालय

राजस्थान सरकार द्वारा राज्य में राजकीय संग्रहालयों की स्थापना, सरंक्षण एवं विस्तार के लिए अलग से पुरातत्व एवं संग्रहालय विभाग की स्थापना की गई है। इस विभाग द्वारा वर्तमान में निम्नलिखित संग्रहालय संचालित किए जा रहे हैं-

राज्य स्तरीय संग्रहालय

1. राजकीय केन्द्रीय संग्रहालय, अल्बर्ट हॉल, (अल्बर्ट म्यूजियम), जयपुर

संभाग स्तरीय संग्रहालय

1. राजकीय संग्रहालय, उदयपुर,
2. राजकीय संग्रहालय, जोधपुर,
3. राजकीय संग्रहालय, बीकानेर,
4. राजकीय संग्रहालय, कोटा,
5. राजकीय संग्रहालय, अजमेर,
6. राजकीय संग्रहालय, हवामहल, जयपुर,
7. राजकीय संग्रहालय, भरतपुर

जिला स्तरीय संग्रहालय

1. राजकीय संग्रहालय, अलवर
2. राजकीय संग्रहालय, डूंगरपुर
3. राजकीय संग्रहालय, चित्तौड़गढ़
4. राजकीय संग्रहालय, जैसलमेर
5. राजकीय संग्रहालय, पाली
6. राजकीय संग्रहालय, झालावाड़
7. राजकीय संग्रहालय, सीकर

स्थानीय संग्रहालय

1. राजकीय संग्रहालय, आहड़, उदयपुर
2. राजकीय संग्रहालय, मण्डोर, जोधपुर
3. राजकीय संग्रहालय, माउंट आबू, सिरोही

संग्रहालय जो आरम्भ किए जाने हैं

1. राजकीय संग्रहालय, केसरीसिंह बारहठ की हवेली, शाहपुरा, भीलवाड़ा।
2. टाउन हॉल पुराना विधानसभा भवन, जयपुर।
3. राजकीय संग्रहालय, बारां।

राज्य की आर्ट गैलेरी

1. आर्ट गैलेरी, विराट नगर, जयपुर
2. प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान जोधपुर की आर्ट गैलेरी

राजस्थान राज्य अभिलेखागार

राजस्थान राज्य अभिलेखागार का मुख्यालय बीकानेर में स्थापित किया गया है तथा इसकी शाखाएं जयपुर, जोधपुर, उदयपुर, कोटा, अजमेर, अलवर एवं भरतपुर में हैं।

प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान

राज्य सरकार द्वारा प्राच्य विद्या प्रतिष्ठानों की स्थापना की गई है जिनमें प्राचीन दुर्लभ हस्तलिखित ग्रंथों, चित्रग्रंथों, बहियों आदि का संग्रहण किया गया है। जोधपुर में इसका मुख्यालय है तथा बीकानेर, कोटा, अलवर, उदयपुर, चित्तौड़ में उपशाखाएं कार्यरत हैं।

अरबी-फारसी शोध संस्थान टोंक

टोंक में अरबी और फारसी ग्रंथों के संरक्षण के लिए कार्यालय स्थापित हुआ, जो अब स्वतंत्र संस्थान के रूप में कार्यरत है तथा मौलाना अबुल कलाम आजाद अरबी फारसी शोध संस्थान के नाम से जाना जाता है।

विज्ञान केन्द्र एवं संग्रहालय

विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग ने राज्य में जयपुर में क्षेत्रीय विज्ञान केन्द्र एवं विज्ञान पार्क स्थापित किया है। साथ ही जोधपुर, नवलगढ़, कोटा, उदयपुर में उपक्षेत्रीय विज्ञान केन्द्र स्थापित किए हैं। झालावाड़ के निकट झालरापाटन में विज्ञान पार्क स्थापित किया गया है। इनमें आम जन को विज्ञान के सिद्धांतों का प्रदर्शन करने के लिए स्वचालित मॉडल प्रदर्शित किये गए हैं।

प्राकृतिक विज्ञान संग्रहालय

5. प्राकृतिक विज्ञान संग्रहालय, जयपुर।

6. प्राकृतिक विज्ञान संग्रहालय, सवाईमाधोपुर।

प्राकृतिक विज्ञान संग्रहालय, रामसिंहपुरा

देश का पांचवां राजीव गांधी क्षेत्रीय प्राकृतिक विज्ञान संग्रहालय सवाईमाधोपुर जिले के रामसिंहपुरा गांव में आरम्भ किया गया है। 1 मार्च 2014 को इसे पर्यटकों के लिए खोल दिया गया। इस संग्रहालय में पर्यावरण, वन्यजीव, ज्ञान, विज्ञान, कला एवं संस्कृति आदि से जुड़ी चीजों की पांच गैलेरी, एक लाइब्रेरी, ऑडिटोरियम, छात्रावास आदि बनाये गए हैं।

बायोलॉजिकल पार्क

जयपुर, जोधपुर एवं उदयपुर में बायोलॉजिकल पार्क स्थापित किये गए हैं। बीकानेर जिले में बीछवाल में बायोलॉजिकल पार्क स्थापित किया जा रहा है। यहाँ भी जन्तुओं के सम्बन्ध में जानकारियां पर्यटकों को दी जा रही हैं।

नेचर पार्क

वर्ष 2014-15 में चूरू में नेचर पार्क स्थापित किया गया है।



अजमेर संभाग के संग्रहालय

अध्याय - 6

राजकीय संग्रहालय, अजमेर



संग्रहालय भवन का मुख्य द्वार

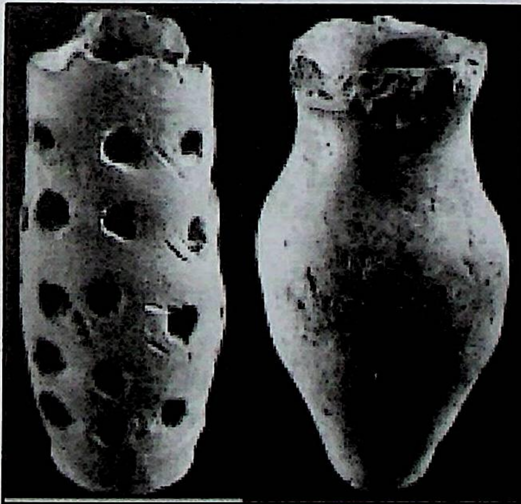
राजकीय संग्रहालय अजमेर की स्थापना राजपूताना म्यूजियम के नाम से 19 अक्टूबर 1908 को अजमेर नगर के मध्य 'मैगजीन' के नाम से विख्यात प्राचीन दुर्ग में की गई, जिसे मुगल काल में अकबर का किला कहा जाता था। यह एक प्राचीन दुर्ग था जिसका अकबर के काल में जीर्णोद्धार एवं विस्तार किया गया। इसी दुर्ग में इंग्लैण्ड के राजा जेम्स (प्रथम) का राजदूत 'सर टामस रो' जहांगीर के समक्ष उपस्थित हुआ था तथा उसने ईस्ट इण्डिया कम्पनी के लिए भारत में व्यापार करने की अनुमति प्राप्त की थी। ब्रिटिश काल में इस दुर्ग में अंग्रेजों का शस्त्रागार स्थापित किया गया था, इसलिए इसे मैगजीन कहा जाने लगा। ई.1857 की सैनिक क्रांति के समय अंग्रेज अधिकारियों एवं उनके परिवारों को इसी दुर्ग में शरण दी गई थी।

ई.1902 में भारत का वायसराय एवं गवर्नर जनरल लार्ड कर्जन अजमेर आया। उसने राजपूताना की विभिन्न रियासतों में प्राचीन स्मारकों तथा विभिन्न स्थलों पर बिखरी हुई कलात्मक पुरावस्तुओं को देखा। कर्जन ने भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण के महानिदेशक सर जॉन मार्शल को निर्देश दिए कि वे इस प्रभूत सामग्री को संरक्षित करने के लिए एक संग्रहालय की स्थापना करें। ब्रिटिश पुरातत्वविद् अलेक्जेण्डर कनिंघम, आर्चिबाल्ड कार्लेयल, डी. आर. भण्डारकर, आर. डी. बनर्जी, गौरीशंकर हीराचंद ओझा, यू. सी. भट्टाचार्य आदि पुरातत्वविदों एवं इतिहासविदों ने इस संग्रहालय के लिए पुरातत्व सामग्री, प्राचीन प्रतिमाओं, शिलालेखों, सिक्कों, ताम्रपत्रों, पुस्तकों, चित्रों आदि को एकत्रित करने में विशिष्ट योगदान दिया। ब्रिटिश सरकार द्वारा किए जा रहे इस कार्य में सहयोग देने के

लिए देशी रियासतों के अनेक राजा भी आगे आए। फलस्वरूप अजमेर संग्रहालय प्राचीन इतिहास, कला एवं संस्कृति का महत्वपूर्ण संग्रहालय बन गया। ई.1908 में गवर्नर जनरल के एजेन्ट सर इलियट ग्राहम कोल्विन ने संग्रहालय का उद्घाटन किया। इसे अजमेर संग्रहालय एवं राजपूताना संग्रहालय कहा जाता था। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद इसे राजकीय संग्रहालय कहा जाने लगा।

इस संग्रहालय में प्राचीन प्रतिमाएं, मृण्मय प्रतिमाएं (टेराकोटा), शिलालेख, सिक्के, ताम्रपत्र, लघुरंग चित्र, उत्खनन से प्राप्त सामग्री राजपूत कालीन वेश-भूषाएं, धातु प्रतिमाएं तथा विभिन्न कलाओं से सम्बन्धित सामग्री संग्रहित की गई। इन पुरावस्तुओं एवं कला सामग्री को विभिन्न दीर्घाओं में बनी पीठिकाओं तथा शो-केस में प्रदर्शित किया गया है। वर्तमान में इस संग्रहालय में 652 प्रस्तर प्रतिमाएँ, 84 शिलालेख, 3,986 सिक्के, 18 धातु सामग्री, 149 लघुचित्र, 75 अस्त्र-शस्त्र, 363 टैराकोटा सामग्री, 128 स्थानीय हस्तकला सामग्री एवं पूर्वैतिहासिक काल की सामग्री संग्रहित है।

उत्खनन से प्राप्त सामग्री

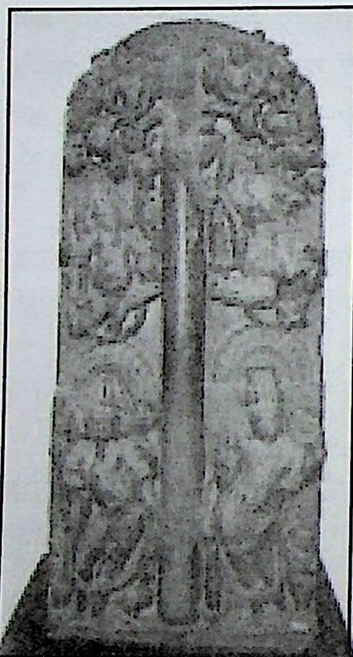


मोहेनजोदड़ो से प्राप्त मिट्टी के छिद्रयुक्त एवं छिद्ररहित जार 2000 ईसा पूर्व

संग्रहालय के पुरातत्व विभाग में सिन्धु नदी घाटी सभ्यता के प्रमुख स्थल मोहनजोदड़ो (अब पाकिस्तान में) से उत्खनन में प्राप्त की गई मिट्टी की चूड़ियां, बरछी, तीर-शीर्ष, अनाज के दाने, चाकू के रूप में प्रयोग होने वाले फ्लिट-फ्लेक, शंख, हथियारों में धार करने के पत्थर, मातृदेवी की प्रतिमाएं, खिलौने, विभिन्न प्रकार की ईंटें, कलश, ढक्कन, खिलौना-गाड़ी के पहिये आदि मुख्य हैं। इसके अतिरिक्त उन मुहरों के नमूने भी रखे गए हैं, जो सिन्धु नदी घाटी में पाई गई थीं। जिन वास्तविक वस्तुओं के ये नमूने हैं, वे ईसा से 3000 वर्ष पूर्व की हैं। कुछ नमूनों में पशुओं के चित्रों के ऊपर चित्रलिपि की एक पंक्ति भी उत्कीर्ण है।

प्रतिमा दीर्घा

संग्रहालय की प्रतिमा दीर्घा में अनेक प्राचीन प्रतिमाओं को प्रदर्शित किया गया है


लिंगोद्भव, अजमेर संग्रहालय

जो अजमेर के अढ़ाई दिन का झोंपड़ा (12वीं शताब्दी ईस्वी की चौहान कालीन संस्कृत पाठशाला एवं मंदिर), पुष्कर, पीसांगन, हर्षनाथ, अर्थूणा, ओसियां, मंडोर, चन्द्रावती, कामां, बयाना आदि स्थानों से प्राप्त की गई हैं। इन प्रतिमाओं में सौन्दर्यभाव की अभिव्यक्ति देखते ही बनती है। इन प्रतिमाओं में भद्रता, सरलता, आध्यात्मिकता तथा जनजीवन का अद्भुत दर्शन देखने को मिलता है। इस संग्रह में गुप्तकाल से लेकर 16वीं शती तक की प्रतिमाएं भी प्रदर्शित हैं। इनमें चतुर्मुखी शिवलिंग, शिव-पार्वती तथा शिव-पार्वती विवाह से सम्बन्धित प्रतिमाएं उल्लेखनीय हैं। दर्शक गुप्त कालीन प्रतिमाओं को थोड़े से ही प्रयास से उनकी मांसलता के आधार पर पहचान सकता है।

चौहानों के शासन काल में नागौर से लेकर सांभर, सीकर एवं अजमेर आदि स्थानों पर स्थापत्य एवं शिल्पकला के क्षेत्र में चहुंमुखी प्रगति हुई। छठी से 12वीं शताब्दी की अवधि में इस क्षेत्र की कला, समृद्धि के शिखर पर पहुँच गई। अजमेर संग्रहालय की प्रतिमा दीर्घा में मुख्यतः चौहान काल में 10वीं से 12वीं शती के मध्य बने शिल्प एवं स्थापत्य कला के नमूने प्रदर्शित किए गए हैं। मुख्य प्रतिमाओं में लिंगोद्भव महेश्वर, नक्षत्र, वराह स्वामी, लक्ष्मीनारायण, कुबेर तथा सूर्य प्रतिमा चित्ताकर्षक हैं जो पुष्कर, अढ़ाई दिन का झोंपड़ा, बघेरा, हर्षनाथ (सीकर) आदि स्थलों से प्राप्त की गई हैं। लिंगोद्भव महेश्वर की सीकर से प्राप्त प्रतिमा लंदन एवं रूस में आयोजित कला प्रदर्शनियों में भारत का प्रतिनिधित्व कर चुकी है। कटारा से प्राप्त ब्रह्म-विष्णु-महेश, अर्थूणा के इन्द्र एवं कुबेर, कुसुमा से प्राप्त शिव-पार्वती, आउवा से प्राप्त बलदेव-रेवती एवं विष्णु की चित्ताकर्षक प्रतिमाएं, इस संग्रहालय की उल्लेखनीय प्रतिमाएँ हैं।

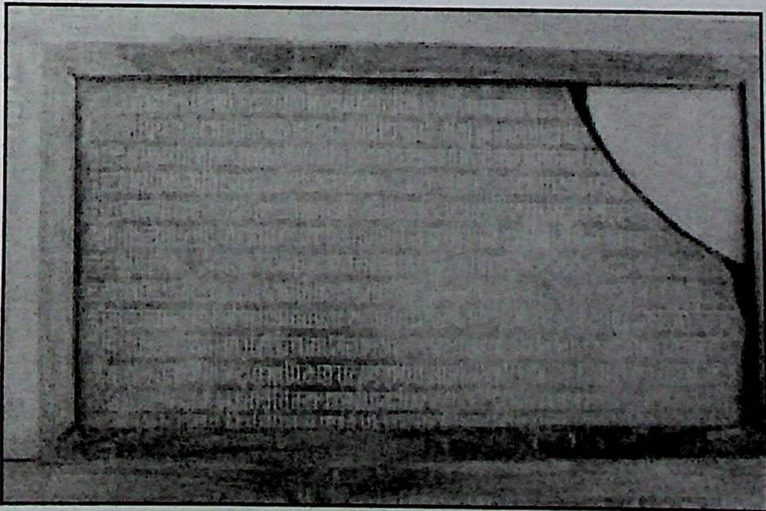
जैन मूर्ति-दीर्घा में लगभग तीन दर्जन प्रतिमाएं प्रदर्शित हैं, जो राजस्थान में जैन धर्म के प्रभाव की गाथा कहती हैं। इन प्रतिमाओं को अजमेर, पुष्कर, किशनगढ़, बघेरा, टांटोटी, लाडनूं, तलवाड़ा, अर्थूणा, कटारा, झालरापाटन, बड़ौदा (डूंगरपुर) एवं बदनोर (उदयपुर) आदि स्थानों से प्राप्त किया गया। ये स्थान जैन धर्म के केन्द्र स्थल रहे हैं तथा अधिकतर प्रतिमाएं 10वीं से 17वीं शती का प्रतिनिधित्व करती हैं। बघेरा से प्राप्त कुंथुनाथ, पार्श्वनाथ तथा आदिनाथ, टांटोटी से प्राप्त शांतिनाथ, किशनगढ़ से प्राप्त सुपार्श्वनाथ, अजमेर से प्राप्त शांतिनाथ, चन्द्रप्रभु एवं जैन प्रतिमा का छत्र, पुष्कर से प्राप्त



जैन प्रतिमा का छत्र, कटारा से प्राप्त आदिनाथ, महावीर स्वामी तथा पार्श्वनाथ, अर्थूणा से प्राप्त जैन सरस्वती, बड़ौदा से प्राप्त आदिनाथ एवं वासुपूज्य, लाडनूं से प्राप्त कुंथुनाथ एवं हाथनों (जोधपुर) से प्राप्त गौमुखी-यक्ष इस संग्रहालय की विशिष्ट जैन प्रतिमाएँ हैं।

शिलालेख

अजमेर संग्रहालय में दूसरी शताब्दी ईस्वी-पूर्व से लेकर मध्य युग तक के प्राचीन महत्वपूर्ण शिलालेख विद्यमान हैं। इसके साथ ही अभिलेखयुक्त प्रतिमाएं, स्मृतिफलक शिलालेख तथा ताम्रपत्रों का भी अच्छा संग्रह है। ये शिलालेख ब्राह्मी, कुटिल एवं देवनागरी आदि लिपियों तथा संस्कृत, हिन्दी, डिंगल एवं फारसी आदि भाषाओं में उत्कीर्ण हैं। बरली का शिलालेख राजस्थान का प्राचीनतम शिलालेख कहलाता है। इस शिलालेख को अजमेर से 36 किलोमीटर दूर बरली के निकट भिलोत माता मंदिर से प्राप्त किया गया। यह दूसरी शताब्दी ईस्वी-पूर्व का है तथा ब्राह्मी लिपि में है। संभवतः यह किसी जैन मंदिर का शिलालेख है। नगरी का लेख वि सं. 481 का है। इस लेख में वैश्य सत्यसूर्य और उसके भाइयों द्वारा भगवान नारायण (विष्णु) के चरण पर मंदिर बनवाए जाने का उल्लेख है। यह लेख मेवाड़ के नगरी (मध्यमिका) नामक प्राचीन नगर से मिला है।

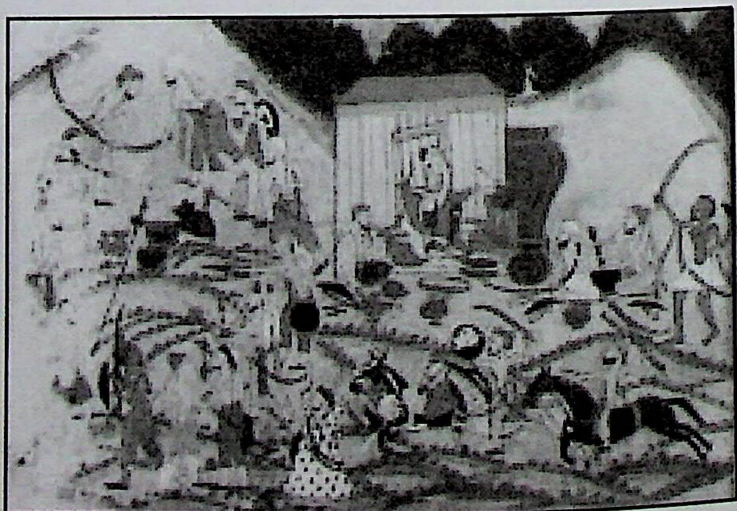


प्रतिहार वंशीय राजा बाउक के **मण्डोर लेख** (वि.सं. 894) में मंडोर के प्रतिहारों का ब्राह्मण हरिश्चन्द्र के वंश में होना तथा हरिश्चन्द्र से लेकर बाउक तक की वंशावली और उनका कुछ वृत्तान्त दिया है। बयाना के नाना अभिलेख (8वीं शती ईस्वी) में

बलिआ के पुत्र तथा उकेश्वर के पौत्र दुर्गादित्य का, गायों को छुड़ाने के प्रयास में चोरों के हाथों मारे जाने का उल्लेख है। वाक्पतिराज के पुष्कर लेख में 10वीं शती ईस्वी में रुद्रादित्य नामक व्यक्ति द्वारा एक विष्णु मंदिर बनाए जाने का उल्लेख है। चामुण्डराज अर्थूणा लेख (वि.सं.1137) बागड़ के परमार राजा चामुण्डराज के समय का है। इसमें उसके एक अधिकारी के तीन पुत्रों आसदेव, मत्यासराज तथा अनंतपाल के नाम दिए गए हैं। अनंतपाल ने एक शिव मंदिर बनवाया था, यह लेख अर्थूणा के शिवालय से मिला है।

अजमेर के अढाई दिन का झोंपड़ा परिसर से चौहान राजा विग्रहराज (चतुर्थ) के समय के छह शिलापट्ट मिले हैं, जिन पर राजा विग्रहराज द्वारा लिखित संस्कृत भाषा का नाटक हरकेलि उत्कीर्ण है। इस नाटक में शिव-पार्वती की अभ्यर्थना की गई है और उनकी विभिन्न क्रीड़ाओं का वर्णन है। इसके एक खण्ड में नारायण तथा अन्य देवी-देवताओं की स्तुति है। बारहवीं शताब्दी ईस्वी का चौहान नरेश विग्रहराज (चतुर्थ) साहित्य प्रेमी राजा था और साहित्यकारों का आश्रयदाता भी। उसके समय के लोग उसे कवि बांधव कहते थे। इतिहास में उसे वीसलदेव नाम से भी सम्बोधित किया गया है। उसने अजमेर में एक संस्कृत विद्यालय एवं सरस्वती मंदिर बनवाया जो मुहम्मद गौरी की सेनाओं द्वारा तोड़ दिए जाने के बाद अढ़ाई दिन का झौंपड़ा के नाम से अवशेष रूप में रह गया है। इस विद्यालय परिसर से 75 पंक्तियों का एक विस्तृत शिलालेख प्राप्त हुआ है, जो इस बात की घोषणा करता है कि इस विद्यालय का निर्माण वीसलदेव ने करवाया था। सरस्वती कण्ठाभरण मंदिर परिसर से विग्रहराज द्वारा संस्कृत में लिखित हरकेलि नाटक के छः चौके मिले हैं, जो 22 नवम्बर 1153 की तिथि के हैं। राजपूताना संग्रहालय में रखा उसका शिलालेख घोषणा करता है कि चौहान शासक सूर्यवंशी क्षत्रिय हैं।

रंगचित्र



अफीम सेवन, उन्नीसवीं शती ईस्वी की पेंटिंग

संग्रहालय के चित्रकला विभाग में कोटा, बूंदी, उदयपुर, जोधपुर, किशनगढ़ एवं बीकानेर आदि रियासतों से प्राप्त विभिन्न चित्रशैलियों के नमूने प्रदर्शित किए गए हैं। इनमें कोटा, करौली, टोंक, बीकानेर, जोधपुर, डूंगरपुर, भरतपुर, झालावाड़ तथा जयपुर के प्रमुख शासकों के चित्रों के साथ-साथ मथुराधीशजी, वल्लभ संप्रदाय, श्रीनाथजी, वासुदेव द्वारा कृष्ण को लेकर यमुना पार करने के चित्र, विभिन्न राग-रागिनियों के चित्र, गेरखनाथजी, अष्टछाप कवि, गुंसाईजी, चीर हरण, राम-रावण युद्ध, वल्लभाचार्यजी, विट्ठलनाथजी, भीष्म पितामह आदि के चित्र सम्मिलित हैं।

अस्त्र-शस्त्र

संग्रहालय के एक कक्ष में विभिन्न प्रकार के प्राचीन अस्त्र-शस्त्रों का प्रदर्शन किया गया है। इनमें विभिन्न प्रकार की तलवारें, ढाल, कटार, फरसा, जागनोल, बंदूक, धनुषबाण तथा अनेक प्रकार के हथियार संग्रहित हैं। साथ ही एक मनुष्याकार राजपूत योद्धा का मॉडल रखा है, जो मध्य-कालीन युद्धों के समय पहनी जाने वाली वेशभूषा से सुसज्जित है।

सिक्के एवं मुद्राएं



अजमेर संग्रहालय में सोना, चांदी, तांबा, लैड तथा निकल के 3000 से अधिक सिक्के सुरक्षित हैं, जिनमें भारतवर्ष के पूर्वेतिहासिक काल के पंचमार्का (आहत) सिक्के सबसे पुराने हैं। नगरी से प्राप्त जनपद के सिक्कों पर वृक्ष, स्वास्तिक, ब्रह्मी लिपि के लेख तथा पट्ट और मेहराब युक्त पहाड़ी के नीचे टेढ़ी-मेढ़ी रेखाओं से बने नदी के चिह्न अंकित हैं। तक्षशिला से प्राप्त इण्डोग्रीक सिक्के के चित्त की ओर राजा का ऊर्ध्व चित्र है तथा पट्ट की ओर यूनानी देवी एवं देवता, 'जियस' लिखा हुआ है एवं वृषभ के चित्र बने हैं। कुषाणकालीन सिक्कों में ईरानी वेशभूषा में अंकित राजा दाहिने हाथ से अग्नि वेदी पर आहुति देते हुए अंकित है तथा बायां हाथ कटि पर बंधी तलवार थामे दिखाया गया है। राजा के पृष्ठ भाग पर शिव तथा त्रिशूल का अंकन है। राजा का शिरस्त्राण (टोप) नुकीला है।

कनिंघम को पुष्कर से पश्चिमी क्षत्रपों महपान, पायदामन, रुद्रदामन तथा रुद्रसिंह की कई मुद्राएं प्राप्त हुई थीं। गुप्तकालीन सिक्कों में चन्द्रगुप्त (प्रथम) के राजा-रानी के सिक्के, समुद्रगुप्त के ध्वजधारी, धनुर्धारी, परशुधारी, वीणाधारी तथा अश्वमेध प्रकार के

सिक्के, कांच का दुर्लभ सिक्का तथा चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य के विभिन्न प्रकार के सिक्के इस संग्रहालय की महत्वपूर्ण निधि हैं। चौहान अजयदेव के सिक्के में एक ओर बैठी हुई देवी का अंकन है तथा दूसरी ओर देवनागरी में अजयदेव लिखा हुआ है। अश्वारोही-वृषभ प्रकार के सिक्के के चित भाग पर ढाल और भाला लिए अश्वारोही तथा पट्ट भाग पर शिव-वाहन नंदी बैठा है। गधिया प्रकार के सिक्कों के चित भाग पर राजा का भद्दा चेहरा है तथा पट्ट भाग पर सिंहासन या अग्निवेदी को बिन्दुओं के माध्यम से बनाया गया है। दिल्ली सल्तनत के सुल्तानों एवं मुगल बादशाहों के विभिन्न सिक्के भी इस संग्रहालय में संग्रहित हैं।



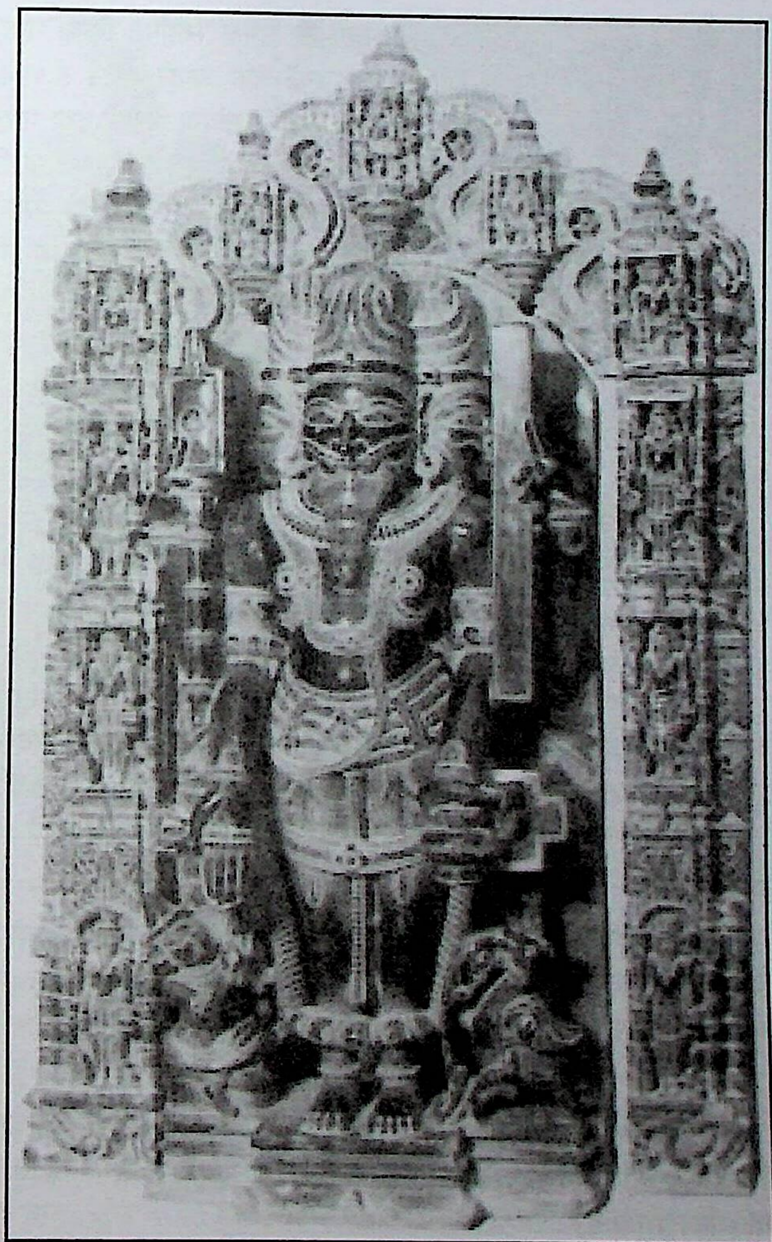
उदयपुर संभाग के संग्रहालय

अध्याय - 7

राजकीय संग्रहालय, उदयपुर

महाराणा शम्भुसिंह (ई.1861-74) के शासन काल में कर्नल हैचिन्सन की सलाह पर उदयपुर रियासत में तवारीख महकमा (इतिहास विभाग) स्थापित किया गया। इसी दौरान ई.1873 में उदयपुर संग्रहालय की स्थापना का काम आरम्भ हुआ। महाराणा सज्जनसिंह (ई.1874-84) के शासनकाल में इतिहास विभाग की अच्छी प्रगति हुई। उनके शासन काल में ही राज्य में ई.1879 में कविराजा श्यामलदास की अध्यक्षता में ऐतिहासिक और पुरा सामग्री का अनुसंधान कार्य प्रारम्भ हुआ। प्रसि) इतिहासविद् गोविन्द गंगाधर देशपाण्डे ने एक वर्ष तक उदयपुर में रहकर प्राचीन शिलालेखों का अध्ययन किया।

ई.1887 में महाराणा फतहसिंह (ई.1884-1930) ने महारानी विक्टोरिया (ई. 1837-1901) के शासन की स्वर्ण जयंती के अवसर पर उदयपुर के सज्जन निवास बाग में विक्टोरिया हॉल का निर्माण करवाया। इस भवन का निर्माण इण्डो-ब्रिटिश स्थापत्य शैली में किया गया था। इस उद्यान को अब गुलाब बाग कहते हैं। 1 नवम्बर 1890 को भारत के तत्कालीन वाइसराय लार्ड लेन्सडाउन ने इस भवन में विक्टोरिया हॉल म्यूजियम और पुस्तकालय का उद्घाटन किया। उसी दिन से यह जनसाधारण के लिए खोल दिया गया। प्रसिद्ध इतिहासकार गौरीशंकर ओझा को क्यूरेटर के पद पर नियुक्त किया गया। वे ई.1908 तक इस पद पर तक कार्यरत रहे। उनके पश्चात् पण्डित अक्षय कीर्ति व्यास और रत्नचन्द्र अग्रवाल भी इस संग्रहालय एवं पुस्तकालय के अध्यक्ष रहे। उन्होंने पूरे राज्य से शिलालेख, सिक्के, प्रतिमाएँ, कलात्मक सामग्री एवं वस्त्रों के नमूने प्राप्त करके इस संग्रहालय में प्रदर्शित किए। आगे चलकर पं. अक्षय कीर्ति व्यास ने मेवाड़ क्षेत्र के शिलालेखों एवं रतनचन्द्र अग्रवाल ने मेवाड़ क्षेत्र की प्राचीन प्रतिमाओं को प्रकाशित करने पर विशेष ध्यान दिया। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद सरस्वती भण्डार से बहुत बड़ी संख्या में चित्रित पाण्डुलिपियों का अधिग्रहण किया गया।



परेवा पत्थर पर ब्रह्मा की प्रतिमा, सोलहवीं शताब्दी ईस्वी

महारानी विक्टोरिया की ऐतिहासिक प्रतिमा

इस संग्रहालय के लिए लंदन से महारानी विक्टोरिया की एक विशाल मूर्ति मंगवाई गई, जिसका समस्त व्यय महाराणा द्वारा वहन किया गया। इस प्रतिमा को संग्रहालय


महारानी विक्टोरिया की प्रतिमा, गुलाब बाग

भवन के समक्ष स्थापित किया गया जहाँ यह वर्षों तक खड़ी रही। ई.1948 में उदयपुर के स्वतंत्रता सेनानी तथा भारत की संविधान सभा के सदस्य वीरभद्र जोशी तथा मास्टर बलवंत सिंह मेहता इस प्रतिमा पर चढ़ गए और इसके मुंह पर काला रंग पोत दिया। इसके बाद इस प्रतिमा को उठाकर संग्रहालय के भवन में रख दिया गया और विक्टोरिया की प्रतिमा के स्थान पर गांधीजी की प्रतिमा स्थापित की गई। स्वतंत्रता सेनानियों द्वारा इसे राष्ट्रवाद की विजय बताया गया। ई.1968 में यह संग्रहालय सज्जन निवास बाग से सिटी पैलेस के कर्ण विलास या हिसाब दफ्तर महल में स्थानान्तरित किया गया और इसका नाम प्रताप संग्रहालय रखा गया। भारत की स्वतंत्रता के बाद यह राजकीय संग्रहालय उदयपुर के नाम से जाना जाता है। विक्टोरिया हॉल अब गवर्नमेंट सरस्वती पुस्तकालय कहलाने लगा, किंतु विक्टोरिया की वह प्रतिमा आज भी इस भवन की एक गैलेरी के कोने में उपेक्षित अवस्था में रखी हुई है।

क्षेत्रीय संग्रहालय

वर्तमान में राजकीय संग्रहालय उदयपुर एक क्षेत्रीय संग्रहालय है। इसमें मेवाड़ क्षेत्र के प्राचीन शिलालेख, प्रतिमाएं, लघु चित्र, प्राचीन सिक्के, एवं अस्त्र-शस्त्र संगृहीत हैं। संग्रहालय की पुरा सामग्री एवं कला सामग्री को पांच दीर्घाओं में रखा गया है।

बाल दीर्घा

प्रथम दीर्घा को बाल दीर्घा का रूप दिया गया है। इसमें बालकों की रुचि की सामग्री प्रदर्शित है, जिसमें स्टफ किया गया कंगारू, बन्दर, सफेद सांभर, कस्तूरी हिरन और घड़ियाल प्रमुख हैं।

सांस्कृतिक दीर्घा

इस दीर्घा में मेवाड़ की छपाई के वस्त्र, हाथी दाँत के कलात्मक नमूने, मेवाड़ी पगड़ियाँ, साफे, चोगा, भीलों के आभूषण, महाराणाओं के पोर्ट्रेट्स, भीलों के जीवन पर आधारित आधुनिक चित्र, और अस्त्र-शस्त्र प्रमुख हैं। सांस्कृतिक दीर्घा की सबसे मूल्यवान निधि शहजादा खुर्रम की पगड़ी है। ई.1622 में शहजादा खुर्रम अपने पिता



महिषासुर मर्दिनी
मध्यकालीन धातु प्रतिमा भीलवाड़ा

जहांगीर से बगावत करके दक्षिण की ओर जाते हुए कुछ दिनों के लिए उदयपुर ठहरा था। वह मेवाड़ के राणा कर्णसिंह का पगड़ी बदल भाई बना था। वही यादगार पगड़ी राजकीय संग्रहालय उदयपुर में प्रदर्शित है। हाथी दांत से निर्मित बहुत सी कलाकृतियां इस संग्रहालय में देखी जा सकती हैं। इनमें हाथीदांत से बने मुग्दर, खड़ाऊ, पालकी ले जाते कहार, पानी का जहाज, चंदन से बनी खड़ाऊं, भेड़ पर आक्रमण करता शेर, कुत्तों को घुमाने ले जाता आदमी, हाथी दांत की कार बहुत ही परिश्रम से बनाई गई प्रतीत होती हैं। धातुओं से बनी बहुत सी मूर्तियां भी महत्वपूर्ण हैं। पीतल से बनी भील ज्वैलरी भी दर्शनीय है। पीतल से बनी 13वीं सदी की महिषासुर मर्दिनी की प्रतिमा इतिहास की दृष्टि से बहुमूल्य है। इस प्रतिमा में देवी के चार हाथ दर्शाए गए हैं। पीतल से बनी जैन तीर्थंकरों की भी कई प्रतिमाएँ हैं। संग्रहालय में नेपाल के पशुपतिनाथ मंदिर का लकड़ी का मॉडल भी प्रदर्शित किया गया है, जिसकी कला देखते ही बनती है।

अस्त्र-शस्त्र

संग्रहालय में मध्यकालीन एवं रियासती इतिहास को जानने की दृष्टि से महत्वपूर्ण अस्त्र-शस्त्रों को बड़ी संख्या में प्रदर्शित किया गया है। हथियार बनाने वालों ने कुछ हथियारों पर उनसे सम्बन्धित सूचनाएं भी अंकित की हैं। कुछ तलवारों की मूठ सोने से बनी हुई हैं तथा कुछ तलवारों की म्यान पर सोने का काम किया गया है। संग्रहालय में कलाई पर पहनने वाला पहुंचा, बरछी, पेशकब्ज, छुरी तथा नारजा भी प्रदर्शित किए गए हैं। एक तलवार पर बांसवाड़ा के महारावल पृथ्वीसिंह का नाम अंकित है। स्टील से बने धनुष एवं बाण, बांस से बने बाण, 17वीं शताब्दी में जैसलमेर में बनी मैचलॉक बंदूक जिस पर सोने की कोफ्तकारी का काम है, अठारहवीं शताब्दी के प्रारम्भिक वर्षों में निर्मित हाथी का अंकुश, 18वीं शताब्दी का भीलों के काम आने वाला चमड़े का तरकश, दो सौ साला पुरानी लोहे की गुप्ती, थ्री नॉट थ्री राइफल, तुर्किश तोप, विभिन्न रियासतों के चांदी के सिक्के, बीकानेर में बनी 18वीं सदी की लोहे की ढाल, जिस पर चंद्रस का काम हुआ है तथा ताम्बे के फूलों से सजी हुई है, विभिन्न प्रकार की पेशकब्ज, खुखरी, कैंची कटार, टाइगर कटार, 17वीं शताब्दी में बूंदी में निर्मित लोहे की दस्तेद्रस

(दाओ) संग्रहालय में प्रदर्शित की गई हैं।

संग्रहालय में विभिन्न प्रकार की तलवारें रखी गई हैं, जो 17वीं से 19 शताब्दी तक भारत में प्रयुक्त होती थीं। इनमें तोते की आकृति वाली मूठ युक्त तलवार, ई.1850 के आसपास बनी लहरिया तलवार, जिसकी मूठ पर सोने की कोफ्ताकारी है, घोड़े की मुखाकृति की मूठ वाली कुलाबा (पतली तलवार), पक्षी की चोंच के समान चिरे हुए मुंह वाली जुल्फिकार तलवार, स्टील की गुर्ज, लोहे की ढालें, जिन पर चांदी का काम किया हुआ है, चांदी की कोफ्तकारी से युक्त नागिन के समान लहराती हुई आकृति में बनी तलवार, लोहे की तेगा तलवार, कोरबंदी कोफ्तकारी से युक्त लहरिया पैटर्न की लोहे की तलवार, सोने के काम वाली मूठ की पट्टा तलवार जो 17वीं शताब्दी के प्रारम्भिक दशकों में दक्षिण भारत में बनी थी, सम्मिलित हैं।

शिलालेख दीर्घा


जैन कुबेर, रानीमल्या

इस संग्रहालय के प्रथम क्यूरेटर गौरीशंकर ओझा ने रियासत के विभिन्न भागों से इतिहास की दृष्टि से अत्यंत उपयोगी शिलालेख एकत्रित किए थे, जिनमें से बहुत से शिलालेख अब भी इस संग्रहालय में हैं, कुछ शिलालेख अन्य संग्रहालयों को भेज दिए गए हैं। इस संग्रहालय के क्यूरेटर रत्नचंद्र अग्रवाल भी बहुत से शिलालेखों को प्रकाश में लाए।

इस दीर्घा में मेवाड़ क्षेत्र से प्राप्त द्वितीय शताब्दी ई.पू. से 19वीं शताब्दी ईस्वी तक के शिलालेख संग्रहित हैं, जो मेवाड़ क्षेत्र के इतिहास को जानने का प्रमुख साधन हैं। इन शिलालेखों में सबसे प्राचीन घोसुण्डी शिलालेख है, जो द्वितीय शताब्दी ई. पू. का है। यह चित्तौड़ से सात मील दूर नगरी के निकट घोसुण्डी से प्राप्त हुआ। यह लेख कई खण्डों में टूटा हुआ है। इनमें से एक बड़ा खण्ड उदयपुर संग्रहालय में सुरक्षित है। लेख की भाषा संस्कृत और लिपि ब्राह्मी है। इस शिलालेख में संकर्षण और वासुदेव के पूजा गृह नारायण वाटिका के चारों ओर पत्थर की चारदीवारी बनाने और गजवंश के पराशरी के पुत्र सर्वतात द्वारा अश्वमेध यज्ञ करने का उल्लेख है। जोगेन्द्रनाथ घोष के विचार से इस लेख में वर्णित राजा कण्ववंशीय ब्राह्मण होना चाहिए। जॉनसन के विचार से यह लेख किसी ग्रीक, शुंग या आन्ध्रवंशीय शासक का होना चाहिये। आन्ध्रों में 'गाजायन' नामक गोत्र तथा 'सर्वतात्' आदि नाम पाए जाते थे। इसके अतिरिक्त भीलवाड़ा जिले का

वि.सं. 282 का नान्दसा यूप शिलालेख, छोटी सादड़ी का वि.सं. 547 का भामरमाता शिलालेख, कल्याणपुर शिलालेख एवं कुम्भलगढ़ से प्राप्त कुम्भा कालीन चार विशाल शिलालेख उल्लेखनीय हैं।

चित्तौड़ से छः मील दूर स्थित नगरी (प्राचीन नाम माध्यमिका) से प्राप्त एक शिलालेख प्रदर्शित किया गया है। कुंद शिलालेख वि.सं. 718 का है जो सूर्यवंशी राजा अपराजित से सम्बन्धित है। राजा धवलप्पदेव का धौद शिलालेख, परमार वंश का डबोक शिलालेख, तेजसिंह का घाघसा बावड़ी का शिलालेख, चौहान वंश का अलावदा और लोहारी सती लेख, सूचिवर्मन एवं शक्तिकुमार का आहार शिलालेख भी इस संग्रहालय के प्रमुख आकर्षण हैं। संग्रहालय में एक फारसी शिलालेख भी उल्लेखनीय है जो गयासुद्दीन तुगलक के शासन के सम्बन्ध में महत्वपूर्ण सूचना प्रदान करता है। इसी दीर्घा में कुम्भलगढ़ से प्राप्त 16 लेखयुक्त प्रतिमाएँ प्रदर्शित हैं, जिनमें ब्रह्मण, माहेश्वरी, कौमारी, वाराही, दामोदर, वासुदेव, केशव, माधव, मधूसूदन एवं पुरुषोत्तम प्रमुख हैं।

कुछ प्राचीन ताम्रपत्र भी इस संग्रहालय में प्रदर्शित किए गए हैं, जिन पर धार्मिक प्रयोजन हेतु ब्राईणों को भूमिदान दिए जाने का उल्लेख है।

प्रतिमा दीर्घा



वैष्णवी मातृका
कुंभलगढ़, ई.1458

इस दीर्घा में मेवाड़ क्षेत्र से प्राप्त छठी शताब्दी से 18वीं शताब्दी ईस्वी की प्रस्तर प्रतिमाएँ प्रदर्शित की गई हैं। इन प्रतिमाओं को शैव सम्प्रदाय, वैष्णव सम्प्रदाय, जैन सम्प्रदाय तथा अन्य विषयों से सम्बन्धित प्रतिमाओं से विभक्त किया जा सकता है। इनमें जगत से प्राप्त इन्द्राणी की प्रतिमा तथा तनेसर से प्राप्त शिशु क्रीड़ा, छठी शताब्दी ईस्वी की मूर्ति कला का प्रतिनिधित्व करती हैं। बान्सी क्षेत्र के रानीमल्या का जैन कुबेर और कल्याणपुर से प्राप्त घुंघराले बालों से युक्त शिवमस्तक आठवीं शताब्दी ईस्वी की प्रमुख प्रतिमाएं हैं। कल्याणपुर से प्राप्त एक पुरुष प्रतिमा का भारी मस्तक भी इस संग्रहालय में रखा गया है। कल्याणपुर से ही त्रिनेश शिव प्रतिमा का एक मस्तक भी प्राप्त किया गया है। इसमें परमात्मा के चेहरे पर बहुत ही शांत भाव हैं। मस्तक पर बहुविध अलंकरण किया गया है।

केजड़ा से प्राप्त नृत्यलीन वाराही तथा नागदा से प्राप्त शेषशायी विष्णु, आहार से प्राप्त भगवान विष्णु के मत्स्यावतार एवं कच्छप अवतार प्रतिमाएँ भी संग्रहालय का विशिष्ट आकर्षण हैं। कमल पुष्प पर आसीन देवी लक्ष्मी की एक प्रतिमा विभिन्न

प्रकार के आभूषणों से अलंकृत है। इसमें देवी की देहयष्टि अत्यंत पुष्ट दिखाई गई है। आहड़ से प्राप्त एक भारी कांस्य प्रतिमा भी प्रदर्शित की गई है। गुप्तोत्तर काल में दक्षिण-पश्चिम राजस्थान में हरे-नीले पत्थर (परेवा पत्थर) पर बहुत बड़ी संख्या में प्रतिमाओं का निर्माण किया गया। इस संग्रहालय में इस पत्थर की बहुत सी प्रतिमाएँ प्रदर्शित की गई हैं। भगवान शिव की परेवा पत्थर की 8वीं शताब्दी की एक प्रतिमा में भगवान किंचित बांकपन लेकर खड़े हैं। चार हाथों की इस प्रतिमा के तीन हाथ ही दिखाई देते हैं। एक हाथ में भगवान ने त्रिशूल पकड़ रखा है। एक हाथ में पुष्प है। भगवान के चरणों के पास नंदी खड़ा है। परेवा पत्थर पर ही चामुण्डा की एक प्रतिमा आठवीं शताब्दी की है। इसमें देवी के चार हाथ हैं, माथे पर सुंदर केश-सज्जा एवं मुकुट दिखाई दे रहे हैं। आठवीं शताब्दी की परेवा पत्थर की एक शिव प्रतिमा में भगवान शिव के मुखमण्डल पर प्रसन्नता विराज रही है। उन्होंने भीलों की तरह छोटा सा बाघम्बर बांध रखा है। सिर पर केशों की भारी सजावट की गई है। भगवान, नंदी का सहारा लेकर खड़े हैं। इस प्रतिमा की चार भुजाएं थीं, किंतु अब केवल एक ही रह गई है।

परेवा पत्थर से बनी नागिनी की एक प्रतिमा 9वीं-10वीं शताब्दी ईस्वी की है। परेवा पत्थर से बनी भगवान के वराह अवतार की एक दुर्लभ प्रतिमा दर्शनीय है। इसी प्रकार की एक वराह प्रतिमा जो कम से कम एक हजार वर्ष पुरानी रही होगी, लेखक ने बारां जिले में परवन नदी के किनारे काकूनी के भग्नावशेषों में पड़ी देखी थी, जिसे एक मंदिर के परिसर में रखा गया था। सिंहवाहिनी क्षेमंकरी माता की प्रतिमा सौम्य भाव की है, यह 10वीं-11वीं शताब्दी की है। देवी के चरणों के पास सिंह का अंकन किया गया है। देवी के माथे पर जूड़ा एवं मुकुट है तथा मस्तक के पीछे प्रभामण्डल बनाया गया है। इसी काल का लाल पत्थर का एक कुबेर देखते ही बनता है, वह एक छोटे हाथी पर पालथी लगाकर बैठा है तथा उसके भारी शरीर के कारण हाथी दबा हुआ प्रतीत होता है। परेवा पत्थर पर बनी भगवान विष्णु की खड़ी प्रतिमा एवं शेषशायी प्रतिमा भी देखते ही बनती हैं। शेषशायी प्रतिमा में देवी लक्ष्मी भगवान के चरण चाप रही हैं। शिव-पार्वती की एक युगल प्रतिमा 10वीं-12 शताब्दी की है। यह भी परेवा पत्थर पर बनी है तथा अपेक्षाकृत अच्छी अवस्था में है।

पंद्रहवीं शताब्दी ईस्वी में मेवाड़ राज्य के शिल्पी सूत्रधार मण्डन ने इस क्षेत्र की मूर्ति कला को प्रभावित किया। उसके प्रभाव से युक्त मूर्तिकला की कई मूर्तियां इस संग्रहालय में देखी जा सकती हैं। साधारण लाल पत्थर से 15वीं शताब्दी में बनी कई प्रतिमाएँ इस संग्रहालय में हैं, जिनमें ब्राह्मणी माता का एक पैनल, भगवान विष्णु का खड़ा विग्रह, दामोदर स्वरूप का विग्रह, वासुदेव स्वरूप का विग्रह, अनिरुद्ध स्वरूप का विग्रह, केशव स्वरूप, प्रद्युम्न स्वरूप तथा भगवान के पुरुषोत्तम स्वरूप के विग्रह प्रदर्शित किए गए हैं। पंद्रहवीं शताब्दी का अधोक्षजा स्वरूप का विग्रह भी दर्शनीय है।

इस प्रतिमा के दोनों हाथ तथा वैजयंती माला का काफी भाग खण्डित हैं। कुंभलगढ़ से प्राप्त वैष्णवी की एक प्रतिमा पर ई.1458 का शिलालेख अंकित है। पंद्रहवीं शताब्दी ईस्वी की भगवान संकषर्ण की प्रतिमा अपेक्षाकृत अच्छी अवस्था में है। यह लाल पत्थर से निर्मित है। परेवा पत्थर पर बनी एक चतुर्भुजी ब्रह्मा की प्रतिमा के चारों ओर अलंकृत परिकर बनाया गया है। यह 17वीं शताब्दी की प्रतिमा है तथा परेवा पत्थर से निर्मित है।

परेवा पत्थर पर निर्मित भगवान विष्णु एवं देवी लक्ष्मी की रागात्मक भाव की एक सौम्य प्रतिमा 16वीं शताब्दी ईस्वी की है। परेवा पत्थर से बनी इंद्राणी की एक प्रतिमा मध्यकाल की है। इसमें इन्द्र की पत्नी कमल आसन पर विराजमान है। उसकी सवारी ऐरावत भी कमल के नीचे अंकित है। इन्द्राणी के चार हाथ हैं, मस्तक एवं गले में बहुत सुंदर आभूषण एवं अलंकरण हैं। यह छठी शताब्दी ईस्वी की प्रतिमा है जो जगत से प्राप्त हुई थी। इन्द्राणी ने अपना बायां पैर मोड़कर अपनी दायीं जंघा के पास रखा हुआ है तथा दायां पैर आसन से नीचे लटक रहा है। देवी के चेहरे पर आत्म गौरव एवं आत्मविश्वास के भाव हैं। परेवा पत्थर पर बनी द्वारपाल की एक प्रतिमा 16वीं शताब्दी की है। वाराही की एक मनुष्याकार प्रतिमा 15वीं शती की है तथा लाल पत्थर पर निर्मित है। यह भी मातृका का ही अंकन है। इस पर उसी काल का एक लेख अंकित है, जिसके अनुसार महाराणा कुंभा (ई.1433–68) ने इस प्रतिमा को लगवाया। यह प्रतिमा कुंभलगढ़ से लाई गई प्रतीत होती है। सोलहवीं शती की लाल पत्थर की गणेश प्रतिमा का शिल्प देखते ही बनता है। भगवान की दोनों जंघाओं पर रिद्धि एवं सिद्धि विराजमान हैं। मध्यकाल के एक अत्यंत सुंदर पैनल में अष्ट भुजाओं वाले शिव का अंकन किया गया है किंतु इस प्रतिमा का सिर उपलब्ध नहीं है। भगवान ने अपने हाथों में कमल, त्रिशूल, खट्वांग, सर्प तथा कपाल धारण कर रखे हैं। भगवान ने अपने दो हाथ अपनी गोद में रख रखे हैं। भगवान के दोनों तरफ चंवरधारिणियों का अंकन किया गया है। सूर्य एवं सुरसुन्दरी आदि प्रतिमाएँ दर्शकों को पंद्रहवी शती के कालखण्ड का अनुभव करवाने में सक्षम हैं।

जैन प्रतिमाओं में 7वीं–8वीं शती की जैन कुबेर की भारी शरीर सौष्ठव वाली प्रतिमा अपेक्षाकृत बहुत अच्छी अवस्था में है। पंद्रहवीं–सोलहवीं शती की आदिनाथ की प्रतिमा तथा तीर्थकर की एक मस्तक विहीन प्रतिमा प्रमुख है। जैन तीर्थकर का एक घुंघराले बालों के अंकन वाला मस्तक अलग से प्रदर्शित किया गया है। संभवतः यह मस्तक संग्रहालय की ही मस्तक विहीन प्रतिमा का हो। क्षीण कटि एवं स्थूल पीन पयोधरों से युक्त एक मनोहारी जैन देवी की प्रतिमा इस क्षेत्र में पाए जाने वाले साधारण लाल पत्थर से बनी हुई है। संग्रहालय में मध्यकालीन शिल्पकला का एक अनुपम नमूना तोरण के एक खण्ड के रूप में उपलब्ध है। इसमें गुलाब की पत्तियों एवं ज्यामितीय आकृतियों का अद्भुत अंकन किया गया है।

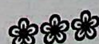
चित्रकला दीर्घा

राजीय संग्रहालय, उदयपुर की चित्रकला दीर्घा में लगभग आठ हजार लघु चित्र प्रदर्शित किए गए हैं, जो संसार में मेवाड़ शैली का सबसे विशाल संग्रह है। इस संग्रह का अध्ययन करने के लिए देश-विदेश के शोधकर्ता उदयपुर संग्रहालय आते हैं। ई. 1979 में बनेड़ा निवासी अक्षय देराश्री ने 143 लघुचित्र उदयपुर संग्रहालय को भेंट किए, जिनमें जयपुर और मालपुरा शैली के चित्र भी प्रमुख हैं। इन लघु चित्रों का काल ई.1630 से ई.1900 तक विस्तृत है। संग्रहालय में सबसे प्राचीन लघुचित्र रसिकप्रिया पर आधारित हैं। इन लघुचित्रों का चित्रकार साहबदीन था, जिसकी शैली इतनी स्वभाविक एवं समृद्ध थी कि उस परम्परा का प्रभाव मेवाड़ की कला पर आज भी देखा जा सकता है। महाराणा अमरसिंह (द्वितीय) (ई.1698-1710) के काल के रसिकप्रिया के 47 चित्र संग्रहालय की अमूल्य निधि हैं। कुछ चित्र एकलिंग महात्म्य से सम्बन्धित हैं। कृष्ण द्वैपायन द्वारा लिखित हरिवंश के श्लोकों में आए प्रसंगों को आधार बनाकर, मध्यकाल में चित्र बनाने की परम्परा रही है। इस परम्परा के कुछ चित्र इस संग्रहालय में रखे हैं।

महाभारत, कृष्णावतार चरित (भागवत), कादम्बरी, रघुवंश, रसिकप्रिया, वेलि कृष्ण रुक्मणि, मालती माधव, गीत गोविन्द, पृथ्वीराज रासो, सूरसागर, बिहारी सतसई एवं पंच-तंत्र पर आधारित लघुचित्र भी उल्लेखनीय हैं। फारसी एवं अरबी ग्रन्थों पर आधारित 'कलीला-दमना' और 'मुल्ला दो प्याजा' के लतीफों पर आधारित लघुचित्र भी संग्रहालय में संग्रहित हैं। एक चित्रित एलबम 'दर्शनों की किताब' के नाम से उपलब्ध है। एक एलबम में मेवाड़ के राणा उदयसिंह से महाराणा भीमसिंह (ई. 1778-1828) तक के चित्र हैं। इस एलबम में मीराबाई का चित्र भी महत्वपूर्ण है। प्रति वर्ष लगभग दस हजार देशी एवं डेढ़ हजार विदेशी दर्शक संग्रहालय को देखने आते हैं।

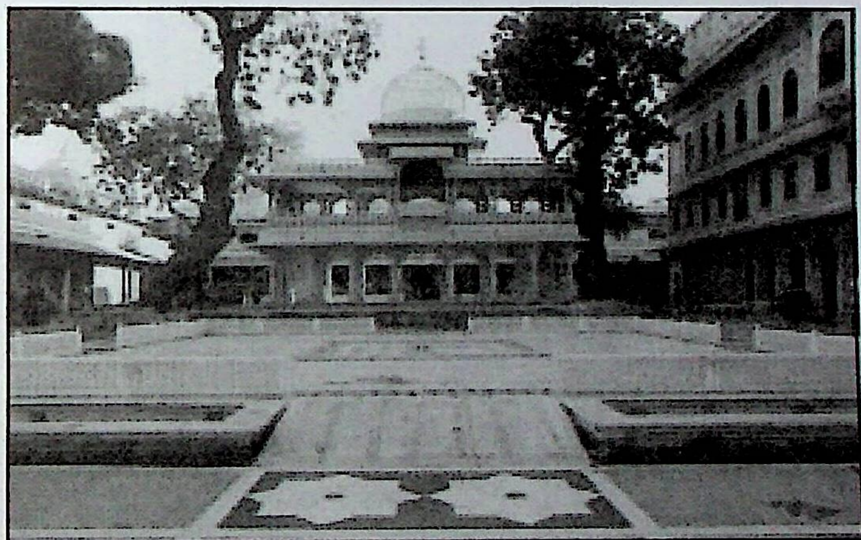


सारंगधर के एक चित्र पर आधारित पेंटिंग



अध्याय - 8

सिटी पैलेस म्यूजियम, उदयपुर



उदयपुर के राजमहलों की नींव महाराणा उदयसिंह (द्वितीय) (ई.1540-72) ने ई.1559 में रखी। इसे सजाने-संवारने में मेवाड़ राजघराने की 24 पीढ़ियों का अनवरत योगदान रहा है। वर्तमान में यह परिसर 1800 फुट लम्बा तथा 800 फुट चौड़ा है, इसकी सर्वाधिक ऊँचाई 105 फुट है। राजमहल का एक हिस्सा 'मर्दाना महल' कहा जाता है। इसे महाराणा भगवत सिंह मेवाड़ ने ई.1969 में संग्रहालय का रूप दिया। ई.1971 के पश्चात् इससे सटे 'जनाना महल' को भी इसके साथ जोड़कर संग्रहालय का विस्तार किया गया। यह संग्रहालय 1028 फुट लम्बा एवं 300 फुट चौड़ा है। सिटी पैलेस का ऐतिहासिक भवन वास्तुकला का एक अनुपम उदाहरण है। इसमें शुद्ध भारतीय शैली से लेकर मुगल एवं ब्रिटिश शैली का सुन्दर समायोजन देखा जा सकता है, इस कारण यह वास्तुशास्त्र के विद्यार्थियों के लिए अध्ययन का प्रमुख केन्द्र भी है।

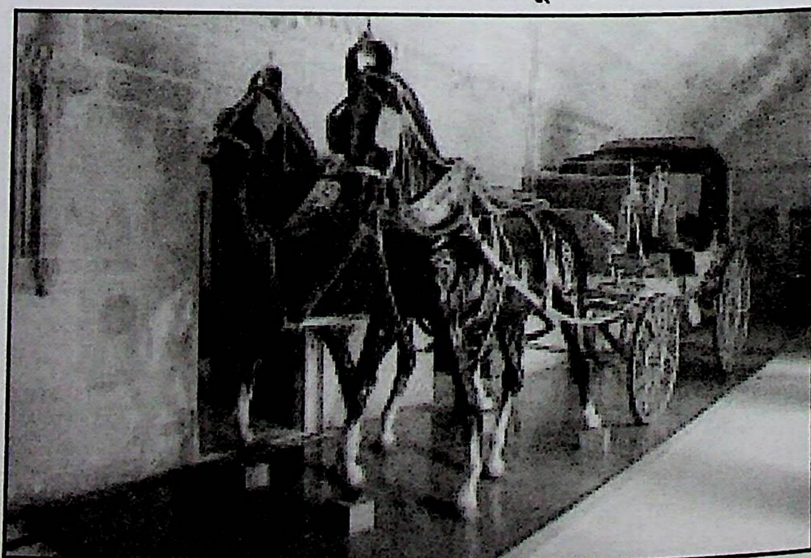
सिटी पैलेस म्यूजियम का प्रथम प्रवेश द्वार 'बड़ीपोल' के नाम से जाना जाता है। इसका निर्माण महाराणा अमर सिंह (प्रथम) (ई.1597-1620) ने करवाया था। इसके निकट स्थित बुकिंग काउण्टर से संग्रहालय में प्रवेश करने के लिए टिकिट प्राप्त किये जाते हैं। बड़ी पोल के ठीक सामने तीन पोलों वाला 'त्रिपोलिया' स्थित है, जिसे महाराणा संग्राम सिंह (द्वितीय) (ई.1710-34) ने बनवाया था। इससे आगे 'माणक चौक' है। इसी चौक के दाईं ओर के महल को संग्रहालय के रूप में प्रयुक्त किया गया

है। संग्रहालय में प्रवेश 'दरीखाने की पोल' से होकर किया जाता है।



इस पोल से आगे बढ़ने पर बाईं ओर 'सभा शिरोमणि का दरीखाना' है, जहाँ महाराणाओं के दरबार लगा करते थे तथा दाईं ओर 'सलेहखाना' (शस्त्रागार) स्थित है। इसकी स्थापना महाराणा सज्जन सिंह (ई.1874-84) के राज्यकाल में हुई। इसमें महाराणाओं के निजी उपयोग के शस्त्रास्त्र- तलवारें, ढालें, छुरियां, कटारें, बन्दूकें, पिस्तोलें आदि प्रदर्शित की गई हैं। इससे आगे बढ़ने पर 'गणेश चौक' आता है। इसके उत्तर पूर्वी कोने में गणेश ड्योढ़ी स्थित है। यहाँ स्थापित गणेश एवं लक्ष्मी की सुन्दर प्रतिमाओं के चारों ओर रंगीन कांच की पच्चीकारी का काम किया गया है। यहाँ से सीढ़ियां चढ़कर 'राय आंगन' में प्रवेश किया जाता है।

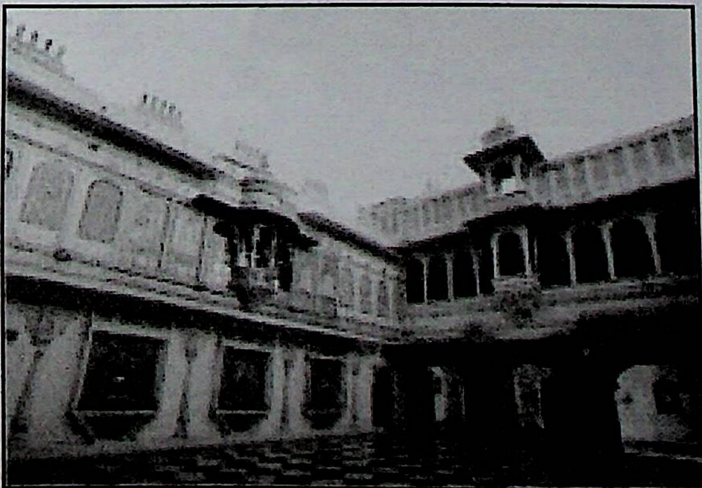
राय आंगन के पश्चिम में गोस्वामी प्रेमगिरी की धूणी (नव चौकी महल) है, इन्हीं



के आशीर्वाद से महाराणा उदयसिंह (ई.1540-72) ने उदयपुर नगर की स्थापना की थी। यहीं पर महाराणाओं का राजतिलक होता आया है, जबकि पूर्व दिशा में 'नीका की चौपड़' एवं प्रताप कक्ष है। प्रताप कक्ष में महाराणा प्रताप (ई.1572-97) के अस्त्र-शस्त्रों को प्रदर्शित किया गया है। नीका की चौपाड़ और इससे संलग्न कक्षों में महाराणा प्रताप से सम्बन्धित बड़े-बड़े तैल चित्र लगे हैं, जो हिन्दुआ सूर्य प्रताप की गौरव गाथा कहते हैं।

नवचौकी महल से सीढ़ी चढ़कर ऊपर जाने पर चंद्रमहल आता है। इसमें एक ही पत्थर का बना सफेद संगमरमर का कुंड है। महाराणा के राजतिलक के समय इस कुंड को चांदी के एक लाख सिक्कों से भरा जाता था। इस कारण इसे 'लक्खु कुंड' कहा जाता है। ये सिक्के पास ही स्थित 'लक्खु गोखड़े' से प्रजा को लुटाए जाते थे। इस भवन के आगे शिव प्रसन्न अमर विलास महल (बाड़ी महल) में पहुंचा जाता है। यह महल श्वेत संगमरमर से निर्मित है। इसमें बना मुगल शैली का चारबाग (उद्यान) कुण्ड एवं फव्वारे पर्यटकों को बरबस ही आकर्षित करते हैं। यहाँ लगे विशाल वृक्ष एवं सुगन्धित फूलों के पौधे पर्यटकों का मन मोह लेते हैं। यहीं एक कक्ष में महाराणा फतहसिंह (ई. 1884-1930) का चित्र और उसके पास ही वह ऐतिहासिक कुर्सी रखी हुई है, जो 12 दिसम्बर 1911 को ब्रिटिश सम्राट जार्ज पंचम द्वरा आयोजित इम्पीरियल दरबार में महाराणा फतहसिंह के लिए लगायी गई थी। महाराणा अपने कुलाभिमान एवं किसी शासक के आगे सर नहीं झुकाने की अपनी गौरवशाली वंश परम्परा के कारण दिल्ली जाकर भी इस दरबार में उपस्थित नहीं हुए थे।

बाड़ी महल के दक्षिण में स्थित द्वार से 'दिलखुशाल महल' में जाया जाता है। इस परिसर में मेवाड़ शैली के कई चित्र लगे हैं, जिनमें महाराणाओं के विभिन्न अवसरों पर बनाए गए चित्र प्रदर्शित किये गए हैं। दिलखुशाल महल के उत्तर में स्थित 'कांच की



बुर्ज' में दीवारों और छत पर रंगीन कांच का आकर्षक कार्य किया गया है वहीं दक्षिण में स्थित 'चित्राम की बुर्ज' में महाराणा संग्राम सिंह (द्वितीय) (ई.1710-34) एवं महाराणा भीमसिंह (ई.1778-1828) द्वारा उत्सवों, सवारियों और त्यौहारों के सुन्दर भित्तिचित्रों का अंकन करवाया गया है, इन चित्रों में मेवाड़ के प्राचीन वैभव की झलक मिलती है।

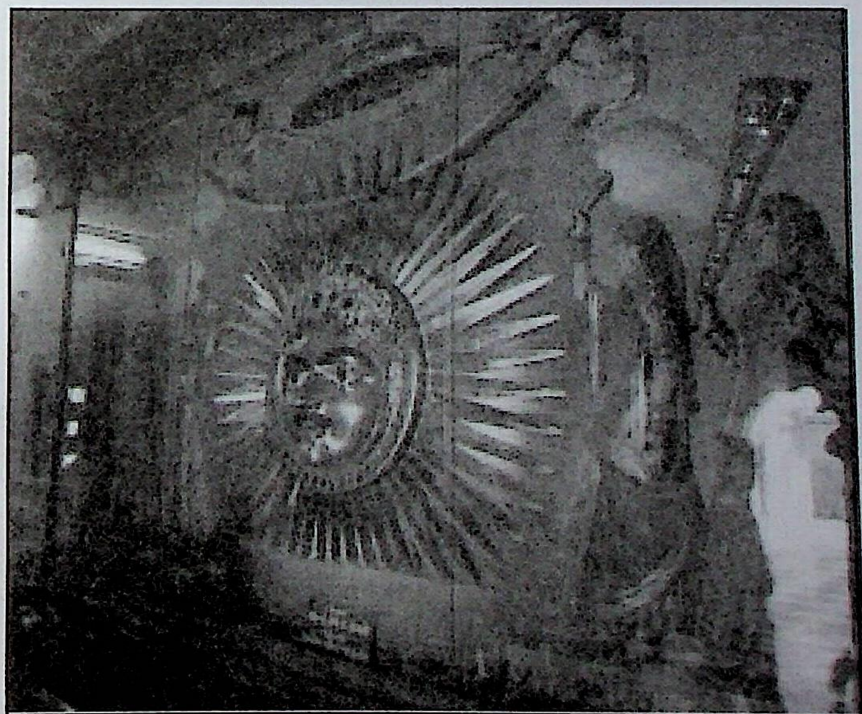
इससे आगे बढ़ने पर 'चीनी चित्रशाला' है, जिसमें डेल्फ तथा पुर्तगाली ब्लू टाइलें जड़ी हुई हैं। यहाँ से उदयपुर का विहंगम दृश्य दिखाई देता है। इसके उत्तर में स्थित 'वाणी विलास' महाराणा सज्जन सिंह (ई.1874-84) द्वारा स्थापित पुस्तकालय का कक्ष है तथा दक्षिण में 'शिव विलास' स्थित है। शिव विलास के उत्तर में मदन विलास है, जिसमें कर्नल जेम्स टोड के चित्र तथा उससे सम्बन्धित सामग्री प्रदर्शित की गई है। यहीं किशन विलास सात ताका नामक महल भी है, जिसकी दीवारों के नीचे एक पट्टी में सुन्दर ग्लास इन्ले वर्क के साथ काले कागज़ पर सुनहरी चित्रांकन किया गया है। यहीं उत्तरी दीवार की खिड़कियों से पिछोला झील का मनोरम दृश्य दिखाई देता है।

इसके आगे संकरे गलियारों और घुमावदार सीढ़ियों से होते हुए 'मोर चौक' तक पहुंचा जा सकता है। इस बीच मोती महल, भीम विलास, सूर्य प्रकाश गैलेरी और प्रीतम निवास आते हैं, इनमें भी रंगीन कांच की पच्चीकारी का काम दर्शनीय है। प्रीतम निवास ई.1955 तक महाराणा भूपाल सिंह (ई.1930-55) का निवास स्थान रहा, इसे उसी रूप में अब तक संरक्षित रखा गया है। यहाँ से नीचे सीढ़ियां उतरकर सूर्य चौपाड़ आती है इसमें स्वर्ण मुलम्मा चढ़ा सूर्य लगा हुआ है। ऐसा ही एक सूर्य पूर्व में स्थित सूर्य गोखड़े में लगा है। इस कक्ष में दीवारों के नीचे एक पट्टी में आराई के उभरमा अंकन पर सुन्दर चित्रकारी की गई है।



इसके आगे छोटी चित्रशाला है जिसमें महाराणा अपने अतिथियों का स्वागत-सत्कार करते थे। यहीं आमोद-प्रमोद के लिए गायन वादन के आयोजन होते थे। इसके आगे मोर चौक है, जिसमें रंगीन कांच की बारीक कतरनों के 'इन्ले वर्क' से मोरों का निर्माण किया गया है। इस चौक की सम्पूर्ण पूर्वी दीवार कांच की कारीगरी का अनूठा दृश्य उपस्थित करती है। इस चौक के उत्तर में स्थित माणक महल भी रंगीन कांच की कारीगरी के लिए पर्यटकों के आकर्षण का केन्द्र है।

इससे आगे संकरे गलियारे से होते हुए 'जनाना महल' में जाया जा सकता है। यहाँ सबसे पहले शरबत विलास एवं ब्रज विलास आते हैं, यह महाराणा भूपाल सिंह की तृतीय महारानी का निवास स्थान था, इसे भी अब तक अपने पुराने रूप में ही संरक्षित किया हुआ है। यहाँ उनकी दैनिक उपयोग की वस्तुओं को प्रदर्शित किया गया है। यहीं से कुछ दूरी पर भूपाल विलास है, यहाँ महारानियाँ अपने अतिथियों से भेंट एवं स्वागत-सत्कार करती थीं, इसे भी उसी रूप में संरक्षित रखा गया है।



महाराणा मेवाड़ चैरिटेबल फाउण्डेशन के अध्यक्ष एवं प्रबन्ध न्यासी श्रीजी अरविन्द सिंह मेवाड़ संग्रहालय को विश्वस्तरीय पहचान दिलाने में निरन्तर प्रयत्नशील हैं। सम्पूर्ण महल के कायाकल्प के साथ जनाना महल में विभिन्न गैलेरियों (वीथिकाओं) का निर्माण करवाया गया है। इनमें मेवाड़ के गौरवशाली अतीत की संस्कृति से पर्यटकों का साक्षात्कार होता है। इन अलग-अलग वीथिकाओं में मूर्तियां,

वस्त्र, वाद्य यंत्र, पालकियाँ एवं म्यानें, मेवाड़ शैली के चित्र तथा छायाचित्र कलात्मक ढंग से सजाए गए हैं। अमर महल में स्थित रजत वीथिका दर्शकों के आकर्षण का केन्द्र है, इसमें महाराणाओं एवं उनके आराध्य देवों के उपयोग में ली जाने वाली चांदी की वस्तुओं को प्रदर्शित किया गया है, इनमें चांदी की बग्गी, हाथी का हौदा, पालकी एवं हाथी–घोड़ों के आभूषण विशेष दर्शनीय हैं।

यहाँ से मौती चौक होते हुए तोरण पोल पहुंचकर संग्रहालय दर्शन पूरा होता है। तोरण पोल पर राजपरिवार में होने वाले विवाहों के अवसर पर तोरण बांधा जाता है। इसके अतिरिक्त भी सिटी पैलेस संग्रहालय में देखने को बहुत कुछ है। प्रतिवर्ष लाखों देशी–विदेशी पर्यटक उदयपुर भ्रमण के लिए आते हैं, इनमें से अधिकांश सिटी पैलेस संग्रहालय देखने आते हैं।



अध्याय - 9

क्रिस्टल गैलेरी, उदयपुर

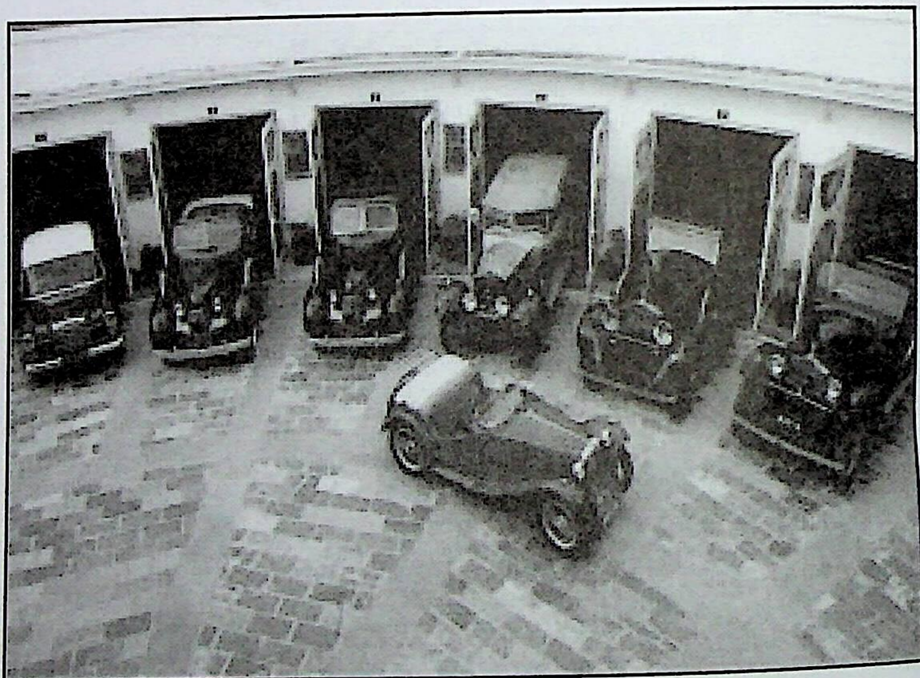


फतह प्रकाश महल में अब होटल स्थापित कर दिया गया है। इसी होटल में क्रिस्टल गैलेरी की स्थापना की गई है, जिसमें विश्व का सबसे बड़ा क्रिस्टल संग्रह स्थापित किया गया है। यह सम्पूर्ण क्रिस्टल सामग्री महाराणा सज्जनसिंह (ई.1874-84) के निजी संग्रह की है। विक्टोरियन युग में महाराणा ने इसे एफ. एण्ड सी. ऑस्लर को आदेश देकर बनवाया था। इस संग्रह में क्रिस्टल चेयर्स, सोफासैट तथा पलंग भी शामिल हैं। यह प्रातः 9 बजे से सायं 6 बजे तक खुला रहता है।



अध्याय - 10

विंटेज कार संग्रहालय, उदयपुर

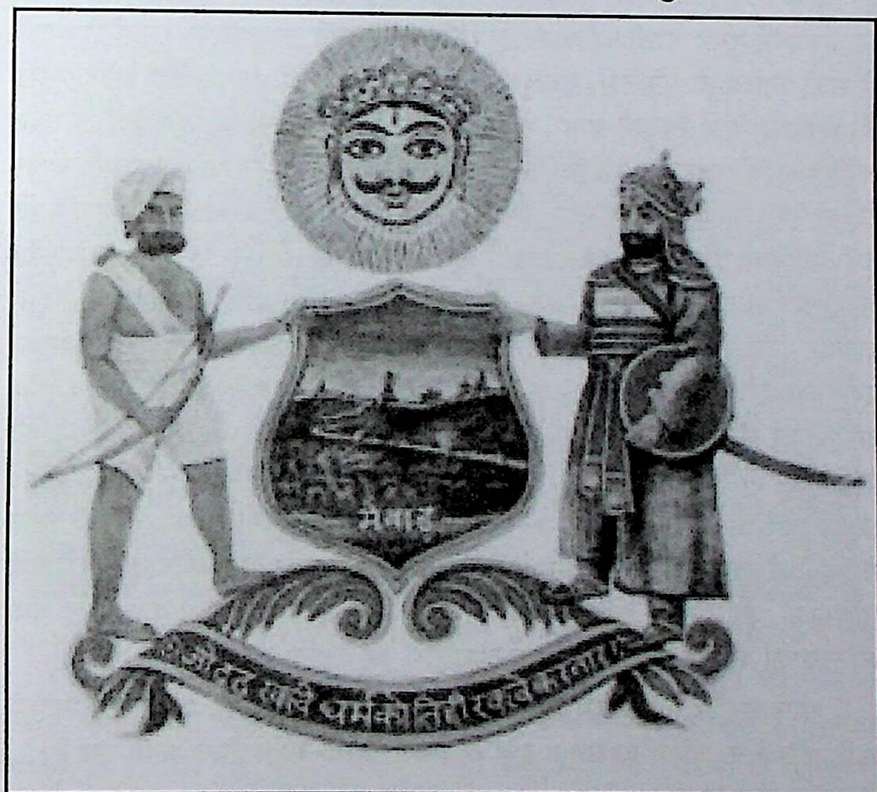


होटल गार्डन में मेवाड़ के महाराणाओं की पुरानी लक्जरी कारों का संग्रह स्थापित किया गया है। इनमें ई.1939 की रॉल्स रॉयस कार, कैडिलैक ओपन कन्वर्टीबल्स, मर्सीडीज के दुर्लभ मॉडल्स, 1936 का वॉक्सहॉल मॉडल तथा 1937 का ओपल मॉडल भी शामिल हैं। यह भारत के विरले कार सग्रंहों में से एक है। यह प्रातः 9 बजे से सायं 6 बजे तक खुला रहता है।



अध्याय - 11

जनजाति संग्रहालय, उदयपुर



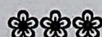
माणिक्यलाल वर्मा जनजाति शोध संस्थान, उदयपुर द्वारा राज्य की विभिन्न जन जातियों की सांस्कृतिक, सामाजिक एवं आर्थिक व्यवस्था को संरक्षित तथा प्रदर्शित करने के उद्देश्य से 30 दिसम्बर 1983 को संस्थान में जनजाति संग्रहालय की स्थापना की गई। इस संग्रहालय के प्रवेश द्वार पर मेवाड़ के महाराणा का भीलू राजा के साथ चिह्न 'जो दृढ़ राखे धर्म को तेहि राखे करतार' रखा हुआ है। संग्रहालय में राजस्थान की विभिन्न जनजातियों के चित्र, वस्त्राभूषण, अस्त्र-शस्त्र, विविध मूर्तियां, देवरा, इष्ट देवता, लोक संस्कृति एवं कला को प्रदर्शित किया गया है। विभिन्न वाद्ययंत्र, भित्तिचित्र, मांडणे, सांझी, गोदना, एवं लोकनृत्य एवं मेलों की सचित्र झांकियां प्रस्तुत की गई हैं। इनमें राज्य की प्रमुख जनजातियों- भील, मीणा, गरासिया, कथोड़ी एवं सहारिया जाति की शैली के दर्शन किए जा सकते हैं। खाद्यान्न संग्रहण हेतु पारम्परिक

कोठियां, मिट्टी के बर्तन, रोटी सेकने का तवा, उसी रूप में प्रयोग में लाते हुए दर्शाया गया है। चूल्हे पर रोटी बनाती महिला, बांस की टोकरी में रोटियां रखती महिला का चित्र प्रदर्शित किया गया है।

आदिवासी स्त्री -पुरुषों के आभूषणों को एक पृथक् प्रकोष्ठ में प्रस्तुत किया गया है। विभिन्न आदिवासी स्त्री-पुरुषों के, प्लास्टर ऑफ पेरिस से बने मॉडल प्रदर्शित किए गए हैं। इनमें श्रृंगार करती बालिकाएं, केश विन्यास करती नवयुवतियां, चटकीले श्रृंगारों से सजी आदिवासी महिलाएं, मूसल से धान कूटती महिलाएं, भोपा-भोपी आदि प्रमुख हैं। बेणेश्वर मेला, त्रिवेणी संगम, मानगढ़ धाम तथा गवरी नृत्य के चित्र प्रदर्शित किए गए हैं। आर्थिक व्यवस्था को प्रदर्शित करते चित्र यथा कृषि करते हुए आदिवासी, जंगल से वन उपज का संकलन करते हुए आदिवासी महिलाएं, देवी-देवताओं की पूजा करते हुए आदिवासी, नृत्य संगीत के कार्यक्रमों में संलग्न आदिवासी भी प्रदर्शित किए गए हैं। भीलों की मादल, खड़ताल, नौपत-नगाड़ा, बांकिया, ढोल, ढोलक, कमायचा, तंदूरा, इकतारा आदि भी प्रदर्शित किए गए हैं। आदिवासी क्षेत्रों की वनसम्पदा, खनिज सम्पदा, पशु सम्पदा के चित्र भी रखे गए हैं। वन्य जीव, पक्षी एवं सरीसृप के चित्र और अभ्यारण्यों के मनोरम दृश्य भी प्रदर्शित किए गए हैं। मोलेला गांव के कुम्हारों की कलाकृतियां, मेवाड़ और बागड़ के देवी-देवताओं की टेराकोटा मूर्तियां भी प्रदर्शित हैं। संग्रहालय में आदिवासियों के जीवन में होने वाले बदलावों को भी दर्शाया गया है। बहुत से चित्रों में मत्स्य पालन करते, आखेट की नवीन तकनीक का प्रयोग करते, सिंचाई सुविधाओं का उपयोग करते, खेती में रासायनिक उर्वरकों का उपयोग करते तथा कीटनाशकों का उपयोग करते हुए आदिवासियों को दर्शाया गया है।

संग्रहालय में आदिवासी जीवन के दृश्यों के साथ ऑडियो-वीडियो कैसेटों से आदिवासियों के जीवन के रोचक तथा आकर्षक प्रसंगों को प्रदर्शित किया गया है।

आदिम जाति शोध संस्थान ने ऐसे ही संग्रहालय दो अन्य स्थानों- शिल्पग्राम उदयपुर तथा आबू पर्वत के राजकीय संग्रहालय में एक खण्ड के रूप में विकसित किए हैं।



अध्याय - 12

पुरातत्व संग्रहालय, उदयपुर



जनार्दनराय नागर विद्यापीठ विश्वविद्यालय, उदयपुर के पुरातत्व संग्रहालय में वर्ष 2013 में पुरातात्विक संग्रहालय स्थापित किया गया है। इस संग्रहालय का विकास निरंतर जारी है। डॉ. जीवनसिंह खड़कवाल इसके निदेशक हैं। विद्यापीठ के पुरातत्व विभाग के प्रोफेसर डॉ. कृष्णपालसिंह ने इस संग्रहालय की स्थापना में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। इस संग्रहालय में अनेक प्राचीन सभ्यताओं के स्थलों से प्राप्त पुरावस्तुएं प्रदर्शित की गई हैं जिनमें पाषाणकालीन, प्राक्-हड़प्पा, राजस्थान, गुजरात, पंजाब, मध्यप्रदेश और हरियाणा के सिंधु सभ्यता-स्थल, हड़प्पा, आहड़ और चंद्रावती, कानमेर, गिलूण्ड, बालाथल, ईसवाल, पछमता, नठारा की पाल, आहड़ आदि से प्राप्त अवशेष, चट्टानों के नमूने, फोटोग्राफ आदि प्रदर्शित किए गए हैं।

संग्रहालय के आरम्भ में, भारत में पाई जाने वाली विभिन्न प्रकार की चट्टानों, लाइम स्टोन, सैण्ड स्टोन, बेसाल्ट रॉक आदि के नमूने प्रदर्शित किए गए हैं। साथ ही मेवाड़ क्षेत्र की चट्टानों में मिलने वाले विभिन्न प्रकार के पत्थरों का प्रदर्शन किया गया है। जावर की खानों से प्राप्त ओर-मिक्स तथा जिंक मेटल्स का भी प्रदर्शन किया गया है। साथ ही मोडी-बाठेड़ा, धारेश्वर और बैराठ आदि स्थलों से प्राप्त रॉक पेंटिंग्स के बड़े-बड़े फोटोग्राफ भी प्रदर्शित किए गए हैं।



विभिन्न सभ्यताओं से प्राप्त मिट्टी के लघु पात्र
पुरातत्व संग्रहालय, उदयपुर

संग्रहालय की सामग्री को तीन स्पष्ट विभागों में विभाजित किया गया है। पहले खण्ड में पाषाणकालीन सामग्री है। दूसरे खण्ड में ताम्रकालीन सामग्री है। तीसरे खण्ड में लौहसभ्यता के विकास से सम्बन्धित सामग्री है। पाषाण काल से मध्ययुगीन संस्कृतियों के अवशेषों के माध्यम से उन कालखण्डों के मानव-ज्ञान, सामाजिक जीवन, सामुदायिक भावना, सुरक्षा प्रबंध, आर्थिक गतिविधियों के बारे में जानकारी प्राप्त होती है तथा यह ज्ञात करने में आसानी होती है कि इन सभ्यताओं के लोग कैसे थे, वे कैसे जीवन यापन करते थे, किस तरह के औजारों, उपकरणों एवं बर्तनों का प्रयोग करते थे, वे क्या पहनते थे तथा उनका भोजन क्या था! इस संग्रहालय में विगत दो दशकों में राजस्थान, मध्यप्रदेश, गुजरात, पंजाब, हरियाणा, कर्नाटक तथा उत्तराखण्ड में हुए पुरातात्विक एवं ऐतिहासिक सर्वेक्षण के दौरान मिली सामग्री तथा खुदाई में मिले अवशेष रखे हैं। उदयपुर में आहड़ के बाद यह दूसरा संग्रहालय है, जहाँ से ऐसी जानकारी मिलती है।

संग्रहालय में विभिन्न सर्वे और खुदाई के दौरान मिले अवशेष, गुजरात से प्राप्त डम्पा संस्कृति के औजार, बर्तन, घड़े, छाप और अन्य अवशेष, मेवाड़ के 110 गांवों में खुदाई में मिले काले और लाल बर्तन, अनाज के दाने, छाप (सील्स), राजस्थान में मिले लोहे के तीर, खंजर अन्य औजार, बर्तन, राजस्थान, मध्यप्रदेश और कर्नाटक में पाई गई हाथ की कुल्हाड़ी सहित अन्य औजार, पश्चिम एशिया, विशेषकर ईरान-इराक से लाए गए बर्तन एवं अन्य सामग्री रखी गई है। नर्बदा घाटी से मिली एक लाख वर्ष पुरानी एक कुल्हाड़ी भी प्रदर्शित की गई है, जो पाषाण कालीन है। निम्न पाषाण काल के औजारों में पशुओं की खाल उतारने की ब्लेड तथा क्लीनर प्रमुख हैं।



सिंधु सभ्यता की खुदाई में प्राप्त मिट्टी से निर्मित डिश ऑन टेबल
पुरातत्व संग्रहालय, उदयपुर

प्राक्–हड़प्पा संस्कृति से गुजरात में मिले घड़े, विशेष तरह के बर्तन (काली और लाल मिट्टी के बर्तन, जो मेवाड़ में पाई गई संस्कृति की विशेषता है) एवं रिजर्व स्लिप वेयर भी प्रदर्शित किए गए हैं, जिनसे उस काल में मेवाड़ तथा कच्छ–गुजरात के व्यापारिक और सांस्कृतिक सम्बन्धों का पता चलता है। इस काल के मृद्भाण्ड 8000 से 3400 ईसा पूर्व के बीच रखे जाते हैं। आग में पके हुए मिट्टी के कुछ बर्तनों को बजाने से धातु जैसी ध्वनि सुनाई देती है। संग्रहालय में प्रदर्शित सामग्री की फिजिकल रिसर्च लैबोरेट्री अहमदाबाद से रेडियो कार्बन डेटिंग करवाई गई है।



खुदाई में प्राप्त मिट्टी से निर्मित विभिन्न प्रकार के घड़े
पुरातत्व संग्रहालय, उदयपुर

प्राक्-हड़प्पा संस्कृति के लोगों ने ही आगे चलकर सिंधु घाटी सभ्यता या हड़प्पा सभ्यता को जन्म दिया। इस काल खण्ड में अनाज संग्रहण की कोठियां मिलती हैं। ये कोठियां विशिष्ट आकृति में बनी हुई हैं। इनके निर्माण में बजरी की अधिक मात्रा का प्रयोग हुआ है। इनका ऊपरी मुँह अधिक चौड़ा है। पाकिस्तान में आमरी, नाल, कोटड़ी से भी ऐसे पात्र मिले हैं। इस संग्रहालय के निकट ही आहड़ सभ्यता का स्थल खोजा गया है, जहाँ से सिंधु सभ्यता के नगरों के साथ व्यापार होता था। भारत में इस काल की सभ्यता के अवशेष कच्छ रण के किनारे कानमेर से प्राप्त हुए हैं। हड़प्पा युग के बर्तनों एवं उपकरणों में माइक्रोलिथ्स तथा स्टुड हैण्डल बर्तन अधिक महत्वपूर्ण हैं। इन बर्तनों पर सामान्य पेंटिंग है, जिसमें काले एवं गहरे-भूरे रंगों का प्रयोग किया गया है।

इस संग्रहालय में सिंधु सभ्यता के परफोरेटेड पॉट्स छिद्रयुक्त मृद्भाण्ड प्रदर्शित किए गए हैं, जो उस काल का देशी रेफ्रीजिरेटर कहे जा सकते हैं। इन बर्तनों को पानी से गीला कर दिया जाता था। इनके स्पर्श से ठण्डी हुई हवा जब छिद्रों के माध्यम से बर्तन के भीतर पहुंचती थी तो उसमें रखे फल, सब्जी एवं मांस आदि खाद्य सामग्री लम्बे समय तक ताजी बनी रहती थी। ऐसे बर्तन कालीबंगा, सोथी, सीसपाल, भीथाथल, कुनाल, बनवाली आदि स्थानों से प्राप्त हुए हैं। इन स्थलों से एक गोबलेट (छोटी सुराही जैसा बर्तन) भी प्राप्त हुआ है, जो इस संग्रहालय में प्रदर्शित किया गया है। कालीबंगा स्थल के नीचे के स्तर से प्राप्त मिट्टी की चूड़ियां, हेयरक्लिप, मिट्टी के मनके प्राप्त हुए हैं जो ऊपरी स्तर की इसी प्रकार की सामग्री से भिन्न हैं। हड़प्पा सभ्यता में स्टेटाइट से बनी चूड़ियां भी मिली हैं। यह चूना पाउडर जैसी सफेद एवं चिकनी मिट्टी होती थी। शंख के मोटे किनारों को काटकर उनसे भी चूड़ियां बनाई जाती थीं, जिनके टुकड़े इस संग्रहालय में देखे जा सकते हैं। हरे रंग का फेयांस नामक पत्थर, नारंगी रंग का चेल्सीडोनी नामक पत्थर, कार्नेलियन, चर्ट, जाचर, अगेट आदि पत्थरों से बनी सामग्री भी इस संग्रहालय में प्रदर्शित की गई है। अगेट नामक पत्थर को 700 डिग्री सेंटीग्रेड पर तपाने से कार्नेलियन बनता है। पाकिस्तान में रोहरी नामक एक स्थान है, जिसकी भौगोलिक संरचना एवं क्षेत्रफल राजस्थान के जोधपुर जिले के फलौदी जैसा है, वहाँ से विभिन्न प्रकार का कीमती चर्ट प्राप्त होता है। इस चर्ट एवं उससे बनी सामग्री को इस संग्रहालय में प्रदर्शित किया गया है।

सिंधु सभ्यता से गोफन में डालकर फैंकने के पत्थर मिले हैं। मिट्टी के एक बर्तन के भीतरी भाग से कपड़े का प्रमाण मिलता है। इस बर्तन का निर्माण करते समय कुम्हार ने अपने एक हाथ में कपड़ा ले रखा था, जो कि बर्तन के भीतरी तरफ था। जब घड़े को बाहर से थपथपाकर आकृति दी गई तो भीतर वाले हाथ के कपड़े की बुनावट के निशान मटके की भीतरी दीवार पर अंकित हो गए तथा उससे जाली जैसी चित्राकृति बन गई। ऐसा एक नमूना इस संग्रहालय में रखा है। लोथल से मिले लगभग 113 ग्राम भार के

मिट्टी के बाट भी इस सामग्री के साथ प्रदर्शित किए गए हैं। आहड़ सभ्यता से प्राप्त 5500-3500 वर्ष पुराने काले एवं लाल मृद्‌भाण्ड भी प्रदर्शित हैं।

संग्रहालय में प्लास्टिक के दो डिब्बे प्रदर्शित किए गए हैं, जिनमें से एक में 5000 साल पुराना गेहूं तथा दूसरे में 5000 साल पुराना जौ रखा गया है। ये नमूने सिंधु सभ्यता के हैं। बाजोट लगे हुए प्याले इस संग्रहालय में प्रदर्शित अद्‌भुत वस्तुओं में से हैं। ये गुजरात के भुज जिले में आडेसर तहसील के निकट कानमेर नामक स्थल की खुदाई से मिले हैं। यह भारत में सिंधु घाटी सभ्यता के प्रमुख स्थलों में से एक है। इस स्थल की छः साल तक खुदाई की गई। यहाँ से महल जैसी रचनाओं वाले भवनों के अवशेष प्राप्त हुए हैं, जो लगभग 4500 वर्ष पुराने हैं। यह कला विश्व का प्रथम नगरीकरण चरण था। इस युग में भारत के अतिरिक्त मेसोपोटामिया एवं माया सभ्यता में ही नगरीय मानव सभ्यता विकसित हुई थी। इसके पश्चात् लगभग डेढ़-दो हजार वर्ष तक किसी नवीन सभ्यता के चिह्न नहीं मिलते हैं।


आहड़ सभ्यता से प्राप्त आग में पके हुए मिट्टी सोकपिट

नगरीकरण की प्रथम चरण की सभ्यता के बाद नगरीकरण की द्वितीय चरण वाली सभ्यता प्रकट होती हुई दिखाई देती है जो, ताम्र-कांस्य कालीन सभ्यता से नितांत विलग है तथा लौहकालीन सभ्यता है। इस काल में लौह विगलन भट्टियां, कृषि, पशुपालन, भवन निर्माण आदि कार्यकलाप विकसित अवस्था में दिखाई देने लगते हैं। प्रथम चरण एवं द्वितीय चरण की नगरीय सभ्यताओं के लोगों की जीवन शैली में पर्याप्त अंतर दिखाई देता है। इस काल में लोहे के औजारों पर धार लगाने के पत्थर, कूटने-पीसने एवं घिसने के पत्थर, कान के कुण्डल, बच्चों के खेलने के पासे, गोटियां, धातु की चूड़ियां मिलती हैं। साथ ही मिट्टी, हाथीदांत, कांच एवं लोहे की सामग्री भी मिलती है। इससे स्पष्ट है कि लोहे के साथ-साथ कांच बनाने की विधि भी इस युग के लोगों को ज्ञात हो गई थी। ऐतिहासिक युग के प्रारंभिक काल में चर्ट, अगेट एवं चेल्सीडोनी का प्रचलन

भी जारी रहा। इस समय के लोहे के धनुष, भाले की नोक, ग्रे वेयर (सलेटी मृद्भाण्ड), हाथीदांत की चूड़ी, लोहे के कर्णफूल जैसे आभूषण का एक टुकड़ा तथा लोहे के कड़े भी प्रदर्शित किए गए हैं।

बालाथल से प्राप्त 2300 वर्ष पुरानी सभ्यता में काम आने वाले मिट्टी से निर्मित सोकपिट्स (रिंगवैल) भी इस संग्रहालय में प्रदर्शित किए गए हैं। कच्छ से मिले चर्ट, मॉस, जाचर, बेंडेट अगेट आदि के नमूने भी इस संग्रहालय में प्रदर्शित हैं। बेंडेट अगेट धारीदार चमकदार पत्थर होता है।

13वीं शताब्दी ईस्वी में मेवाड़ राज्य की जावर खानों से जस्ता निकालने की विधियों के प्रमाण तथा जस्ता बनाने में प्रयुक्त होने वाले लोहे के खोल आदि प्राप्त हुए हैं, इन प्रमाणों के चित्र एवं खोल इस संग्रहालय में प्रदर्शित किए गए हैं। यह विश्व में जस्ता बनाने के सबसे प्राचीन प्रमाण हैं। 1500 टीलों में उस काल का स्लग (जिंक–ओर में से शुद्ध जस्ता निकालने के बाद शेष बचा कीट) जमा हुआ मिला है। इस काल में जावर की खानों का जस्ता यूरोप के देशों को जाने लगा था।



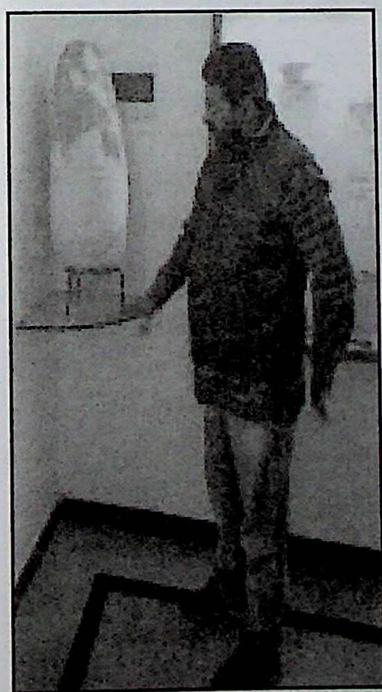
विभिन्न सभ्यताओं से प्राप्त विभिन्न आकारों की ईंटें

संग्रहालय में विभिन्न सभ्यता स्थलों से मिली मिट्टी की ईंटें प्रदर्शित की गई हैं। इनमें शुंग एवं कुषाण कालीन ईंटें, अर्थूणा से प्राप्त ईंटें, वीरपुरा सर्वेक्षण में प्राप्त ईंटें तथा वडनगर से प्राप्त ईंटें सम्मिलित हैं। शुंग कालीन मृद्भाण्ड जो तेल तथा सब्जी आदि रखने के काम आते थे। इत्र रखने की कॉर्क युक्त सुराही तथा चाय जैसे किसी पदार्थ को छानने की टोंटीदार केतली की टोंटी जिसके भीतर मिट्टी से बनी चलनी लगी है, आदि प्रदर्शित की गई हैं। यह केतली रंगमहल (गंगानगर जिला), से प्राप्त हुई है। वडनगर से

बुद्ध के दो स्तूप, दो महाचैत्य एवं मिट्टी के सिंहासन प्राप्त हुए हैं।

संग्रहालय में यूनान अथवा रोमन साम्राज्य में निर्मित लगभग 2000 साल पुराना एक 'वाइन टारपीडो' प्रदर्शित किया गया है। यूनान एवं रोमन सभ्यता में इस प्रकार के मृदभाण्डों में उस काल में मदिरा का संग्रहण एवं परिवहन किया जाता था। इस टारपीडो के भीतर मिले स्टार्च से पुष्टि होती है कि इसमें किसी समय मदिरा भरी हुई थी।

प्राचीन यूनानी सभ्यता यूनान एवं उसके निकटवर्ती क्षेत्रों में लगभग आठवीं शताब्दी ई.पू. से लगभग छठी शताब्दी ईस्वी तक अर्थात् लगभग 1,300 वर्षों तक अस्तित्व में रही। आधुनिक पश्चिमी संस्कृतियों का उद्‌गम इसी यूनानी सभ्यता में माना जाता है। इस सभ्यता के पश्चात् अस्तित्व में आने वाले रोमन साम्राज्य पर प्राचीन यूनान का गहरा प्रभाव था। पश्चिमी रोमन साम्राज्य 27 ईस्वी पूर्व से 476 ईस्वी तक तथा पूर्वी रोमन साम्राज्य 27 ईस्वी पूर्व से 1453 ईस्वी तक यूरोप के रोम नगर में केन्द्रित था। इस साम्राज्य का विस्तार दक्षिणी यूरोप, उत्तरी अफ्रीका और अनातोलिया के क्षेत्रों तक था। उस काल में यह विश्व के विशालतम पाँच साम्राज्यों में से एक था। पाँचवी सदी के अन्त तक इस साम्राज्य का पतन हो गया और इस्तांबुल (कॉन्सटेन्टिनोपल) पूर्वी रोमन साम्राज्य की राजधानी बन गई। ईस्वी 1453 में उस्मानों (ऑटोमन तुर्कों) ने इस पर भी अधिकार कर लिया। रोमन साम्राज्य, यूरोप के इतिहास और संस्कृति का एक महत्वपूर्ण अंग है।



जनार्दनराय नागर विद्यापीठ विश्वविद्यालय, उदयपुर के पुरातत्व संग्रहालय में प्रदर्शित जार 'वाइन टारपीडो' मिट्टी से बना हुआ है, जिसे आग में पकाया गया है तथा उस पर एक विशेष प्रकार का लेप किया गया है, जिसे उस काल की पॉलिश कहा जाना चाहिए। आधुनिक पनडुब्बियों की आकृति से मेल खाने के कारण इस प्रकार के जारों को रोमन वाइन टारपीडो कहा जाता है। यह बेलनाकार आकृति में है। इसका मुंह संकरा, मध्य भाग चौड़ा तथा नीचे का भाग पुनः कम चौड़ा है। इसकी ऊँचाई लगभग 26 इंच है। **यह जार पश्चिम एशिया से लेकर सिंधुघाटी सभ्यता के स्थलों से होती है।** यह जार गुजरात से प्राप्त किया गया है। इन जारों में मदिरा भरकर उन्हें पानी के जहाजों से दूर-दूर तक निर्यात किया जाता था। पानी के जहाजों में इनके परिवहन का समुचित

प्रबंध होता था। इन्हें हिलने तथा परस्पर टकराकर टूटने से बचाने के लिए जहाज के भीतर लकड़ी के फ्रेम नुमा रैक बनाए जाते थे। यह जार क्षतिग्रस्त है, इसलिए संग्रहालय के अधिकारियों ने इसे मरम्मत करके फिर से जोड़ा है।

इस जार के भारत में मिलने से इस तथ्य की पुष्टि होती है कि उस काल में भारत एवं यूनान के बीच व्यापारिक सम्बन्ध थे। यह भी संभव है कि इस प्रकार के जारों में मदिरा भरकर यूनान अथवा रोम से पश्चिम एशिया तक लाई जाती हो एवं वहाँ के व्यापारी इन्हें भारत जैसे समृद्ध देश के बंदरगाहों तक पहुंचाते हों।

उदयपुर के विद्यापीठ संग्रहालय में भारत एवं पाकिस्तान के सिंधुघाटी सभ्यता स्थलों से प्राप्त पुरातत्व सामग्री, चर्ट के औजार, कुल्हाड़ियां, पांच हजार साल पुराने गेहूं एवं जौ के दाने आदि भी प्रदर्शित हैं। संग्रहालय में रखी गई 500 वर्ष पुरानी सामग्री में आइवरी की चूड़ियां, हाथीदांत की चूड़ियां आदि सम्मिलित हैं। मेवाड़ के ईसवाल नामक स्थल से मिला मृद्भाण्ड भी प्रदर्शित है। संग्रहालय में कुछ चित्र प्रदर्शित हैं, जिनमें सिंधु सभ्यता की गोलाकृति की सीलें (मुहरें) प्रदर्शित हैं। इनके बीच में छेद हैं जिनसे अनुमान होता है कि ये मुहरें गले में पहनने के परिचयपत्र की तरह प्रयुक्त होती होंगी।

यहाँ प्रदर्शित किए गए प्रत्येक अवशेष की जानकारी के लिए चित्रों सहित साहित्य तैयार किया गया है जिसमें पुरा-अवशेष का प्राप्तिस्थल, सभ्यता का नाम, उसकी विशेषताएं आदि की जानकारी दी गई है। राजस्थान के अब तक के संग्रहालयों में इस प्रकार के साहित्य का अभाव है। यह संग्रहालय पर्यटकों, सामान्य रुचि के दर्शकों एवं छात्रों, अध्यापकों, शोधार्थियों सहित सामान्यजन के लिए मार्गदर्शक का काम कर सकता है।



अध्याय - 13

लोककला संग्रहालय, उदयपुर



उदयपुर में स्थित भारतीय लोककला मण्डल, लोकधर्मी प्रदर्शनकारी कलाओं के संवर्द्धन एवं प्रशिक्षण का विश्व-प्रसिद्ध संस्थान है। इसकी स्थापना 22 फरवरी 1942 को प्रख्यात लोककलाविद् पद्मश्री देवीलाल सामर ने की थी। इसका कलात्मक भवन चेतक सर्कल से पंचवटी जाने वाली मुख्य सड़क पर स्थित है। इस संस्थान में संग्रहालय के साथ-साथ खोज विभाग, प्रदर्शन विभाग तथा काष्ठकला प्रशिक्षण केन्द्र की स्थापना की गई है। संस्थान के खोज विभाग द्वारा लोककला विषयक पुस्तकों के प्रकाशन किए जाते हैं तथा प्रदर्शन विभाग द्वारा देश भर में लोकनृत्यों के प्रदर्शन करवाए जाते हैं। काष्ठकला प्रशिक्षण केन्द्र में कलाकारों को काष्ठकला का प्रशिक्षण दिया जाता है। ई. 1965 में बुखारेस्ट में आयोजित अंतरराष्ट्रीय कठपुतली समारोह में संस्थान के दल ने कठपुतली प्रदर्शन करके विश्व भर में प्रथम पुरस्कार प्राप्त किया। इससे राजस्थान की धागा-पुतली कला को अंतरराष्ट्रीय पहचान मिली।

लोककला संग्रहालय, बड़ी इमारत में विस्तृत है। इसमें प्रदर्शनकारी लोककलाओं की विशिष्ट कलाकृतियों का संग्रह किया गया है। इसे प्रतिवर्ष एक लाख से अधिक देशी-विदेशी पर्यटक देखने आते हैं। जन-शिक्षण तथा कला-प्रशिक्षण की दृष्टि से यह संग्रहालय देश के महत्वपूर्ण संग्रहालयों में गिना जाता है। संस्थान में आने वाले पर्यटकों को कठपुतलियों का नृत्य दिखाया जाता है। संग्रहालय में एक दीवार पर पाबूजी की पड़ लगी हुई है। इसके सामने पड़ वाचक भोपा-भोपिन की, वाचन मुद्रा में मनुष्याकार

आकृतियां बनी हुई हैं। इसके निकट गोलाई में राजस्थानी लोक रंगमंच की मुख्य विधाओं- तुर्रा कलंगी, गवरी, रामलीला, भवाई तथा रासलीला की झांकियां सजाई गई हैं। इन झांकियों में मंचसज्जा, कलाकारों की चेष्टाएं तथा लोकजीवन की सहभागिता देखते ही बनती है। इसी के निकटवर्ती कक्ष में काष्ठकला की ईसर-गणगौर, होली के खाण्डे, तोरण, नृतकियां, वाद्यवादक, ठाकुरजी की राम-रेबाड़ी, मुखौटे, मणकथंभ आदि से राजस्थान की लोकसंस्कृति का परिचय मिलता है।

लम्बी गैलेरी से जुड़े एक अन्य कक्ष में मोलेला की मृण्मूर्तियों में ताखाजी, धर्मराज, गुनामेनू, अम्बा माता, हंसमाता, मुर्गामाता, मच्छी माता, साण्ड माता, रेबारी देव, पाबूजी आदि की टैराकोटा मूर्तियां प्रदर्शित की गई हैं। इनके ऊपर दीवार में रामलला तथा कृष्णलला की पड़ें, गले में धारण किए जाने वाले विविध लोक देवी-देवताओं के नावें, कावड़, भैंरूजी का देवरा, मामादेव का काष्ठ तोरण तथा ताखादेव की प्रस्तर प्रतिमा प्रदर्शित हैं। गवरी विसर्जन के समय मिट्टी के बने विशालाकाय हाथी पर देवी गौरज्या का जुलूस भी प्रदर्शित है। इसके निकटवर्ती कक्ष में ई.1960 तथा इससे पूर्व के मणिपुर, त्रिपुरा तथा मध्यप्रदेश की आदिमधर्मी जातियों के आकर्षक आयुध, पहनावे तथा दैनिक जीवन से सम्बन्धित आवश्यक वस्तुओं का संग्रह और चित्र प्रदर्शित किए गए हैं।

बाहर गैलेरी में मेंहदी के विविध मांडणे, खिलौने, भूमि अलंकरण, दीवार पर बनने वाले आनुष्ठानिक थापे और सांझी कला के चित्र बने हैं। इसी गैलेरी से लगा लोकवाद्यों का कक्ष है, जिसमें पारम्परिक लोकवाद्यों की प्रदर्शनी तथा वादक कलाकारों के चित्र दिखाए गए हैं। इसके आगे की गैलेरी में आदिवासी भीलों के गवरी के मुख्य पात्र रायबूड़िया, राई, खेतूड़ी, बणजारा तथा हठिया आदि की प्रस्तुतियां प्रदर्शित की गई हैं। आदिवासियों में प्रचलित मृतकों के प्रस्तरांकन चीरा, मातलोक तथा भील-गरासिया-बहरिया आदि आदिवासियों की चित्रमय झांकियां बनी हुई हैं। गैलेरी के आगे का कक्ष पुतली कक्ष है जिसमें भारत के विभिन्न प्रांतों- बंगाल, बिहार, उड़ीसा, राजस्थान, आंध्र प्रदेश, गोवा आदि की विभिन्न शैली की पुतलियों के साथ-साथ विश्व के कई देशों यथा- जर्मनी, पौलेण्ड, इंग्लैण्ड, चेकोस्लोवाकिया, रूस, इण्डोनेशिया, हॉलैण्ड आदि की पुतलियां प्रदर्शित की गई हैं।



राजकीय संग्रहालय, आहड़



उदयपुर नगर के प्रताप नगर रेलवे स्टेशन को जाने वाली सड़क के समीप आहड़ नदी के उत्तर पूर्वी किनारे पर एक प्राचीन टीला है, जिसे धूलकोट के नाम से जाना जाता है। किसी समय यह टीला आयड़ नदी के बाएं किनारे पर बसा हुआ था। यही नदी आगे चलकर बेड़च कहलाती है। राजस्थान में बेड़च, बनास एवं चम्बल के कांठे में ऐसे कई टीले प्रकाश में आए हैं, जहाँ से सिन्धु सभ्यता के बाद की 'ग्रे वेयर' वाली सभ्यता के अवशेष प्राप्त हुए हैं। चूंकि इस सभ्यता के लोग ताम्बे एवं पत्थरों के उपकरणों एवं औजारों का प्रयोग करते थे, इसलिए इस सभ्यता को पुरातत्व जगत में 'ताम्र पाषाण' संस्कृति के नाम से जाना जाता है। राजस्थान में इसका प्रमुख केन्द्र 'आहड़' माना गया है। यह सभ्यता ईसा से चार हजार साल पहले से लेकर ईसा से दो हजार साल पहले तक अस्तित्व में रही। उदयपुर, डूंगरपुर, चित्तौड़गढ़ भीलवाड़ा, अजमेर, कोटा एवं बूंदी जिलों में इस संस्कृति के एक सौ से अधिक गांव खोजे जा चुके हैं।

इस नगर को प्राचीन शिलालेखों में ताम्बावती नगर, मध्यकालीन शिलालेखों में आघाटपुर और वर्तमान में आहाड़ या आयड़ कहा जाता है। वर्तमान आयड़ ग्राम भी एक प्राचीन टीले पर बसा हुआ है। इस टीले की सर्वप्रथम खुदाई मेवाड़ रियासत के पुरातत्व विभाग के तत्कालीन अध्यक्ष श्री अक्षय कीर्ति व्यास ने बहुत सीमित क्षेत्र में की थी। इसके पश्चात् ई.1954-55 में श्री रत्नचन्द्र अग्रवाल ने राजस्थान सरकार की ओर से उत्खनन कार्य किया। ई.1960-61 में राजस्थान सरकार के पुरातत्व विभाग, डेक्कन कॉलेज पुणे एवं मेलबॉर्न विश्वविद्यालय ऑस्ट्रेलिया के संयुक्त दल ने इस टीले का उत्खनन किया। इस खुदाई का नेतृत्व डा. एच. डी. सांकलिया ने किया। इस टीले की खुदाई से जो सामग्री प्राप्त हुई, उसके प्रदर्शन के लिए इसी टीले के निकट आहड़ संग्रहालय की स्थापना की गई है।

आहड़ टीले से प्राप्त चार हजार वर्ष पुरानी सभ्यता को आहाड़ सभ्यता कहा जाता है। इसमें चित्रित लाल, काले मृद-पात्रों का उपयोग करने वाली सभ्यता के अवशेष



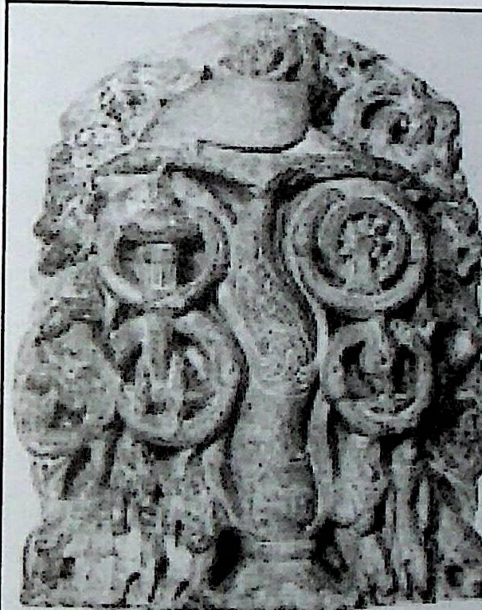
मिले हैं। यह ताम्र-पाषाण युगीन सभ्यता है। यहाँ से चौकोर एवं आयताकार मकानों के अवशेष मिले हैं। उस काल में हड़प्पा सभ्यता के अतिरिक्त केवल आहड़ सभ्यता के लोग ही पक्की दीवारें एवं पक्के घरों का उपयोग कर रहे थे। आहड़, बालाथल एवं गिलूण्ड में इसके प्रमाण देखे जा सकते हैं।

आहड़ संस्कृति की पहचान मुख्य रूप से विशिष्ट प्रकार के मिट्टी के बर्तनों से होती है। इस टीले से सफेद रंग के चित्रित काले एवं लाल बर्तन, चमकीले लाल, राखिया, दूधिया रंग वाले, टैन पॉलिश युक्त, रिजर्व स्लिप्ड वाले बर्तन मिले हैं। इनमें से टैन पॉलिश तथा थिन रैड स्लिप वाले बर्तन आहड़ सभ्यता के प्रारम्भिक चरण में नहीं मिले हैं, वे आहाड़ संस्कृति के समृ) चरण में प्रयुक्त होते थे।

आहड़ टीले के सबसे नीचे के स्तर से हड़प्पा एवं मोहनजोदड़ो के विशिष्ट आकृति वाले डिशऑन स्टेण्ड (मृदपात्र) मिले हैं, जो इसी संग्रहालय की दीर्घा में प्रदर्शित हैं। इन मृदपात्रों के यहाँ मिलने से यह स्पष्ट हो जाता है कि आज से चार हजार वर्ष पूर्व अर्थात सिन्धु सभ्यता के अंतिम चरण में सिन्धु सभ्यता का मेवाड़ में प्रवेश हो चुका था। यद्यपि उस समय आहड़ में काले-लाल रंग के मृद-भाण्डों का प्रचुर मात्रा में प्रयोग हो रहा था। सिन्धु मृद-भाण्ड कला के सम्पर्क का प्रभाव यहाँ तक पहुँचा कि काली-लाल मृद्भाण्ड कला में भी 'डिश-ऑन स्टैण्ड' का अनुकरण किया जाने लगा। इस प्रकार की महत्वपूर्ण सामग्री 'माहेश्वर-नवदाटोली' के टीलों की खुदाई से भी मिली है।

आहड़ एवं माहेश्वर 'काली एवं लाल मृदभाण्ड संस्कृति' के प्रमुख केन्द्र थे। आहाड़ के काले-लाल धरातल वाले चमकीले बर्तनों पर सफेद मांडने बने हुए हैं, जो हजारों वर्षों के बाद भी नष्ट नहीं हुए हैं। ये बर्तन सबसे नीचे के स्तर से ऊपर की ओर 20 फुट के जमाव तक मिले हैं। रतलाम से कोटा जाने वाले मार्ग पर स्थित नागदा नामक स्थान की खुदाई में भी काले-लाल मृद्भाण्ड पर्याप्त मात्रा में मिले हैं। आहड़ के समीपवर्ती क्षेत्र में 'गिलूण्ड' नामक स्थान से प्लास्टर युक्त कच्ची दीवारों के बनाने की जानकारी भी मिली है। सौराष्ट्र में 'रोजड़ी' नामक स्थल से भी इस प्रकार के प्रमाण मिले हैं। इस काल की सभ्यता का प्रमुख केन्द्र आहड़ ही था।

आहड़ की खुदाई से चार हजार वर्ष पुरानी संस्कृति पर पर्याप्त प्रकाश पड़ा



भगवान विष्णु का कश्यप अवतार, राजकीय संग्रहालय, आहाड़

है। इस काल में कच्ची ईटों के मकान का निर्माण करते थे। कुछ घरों के अवशेष खाइयों (ट्रेंचेज) में विद्यमान हैं जिनका आकार 23 गुणा 15 फुट तथा 9 गुणा 9 फुट है। उनमें कच्ची छतों के नीचे बांस के प्रयोग का भी पता चला है। इन छतों को लकड़ी की बल्लियों द्वारा उठा कर रखा जाता था, जो नीचे कच्चे फर्श में गाड़ दी जाती थीं। आहड़ के प्राचीन निवासी अपने घरों का गन्दा पानी निकालने की वैज्ञानिक पद्धति से भी परिचित थे। इसके लिए 15 गुणा 20 फुट के गड्ढ़े खोद कर उसमें पकाई हुई मिट्टी के घेरे एक दूसरे के ऊपर रखकर (रिंग वैल) बना लिए जाते थे और उनमें गन्दा पानी गिरता था। इसका एक नमूना पुरा स्थल पर संरक्षित है।

आहड़ में ऐतिहासिक युग की बसावट का जमाव ताम्रपाषाण काल की तुलना में छोटा है। इस काल में भी लोगों ने मिट्टी, पत्थर तथा ईंटों से चौकोर भवन बनाए। इस काल के मिट्टी के बर्तन लाल तथा राखिया प्रकार के हैं। उत्खनन में अनेक छोटी वस्तुओं यथा मिट्टी के मणके, झांवे, चूड़ियां, गोफण, घोड़े, हाथी तथा लोहे के औजार यथा कुल्हाड़ी, छैनी, भाले, तीन हल का फाल, कीलें, कांच की चूड़ियां आदि खोजे गए।

आहड़ संग्रहालय में तीन दीर्घाएँ हैं। प्रथम दीर्घा में काले चित्रित धूसर मृदपात्र, काले और लाल मृदपात्र, चमकीले लाल रंग के मृदपात्र एवं कुषाण-कालीन मृदपात्र रखे हैं, जिनमें लाल टोंटीदार लोटे तथा घड़े इत्यादि सम्मिलित हैं। द्वितीय दीर्घा में मणके, मृण-मूर्तियां, धूप-दान, जानवरों के सींग, दीपक, ठप्पे, मोहरें इत्यादि प्रदर्शित हैं। तृतीय दीर्घा में आहड़ क्षेत्र से प्राप्त धातु एवं पाषाण की प्रतिमाएं है। ये प्रतिमाएं सातवीं से पन्द्रहवीं शताब्दी की हैं। इनमें सूर्य, शिव-पार्वती, कच्छपावतार, मत्स्य अवतार और त्रिमुख विष्णु प्रतिमाएं प्रमुख हैं। कच्छप एवं मत्स्यावतार की प्रस्तर प्रतिमाएँ विशेष स्थान रखती हैं। मत्स्य तथा तथा कूर्मावतार को पद्म के ऊपर विग्रह रूप में दर्शाया गया है तथा नीचे विष्णु के आयुध दर्शाए गए हैं। संग्रहालय में प्रदर्शित 8वीं शती ईस्वी की जैन तीर्थंकर की कांस्य प्रतिमा विशेष रूप से उल्लेखनीय है।

❀❀❀

अध्याय - 15

बागोर की हवेली संग्रहालय, उदयपुर



उदयपुर नगर में पिछोला के किनारे गणगौर घाट पर बागोर की हवेली स्थित है। यह मेवाड़ के बागोर ठिकाने के सामंत की हवेली है। दिसम्बर 1997 में इस हवेली के 18 कमरों में एक संग्रहालय स्थापित किया गया है, जिसमें राजपूत जीवन शैली, वेशभूषा, आभूषण, अस्त्र-शस्त्र, उनके मनोरंजन के साधन, तीज-त्यौहार एवं उत्सव आदि की झांकियां प्रस्तुत की गई हैं। साथ ही इस संग्रहालय में मेवाड़ के शूरवीर महाराणाओं की सामाजिक, सांस्कृतिक जीवन शैली को संजोया गया है।

हवेली के कक्षों की दीवारों पर भित्तिचित्र बने हुए हैं। हवेली के शयन कक्षों में रीति कला (इरोटिक आर्ट) के चित्र बने हैं। अन्य कक्षों में गणगौर की सवारी, पशु-पक्षी एवं युद्ध के दृश्यों का चित्रांकन हुआ है। कलाकृतियों में गजानन की 700 वर्ष पुरानी प्रतिमा दर्शनीय है। संग्रहालय में हस्तशिल्प, कारीगरी, बुनाई, छपाई, रंगाई और पड़कला को प्रदर्शित किया गया है। मेवाड़ के राजपरिवार में प्रयुक्त कुछ आभूषण भी यहाँ प्रदर्शित किए गए हैं। शयन कक्ष में कलाकारी युक्त पलंग एवं अन्य प्रसाधन सामग्रियां, बड़े कांच, मदिरा की सुराहियां, प्याले आदि संग्रहित हैं। दरबार हॉल, जनाना कक्ष एवं मर्दाना कक्षों को प्राचीन हस्तकलाओं के नमूनों से सजाया गया है।

एक कक्ष में राजस्थान में धारण किए जाने वाले लगभग 50 प्रकार के साफे और पाग-पगड़ियां प्रदर्शित की गई हैं। इस संग्रहालय में महिलाओं के 40 मॉडल रखे गए हैं

जिनके माध्यम से राजस्थान की विभिन्न प्रकार की बंधेज, चूनड़ी एवं लहरिया की साड़ियां प्रदर्शित की गई हैं। कुंकुम के तिलक के लिए कलात्मक चौपड़े, बाजोट, तोरण, रोड़ी धाम एवं पाटियां आदि कलाकृतियां भी रखी हुई हैं। मांगलिक प्रसंगों, उत्सवों, गुरु आगमनों तथा मंदिर प्रतिष्ठा के अवसरों पर नाटक, ख्याल, तमाशे, नृत्य एवं भवाई किए जाते थे। हवेली में उन अवसरों के दृश्य चित्रित किए गए हैं। लोक चित्रकारी भी प्रदर्शित की गई है। चित्रमय सांप-सीढ़ी में 72 खंड प्रदर्शित किए गए हैं जिनमें चंद्र लोक, सूरजलोक, तपलोक, दिक्पाल लोक आदि प्रमुख हैं। बहुरंगी माण्डणों, पलंग के पायों पर राग-रागिनियों के चित्र, दरियों में विभिन्न प्रकार की नृत्य मुद्राएं तथा पशु-पक्षियों की आकृतियां बुनी हुई हैं। गणगौर का मेला, पाड़ीनाथ का मेला, होली, दीपावली, कालाबावजी का मेला, हरियाली अमावस्या का मेला और निर्जला ग्यारस का मेला, फूलडोल का मेला, शीतलामाता का मेला, आदि भी चित्रित किए गए हैं।

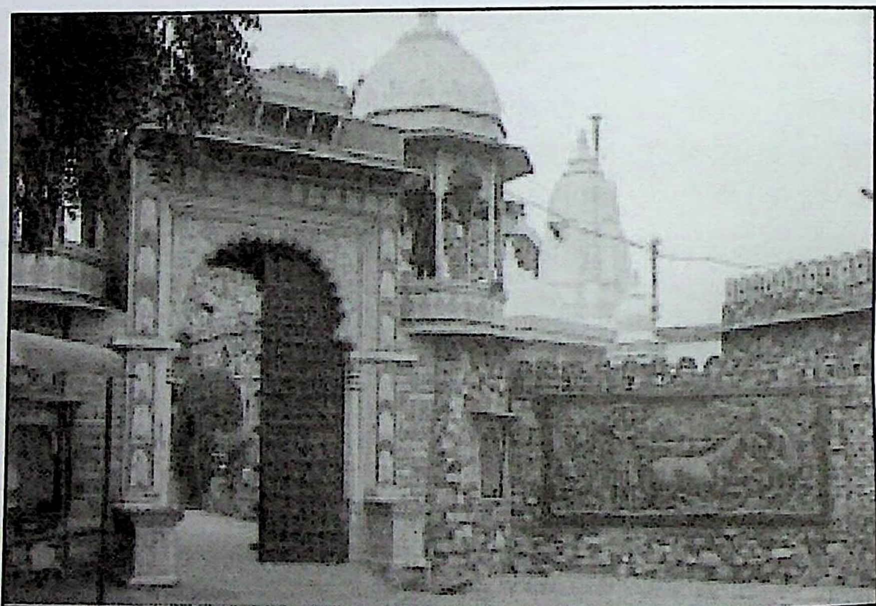
एक कक्ष बड़ी महारानी का कहलाता है, जिसमें धार्मिक वातावरण प्रस्तुत किया गया है। भजन-कीर्तन हेतु विविध वाद्ययंत्र, एकलिंगजी, श्रीकृष्ण एवं श्रीराम के चित्र व्यवस्थित रूप से रखे हुए हैं।

बागोर की हवेली में पश्चिमी क्षेत्र सांस्कृतिक केन्द्र का कार्यालय भी चलता है। इस सांस्कृतिक केन्द्र द्वारा महाराष्ट्र, राजस्थान, गुजरात और गोआ दमन एवं दीव में सांस्कृतिक गतिविधियां चलाई जाती हैं।



अध्याय - 16

महाराणा प्रताप संग्रहालय, हल्दीघाटी

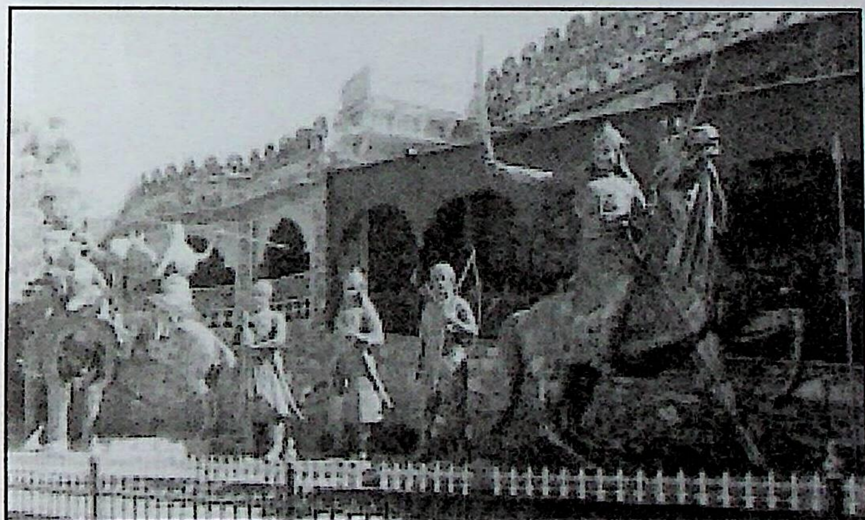


राजसमन्द जिले में स्थित हल्दीघाटी में बने चेतक स्मारक से कुछ ही दूरी पर महाराणा प्रताप संग्रहालय स्थित है। इसे महाराणा प्रताप (ई.1572-97) कालीन परिवेश एवं शिल्प में बनाने का प्रयास किया गया है। दर्शकों के समक्ष उस काल की स्मृतियों को पुनर्जीवित करने के उद्देश्य से इतिहास को उसके मूल स्वरूप में प्रदर्शित करने का प्रयास किया गया है। यहाँ प्रतिदिन बड़ी संख्या में दर्शक आते हैं।

संग्रहालय में आने वाले दर्शकों के लिए थोड़े-थोड़े अंतराल में प्रकाश एवं ध्वनि शो दिखाया जाता है जिसमें महाराणा प्रताप के जीवन वृत्त पर आधारित एक लघु फिल्म के साथ ही विभिन्न शस्त्रों, छायाचित्रों, पुस्तकों आदि की प्रदर्शनी भी दिखाई जाती है। तत्पश्चात बड़े से एक मानचित्र पर युद्धस्थल एवं युद्ध की प्रमुख घटनाओं के स्थलों को दिखाया जाता है। आगे महाराणा प्रताप की जीवनी से सम्बन्धित घटनाओं का विवरण प्रदर्शित किया गया है। इस विवरण में पन्ना धाय के बलिदान की कहानी, महाराणा प्रताप का साथियों सहित युद्ध की तैयारी हेतु विचार-विमर्श, राणा प्रताप का जंगल में निवास, घास की रोटी खाते हुए महाराणा प्रताप और हल्दीघाटी युद्ध के समय एक पांव से घायल चेतक का बलिदान आदि का प्रदर्शन किया गया है। एक प्रतिमा में महाराणा

के घोड़े में मानसिंह के हाथी के मस्तक पर पैर रखे हुए हैं तथा महाराणा प्रताप मानसिंह पर वार करने की तैयारी में हैं।

हल्दीघाटी के युद्ध में महाराणा प्रताप का साथ देने वाले भील राजा, हाकिम खां सूरी, राणा पुंजा, दानवीर भामाशाह आदि के चित्र भी प्रदर्शित किए गए हैं। अन्त में हल्दीघाटी में गुलाब की खेती, गुलाबजल कैसे बनता है, आदि दिखाया गया है। संग्रहालय के बाहर छोटा सा बाजार है जहाँ हस्तशिल्प की वस्तुएं, पुस्तकें, चाय नाश्ता, गन्ने का रस, पारंपरिक पोशाकों में फोटोग्राफी, ऊँट तथा घोड़े की सवारी एवं नौकायन आदि की सुविधाएं उपलब्ध हैं।





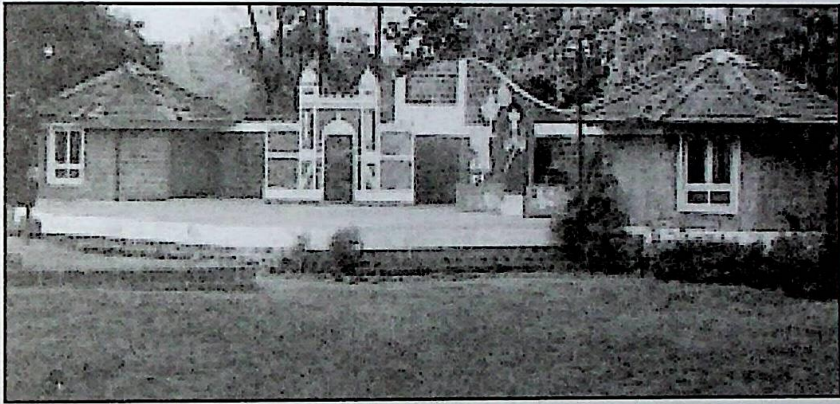
अध्याय - 17

शिल्पग्राम संग्रहालय, उदयपुर



शिल्पग्राम संग्रहालय, उदयपुर नगर के पश्चिम में हवाला गांव के निकट ग्रामीण शिल्प एवं लोककला परिसर 'शिल्पग्राम' में स्थित है। यह संग्रहालय अरावली पर्वतमालाओं के ग्रामीण परिवेश के बीच स्थित होने से दर्शकों को अनूठा अनुभव प्रदान करता है। इसकी स्थापना 70 एकड़ भूमि में की गई है। यह अरावली उपत्यकाओं के ग्रामीण तथा आदिम संस्कृति एवं जीवन शैली को दर्शाने वाला एक जीवन्त संग्रहालय है। इस परिसर में पश्चिमी भारत के पांच राज्यों की पारंपरिक वास्तु कला को दर्शाने वाली झोपड़ियाँ निर्मित की गई हैं जिनमें इन राज्यों के भौगोलिक एवं सांस्कृतिक परिवेश तथा आदिवासियों के रहन-सहन को दर्शाया गया है। इस संग्रहालय में ग्रामीण अंचल में बनने वाली हस्तशिल्प कलाकृतियां प्रदर्शित की गई हैं, जिन्हें दर्शक खरीद भी सकते हैं। यहाँ हथकरघों पर कार्य करते हुए बुनकरों को देखना बहुत रोमांचकारी होता है। मोलेला के कलाकारों द्वारा बनाई गई टैराकोटा कलाकृतियां भी प्रदर्शित की गई हैं।

इस परिसर में राजस्थान की सात झोपड़ियाँ हैं। दो झोपड़ियाँ बनुकरों का आवास है, जिनका प्रतिरूप राजस्थान के रेगिस्तान में स्थित गांव 'रामा' (जिला जालोर) तथा 'सम' (जिला जैसलमेर) से लिया गया है। मेवाड़ के पर्वतीय अंचल में रहने वाले कुंभकार की झोपड़ी उदयपुर जिले के गांव 'ढोल' से ली गई है। दो अन्य झोपड़ियाँ दक्षिणी राजस्थान की भील तथा सहरिया आदिवासियों की हैं जो मूलतः कृषक हैं।

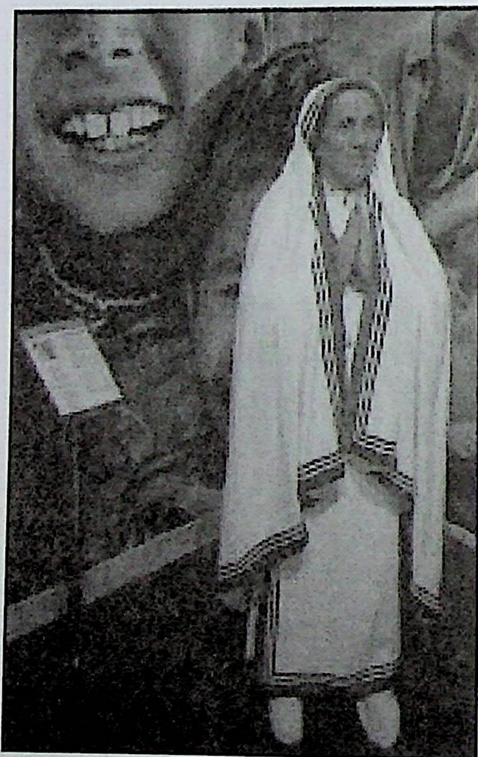


शिल्पग्राम में गुजरात राज्य की प्रतीकात्मक बारह झोपड़ियाँ हैं। इनमें से छः झोपड़ियाँ गुजरात प्रांत के कच्छ क्षेत्र के 'बन्नी' तथा 'भुजोड़ी' गांव से ली गई हैं। बन्नी झोंपड़ियों में रहने वाली रेबारी, हरिजन एवं मुस्लिम जाति के परिवारों की 2-2 झोपड़ियाँ हैं जो कांच की कशीदाकारी, भरथकला तथा रोगनकाम के सिद्धहस्त शिल्पी माने जाते हैं। लांबड़िया उत्तर गुजरात के गांव 'पोशीना' के मृण-शिल्पी का आवास है, जो विशेष प्रकार के घोड़े बनाते हैं।

इसी के समीप पशिचमी गुजरात के छोटा उदयपुर क्षेत्र के 'वसेड़ी' गांव के बुनकर का आवास है। गुजरात के आदिम-कृषक-समुदाय का प्रतिनिधित्व करने वाली राठवा और डांग जनजातियों की झोपड़ियाँ हैं जो अपने पारंपरिक वास्तु-शिल्प एवं भित्ति-अलंकरणों के कारण सबसे अलग दिखाई देती हैं। लकड़ी की श्रेष्ठ नक्काशी से तराशी गई पेठापुर हवेली गुजरात के गांधीनगर जिले की काष्ठ कला का बेजोड़ नमूना है। शिल्पग्राम में शिल्प-बाजार, मृण-कला संग्रहालय, कांच जड़ित कार्य, भित्तिचित्र, बच्चों के लिए झूले, घोड़ा एवं ऊँट की सवारी आदि मुख्य आकर्षण हैं। यह प्रतिदिन प्रातः 11 बजे से सायं 7.00 बजे तक दर्शकों के लिए खुला रहता है।



वैक्स म्यूजियम, उदयपुर



सज्जनगढ़ रोड पर मेवाड़गढ़ होटल के पीछे एक वैक्स म्यूजियम स्थापित किया गया है। इसे लंदन के मैडम तुसाद म्यूजियम की अनुकृति की तरह बनाया गया है। भारत में इस तरह के पांच मोम संग्रहालय हैं, जिनमें से दो राजस्थान में हैं। उदयपुर वैक्स म्यूजियम प्रदेश का पहला वैक्स म्यूजियम है। इस संग्रहालय में देश-विदेश के प्रसि) व्यक्तियों के मोम के पुतले रखे गए हैं। संग्रहालय में प्रदर्शित रानी पद्मावती का मोम से बना पुतला दर्शकों के विशेष आकर्षण का केन्द्र है, जिसके साथ दर्शक अपनी सैल्फी लेना पसंद करते हैं। इस पुतले के कारण जनसामान्य में रानी पद्मावती के इतिहास को जानने की जिज्ञासा बढ़ी है। भक्त-शिरोमणी मीरांबाई, पूर्व राजघराने के सदस्य लक्ष्यराज सिंह मेवाड़, प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी, क्रिकेट खिलाड़ी सचिन तेंदुलकर आदि के पुतले भी दर्शकों द्वारा सर्वाधिक पसंद किए जाते हैं। सलमान खान, मदर टेरेसा, बराक ओबामा, माइकल जैक्सन, ब्रूस विलिस, ब्रूस ली, जैकी चैन, अमॉल्ड, हैरी पॉटर तथा हॉलीवुड अभिनेताओं के पुतले भी प्रदर्शित किए गए हैं। महाराणा प्रताप, कल्पना चावला तथा मोहनदास करमचंद गांधी सहित और भी कई ऐतिहासिक व्यक्तियों के वैक्स से बने पुतले लगाए जाने की योजना है। इस संग्रहालय को देखने के लिए 150 रुपए का टिकट है। यह प्रात: 9 बजे से सायं 9 बजे तक खुला रहता है।



अध्याय - 19

बी.जी. शर्मा चित्रालय, उदयपुर

उदयपुर में सहेलियों की बाड़ी के पास बी. जी. शर्मा चित्रालय स्थित है। इसकी स्थापना 13 अप्रेल 1993 को नाथद्वारा चित्रशैली के सुप्रसिद्ध चित्रकार बी. जी. शर्मा ने की थी। आर्ट गैलेरी के रूप में स्थित यह संग्रहालय दो-मंजिला भवन में बना हुआ है। 5 अगस्त 1924 को नाथद्वारा में जन्मे बी. जी. शर्मा पारम्परिक चित्रकला शैली के सिद्धहस्त कलाकार हैं। उन्होंने भगवान श्रीकृष्ण की जीवन लीला से सम्बन्धित चित्र बड़ी संख्या में बनाए। इस चित्रालय की यह विशेषता है कि इसमें प्रदर्शित समस्त चित्र एक ही कलाकार की तूलिका से निकले हैं। इस चित्रालय में उनके द्वारा 1935 से लेकर बनाए गए 500 से अधिक चित्र प्रदर्शित हैं। इनमें सबसे बड़ा चित्र सूती कपड़े पर बना पिछवाई का है। पिछवाई में श्रीनाथजी के अन्नकूट उत्सव को दर्शाया गया है। यह चित्र 8 गुणा 12 फुट का है। सबसे छोटा चित्र 1 इंच से भी लघु आकार का है। इस चित्रालय में कृष्णलीला के चित्रों के अतिरिक्त रामलीला से सम्बन्धित चित्र भी हैं। मुगल कालीन तथा राजपूत कालीन जीवन परिवेश तथा बादशाहों और राजा-महाराजाओं से सम्बन्धित चित्रों के साथ 24वें जैन तीर्थंकर भगवान महावीर स्वामी के जीवन के प्रमुख प्रसंगों के चित्र भी हैं। इन चित्रों के माध्यम से सम्पूर्ण जैनत्व के सिद्धांतों को कोई भी पहचान सकता है। राष्ट्रीय विभूतियों तथा मेवाड़ के शासकों के भी चित्र इस संग्रहालय में उपलब्ध हैं। सूती कपड़े के साथ-साथ कुछ चित्र रेशमी कपड़े पर भी बने हुए हैं। हाथीदांत पर बने चित्र भी प्रदर्शित किए गए हैं। चित्रों को बनाने में पारम्परिक रंग (स्टोन कलर) काम में लिए गए हैं। कुछ चित्र ऐसे हैं, जिन्हें असली स्वर्ण एवं रजत रंग से रंगा गया है। ऐसे चित्र भी हैं, जो रंग-विहीन हैं तथा केवल पैंसिल-रेखाओं से बनाए गए हैं।

उदयपुर की अन्य निजी दीर्घाएं

उदयपुर में कमल शर्मा आर्ट गैलेरी, बोगेन विला, रामा आर्ट गैलेरी, गैलेरी प्रीस्टाइन तथा मेवाड़ आर्ट गैलेरी भी स्थित हैं, जो विभिन्न कलाकारों द्वारा निजी स्तर पर स्थापित की गई हैं। इन्हें देखने के लिए टिकट खरीदना होता है।



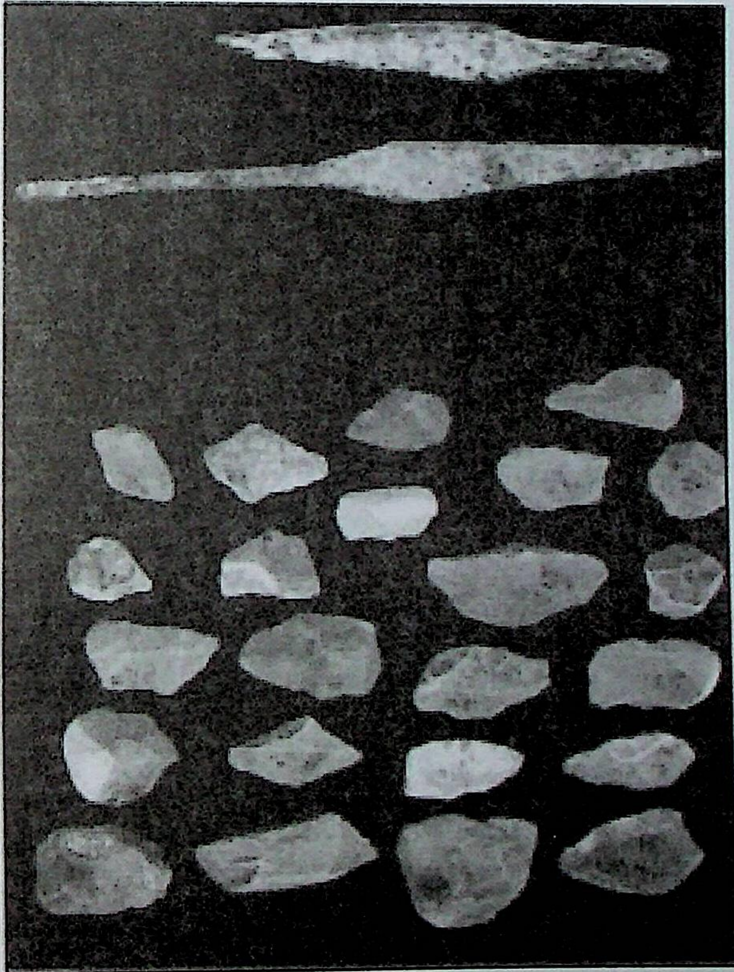
राजकीय संग्रहालय, चित्तौड़गढ़


शिव मस्तक, चित्तौड़गढ़ संग्रहालय

चित्तौड़गढ़ संग्रहालय की स्थापना राजस्थान सरकार के पुरातत्व विभाग द्वारा ई. 1968 में चित्तौड़ दुर्ग में स्थित फतह प्रकाश महल में की गई। इस भवन का निर्माण महाराणा फतहसिंह (ई.1884–1930) द्वारा दुर्ग के मध्य भाग में करवाया गया। इस भवन के प्रांगण में बने कुण्ड में संगमरमर के कमलपुष्प पर महाराणा की प्रतिमा प्रदर्शित है। यह आयताकार भवन दो–मंजिला है तथा इसके चारों कोनों पर गुम्बज बनी हुई हैं, जो 6–7 किलोमीटर दूर से भी दिखाई देती हैं। गुम्बज पर सुवर्ण कलश अलंकृत हैं। महल के ऊपर की मंजिल में एक बड़ा हॉल बना हुआ है जिसमें रंगीन कांच की नक्काशी करके विभिन्न प्रकार के बेल–बूटे एवं पशु–पक्षियों की आकृतियां बनाई गई हैं। ऊपर की मंजिल में लकड़ी युक्त खिड़कियां, इस प्रकार बनाई गई हैं कि अन्दर की तरफ से व्यक्ति बाहर का दृश्य देख सके, परन्तु बाहर खड़े व्यक्ति को अन्दर का दृश्य दिखाई न दे। महल का प्रवेश–द्वार उत्तर दिशा की ओर खुलता है, जिसमें प्रवेश करते ही गणपति की भव्य प्रतिमा के दर्शन होते हैं।

इस संग्रहालय में 640 पाषाण प्रतिमाएं, 18 धातु प्रतिमाएं, 256 धातु कलाकृतियाँ एवं आभूषण, 85 मृण्मय सामग्री, 35 काष्ठ–कलाकृतियां, 100 लघुचित्र, 20 तैलचित्र,

2,060 सिक्के और 307 अन्य वस्तुएं प्रदर्शित की गई हैं।



बेड़च नदी घाटी से प्राप्त पेलियोलिथिक टूल्स

पुरातत्व कक्ष

इस कक्ष में पूर्व-पाषाण-कालीन उपकरण एवं नगरी से प्राप्त कुषाण-कालीन मृण्मय सामग्री प्रदर्शित की गई है, जिन पर विभिन्न प्रकार के पशु पक्षी एवं पुष्पाकृतियां बनी हुई हैं। मोलेला (उदयपुर) के कुंभकारों द्वारा निर्मित देवी-देवताओं की आधुनिक मृणमूर्तियां भी प्रदर्शित की गई हैं। इनमें भैरव, काली, दुर्गा, चामुण्डा, नागदेव आदि प्रमुख हैं।

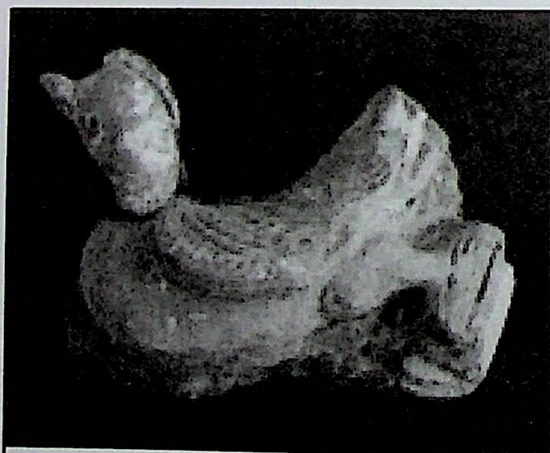
प्रतिमा कक्ष

प्रतिमा कक्ष में संजोए गए संग्रह में गुप्तकाल से लेकर आधुनिक काल तक की


वरुण, प्रस्तर प्रतिमा, भीलवाड़ा, 8वीं शताब्दी ईस्वी

प्रतिमाओं को स्थान दिया गया है। अधिकांश प्रतिमाएं चित्तौड़ दुर्ग से प्राप्त हुई हैं। प्रतापगढ़, पानगढ, राशमी (चित्तौड़गढ़) जहाजपुर, मेजाबांध (भीलवाड़ा) आदि स्थानों से प्राप्त प्रतिमाएं भी प्रदर्शित की गई हैं। यहाँ के संग्रह में केन्द्रीय पुरातत्व से प्राप्त अश्ववाहिनी देवी मध्योत्तर काल एवं जहाजपुर से प्राप्त गोधासन गौरी की श्वेत एवं कृष्ण की प्रतिमाएं विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। धातु प्रतिमाओं में विष्णु, वेणु-गोपाल एवं नन्दी की प्रतिमाएं महत्वपूर्ण हैं, जो जिलाधीश कार्यालय चित्तौड़ से प्राप्त हुई हैं। एक प्रतिमा में भगवान विष्णु को चौकी पर विराजमान मुद्रा में दर्शाया गया है।

अस्त्र-शस्त्र कक्ष


नगरी से प्राप्त टैराकोटा बत्तख, शुंगकाल

अस्त्र-शस्त्र कक्ष में मध्यकालीन हथियारों का संग्रह है जिनमें जिरहबख्तर, शिरस्त्राण, ढालें, तलवारें, बन्दूकें और कटारें मुख्य हैं। इस कक्ष की अधिकांश सामग्री उदयपुर संग्रहालय से तथा कुछ सामग्री जयपुर संग्रहालय से प्राप्त हुई है। जहांगीर कालीन चमड़े का कवच तथा बस्सी (चित्तौड़) से प्राप्त दस्ताने उल्लेखनीय हैं। यहाँ प्रदर्शित बन्दूकों की अधिकतम लम्बाई सात से आठ फुट तक है। ये बन्दूकें ऊँट पर बैठकर बारूद दागने के काम आती थीं।

पेन्टिंग कक्ष

पेन्टिंग कक्ष में मेवाड़ के महाराणाओं के मनुष्याकार तैलचित्र प्रदर्शित किए गए हैं जिनमें बप्पा रावल, कुम्भा, सांगा, उदयसिंह, प्रतापसिंह, फतहसिंह एवं भूपालसिंह के चित्र महत्वपूर्ण हैं। पन्नाधाय का तैलचित्र भी प्रदर्शित किया गया है। अधिकांश चित्र विभागीय कलाकार मोहन लाल शर्मा द्वारा तैयार किए गए हैं। लघु चित्रों में उदयपुर

संग्रहालय से प्राप्त 18वीं सदी के योगवशिष्ट, नैषध, मेवाड़ शैली के गोकुलचन्द के चित्र एवं भदेसर (चित्तौड़गढ़) से प्राप्त आधुनिक शैली के चित्र प्रदर्शित किए गए हैं।

आदिवासी दीर्घा

चित्तौड़ संग्रहालय में आदिवासी युगल भील स्त्री-पुरुष तथा गाड़िया लोहार के प्लास्टर निर्मित मॉडल प्रदर्शित हैं। मेवाड़ से इन जातियों का विशेष सम्बन्ध था। राणा प्रताप की सेना में आदिवासी वीरों ने महत्वपूर्ण योगदान किया।

दरबार हॉल

स्वतंत्रता प्राप्ति की स्वर्ण जयन्ती के अवसर पर सितम्बर 1997 में संग्रहालय भवन के ऊपर की मंजिल दरबार-हॉल में 'मेवाड़ की सांस्कृतिक धरोहर' प्रदर्शनी का आयोजन किया गया, जिसे बाद में स्थाई कर दिया गया।

मीरांबाई के चित्र

संग्रहालय के एक कक्ष में भक्त शिरोमणि महारानी मीरां से सम्बन्धित चित्र भी प्रदर्शित किए गए हैं, जो मीरां समिति चित्तौड़गढ़ की ओर से वर्ष 1981 में संग्रहालय को भेंट स्वरूप प्राप्त हुए थे।

काष्ठ कलाकृतियाँ

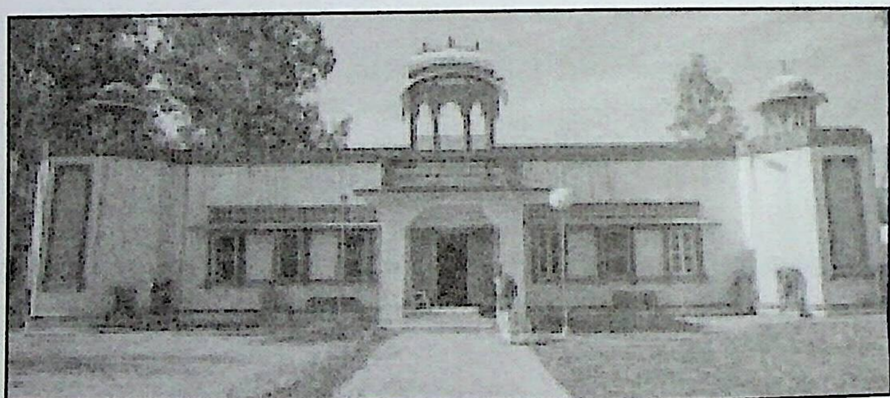
संग्रहालय के एक कक्ष में बस्सी (चित्तौड़गढ़) में निर्मित काष्ठ कलाकृतियों के नमूने प्रदर्शित किए गए हैं जिनमें ईसर, गणगौर, रासलीला दृश्य आदि महत्वपूर्ण हैं।

सिक्के

यहाँ के संग्रह में चित्तौड़गढ़ एवं भीलवाड़ा जिले से प्राप्त ताम्बे एवं चांदी के कुछ सिक्के भी प्रदर्शित किए गए हैं, जो मुगलकाल से लेकर आधुनिक काल तक के हैं। सोने का एक मुगलकालीन सिक्का ग्राम शंभूगढ़ (भीलवाड़ा) से प्राप्त हुआ है, जिसके एक तरफ बादशाह शब्द स्पष्ट पढ़ने में आता है। इस संग्रहालय को देखने के लिए प्रतिवर्ष 1 से 2 लाख पर्यटक एवं शोधार्थी आते हैं।



राजमाता देवन्द्र कुंवर राजकीय संग्रहालय, डूंगरपुर



डूंगरपुर राजकीय संग्रहालय की स्थापना ई.1959 में राजस्थान सरकार के पुरातत्व एवं संग्रहालय विभाग द्वारा वागड़ क्षेत्र की पुरा सामग्रीं एवं कला सामग्री के संरक्षण एवं प्रदर्शन के उद्देश्य से की गई। ई.1960 में डूंगरपुर पंचायत समिति हॉल में प्रतिमाओं एवं पुरावस्तुओं का प्रदर्शन किया गया। समय के साथ-साथ विभिन्न प्रकार की सामग्री का अधिग्रहण किया जाता रहा, जिससे यह संग्रहालय समृद्ध होता चला गया। ईस्वी 1970 में पूर्व डूंगरपुर रियासत के राजपरिवार के सदस्य महारावल लक्ष्मणसिंह तथा डॉ. नगेन्द्रसिंह ने डूंगरपुर राजवंश से सम्बद्ध प्राचीन वस्तुओं एवं व्यक्तिगत संग्रह की वस्तुओं को संग्रहालय को देने का निश्चय किया। उन्होंने अपने व्यक्तिगत संग्रह की समस्त कलाकृतियां, धातु प्रतिमाएँ तथा ऐतिहासिक महत्व की वस्तुएं राजकीय संग्रहालय को प्रदान कर दीं। ई.1973 में पुरासामग्री को विधिवत रूप से प्रदर्शित कर इसे राजकीय संग्रहालय का स्वरूप प्रदान किया गया।

राजपरिवार द्वारा संग्रहालय के लिए भूमि भी उपलब्ध कराई गई। इस भूमि पर सरकार द्वारा एक भवन का निर्माण किया गया तथा 11 फरवरी 1988 को नवीन संग्रहालय भवन का उद्‌घाटन किया गया। वर्तमान में इस संग्रहालय में तीन दीर्घाएं हैं जिनमें 197 मूर्तियां, 23 शिलालेख, धातु प्रतिमाएँ, सिक्के तथा वागड़ क्षेत्र के आदिवासी जनजीवन से सम्बन्धित सामग्री प्रदर्शित की गई है।

डूंगरपुर राजस्थान के दक्षिण-पश्चिम सीमांत क्षेत्र में स्थित है। यहाँ की प्रतिमाओं



यक्ष, पद्मपाणि, आमझरा, 7वीं शताब्दी ईस्वी

का पत्थर स्थानीय खानों से प्राप्त किया गया था। यह पत्थर गाढ़े नीले-हरे रंग का है। इसे मेवाड़ में परेवा पत्थर कहा जाता था। डूंगरपुर संग्रहालय में 5-6वीं शताब्दी की गुप्तकालीन प्रतिमाएँ भी प्रदर्शित की गई हैं। मृगचर्म युक्त ब्रहमी, पद्मपाणि-यक्ष, कौमारी आदि की प्रतिमाएँ महत्वपूर्ण हैं। वीणाधारी शिव, कुबेर एवं गणेश की मूर्तियां भी उल्लेखनीय हैं। खण्डित अवस्था में होने पर भी ये प्रतिमाएँ अपने काल की मूर्तिकला पर प्रकाश डालने में पर्याप्त सक्षम हैं। वीणाधर शिव तल्लीन भाव में नन्दी पर आरूढ़ हैं। शिव की यह प्रतिमा इस क्षेत्र से प्राप्त प्रतिमाओं में सबसे प्राचीन है। प्रारंभिक मध्यकाल स्थानक वराह का अधोभाग, आसनस्थ कुबेर, दम्पत्ति, सुर-सुन्दरी का धड़, आसनस्थ ध्यानमुद्रा में आदिनाथ, महिषासुरमर्दिनी तथा स्थानक चामुण्डा की प्रतिमाएँ भी दर्शनीय हैं।

डूंगरपुर से 25 किलोमीटर दूर आमझरा नामक स्थान से गुप्तोत्तर कालीन प्रतिमाएँ प्राप्त हुई हैं।



गरुड़वाहिनी वैष्णवी,
7वीं शताब्दी, आमझरा

यहाँ की पहाड़ियों को देखने से विशाल भवनों की नीवें दिखाई देती हैं, जो इस बात का प्रतीक हैं कि किसी समय यहाँ विशाल मंदिर रहे होंगे। पुरातत्वविद् रत्नचंद्र अग्रवाल ने इस क्षेत्र से अनेक प्राचीन मूर्तियों को खोजा। ये मूर्तियाँ गुप्तोत्तर काल की थीं। उत्तर मध्यकाल की प्रतिमाओं में स्थानक सूर्य, हरिहर (संयुक्त प्रतिमा) दशावतार के अंकन के साथ उत्कीर्ण की गई हैं।

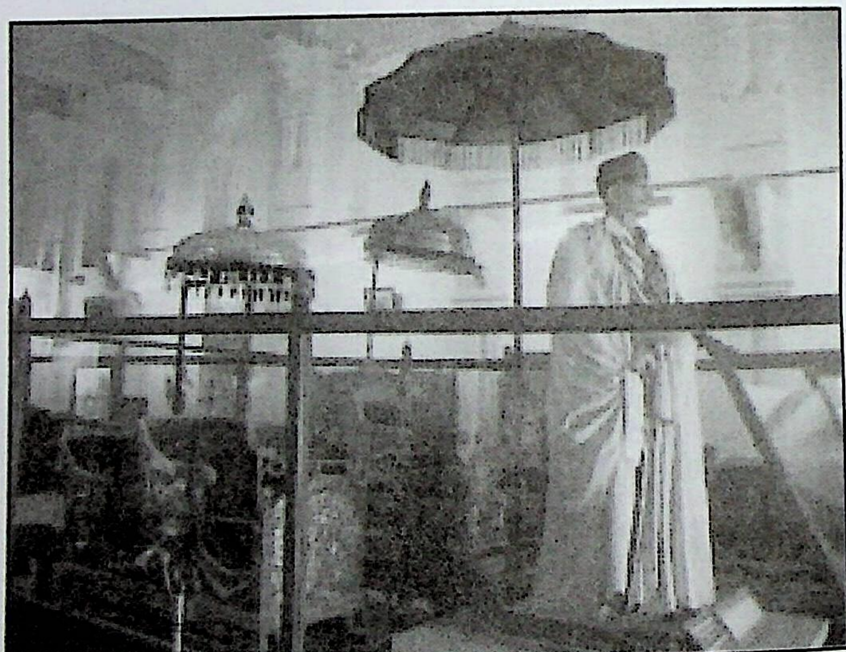
मध्योत्तर कालीन प्रतिमाओं में तपस्यारत पार्वती, गरुड़ासीन लक्ष्मीनारायण एवं महिषासुर मर्दिनी की प्रतिमाएँ उल्लेखनीय हैं। इसी काल की अनेक जैन प्रतिमाएँ भी प्रदर्शित हैं। महारावल लक्ष्मणसिंह एवं डॉ. नगेन्द्र सिंह डूंगरपुर से भेंट स्वरूप प्राप्त प्रतिमाएँ, शिलालेख, लघुचित्र एवं वास्तु खण्ड भी मध्योत्तर युगीन कला का प्रतिनिधित्व करते हैं। डॉ. नगेन्द्रसिंह के सौजन्य से प्राप्त नटराज, भगवान बुद्ध, अर्द्धनारीश्वर, भैरवी आदि प्रतिमाएँ संग्रहालय की विशिष्ट कला सम्पदाएं हैं।

इस संग्रहालय में चित्रों के माध्यम से वागड़ क्षेत्र की अनेक सांस्कृतिक परम्पराओं का प्रदर्शन किया गया है। सामाजिक एवं धार्मिक मान्यताओं तथा सांस्कृतिक केन्द्रों के छाया चित्रों तथा स्थानीय कलाकृतियों को भी संजोया गया है।



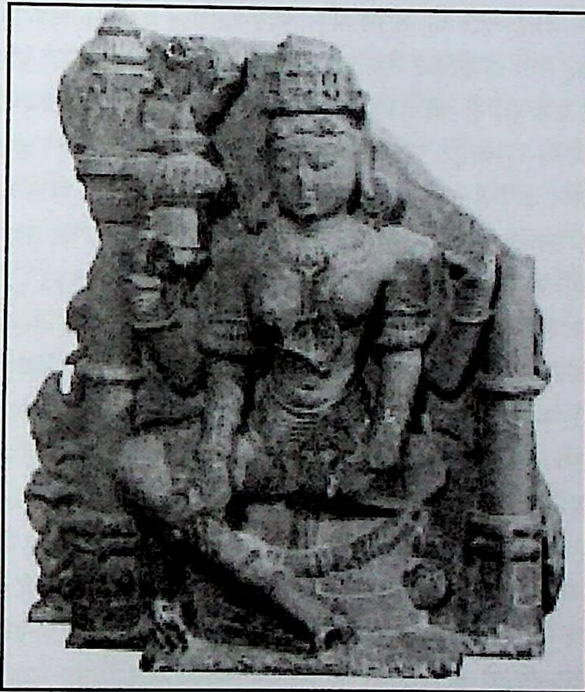
कोटा संभाग के संग्रहालय

राजकीय संग्रहालय, कोटा



अंग्रेज पुरातत्वविद् सी. एस. हैक्ट ने बून्दी राज्य के इन्दरगढ़ क्षेत्र से क्वार्टजाइट से निर्मित पाषाण-कालीन उपकरण खोजे थे, जो भारतीय संग्रहालय कलकत्ता में रखे गए। इसी प्रकार कोटा राज्य से प्राप्त कुछ अन्य सामग्री भी देश-विदेश के अन्य संग्रहालयों को चली गईं। कोटा महाराव उम्मेद सिंह (द्वितीय) के समय ई.1936 में कोटा राज्य की प्राचीन एवं कलात्मक सामग्री का सर्वेक्षण एवं संग्रहण कर, संग्रहालय बनाने का विचार सामने आया। इस विचार को क्रियान्वित करने के लिए काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के प्रोफेसर डा. ए. एस. अल्टेकर से कोटा रियासत का पुरातात्विक सर्वेक्षण करवाया गया। फलस्वरूप कोटा के आस-पास चौदह प्राचीन स्थल प्रकाश में आए।

कोटा संग्रहालय की स्थापना को मूर्त स्वरूप प्रदान करने के लिए सुप्रसिद्ध इतिहासकार डा. मथुरालाल से ई.1943 में पुनः सर्वेक्षण करवाया गया। परिणामस्वरूप लगभग एक सौ प्रतिमाएं एवं शिलालेख प्रकाश में आए। कोटा राज्य के विभिन्न क्षेत्रों से प्राप्त पुरा सामग्री एवं कलाकृतियों को ब्रजविलास भवन में रखवाया गया तथा ई.1946



चतुर्भुज वैष्णवी, रामगढ़, कोटा, 12वीं शती ईस्वी

में राजकीय संग्रहालय कोटा की विधिवत् नींव रखी गई। ई.1946 से 1951 तक यह संग्रहालय ब्रजविलास भवन में रहा। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् यह संग्रहालय कोटा गढ़महल स्थित हवामहल में स्थानांतरित किया गया। ई.1991 तक यह संग्रहालय हवामहल में रहा, किंतु संग्रहालय-सामग्री में वृद्धि हो जाने से स्थान कम पड़ने लगा। अतः इसे पुनः छत्रविलास उद्यान के ब्रजविलास भवन में स्थानांतरित कर दिया गया। पुरासामग्री एवं कलासामग्री के प्रदर्शन के लिए संग्रहालय दीर्घाओं का वैज्ञानिक ढंग से निर्माण करवाया गया तथा संग्रहालय का पुनर्गठन कर दिसम्बर 1995 में जनसाधारण के लिए खोला गया। ब्रजविलास संग्रहालय भवन उत्तर मध्यकालीन राजपूत स्थापत्य शिल्प का सुन्दर नमूना है तथा सरकार द्वारा घोषित संरक्षित स्मारक है।

इस संग्रहालय को मूर्तिकला की विविधता एवं चित्रकला संग्रह की दृष्टि से महत्वपूर्ण माना जाता है। संग्रहालय में संग्रहित प्रतिमाएँ, शिलालेख, सिक्के, लघुचित्र, हस्तलिखित ग्रंथ तथा विविध कला सामग्री को कालक्रम, विषय-वस्तु एवं प्राप्ति-स्थल के आधार पर वर्गीकृत कर छह दीर्घाओं में प्रदर्शित किया गया है।

पुरा सामग्री कक्ष

पुरा सामग्री दीर्घा में हाड़ौती क्षेत्र से प्राप्त मध्यपाषाण युग से लेकर गुप्तकाल तक की पुरासामग्री एवं कलासामग्री का प्रदर्शन किया गया है, जिसमें झालावाड़ जिले में

कालीसिन्ध तथा आहू नदी के संगम पर स्थित गागरोन दुर्ग, कालीसिन्ध के निकट तीनधार और आहू नदी के निकट स्थित भीलवाड़ी गांव आदि स्थलों से प्राप्त मध्यप्रस्तर युग (50 हजार वर्ष पूर्व से 10 हजार वर्ष पूर्व तक) के पाषाण उपकरणों का प्रदर्शन किया गया है जिनमें कुल्हाड़ी, स्क्रैपर, बाण की नोक आदि प्रमुख हैं। इनके अतिरिक्त लघुपाषाण कालीन अर्थात् नवपाषाण कालीन (10 हजार वर्ष पूर्व से 5 हजार वर्ष पूर्व तक) के प्रस्तर उपकरण भी प्रदर्शित हैं जिनमें कोर, फलक, ब्लेड आदि प्रमुख हैं। ताम्रयुगीन एवं ऐतिहासिक स्थलों यथा धाकड़खेड़ी, कैथून, मानसगांव (जिला कोटा), नमाणा, केशोरायपाटन (जिला बूंदी), बड़वा (जिला बारां) आदि से प्राप्त मृदपात्र, जिनमें मालवा क्षेत्र की पुरा संस्कृति से सम्बन्धित पात्रखण्ड (मालवा वेयर अथवा ब्लैक ऑन रेड वेयर) काले और लाल धरातल वाले पात्रखण्ड (ब्लैक एण्ड रेड वेयर), सलेटी रंग के पात्रखण्ड (ग्रे वेयर) तथा ऐतिहासिक काल की मृणमूर्तियां, पक्की मिट्टी का शतरंज का पासा एवं मोहरें, कर्णाभूषण, पहिया आदि अनेक प्रकार की मनोरंजन एवं श्रृंगार सामग्री प्रदर्शित की गई है। इस पुरा एवं कला सामग्री के माध्यम से मानव जाति के सांस्कृतिक, सामाजिक एवं आर्थिक जीवन की जानकारी प्राप्त होती है। आदि-मानव के भोजन संग्रहण अवस्था से निकलकर भोजन उत्पादन की अवस्था में प्रवेश करने तक की विकास यात्रा को दो तेल-चित्रों के माध्यम से प्रदर्शित किया गया है। कोटा के समीप चंद्रसेन नामक स्थान पर शतुमुर्ग के चालीस हजार वर्ष प्राचीन अण्डशतक मिले हैं जिन्हें रेखांकन से सजाया गया है। उन्हें भी इस संग्रहालय में रखा गया है।



पक्षी युगल, 9वीं शती ईस्वी, बारां

मुद्रा कक्ष

संग्रहालय में सर्वाधिक प्राचीन सिक्का चांदी से निर्मित पंचमार्क चौकोर सिक्का है जिस पर फूल बने हुए हैं। इस प्रकार के सिक्कों का चलन ईसा से तीसरी शताब्दी पूर्व

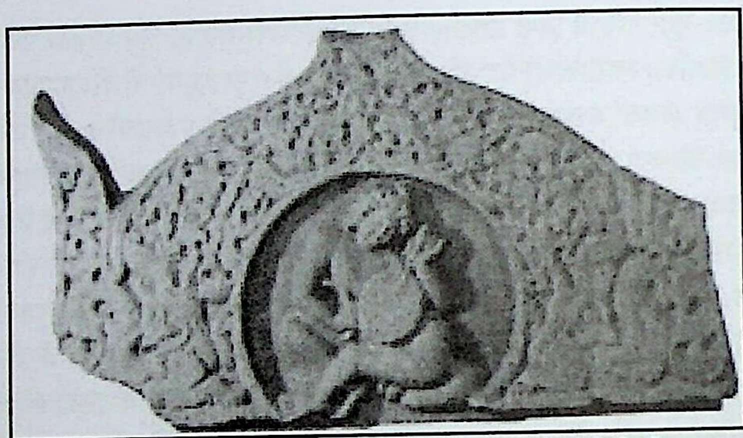
था। कोटा-बूंदी क्षेत्र से प्राप्त प्राचीनतम सिक्के इण्डोससैनियन और गधिया प्रकार के हैं जो ग्राम निमोदा, तहसील दीगोद और बूंदी-नमाना रोड पर खुदाई के दौरान प्राप्त हुए थे। चौहान राजा अजयदेव तथा उसकी रानी सोमलदेवी के सिक्के एक दफीने के रूप मिले हैं, वे भी इस संग्रहालय में सुरक्षित हैं। अजयदेव के सिक्कों पर चित की तरफ नागरी लिपि में अजयदेव अंकित है और पट की ओर लक्ष्मी देवी की आकृति उत्कीर्ण है। सोमल देवी के सिक्कों पर नागरी लिपि में सोमल देवी एवं पट की ओर अश्वारोही की आकृति बनी है। कोटा संभाग के विभिन्न स्थलों से प्राप्त अल्लाउद्दीन खिलजी, मुबारकशाह, गयासुद्दीन तुगलक और अकबर, जहांगीर, शाहजहां, औरंगजेब आदि के सिक्के भी प्रदर्शित किए गए हैं। हाड़ौती क्षेत्र की कोटा, बूंदी एवं झालावाड़ रियासतों के सिक्के भी प्रदर्शित किए गए हैं। मेवाड़, जयपुर, जोधपुर, बीकानेर, जैसलमेर, किशनगढ़, करौली, भरतपुर और टोंक आदि रियासतों के सिक्के भी प्रदर्शित हैं, जो कोटा राज्य के रानीहेड़ा गांव में मिले थे। ये सिक्के मुगल बादशाह अकबर, जहांगीर, शाहजहां, औरंगजेब और मुहम्मदशाह के समय के हैं।

प्रतिमा कक्ष



देवी गंगा (मध्य में), परिचारकों के साथ, काकूनी, 10वीं शती

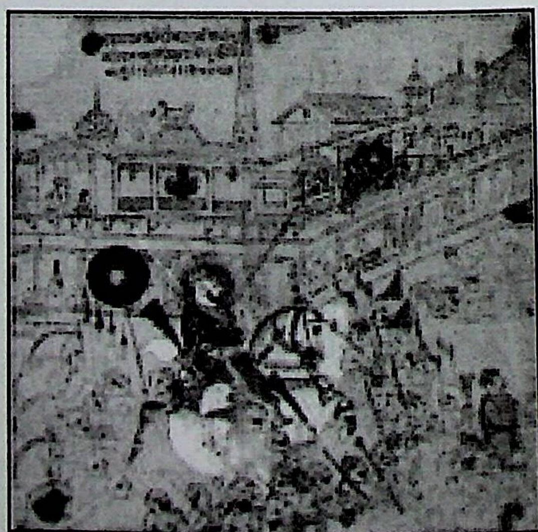
हाड़ौती क्षेत्र स्थापत्य एवं मूर्तिकला की दृष्टि से अत्यन्त सम्पन्न रहा है तथा भौगोलिक रूप से मालवा क्षेत्र से जुड़ा होने के कारण मालवा की संस्कृति से प्रभावित रहा है। इस क्षेत्र में वैष्णव, शैव, शाक्त, बौद्ध एवं जैन मतावलम्बियों से सम्बन्धित स्थापत्य एवं मूर्तिकला के अवशेष प्रचुर संख्या में प्राप्त होते हैं। संग्रहालय में 150 से अधिक प्रतिमाएँ प्रदर्शित की गई हैं। इनमें बाड़ौली, दरा, अटरू, रामगढ़ विलास, काकोनी, शाहबाद, आगर, औघाड़, मन्दरगढ़ आदि से प्राप्त प्रतिमाएँ प्रमुख हैं। संग्रहालय में हाड़ौती क्षेत्र से प्राप्त गुप्तकाल से लेकर मध्यकाल तक निर्मित देवालयों के अवशेषों, मूर्तियों, उत्कीर्ण पाषाणों आदि सामग्री को



संगीत वाद्ययंत्र बजाता बालक, दरा (कोटा), 5वीं शती ईस्वी

संकलित किया गया है। संग्रहालय में विलास से प्राप्त यमराज की एक प्रतिमा प्रदर्शित की गई है, जो हाथ में कपाल लिए हुए है। विषय-वस्तु एवं प्राप्ति स्थल के आधार पर प्रतिमा कक्ष को छह उपकक्षों में विभाजित किया गया है।

दरा प्रतिमा कक्ष में दरा क्षेत्र से प्राप्त गुप्तकालीन प्रस्तर प्रतिमाएं रखी गई हैं। ख्यातिलब्ध तंत्रपट्टिका (झल्लरी वादक) इंग्लैण्ड में हुए भारत महोत्सव में भारत का प्रतिनिधित्व कर चुकी है। नन्दी तथा कलात्मक प्रस्तर स्तम्भ-खण्ड आदि भी प्रदर्शित हैं। शैव प्रतिमा कक्ष में काकूनी, अटरू आदि स्थलों से प्राप्त उमा-महेश्वर, शिव के विभिन्न स्वरूपों यथा विलास के लकुलीश एवं अंधकासुर वध, रामगढ़ से प्राप्त शिव ताण्डव आदि प्रतिमाएं, बारां के शक्ति-गणेश, काकूनी के कार्तिकेय, भैरव आदि प्रतिमाएं प्रदर्शित की गई हैं। ये सभी प्रतिमाएं 9वीं-10वीं शताब्दी की हैं। संयुक्त देव



आगरा में महाराव रामसिंह, कोटा पेंटिंग, 19वीं शती

प्रतिमा कक्ष में 9वीं शताब्दी ईस्वी की गांगोभी से प्राप्त योगनारायण, विलास से प्राप्त हरि–हर, पितामह–मार्तण्ड की संयुक्त देव प्रतिमाएं प्रदर्शित हैं। गंगोभी से प्राप्त प्रतिमाएँ सफेद पत्थर की हैं। शेषशायी विष्णु की प्रतिमा भूरे पत्थर से निर्मित है।

वैष्णव प्रतिमा कक्ष में शाहबाद से प्राप्त 8वीं शताब्दी की बैकुण्ठ–विष्णु (नृसिंह, वराह, विष्णु) प्रतिमा, बाड़ौली से प्राप्त 9वीं शताब्दी की संयुक्त राज्य अमेरिका एवं रूस में हुए भारत महोत्सव में इस क्षेत्र का प्रतिनिधित्व करने वाली शेष–शायी विष्णु प्रतिमा, औघाड़ (शाहबाद) से प्राप्त 10वीं शताब्दी की विष्णु प्रतिमा, वराह, वामन, नृसिंह आदि विष्णु–दशावतार प्रतिमाओं सहित विष्णु के 24 स्वरूपों की प्रतिमाएं प्रदर्शित हैं। मातृकाएं एवं दिक्पाल कक्ष में ऐन्द्रीय, वाराही, वैष्णवी, ब्रह्माणी, चामुण्डा, लक्ष्मी आदि मातृकाओं की प्रतिमाएं, अग्नि, वरुण, ईशान, वायु, कुबेर, यम आदि दिक्पाल तथा नवग्रह पटल आदि का प्रदर्शन है। हाड़ौती क्षेत्र के रामगढ़, काकूनी, विलास, अटरू, गांगोभी आदि स्थलों से प्राप्त ये प्रतिमाएं 9वीं से 11वीं शताब्दी की हैं। अधिकांश हिन्दू नरेश बौद्ध एवं जैन धर्म को भी श्रद्धा की दृष्टि से देखते थे। इस कारण इस क्षेत्र से इन दोनों धर्मों से सम्बन्धित प्रतिमाएं भी बड़ी संख्या में मिली हैं। इस क्षेत्र में 8वीं से 13वीं शताब्दी तक की काकूनी, अटरू केशोरायपाटन, झालरापाटन, विलास, रामगढ़ आदि स्थलों से जैन तीर्थंकरों ऋषभनाथ, अजितनाथ, विमलनाथ, शांतिनाथ, मणिनाथ, पार्श्वनाथ, महावीर स्वामी आदि की प्रस्तर प्रतिमाएं प्रदर्शित की गई हैं। बाड़ौली से प्राप्त 9वीं शताब्दी की शेषशायी विष्णु प्रतिमा का छायाचित्र प्रदर्शित किया गया है।



जोधपुर नरेश भीमसिंह, मारवाड़ शैली पेंटिंग



होली, कोटा पेंटिंग, 19वीं शती

ऐतिहासिक कक्ष

ऐतिहासिक कक्ष में शिलालेखों, अस्त्र-शस्त्र, पट्ट-परिधान तथा हाड़ौती क्षेत्र के स्वतन्त्रता संग्राम से सम्बन्धित इतिहास की झांकी प्रस्तुत की गई है।

मौखरी राजकुमारों के यूप स्तम्भ : बड़वा ग्राम से प्राप्त वि.सं. 295 के यूप स्तम्भों से वैदिक यज्ञों की जानकारी प्राप्त होती है। इन स्तम्भों को संग्रहालय में एक अलग चबूतरे पर प्रदर्शित किया गया है। इन स्तूपों से यज्ञ अश्व बांधे गए थे। वैदिक परम्परा के अनुसार ये यूप आधार भाग में चौकोर, मध्य भाग में अष्टकोणीय और शीर्ष भाग पर मुड़े हुए हैं तथा पीले रंग के बलुआ पत्थर से निर्मित हैं। इन यूपों पर कुषाण कालीन ब्राह्मी लिपि में (ई.238 का) एक शिलालेख अंकित है जिससे ज्ञात होता है कि इन यूपों के निर्माणकर्ता मौखरी वंश के बल के पुत्र बलर्धन सोमदेव और बलसिंह थे, जिन्होंने यहाँ त्रिराज एवं ज्योतिषेम यज्ञ करके इन्हें स्थापित किया था। राजस्थान में तीसरी शताब्दी ईस्वी में मौखरी राज्य की सूचना देने वाला यह अकेला शिलालेख प्राप्त हुआ है।

शिलालेख : संग्रहालय में प्रदर्शित विश्ववर्मा का वि.सं. 480 का गंगधार (झालावाड़ जिले में स्थित) से प्राप्त लेख विष्णु मंदिर के निर्माण का उल्लेख करता है। चारचौमा का वि.सं. 557 का अभिलेख, चन्द्रभागा (झालरापाटन) का शीतलेश्वर महादेव का वि.सं. 746 का लेख तथा कन्सुआ (कोटा) का वि.सं. 795 का लेख शिव मन्दिरों के निर्माण की तिथि की सूचनाएं देते हैं। शेरगढ़ के कोषवर्धन अभिलेख से ज्ञात होता है कि वि.सं. 847 में नागवंश के राजा देवदत्त ने एक मंदिर तथा बौद्ध विहार का

निर्माण करवाया था। रामगढ़ से प्राप्त वि.सं. 1219 का त्रिशावर्मा का अभिलेख इसी वंश के राजा मलय वर्मा द्वारा 10वीं शताब्दी में विजय के उपलक्ष्य में किए गए शिवालय के जीर्णोद्धार का उल्लेख करता है। शेरगढ़ में भण्डदेवरा से प्राप्त विक्रम की 12वीं एवं 13वीं शताब्दी के लेख तथा चांदखेडी का वि.सं. 1476 का लेख प्रमुख हैं। संग्रहालय में प्रदर्शित शिलालेखों में रामगढ़ से प्राप्त शिलालेख, श्रीमलयदेव वर्मण का शिलालेख भी सम्मिलित हैं।

बाद के शिलालेखों में कोटा रियासत के सम्बन्ध में सूचनाएं मिलती हैं जिनमें चाकरी बन्द करने की सूचना, वि.सं.1861 में महाराव रामसिंह का जैसलमेर में विवाह होने की सूचना, महाराव रामसिंह (वि.सं.1884-1922) द्वारा दरा में शेर का शिकार करने पर मनाए गए उत्सव का विवरण, वि.सं. 1906, शाहबाद का सं. 1678 का शिलालेख, झाला जालिम सिंह (प्रथम) का 19वीं शताब्दी का शिलालेख आदि प्रदर्शित है। इन शिलालेखों से हाड़ौती क्षेत्र की सांस्कृतिक, सामाजिक एवं आर्थिक स्थितियों की जानकारी प्राप्त होती है। इन प्रसिद्ध शिलालेखों के साथ-साथ हाड़ौती में अन्य कई स्थानों से प्राप्त प्रसिद्ध शिलालेखों की देवनागरी में प्रतिलिपियां रखी गई हैं।

ताम्रपत्र एवं खरीते आदि : संग्रहालय में कुछ ताम्रपत्रों के मूल लेख तथा कुछ ताम्रपत्रों के अनुवाद भी उपलब्ध हैं। शाहबाद और दरा से लाए गए कुछ शिलालेख भी उपलब्ध कराए गए हैं। शिलालेखों के साथ ही खरीतों पर लगाए जाने वाली चपड़ीं की सील के कुछ लेख भी मौजूद हैं जिनमें राव माधोसिंह, महाराव रामसिंह, वजीरखान नसरतजंग, बलवन्तसिंह, जार्ज रसेल आदि के लेख प्रमुख है। कोर्ट स्टाम्प की मोहर के लेख भी प्रदर्शित हैं।

अस्त्र-शस्त्र एवं पट्ट-परिधान कक्ष

अस्त्र-शस्त्र एवं पट्ट-परिधान कक्ष में 18वीं-19वीं शताब्दी के अस्त्र-शस्त्र, तोड़ेदार बन्दूकें, कोटा-बून्दी-उदयपुर की कटारें, छुरियां, तलवारें-ढालें, भाले, धनुष एवं तीर तथा जिरहबख्तर आदि को सुन्दर ढंग से प्रदर्शित किया गया है। कोटा शासकों के पट्ट-परिधान, चोगा मारगर्दानी, चोगा मखमल, सुरमई, पशमीना, बागा मलमल केसरिया आदि भी प्रदर्शित हैं।

हस्तलिखित ग्रन्थ

हस्तलिखित कक्ष में 18वीं-19वीं शताब्दी के सचित्र हस्तलिखित ग्रन्थ-व्रतोत्सव चन्द्रिका, गीता पंचरत्न, गीता सूक्ष्माक्षरी भागवत, भागवत सूक्ष्माक्षरी, कल्पसूत्र, विष्णु सहस्त्रनाम, कुरानमज़ीद आदि प्रदर्शित की गई हैं। कोटा राज्य का सरस्वती भण्डार पहले इसी संग्रहालय से जुड़ा हुआ था जिसमें 5000 हस्तलिखित ग्रंथ थे। सरस्वती भण्डार के अलग हो जाने के पश्चात् कुछ विशिष्ट हस्तलिखित ग्रंथ ही संग्रहालय में रह गए हैं। इनमें से अधिकांश ग्रंथ चित्रित हैं। ये ग्रंथ चित्र तथा चार्ट स्वर्ण

अक्षरी, चित्र काव्य, भोजपत्री एवं नक्काशी से अलंकृत हैं। चित्रित ग्रंथों में 1190 पृष्ठों की भागवत प्रमुख है, जिसमें प्रत्येक पृष्ठ पर लगभग 11 पंक्तियों का लेखन है। ग्रंथ की भाषा संस्कृत एवं लिपि नागरी है। इसका लेखन 18वीं शताब्दी ईस्वी का है। इसका आकार 14 इंच गुणा 6 इंच माप का है। दूसरी महत्वपूर्ण चित्रित पुस्तक भागवत सूक्ष्म-अक्षरी है, जिसका आकार 6.9 इंच गुणा 3 इंच है। इसमें सुनहरी रेखांकन का काम है तथा इसमें 18वीं शताब्दी में बने दशावतार के चित्र हैं। यहाँ एक गीता भी सूक्ष्म अक्षरी है, जिसमें इतने बारीक अक्षर हैं कि इसे सूक्ष्मदर्शी यंत्र से पढ़ने में भी कठिनाई आती है। इसका आकार साढ़े आठ इंच गुणा साढ़े पांच इंच है।

एक अन्य गीता सप्त श्लोकी कर्त्तारित अक्षरी है। गीता पंचरत्न नामक ग्रंथ में 236 पृष्ठ एवं 23 चित्र हैं तथा कई जगह अक्षर स्वर्ण में लिखे गए हैं। स्वर्ण अक्षरों से युक्त एक अन्य ग्रंथ में शत्रुशल्यस्तोत्र भी सम्मिलित है। दुर्जनशल्यस्तोत्र काले रंग के पृष्ठ पर सफेद स्याही से लिखा गया है। आशीर्वचन तथा सिद्धान्त रहस्य भी प्रमुख ग्रन्थ हैं। अन्य प्रमुख ग्रन्थ हैं- कल्पसूत्र, यक्रसार, वल्लभोत्सव चन्द्रिका, सर्वोत्तम नवरत्न, पृथ्वीराज-युद्ध, डूंगसिंह की वीरगाथा, अश्व परीक्षा, ज्ञान चौपड़ आदि। उम्मेदसिंह चरित काव्य में कोटा के पुराने इतिहास का उल्लेख है। कुरान मजीद ग्रन्थ का आकार 7 इंच गुणा 4 इंच है। इसमें 764 पृष्ठ हैं। यह अरबी लिपि में लिखा है तथा इसमें सुन्दर कारीगरी का काम है। एक चावल पर उत्कीर्ण गायत्री मंत्र भी इस संग्रहालय की महत्वपूर्ण वस्तु है। इसमें 268 अक्षर हैं। यह उत्कीर्ण चावल 11 सितम्बर 1939 को महाराव उम्मेदसिंह की सालगिरह पर दिल्ली के फतह संग्रहालय द्वारा तैयार कर भेंट किया गया था।

चित्रशाला कक्ष

चित्रशाला कक्ष में 10वीं से 19वीं शताब्दी के लघुचित्रों को प्रदर्शित किया गया है। प्रदर्शित लघुचित्रों में कृष्णलीला (नामकरण, कृष्ण लालन, बाल-लीला, माखन चोरी, गौ-चारण, कालियादमन, रासक्रीड़ा, केशि वध, तृणावत वध, बकासुर वध, दावानल पान आदि) से सम्बन्धी चित्र, सांस्कृतिक उत्सवों, होली, गणगौर, घुड़-दौड़, शिकार आदि के चित्र प्रदर्शित किए गए हैं। 18वीं-19वीं सदी के कुछ चित्रों में बहुत ही रोचक चित्रण दर्शाया गया है। एक हाथी ने दूसरे हाथी पर अपना दांत गड़ाकर उसे लहूलुहान कर दिया है। दूसरा भी हार मानने को तेयार नही है। वह झुक कर शत्रु हाथी के पैर में सूंड डालकर पटखनी देने का प्रयास कर रहा है।


पतंगबाजी, कोटा पेंटिंग, 19वीं शती

स्वतन्त्रता संग्राम कक्ष

स्वतन्त्रता संग्राम कक्ष में हाड़ौती क्षेत्र के ई. 1857 के स्वतन्त्रता संग्राम के दो चित्रों का प्रदर्शन किया गया है। ई.1857 से स्वतन्त्रता प्राप्ति तक के संग्राम में अपना सर्वस्व उत्सर्ग करने वाले कतिपय स्वतन्त्रता सेनानियों का योगदान, उनके छायाचित्रों के माध्यम से प्रदर्शित किया गया है।

संग्रहालय भवन

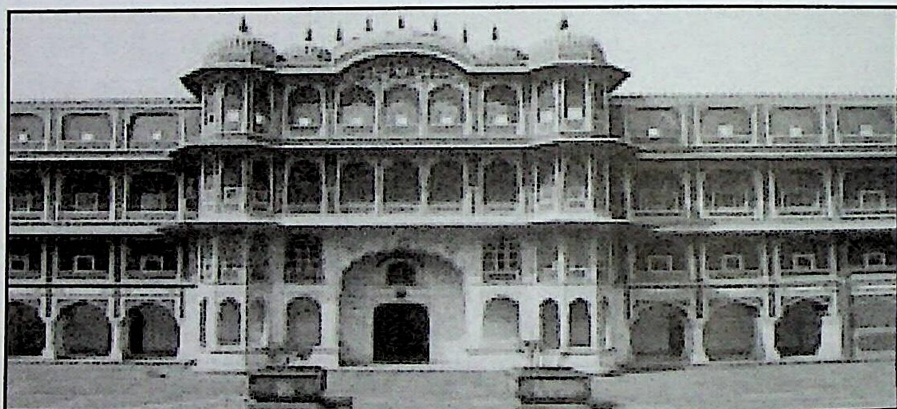
संग्रहालय भवन अर्थात् ब्रज विलास भवन राज्य सरकार द्वारा संरक्षित स्मारक है। भवन के कक्षों की जालियाँ, झरोखे, घुमावदार तथा उन पर टिके हुए तिकोन, आयाताकार छज्जे, चौकोर एवं गोलाकार स्तम्भों पर टिकी छज्जों से युक्त छतरियाँ एवं बरामदे आदि स्थापत्य शिल्प उत्तर मध्यकालीन राजपूत स्थापत्य शैली का सुन्दर नमूना है। रियासती काल में यह भवन अनेक महत्वपूर्ण प्रयोजनों जैसे कोटा राज्य शासकों की अन्य शासकों के साथ गुप्त संधियाँ, मन्त्रणाएं, विभिन्न उत्सवों पर कोटा महाराव द्वारा अपने सगे-सम्बन्धियों, सरदारों, उमरावों आदि को दिए जाने वाले भोज हेतु उपयोग में आता रहा था। इस प्रकार ब्रज विलास संग्रहालय भवन अपने में हाड़ौती अंचल की पुरातात्विक, ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक धरोहर को संजोए हुए है।

बावड़ी

संग्रहालय परिसर में बनी हुई एक मध्यकालीन बावड़ी भी दर्शनीय है।



राव माधोसिंह ट्रस्ट संग्रहालय, कोटा



राजस्थान के हाड़ौती अंचल में पर्यटन हेतु आने वाले देशी एवं विदेशी पर्यटकों में जिन दर्शनीय स्थानों पर जाने की ललक दिखाई देती है, उनमें कोटा नगर के प्राचीन गढ़ परिसर स्थित महलों में गैर सरकारी स्तर से संचालित किया जा रहा राव माधोसिंह ट्रस्ट संग्रहालय प्रमुख है। इस संग्रहालय की स्थापना कोटा एवं हाड़ौती अंचल की कला, संस्कृति एवं ऐतिहासिक धरोहर के संरक्षण एवं प्रदर्शन के लिए उद्देश्य से राजस्थान दिवस पर 30 मार्च, 1970 को की गई थी। राजमहल के मुख्य प्रवेश द्वार 'हथिया पोल' से प्रवेश कर इस संग्रहालय में पहुंचा जाता है। हथिया पोल में दोनों ओर स्थित कलात्मक हाथियों को कोटा शासक महाराव भीमसिंह (प्रथम) (वि.सं. 1764-1777) बूंदी से लाया था और उसने ही द्वार पर स्थापित करवाया था। हथियापोल से प्रवेश करने पर पहले कोटा राजपरिवार के आराध्य देव बृजनाथजी का मंदिर आता है। मंदिर के प्रवेश द्वार के समीप बोरसली की ड्योढ़ी से अंदर जाने पर विशाल खुला चौक आता है जो राजमहल का आन्तरिक चौक है। यहीं पर संग्रहालय के विविध कक्ष बने हुए हैं जिनमें प्रदर्शित प्राचीन सामग्री दर्शकों को लुभाती है। इस संग्रहालय को चित्रकला की दृष्टि से अनुपम माना जाता है।

संग्रहालय के दरबार हाल की पुरा-वस्तुओं में महाराव उम्मेदसिंह (द्वितीय) की आदमकद आकर्षक मूर्ति, राजसी साजो समान, विभिन्न प्रकार के वाद्ययंत्र यथा-पैरों से बजाए जाने वाला हारमोनियम, सुबिर वाद्य बांकिया, करनाल, ईसर गणगौर की प्रतिमाएं, 120 पत्तों का खेल गंजीफा, चौपड़, खिलौने, राजसी वस्त्र तथा उन्हें रखने का पिटारा,

हाथीदांत, संगमरमर तथा चीनी मिट्टी की कलात्मक वस्तुएं केरोसीन से चलने वाला पंखा, सवारी में प्रयुक्त होने वाला सुनहरी हौदा, राजचिह्न का कलात्मक वस्त्र, चांदी का हौदा, हाथी दांत एवं धातुओं की चौपड़, चांदी के खिलौने तथा अन्य कलात्मक वस्तुएं यथा सिंहासन, सुनहरी महाजन, पालकियां, श्रीनाथजी का सिंहासन एवं बाजोट, चांदी के दीप स्तम्भ, मीनाकारी तथा जड़ाऊ के काम का ठाकुरजी का पालना, तैरने के तूम्बे, कलमदान, सिद्धयंत्र, राजसी हुक्के, झाला जालिमसिंह के नहाने का 29 सेर वजन का पीतल का चरा, संगमरमर का कलात्मक ऐरावत, कमर में बांधा जा सकने वाला कलमदान आदि सैकड़ों कलात्मक, दुर्लभ एवं आकर्षक वस्तुएँ हैं। दरबार हाल के बाहर बरामदे में जलघड़ी, धूपघड़ी, खगोल यंत्र प्रदर्शित हैं। राजमहल चौक में पुरानी नौबतें रखी हैं, जिसमें मुकुन्द सिंह के काल की नौबत भी है जो कोटा रियासत का द्वितीय शासक था।

शस्त्र कक्ष

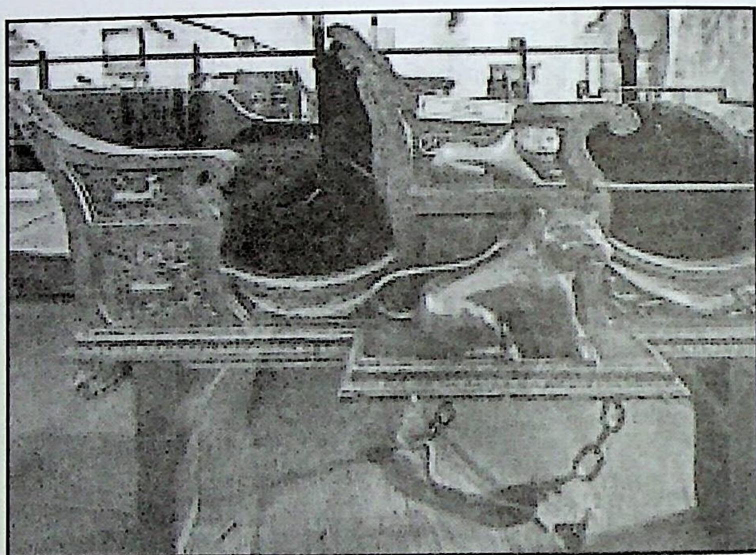
दरबार के आगे राजमहल के दाहिनी ओर की गैलेरी में मध्ययुगीन अस्त्र-शस्त्रों के अलावा कोटा के शासकों द्वारा काम में लिए गए शस्त्र भी प्रदर्शित हैं। एक म्यान में दो तलवारें, पिस्तौल सहित तलवार, ढालें, अनेक आकार की कटारें, भाले, बरछे, नेजे, तीर-कमान, फरसा, गदा, खुखरी, गुप्तियां, छड़ियां, खंजर, पेशकब्ज, कारद, बन्दूकें, सुनहरी पिस्तौल के अलावा राज्य का झण्डा, निशान, सुनहरी चोब, सुनहरी मोरछल एवं चंवर दर्शनीय हैं। सोने का मुगल-कालीन राजकीय चिह्न माही मरातिब' भी इसी कक्ष में देखा जा सकता है। कोटा नरेश महाराव भीमसिंह (प्रथम) को उनकी विशिष्ट सेवाओं के लिए मुगल बादशाह मोहम्मदशाह ने ई.1720 में प्रदान किया था। इसी मुगल शासक द्वारा प्रदत्त सर्वधातु की नक्कारा जोड़ी तथा योद्धा एवं अश्व को पहनाने का जिरह बख्तर भी माधोसिंह संग्रहालय की अनूठी चीजें हैं।

वन्यजीव कक्ष

इस कक्ष में कोटा के राजपरिवार के सदस्यों द्वारा शिकार के दौरान मारे गए चुनिन्दा वन्य जीव हैं, जिनमें शेर, तेन्दुआ, सिंह, सांभर, भालू, घड़ियाल, गौर मछली, खरमौर एवं काले तीतर आदि सम्मिलित हैं। सैकड़ों वर्षों पूर्व मारे गए जीव-जन्तु विशेष तकनीक से सुरक्षित रखे हुए हैं, जो आज भी जीवन्त प्रतीत होते हैं।

छायाचित्र कक्ष

वन्यजीव कक्ष से सटे छायाचित्र कक्ष में ई.1880 से वर्तमान काल तक के अनेक छायाचित्र प्रदर्शित हैं। ई.1857 की क्रान्ति के दौरान कोटा में किस स्थान पर क्या घटना घटित हुई थी, इसका चित्रण यहाँ प्रदर्शित एक मानचित्र में किया गया है। यह नक्शा कोटा के पूर्व महाराव बृजराज सिंह ने तैयार किया है।



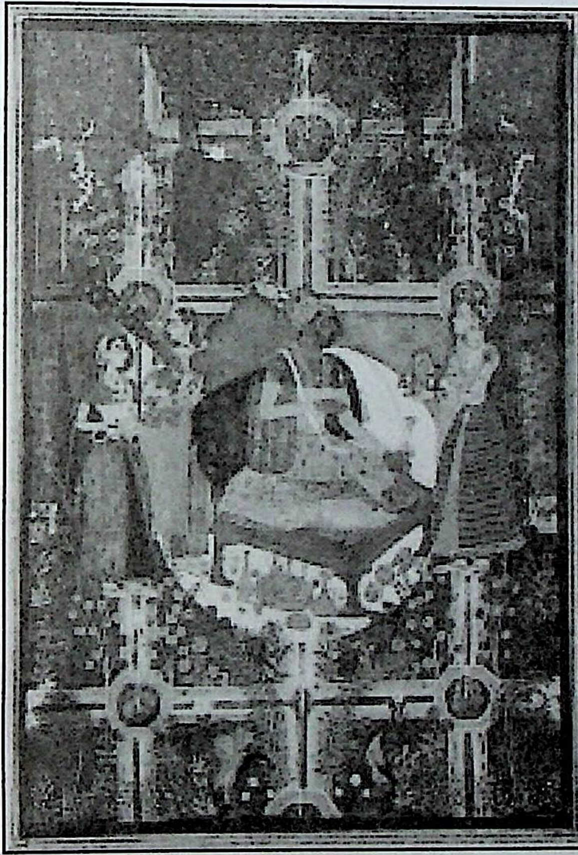
चित्र कक्ष

इस कक्ष में मुगल तथा कोटा-बूंदी के चित्रों को प्रदर्शित किया गया है। चित्रकारों द्वारा बनाए गए इन कलात्मक चित्रों में गज एवं अश्व में विश्व दर्शन, श्रीनाथजी का नवनिधि चित्र जिसमें गोस्वामी बालकों को विशेष वेशभूषा में दर्शाया गया है, कोटा चित्र शैली के प्रतिनिधि चित्र हैं।

राजमहल कक्ष

यह कक्ष भी संग्रहालय का ही हिस्सा है, जिसमें अभी भी राजगद्दी की प्रतिकृति रखी है। रियासत काल में यहीं पर दरीखाना भी होता था। दरबार राजगद्दी पर बैठते थे और उमराव, सामन्त, उच्च अधिकारी, राज मान्यता प्राप्त विशिष्ट जन हाड़ौती की राज दरबारी पोशाक में अपने-अपने निर्धारित स्थान पर बैठते थे। इस कक्ष में कांच की कारीगरी का काम मुगलयुगीन है। कांच की कारीगरी में मीनाकारी, डाक की जड़ाई, जामी कांच की जड़ाई, गोलों के कांच की जड़ाई, साणा की जड़ाई कोटा के बेगरी परिवार के शिल्पकारों द्वारा निर्मित है। राजमहल की दीवारों में सफेद चूने में गहरे नीले, हरे तथा कत्थई रंगों के कांच का काम दर्शनीय है। इसी कक्ष में कोटा राज्य का केसरिया गरुड़ ध्वज एक चित्र पर प्रदर्शित है। दाहिनी ओर कोटा राज्य का सुन्दर नक्शा, बाईं ओर बूंदी राजघराने का वंशवृक्ष तथा उसी के पास कोटा राजघराने का वंशवृक्ष प्रदर्शित किया गया है। एक बड़े चार्ट में दरीखाने में उपस्थित व्यक्तियों की बैठने की स्थिति दर्शायी गई है।

राजमहल की ऊपरी मंजिल के अधिकांश कक्ष चित्रित हैं जिनमें लक्ष्मी भंडार तिबारी, अर्जुन महल, छत्र महल में कोटा शैली के अनुपम भित्तिचित्र बने हैं। भीम महल



में लगे कालीन बहुत सुन्दर एवं कलात्मक हैं जिन्हें कोटा जेल के कैदियों ने बनाया था। तीसरी मंजिल पर स्थित बड़ा महल का निर्माण कोटा के प्रथम शासक राव माधोसिंह (वि.सं. 1681-1705) ने करवाया था। इस महल में राजस्थान की सभी चित्र शैलियों में बनाए गए भित्तिचित्र प्रदर्शित हैं। पूरा महल चित्रों से भरा हुआ है। सवारी, दरबार और उत्सव आदि विविध विषयों को कलमकारों ने प्राकृतिक रंगों से चित्रित किया है। महल के ब्राह्य कक्ष में अधिकांश चित्र कांच के फ्रेम में दीवार पर जड़े हुए हैं। इसी से लगा हुआ एक आकर्षक झरोखा है, जिसे 'सूरज गोख' कहते हैं। इसमें रंगीन कांच का काम बड़ा ही सुन्दर बन पड़ा है।



अध्याय - 24

राजकीय संग्रहालय, झालावाड़



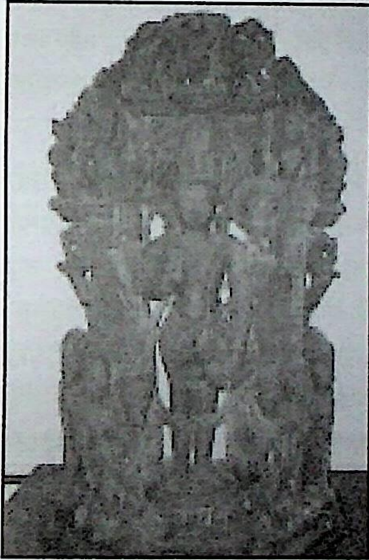
ऊर्ध्व रेतस शिव

हाड़ौती क्षेत्र की सांस्कृतिक धरोहर को संरक्षित करने के लिए ई.1915 में झालावाड़ राज्य में हाड़ौती क्षेत्र का पहला संग्रहालय स्थापित किया गया। उस समय इसका नाम आर्कियोलॉजिकल म्यूजियम रखा गया। झालावाड़ के तत्कालीन महाराजा सर भवानीसिंह (ई.1874-1929) की इस संग्रहालय की स्थापना एवं वृद्धि में गहन रुचि रही। उनके संरक्षण में संग्रहालय में हाड़ौती क्षेत्र के विभिन्न स्थानों से पुरासामग्री, शिलालेख, प्रतिमाएँ, सिक्के, हस्तलिखित ग्रंथ, अस्त्र-शस्त्र, दुर्लभ चित्र तथा हस्तशिल्प का संकलन कर संग्रहालय की श्रीवृद्धि की गई। वर्तमान में यह संग्रहालय राजस्थान सरकार के पुरातत्त्व एवं संग्रहालय विभाग के अधीन कार्य कर रहा है। वर्ष 2011 में इस संग्रहालय को गढ़-पैलेस में स्थानांतरित कर दिया गया, जहाँ यह आज भी काम कर रहा है।

हाड़ौती क्षेत्र में कोटा के आलनिया, गेपरनाथ, दरा, जवाहर सागर बांध, बारां के कन्यादह (कृष्ण विलास), कपिलधारा, बूंदी के गरड़दा, रामेश्वर, भीमलत, देवझर, नलदेह, केवड़िया, धारवा, पलका, सुई का नाका एवं झालावाड़ जिले के कालीसिंध एवं

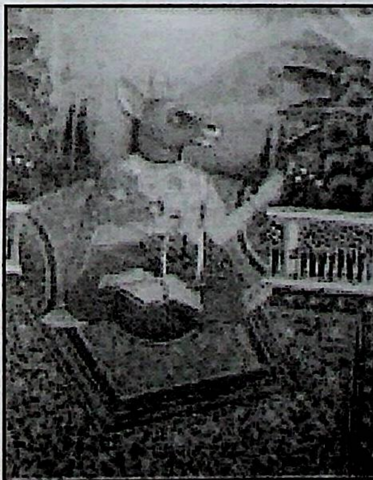
आहू के संगम पर गागरोन दुर्ग, आहू नदी के निकट भीलवाड़ी, आमझीरी नाला आदि क्षेत्रों से प्रस्तर युगीन मानव सभ्यता के अवशेष मिले हैं। इस सामग्री में से बहुत सी सामग्री राजकीय संग्रहालय कोटा में रखी गई है तथा शेष प्रतिमाएँ, पुरा सामग्री एवं कलाकृतियां झालावाड़ संग्रहालय में छह दीर्घाओं में प्रदर्शित की गई हैं।

प्रतिमा दीर्घा



हरिहर

झालावाड़ संग्रहालय में प्रमुख रूप से हाड़ौती क्षेत्र के ध्वस्त मंदिरों से प्रतिमाएँ लाकर संग्रहित की गई हैं। प्रत्येक कालखण्ड के मूर्तिकारों ने अपने काल को अलग दिखाने के लिए अपनी प्रतिमाओं में कुछ विशिष्ट चिह्न बनाए हैं, जिनके आधार पर प्रतिमाओं के निर्माण काल का अनुमान लगाया जा सकता है। इन प्रतिमाओं के आधार पर कहा जा सकता है कि चौथी शताब्दी ईस्वी से लेकर बारहवीं शताब्दी ईस्वी तक इस क्षेत्र में मूर्तिकला का निरंतर विकास होता रहा। इन प्रतिमाओं में गुप्तकालीन प्रतिमाओं को देवी-देवताओं के शरीर के गठीलेपन के आधार पर पहचाना जाना संभव है। गुप्त काल के बाद की प्रतिमाओं में यह लक्षण शनैःशनैः कम होता चला गया है तथा उनके आभूषणों एवं वस्त्रों का अंकन बढ़ता चला गया है। जहाँ से ये प्रतिमाएँ लाई गई हैं, उन मंदिरों के अवशेष आज भी जंगलों में बिखरे पड़े हैं। झालावाड़ संग्रहालय की प्रतिमाएँ भले ही गुप्तकाल के लगभग पांच सौ साल बाद की हैं, किंतु इनका वैभव किसी भी प्रकार कम नहीं है। शिल्पकारों ने नृत्यांगनाओं के अंगों की मांसलता, मुखमण्डल की कमनीयता एवं ऐन्द्रिक तृप्ति का भाव दर्शाने में किंचित भी कंजूसी नहीं बरती है। उन्नत उरोज, विशाल आंखें, लम्बी बाहें, पुष्ट जंघाएं एवं रमणभाव से खड़े होने की मुद्रा, दर्शक को बरबस अपनी ओर आकर्षित करती हैं।

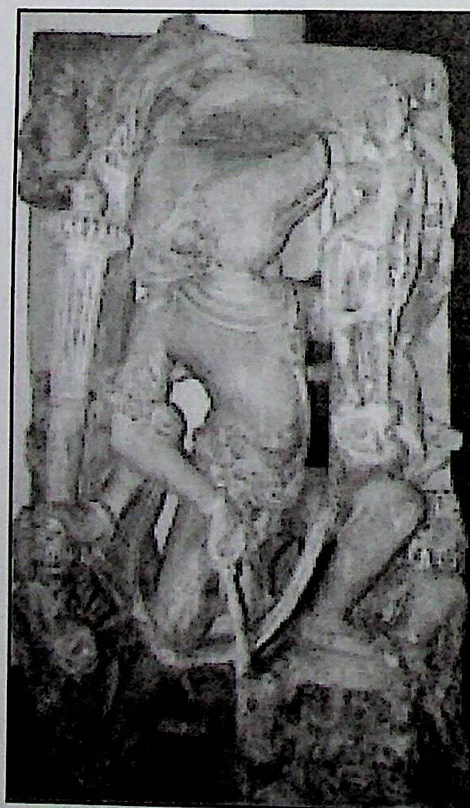


संग्रहालय में प्रदर्शित गदर्भमुखी देव चित्र

दलहनपुर के देवालयों में निर्मित

सभामण्डप एवं रंगमण्डप के गोलाकार स्तम्भों पर मूर्तिकला का अद्भुत अंकन किया गया है। दलहनपुर एवं सूर्यमंदिर झालरापाटन इस क्षेत्र की प्राचीन स्थापत्य कला शैली का प्रतिनिधित्व करते हैं। संग्रहालय में रखी गई अधिकांश प्रतिमाएँ अपेक्षाकृत अच्छी अवस्था में हैं। संग्रहालय के मुख्य हॉल एवं बरामदे में काकूनी, अटरू, विलास, रामगढ़, बारां आदि स्थालों से लाई गई प्रतिमाएँ प्रमुखता से प्रदर्शित हैं, जो 6ठी से 18वीं सदी की हैं। इनमें अर्द्धनारीश्वर, नरवाराह, चामुण्डा, चक्रपुरुष, लकुलीश, सूर्य, बटुक भैरव, सुर-सुंदरी आदि महत्वपूर्ण हैं। हाड़ौती क्षेत्र से वैष्णव, शैव, शाक्त, सौर, बौद्ध और जैन आदि विभिन्न सम्प्रदायों की प्रतिमाएँ उपलब्ध हुई हैं, जिन्हें इस संग्रहालय में एक साथ देखा जा सकता है।

वैष्णव प्रतिमाओं में चन्द्रभागा से प्राप्त 9वीं शताब्दी के वैकुष्ठ विष्णु (त्रिमुखी विष्णु), 10वीं शताब्दी की नरवराह प्रतिमा, बड़ी कलमण्डी (तहसील-पाटन) से प्राप्त 10वीं शताब्दी की महावराह प्रतिमा, शंखोधरा पाटन से प्राप्त 10वीं शताब्दी की वामनावतार प्रतिमा, देवगढ़ (डग) से प्राप्त 10वीं शताब्दी की शेषशायी विष्णु प्रतिमा, बिन्जोरी (तहसील-पाटन) से प्राप्त बालमुकुन्द आदि प्रस्तर प्रतिमाएँ प्रदर्शित की गई हैं। सूर्यमंदिर झालारापाटन से प्राप्त एक नृत्यांगना की प्रतिमा भी 10वीं शताब्दी ईस्वी की है, जिसे इस संग्रहालय में स्थान दिया गया है। कृष्ण बाललीला फलक रंगपाटन झालावाड़ से प्राप्त हुआ था। यह भी 10वीं शती ईस्वी का है। इसमें नदी के दोनों ओर भारतीय जनजीवन की झांकी का चित्रण है। नदी में मछली एवं अन्य जलचर दिखाए गए हैं। फलक के ऊपरी भाग में एक परिवार में स्त्री-पुरुष एवं तीन बच्चे दिखाए गए हैं। एक बच्चा स्त्री की गोद में बैठा है।



मेदिनी का उद्धार करते हुए वाराह रूपी विष्णु

फलक के बाएं हिस्से में ऊपर की ओर श्रीकृष्ण, शकटासुर का वध कर रहे हैं। पूतनावध एवं दधिमंथन के दृश्य भी अंकित हैं। महिलाओं के सिर पर आकर्षक जूड़ा बंधा हुआ है। नीचे की ओर माता यशोदा एवं बालकृष्ण का अंकन है। इनके नीचे शंख, कच्छप एवं

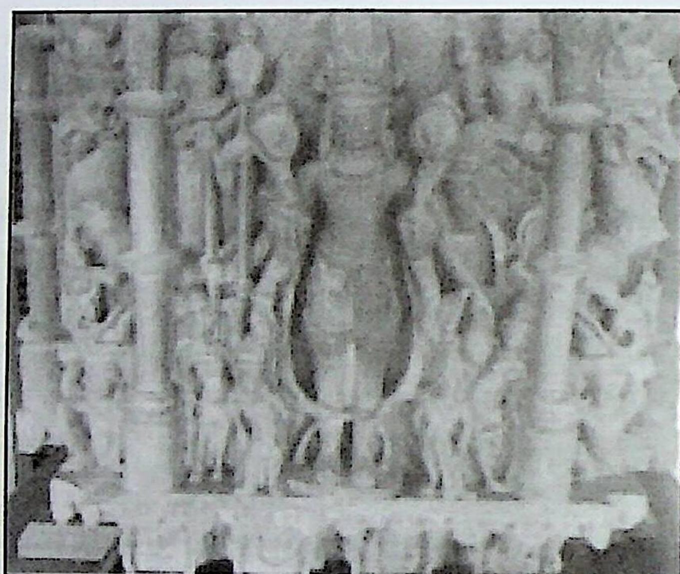
निधियां अंकित हैं।

10वीं शताब्दी ईस्वी की चतुर्मुखी ब्रह्मा की प्रतिमा लाल पत्थर से निर्मित है। इस प्रतिमा के चारों हाथ खण्डित हैं। मुख पर दाढ़ी का अंकन है, उदर भाग उभरा हुआ तथा कटि मेखला के ऊपर लटका हुआ है। ब्रह्मा के कानों में कुण्डल, गले में माला तथा भुजाओं में बाजूबंद हैं। दोनों ओर परिचारक एवं परिचारिकाएं अंकित हैं। एक प्रस्तर फलक में केशी वध का अंकन किया गया है। भवानीमण्डी के निकट खोड़ से प्राप्त यह प्रतिमा 10वीं शताब्दी ईस्वी की है। इस प्रतिमा में भगवान श्रीकृष्ण केशी नामक राक्षस का वध करते हुए दिखाए गए हैं। चतुर्भुज कृष्ण का दक्षिण ऊर्ध्वहस्त प्रहार करने की मुद्रा में है एवं दक्षिण निम्नहस्त में खड्ग का अंकन है। वाम ऊर्ध्वहस्त में चक्र का अंकन किया गया है जबकि वाम निम्नहस्त से भगवान, केशी के बल का प्रतिरोध कर रहे हैं।

एक प्रस्तर फलक में संगीत एवं नृत्य की सभा का अंकन किया गया है। मध्यकालीन मंदिरों में रंगमण्डपों का निर्माण आवश्यक रूप से होता था, जिनमें इस प्रकार की संगीत एवं नृत्यसभाओं का अंकन किया जाता था। झालावाड़ संग्रहालय में प्रदर्शित फलक 10वीं शताब्दी ईस्वी का है तथा इसे बारां जिले के काकूनी क्षेत्र से प्राप्त किया गया है। इसमें एक पुरुष वादक के हाथ में ढोलक, दूसरे के हाथ में मंझीरा बजाते हुए दर्शाया गया है। बीच में एक नर्तकी कत्थक नृत्य की मुद्रा में है। वादकों एवं नृतकी के पैर नृत्य की मुद्रा में हैं। उनकी शारीरिक रचना सुडौल है तथा सभी कलाकार युवावस्था में हैं।

कमलासन पर विराजमान सूर्य की 10-11वीं शताब्दी ईस्वी की एक प्रतिमा रंगपाटन से प्राप्त हुई है। सूर्य के दोनों हाथों में कमल दल हैं। सूर्य के पैरों में बूट हैं तथा शरीर पर कवच धारण कर रखा है जिससे यह सिद्ध होता है कि इस प्रतिमा पर पारसियों की मूर्ति कला का प्रभाव है। सूर्यदेव ने अपने गले में वनमाला धारण कर रखी है। कुबेर की प्रतिमा 10-11वीं शती ईस्वी की है। यह काकूनी से प्राप्त हुई थी, जो अब बारां जिले में है तथा झालावाड़ जिले की सीमा पर बहने वाली नदी के तट पर स्थित है। कुबेर ललितासन मुद्रा में हैं तथा उसके दाएं हाथ में धन की थैली है। दाईं ओर चंवरधारिणी का अंजलिब मुद्रा में सुंदर अंकन है।

शैव प्रतिमाओं में चन्द्रभागा (पाटन) से प्राप्त 8वीं शताब्दी की अर्द्धनारीश्वर प्रतिमा, 9वीं शताब्दी की नटराज प्रतिमा, 10वीं शतब्दी का त्रिमुखी शिव, उमामहेश्वर प्रतिमा, रंगपाटन से प्राप्त 11वीं शताब्दी की अन्धकासुरवध प्रतिमा, डग से प्राप्त लकुलीश प्रतिमा, शंखोधरा से प्राप्त 10-11वीं शताब्दी की भैरव एवं गणेश प्रतिमाएँ आदि प्रदर्शित हैं। चंद्रावती से प्राप्त 8वीं शताब्दी की अर्द्धनारीश्वर प्रतिमा चतुर्भुजी है जिसमें दायीं तरफ शिव विराजमान हैं। उनका दायां मुख्य हाथ नंदी के ऊपर रखा हुआ



हरिहर पितामह मार्तण्ड

है, इस हाथ में कड़ा धारण किया हुआ है तथा ऊपरी दायें हाथ में त्रिशूल धारण किया हुआ है। त्रिशूल के पीछे सर्प का सुंदर अंकन है। बायीं ओर के हिस्से में पार्वती उत्कीर्ण हैं। उनका बायां ऊपरी हाथ खण्डित है तथा नीचे के हाथ में चूड़ियां धारण की हुई हैं। पुरुष भाग में ऊर्ध्व रेतस एवं स्त्री भाग में योनी का अंकन किया गया है।

मेदिनी का उद्धार करते हुए वाराह रूपी विष्णु चंद्रभागा एवं कालीसिंध के संगम पर गोविंदपुरा नामक स्थान से 8वीं शती ईस्वी की लकुलीश की एक प्रतिमा मिली है। यह प्रतिमा मुकुटाकृति (शुकनास) गवाक्ष में पद्मासन में विराजमान है। प्रतिमा के दो हाथ हैं, जिनमें से दायां हाथ अभय मुद्रा में है तथा बायें हाथ में लकुटी है। लकुलीश को ऊर्ध्व-रेत्स अवस्था में उत्कीर्ण किया गया है। लकुलीश के दोनों ओर लंगोटधारी परिचारकों का अंकन है। दायें हाथ की तरफ वाले साधु के सिर पर बालों का अंकन कोटा संग्रहालय के झल्लरीवादकों के सिर के बालों जैसा है। लकुलीश की यह प्रतिमा ठीक वैसी ही है, जैसी कि इस श्लोक में वर्णित है-

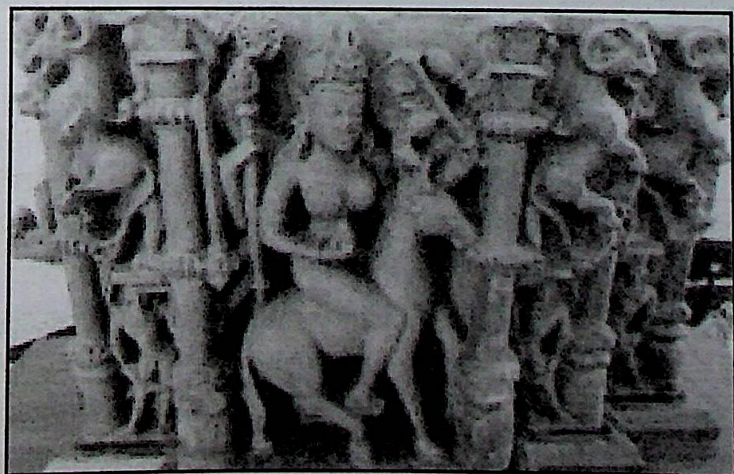
लकुलीश ऊर्ध्वमेढ पद्मासन सुंस्थितम्।
दक्षिणे मातुलिंग च वामे च दण्डप्रकीर्तितम्।।

नृत्यरत अष्टभुजी शिव का भी एक फलक दर्शनीय है। यह भी 10वीं शताब्दी ईस्वी का है तथा शिव के हाथ एवं पैर नृत्य की मुद्रा में हैं। दोनों ऊर्ध्व भुजाओं में सर्प लिपटा हुआ है। दाएं मध्य हस्त में बाण, दाएं अधोहस्त में त्रिशूल है, बाएं मध्य हस्त में धनुष, बाएं अधोहस्त में खट्वांग धारण कर रखा है। प्रतिमा के दोनों ओर आयताकार पुष्प एवं व्यालों का अंकन है।

10वीं शती की कल्याण सुंदर प्रतिमा भी लाल बलुआ प्रस्तर से निर्मित है। इस प्रतिमा में भगवान शिव एवं पार्वती के विवाह का दृश्य अंकित है। भगवान शिव, अपने वाम भाग में खड़ी पार्वती का वरण कर रहे हैं। चतुर्बाहु शिव विभिन्न आभूषणों से सुसज्जित हैं। पार्वती के नेत्र धरती की तरफ झुके हुए हैं। उनके मुख पर नववधू का संकोच दिखाई दे रहा है। शिव दाएं ऊर्ध्व हस्त में त्रिशूल धारण किए हुए हैं तथा दूसरे हाथ से पार्वती की हथेली पकड़े हुए हैं। उनके बाएं ऊर्ध्व हस्त में नाग है तथा बाईं तरफ का दूसरा हाथ पार्वती के कंधे पर है। गोलाकार स्तम्भों के बीच शिव एवं पार्वती को प्रभामण्डल से सम्पन्न दर्शाया गया है। आसपास परिचारिकाएं एवं शार्दूल का अंकन है।

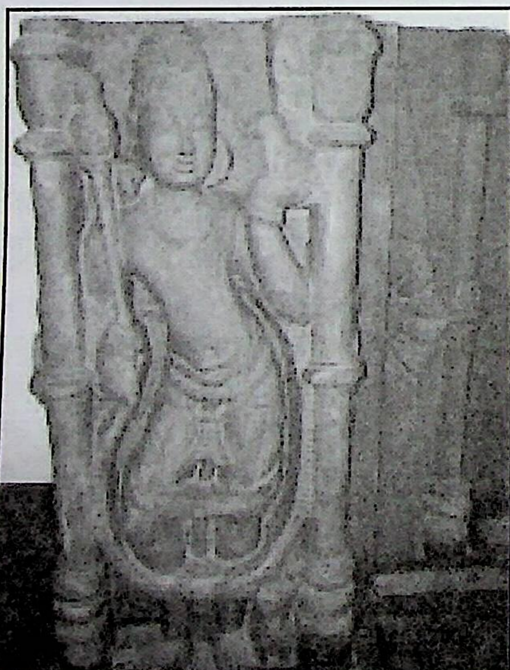
10वीं शताब्दी ईस्वी की अंधकासुर वध की प्रतिमा रंगपाटन झालावाड़ से प्राप्त की गई थी। यह भी लाल बलुआ पत्थर की है। इस प्रतिमा में छह भुजाओं वाले शिव द्वारा अंधकासुर के वध करने का दृश्य अंकित किया गया है। दोनों तरफ के ऊर्ध्वहस्तों में भगवान ने सर्प धारण कर रखे हैं। दाएं मध्यहस्त में डमरू तथा दाएं अधोहस्त में खड्ग है। बाएं ऊर्ध्वहस्त में ढाल है। शिव ने अंधकासुर को त्रिशूल से बेधकर ऊपर उठा रखा है। शिव का बायां पैर एक अन्य राक्षस की पीठ पर रखा है। एक योगिनी, अंधक का रक्तपान कर रही है। प्रतिमा में दोनों ओर त्रिभंग मुद्रा में सेवक-सेविकाओं एवं शार्दूल का अंकन किया गया है।

शाक्त प्रतिमाओं में 8वीं शताब्दी की चन्द्रभागा (पाटन) से प्राप्त चामुण्डा प्रतिमा, पाटन से प्राप्त 10वीं शताब्दी की वाराही प्रतिमा, झूमकी (पाटन) से प्राप्त 11वीं शताब्दी की महिषासरमर्दिनी आदि महत्त्वपूर्ण प्रतिमाएँ प्रदर्शित हैं। स्थानक सुंदरी की प्रतिमा 9वीं शताब्दी ईस्वी की है। इसे झालरापाटन में बहने वाली चन्द्रभागा नदी के किनारे से प्राप्त किया गया था।



गदर्भ पर सवार शीतला, ऊपरी भाग में नर मेष उत्कीर्ण हैं

संयुक्त देव प्रतिमाओं में रंगपाटन से प्राप्त 10वीं शताब्दी की मार्तण्ड-भैरव, चन्द्रभागा से प्राप्त पूर्व मध्यकालीन सूर्य-नारायण प्रतिमा, चन्द्रभागा से ही प्राप्त 10वीं शताब्दी की हरिहर प्रतिमा, पितामह मार्तण्ड प्रतिमा, काकूनी, रंगपाटन आदि स्थलों से प्राप्त संयुक्त देव प्रतिमाएँ प्रदर्शित हैं। हरिहर की प्रतिमा 10वीं शताब्दी ईस्वी की है तथा बारां जिले के काकूनी से प्राप्त की गई है। इस चतुर्भुजी प्रतिमा के आधे दक्षिण भाग में शिव एवं वाम भाग में विष्णु का अंकन है। दक्षिण ऊर्ध्वहस्त में त्रिशूल एवं अधोहस्त में पुष्प है। वाम ऊर्ध्वहस्त में चक्र एवं अधोहस्त में शंख है। देव प्रतिमा विभिन्न आभूषणों से अलंकृत है। शिव की तरफ वाले भाग में नीचे की तरफ नंदी का अंकन है। दोनों ओर तीन-तीन परिचारक खड़े हुए हैं।



हाथों में खट्वांग एवं कुक्कुट धारण किए हुए यमराज

जैन प्रतिमाओं में तीर्थंकर अजितनाथ की 9वीं शती ईस्वी की प्रतिमा बलुआ लाल पत्थर की है। अजितनाथ को कायोत्सर्ग मुद्रा में प्रदर्शित किया गया है। सुसज्जित परिकर के ऊपरी भाग में घटाभिषेक का दृश्य अंकित है। दोनों ओर रथिका में एक-एक तीर्थंकर को पद्मासन में बैठे हुए दर्शाया गया है। पाद पीठ पर अजितनाथ के चिह्न के रूप में हाथी का अंकन है। झालरापाटन से प्राप्त 10वीं शताब्दी की सर्वतोभद्र प्रतिमा, रतनपुरा से प्राप्त 10वीं शताब्दी की अजितनाथ प्रतिमा, गागरोन से प्राप्त 10वीं शताब्दी की वृषभनाथ प्रतिमा, काकूनी से प्राप्त चक्रेश्वर प्रतिमा, पंचपहाड़ से प्राप्त 16वीं शताब्दी की वासुपूज्य प्रतिमा, पार्श्व नाथ आदि प्रतिमाएँ प्रदर्शित हैं।

कोटा-झालावाड़ क्षेत्र में बौद्धों की हीनयान शाखा का प्रभाव रहा है। यहाँ बौद्धों के कुछ आश्रम एवं उपाश्रय स्थित थे। इसलिए इस क्षेत्र से कतिपय बौद्ध मूर्तियां भी प्राप्त हुई हैं। 10वीं शती ईस्वी के एक प्रस्तर फलक में शिल्पकार द्वारा गुरुकुल आश्रम में दो बौद्ध गुरुओं एवं दो शिष्यों का अंकन किया गया है। दोनों साधुओं के बीच में खड़े बालक के सिर पर बालों का अंकन राजकुमार सिद्धार्थ के सिर के बालों जैसा है।

राजकुमार सिद्धार्थ को गुरुओं के उपदेशों को ध्यानमग्न होकर सुनते हुए प्रदर्शित किया गया है। इन प्रतिमाओं पर गांधार, यूनानी एवं ईरानी मूर्तिकला का मिश्रण का प्रभाव परिलक्षित होता है।

शिलालेख दीर्घा


महिषासुर मर्दिनी, झालरापाटन, 8वीं शती

झालावाड़ संग्रहालय में पहली शताब्दी ईस्वी पूर्व से लेकर 19वीं शताब्दी ईस्वी तक की अवधि के कई प्राचीन शिलालेख प्रदर्शित किए गए हैं। कालाजी (जिला बारां) से प्राप्त कुई का अभिलेख प्रथम शताब्दी ईस्वी पूर्व का है। बारां से प्राप्त तीसरी शताब्दी ईस्वी का लेख ब्राह्मी लिपि में है। गंगधार नरेश नरवर्मन के पुत्र विश्ववर्मन का ई. 423 का शिलालेख उल्लेखनीय है, इसमें विष्णु के आयुध तथा भेदभाव का उल्लेख किया गया है। इस शिलालेख से ज्ञात होता है कि परम वैष्णव सचिव मयूराक्ष ने तांत्रिक दर्शन के अन्तर्गत मातृकाओं के पवित्र स्थान का भी निर्माण करवाया था। वैष्णव मतावलम्बी द्वारा तांत्रिक शैली के देवस्थान का निर्माण किया जाना उस युग के इतिहास की महत्त्वपूर्ण घटना है। चन्द्रावती (झालरापाटन) के चंद्रमौलेश्वर मंदिर का ई.689 का शिलालेख तथा यहीं से प्राप्त वि. स. 746 का राजा दुर्गमण का शिलालेख भी प्रदर्शित किए गए हैं। कंसुआ (जिला कोटा) के शिवमंदिर से प्राप्त 8वीं शताब्दी का शिलालेख, शेरगढ़ (जिला बारां) का 9वीं शताब्दी का बौद्ध परम्परा का शिलालेख भी उल्लेखनीय हैं। मगननाथ की डूंगरी (झालरापाटन) से प्राप्त उदयादित्य का ई.1086 का शिलालेख भी प्रदर्शित किया गया है। तुलसीराम के कुण्ड (झालरापाटन) से प्राप्त वि.स. 1193 का लेख भी महत्वपूर्ण है। रामगढ़, किशनगढ़, बारां से ई.1162-75 के शिलालेख, बड़वा, अंता तथा मध्यकालीन इतिहास के अनेक शिलालेख प्रदर्शित हैं। ग्राम बेड़ला (गंगधार) से प्राप्त वि.स. 1687 का झाला दयालदास का शिलालेख तथा झालरापाटन से प्राप्त वि.सं. 1853 का झाला जालिम सिंह का अभिलेख भी प्रदर्शित किए गए हैं।

ई.1796 में कोटा राज्य के सेनापति झाला जालिमसिंह ने चंद्रावती नगर के

ध्वंसावशेषों से लगभग पौन किलोमीटर उत्तर में झालरापाटन नगर की स्थापना की। इस नवीन नगर में प्राचीन चंद्रावती नगर के ध्वस्त अवशेषों की सामग्री काम में ली गई। जालिमसिंह ने झालरापाटन नगर के मध्य में एक पत्थर लगावाया, जिस पर राजकीय घोषणा अंकित करवाई कि जो व्यक्ति इस नगर में आकर रहेगा उससे चुंगी नहीं ली जाएगी तथा यदि उसे राज्य की तरफ से अर्थ-दण्ड दिया गया है तो उसे क्षमा कर दिया जाएगा। इस घोषणा ने मारवाड़ तथा हाड़ौती क्षेत्र के व्यापारियों को तेजी से आकर्षित किया जिससे झालरापाटन एक समृद्ध नगर बन गया। ई.1850 में राजा पृथ्वीसिंह के कामदार ने यह पत्थर झील में फैंक दिया तथा ई.1796 की घोषणा को वापस ले लिया। ई.1876 में यह पत्थर पुनः झील से बाहर निकाला गया। अब यह पत्थर झालावाड़ संग्रहालय में रखा हुआ है। यह 9 फुट लम्बा और डेढ़ फुट चौड़ा है।

मुद्रा दीर्घा

प्राचीन चिन्हित (आहत) मुद्राएं, कुषाण सिक्के, सातवाहन सिक्के, गुप्तकालीन स्वर्ण मुद्राएं, इण्डोससेनियन (गधैया सिक्के), कोटा-बूंदी-झालावाड़ रियासतों की मुद्राएं, इण्डोग्रीक एवं इण्डोनेशिया की रजत एवं ताम्र मुद्राएं इस संग्रहालय की अनुपम धरोहर हैं। मुद्राओं के साथ उनका संक्षिप्त विवरण भी लिखा गया है। पंचमार्क अथवा आहत मुद्राएं ई.पू.600 से ई.पू.200 तक की हैं। इनके अग्रभाग पर सूर्य, षडचक्र, तीन शिवलिंग, बच्चे के साथ खरगोश, कुत्ता, सात पत्तियों के झाड़ वाला गमला आदि बने हुए हैं। समुद्रगुप्त का चौथी शताब्दी ईस्वी का सिक्का ध्वज प्रकार का है जिसके अग्रभाग पर सम्राट की प्रतिमा उत्कीर्ण है। सम्राट सीधा खड़ा हुआ है तथा उसने बाएं हाथ को ऊपर उठाकर उसमें ध्वज धारण किया हुआ है। सम्राट का दायां हाथ हवन वेदिका में आहुति देते हुए दिखाया गया है। सम्राट के सामने की ओर विजय-ध्वज अंकित है जिस पर शक्ति एवं गति का प्रतीक गरुड़ विराजमान है। सिक्के के उसी भाग में ब्राह्मी लिपि में 'समरशतवितत विजयो जित रिपुरजितो दिवं जयति' अर्थात् सर्वत्र विजयी सम्राट जिसने सैंकड़ों युद्धों में विजय प्रात कर शत्रु को पराजित किया है, स्वर्गश्री की प्राप्ति करता है, अंकित है। सिक्के के पृष्ठभाग पर देवी लक्ष्मी की प्रतिमा उत्कीर्ण है। लक्ष्मी सिंहासन पर आरूढ़ हैं तथा उनके सिर के पीछे प्रभामण्डल का अंकन किया गया है। सिक्के के इसी भाग पर ब्राह्मी लिपि में पराक्रमः अंकित किया गया है। देवी के बाएं हाथ में कॉर्नुफोनिया एवं दाएं हाथ में पाश है। झालावाड़ रियासत का सिक्का चांदी से निर्मित है। इस पर दोनों ओर अरबी लिपि में लेख अंकित है। अग्रभाग पर 'मल्लिकाह मुआज्जमा विक्टोरिया सल्तनत इंग्लिस्तान' अंकित है। पृष्ठभाग पर 'मानूस मैमनत सनह् 39 जुलूस जरब झालावाड़' लिखा गया है। इस सिक्के का वजन 11.29 ग्राम है।

लघुचित्र एवं चित्रित ग्रंथ दीर्घा



संग्रहालय में प्रदर्शित काकमुखी देव चित्र

इस संग्रहालय में 18-19वीं शती के हस्तलिखित ताड़पत्र एवं दुर्लभ ग्रंथ प्रदर्शित किए गए हैं। इनमें भागवत, औतारचरित, भाषा चरित्र, नहरदान, भारट द्वारा लिखित चित्रग्रंथ प्रमुख हैं। पुरुषोत्तम महाकाव्य, ताड़ के पत्ते पर लिखित वर्णन आदि प्रमुख हैं। शालीहोत्र चित्रित ग्रंथ अश्वचिकित्सा से सम्बन्धित है। चित्रित अरब शाहनामा तथा कुरान भी प्रदर्शित हैं। हस्तलिखित चित्रित ग्रंथों में श्लोकों का चित्रानुवाद दिया गया है। चित्रों में हाथों से रंग भरे गए हैं। अधिकांश चित्रों के रंग आज भी अच्छी अवस्था में हैं।

लघुचित्र कला दीर्घा में वेद एवं देवचित्रों को प्रदर्शित किया गया है। चित्रवीथी में नायक-नायिका, बाहरमासा, विष्णु के दशावतार, विष्णु के चौबीस स्वरूप, कृष्ण लीला, लोकजीवन के प्रसंग भी प्रदर्शित हैं। कुछ चित्र जयपुर, बूंदी एवं किशनगढ़ शैली के हैं। एक चित्र में दो वृक्षों के मध्य छाया में चतुर्बाहु श्रीकृष्ण को शंख, चक्र, गदा एवं पद्म धारण किए हुए दिखाया गया है। भगवान के सम्मुख गौएं अपने बछड़ों के साथ खड़ी हैं। गौधन के पीछे ग्वालवृंद भी भगवान को प्रणाम करने की मुद्रा में अंकित हैं। भगवान के पीछे की ओर सेविकाएं मोरपंखी, चंवर आदि लिए खड़ी हैं। नदी में मछली, कमल, बत्तख, नाव तथा पक्षियों का अंकन किया गया है। इसे भगवान के संकर्षण स्वरूप का चित्र कहा जाता है। झालावाड़ संग्रहालय में कांच एवं कपड़े पर बने चित्र भी संकलित हैं।

हस्त-शिल्प दीर्घा

झालावाड़ संग्रहालय में 19वीं-20वीं शती की हस्तशिल्प सामग्री भी प्रदर्शित की गई है। संगमरमर के पत्थर पर कलात्मक कामसूत्र विषयक कलाकृतियां, हाथी, घोड़ा, देवी दुर्गा की प्रतिमा, हाथी दांत से बना पंखा, दूरबीन, चाकू, सलाइयां आदि प्रदर्शित हैं। एक कलात्मक ग्लोब में दीपक और भारत का नक्शा अंकित हैं। एक रैक में विभिन्न आकृतियों के सीप प्रदर्शित किए गए हैं। 19वीं शताब्दी में निर्मित रेशम का एक रूमाल भी संग्रहालय में प्रदर्शित किया गया है। संग्रहालय में 10वीं-12वीं शताब्दी ईस्वी की लकड़ी की एक मुड़ी हुई छड़ी रखी है जो गोल्फ अथवा हॉकी जैसा कोई खेल खेलने के काम आती रही होगी। यह 101 सेंटीमीटर लम्बी तथा 10 सेंटीमीटर मोटी है। रेशम

एवं मखमल के कपड़े से 18-19वीं शताब्दी में बनी एक पगड़ी भी प्रदर्शित है।

अस्त्र-शस्त्र दीर्घा

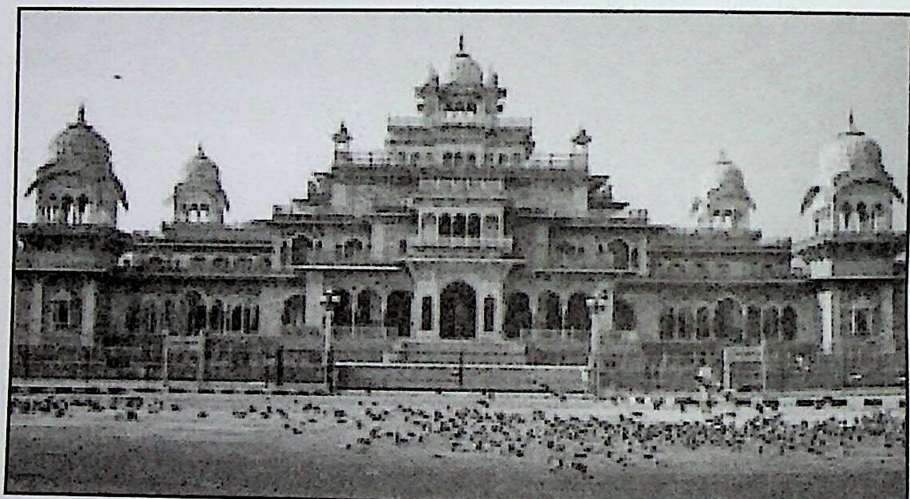
अस्त्र-शस्त्र दीर्घा में मध्ययुगीन हथियारों से लेकर 19वीं शती तक के अस्त्र-शस्त्र प्रदर्शित हैं। इनमें प्रथम महायुद्ध के दौरान काम में ली गई रिवॉल्वर उल्लेखनीय है। इसके अतिरिक्त तलवारें, ढालें एवं तीर-कमान आदि भी विषयवार प्रदर्शित हैं। विभिन्न आकृति की छुरियां एवं विभिन्न धातुओं से बने तलवारों के दस्ते भी दर्शनीय हैं। कुछ तलवारों पर मध्यकालीन अरबी लिपि में लिखावट की गई है तथा सोने एवं चांदी की कारीगरी की गई है। कलात्मक ढालों पर तहनिशां एवं जरनिशा का काम किया गया है।



जयपुर संभाग के संग्रहालय

अध्याय - 25

केन्द्रीय संग्रहालय, जयपुर (अल्बर्ट हॉल)



केन्द्रीय संग्रहालय जयपुर को अल्बर्ट म्यूजियम भी कहा जाता है। संग्रहालय भवन का शिलान्यास ब्रिटिश राजकुमार प्रिन्स ऑफ वेल्स प्रिंस अल्बर्ट द्वारा जयपुर नरेश रामसिंह (द्वितीय) के शासनकाल में 6 फरवरी 1876 को किया गया। उसी के नाम से इस संग्रहालय का नाम एल्बर्ट म्यूजियम रखा गया। इस संग्रहालय का कला संग्रह ई. 1881 में अस्थायी रूप से किशनपोल बाजार में स्थित वर्तमान स्कूल ऑफ आर्ट्स के भवन में रखा गया। संग्रहालय हेतु पुरा एवं कला सामग्री का संकलन जयपुर राज्य के अंग्रेज चिकित्सा अधिकारी कर्नल हैण्डले की देख-रेख में आरम्भ हुआ, जो कला विशेषज्ञ भी था। अल्बर्ट हॉल भवन का निर्माण अंग्रेज इन्जीनियर सर सैम्युअल स्विंटन जैकब की देखरेख में जयपुर के राजमिस्त्रियों चन्दर और तारा ने किया। स्थापत्य की दृष्टि से यह भवन महत्वपूर्ण है। इसमें हिन्दू, इस्लामी और ईसाई स्थापत्य शैलियों का मिश्रण देखने को मिलता है। भवन निर्माण में पांच लाख एक हजार छत्तीस रुपये व्यय हुए। महाराजा माधोसिंह (द्वितीय) (ई.1880-1922) के शासनकाल में ई.1886 में संग्रहालय, अल्बर्ट हॉल में स्थानान्तरित कर दिया गया। ई.1887 में सर एडवर्ड ब्रेडफोर्ड ने इसका विधिवत उद्घाटन किया।

अल्बर्ट म्यूजियम को शैक्षणिक संस्था का रूप दिया गया। इसमें इतिहास, भू-गर्भशास्त्र, अर्थशास्त्र, विज्ञान और कला आदि विषयों पर आधारित सामग्री भारत, ब्रिटेन, ईरान, मिश्र, बर्मा, लंका, जापान, तिब्बत, नेपाल आदि देशों से एकत्रित की गई।


यक्षी, वाराणसी, चौथी शताब्दी ईस्वी

कर्नल हैण्डले के पश्चात् कर्नल पैक, रॉबिन्सन पिशर आदि चिकित्सा अधिकारी इस संग्रहालय के अधिष्ठाता रहे, किंतु वे संग्रहालय विज्ञान का कोई ज्ञान नहीं रख्ते थे। कर्नल हैण्डले ने इस संग्रहालय में जिस सामग्री का संयोजन किया, वही संयोजन देश की आजादी तक चलता रहा। डॉक्टर दलजन सिंह प्रथम भारतीय अधिकारी थे, जो 1920 के लगभग इस पद पर रहे। राजस्थान के एकीकरण के पश्चात् ई.1950 में डॉ. सत्यप्रकाश श्रीवास्तव के नेतृत्व में राजस्थान राज्य के सभी संग्रहालयों को रखा गया। उसी समय अल्बर्ट म्यूजियम को राज्य स्तरीय केन्द्रीय संग्रहालय का रूप दिया गया।

देशी राज्यों में संग्रहालयों की छवि अजायबघर वाली थी। स्वतंत्र भारत में उस छवि को मिटाकर इन्हें शैक्षणिक संस्थाओं का स्वरूप प्रदान किया गया तथा राज्य के संग्रहालयों को शिक्षा विभाग के अधीन किया गया। संग्रहालयों के पुनर्गठन, परिवर्तन और साज सज्जा सम्बन्धी महत्वपूर्ण कार्य किए गए तथा संग्रहित सामग्री का विधिवत वर्गीकरण किया गया। ई.1959 में राज्य के संग्रहालय विभाग के अधिकारी डा. सत्य प्रकाश जनसामान्य को संग्रहालयों की ओर आकृष्ट करने हेतु अमेरिका से नवीन दृष्टिकोण लेकर आए। उनके निर्देशन में संग्रहालय में राजस्थान की विभिन्न जातियों एवं जनजातियों के मॉडल प्रदर्शित किए गए। इनमें राजपूत, मीणा, वणिक, भील, गाड़िया लुहार आदि जातियों के व्यक्तियों की रूपाकृति, वेशभूषा, आभूषण, उनके परिवेश आदि का प्रदर्शन किया गया तथा उन्हें आधुनिक प्रकार के 'शोकेस' में रखा गया।

देश में पहली बार जयपुर संग्रहालय में सांस्कृतिक कक्ष का निर्माण किया गया, जिसमें विभिन्न प्रकार के शास्त्रीय और लोक वाद्यों का प्रदर्शन किया गया। साथ ही होली, गणगौर तथा विवाह आदि के अवसर पर किए जाने वाले नृत्य तथा कत्थक आदि शास्त्रीय नृत्य एवं घूमर तथा डांडिया आदि लोक नृत्यों के दृश्य एवं 'मॉडल' प्रदर्शित



किए गए। दर्शकों को नृत्यों से सम्बन्धित गीत एवं संगीत सुनाने के लिए स्वचालित ध्वनियंत्र लगाए गए। यह प्रयोग अपने आप में अनूठा था तथा उस समय तक किसी अन्य संग्रहालय में उपलब्ध नहीं था। 'मॉडलों' के माध्यम से देशी-विदेशी पर्यटक राजस्थान की जनजातियों तथा उनके सामाजिक एवं सांस्कृतिक जीवन की जानकारी प्राप्त करने लगे। संग्रहालय में राजस्थान की हस्तकलाओं, पत्थर की कुराई, सोने एवं मीना का काम, हाथी दांत की कुराई, सुनहरी बर्तन, ऊँट के चमड़े के बर्तनों पर सुनहरी काम, पीतल की चिताई, थलाई एवं कुराई का काम, प्राचीन प्रतिमाओं, आयुधों एवं प्राचीन चित्रों के क्रमिक विकास को भी प्रदर्शित किया गया। प्रकाश व्यवस्था और शो केसों के नवीनीकरण एवं लेबलिंग की नवीन पद्धतियां प्रयोग में लाई गईं।



संग्रहालय में अस्थाई प्रदर्शनियाँ आयोजित की जाने लगीं, जिनसे देशी-विदेशी पर्यटकों को राजस्थान के कला-कौशल के बारे में जानने को मिला। तत्कालीन प्रधानमंत्री पं. जवाहरलाल नेहरू, उप राष्ट्रपति डा. सर्वपल्ली राधाकृष्णन, इन्दिरा गांधी, अरब के राष्ट्रपति कर्नल नासिर, नेपाल नरेश, ईरान के शाह, बंगलादेश के सांस्कृतिक मंत्री तथा अनेक देशी-विदेशी अतिविशिष्ट व्यक्तियों ने अल्बर्ट संग्रहालय का भ्रमण किया और संग्रहालय के नवीन रूप की प्रशंसा की। संग्रहालय की नीचे की मंजिल में राजस्थान की

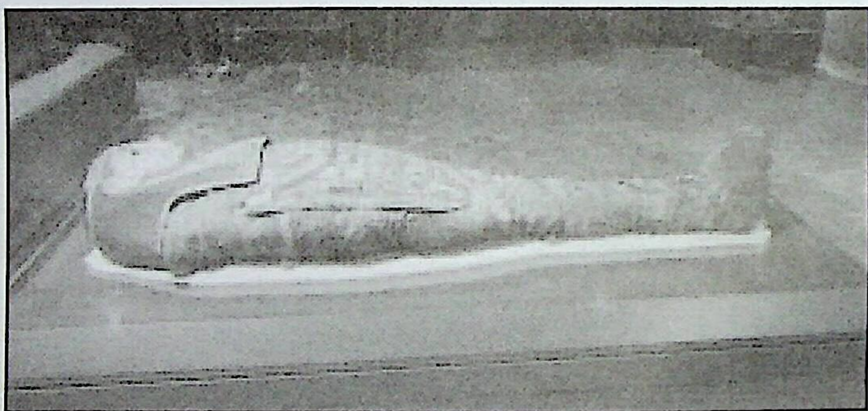
सांस्कृतिक झांकी प्रस्तुत की गई तथा ऊपर की दीर्घा में दाईं तरफ देश के विभिन्न प्रान्तों का कला-कौशल प्रदर्शित किया गया। बीच के तीन बड़े हॉल में प्राचीन लघु चित्रों को प्रदर्शित किया गया, जिनमें विभिन्न प्रकार की चित्र-शैलियों के चित्र उपलब्ध हैं। ऊपर की मंजिल में बाईं ओर की दीर्घा में भू-गर्भशास्त्र, प्राणीशास्त्र विज्ञान एवं शरीर विज्ञान सम्बन्धी मॉडल प्रदर्शित किए गए।

वर्तमान में इस संग्रहालय में 24,930 कला एवं पुरा वस्तुएं प्रदर्शित हैं जिनमें से मिस्त्र की ममी अत्यंत महत्वपूर्ण वस्तुओं में से है। अल्बर्ट हॉल में देश-विदेश के महंगे एवं कलात्मक गलीचों का प्रदर्शन किया गया है। इस विशाल हॉल में सोलहवीं शताब्दी ईस्वी का ईरान का एक बहुमूल्य गलीचा भी प्रदर्शित है, जिसमें ईरान के शाह अब्बास के उद्यान का दृश्य बुना गया है। यह गलीचा 28 फुट गुणा 12 फुट आकार का है तथा इसमें एक इंच में 250 गाठें हैं। दुनिया में ऐसे कुल छह गलीचे हैं। यह गलीचा मिर्जा राजा जयसिंह को ईरान के शाह द्वारा ई.1640 में भेंट किया गया था जो विश्व की अप्रतिम बहुमूल्य कला वस्तुओं में से एक है। संग्रहालय में तिब्बत एवं नेपाल से प्राप्त ताम्र सामग्री भी प्रदर्शित की गई है। राजस्थान के अनेक स्थलों से प्राप्त प्रतिमाएँ, इंग्लैण्ड के राजा-रानी के चित्र, जयपुर महाराजाओं के चित्र, मुगल पेंटिंग्स, कलात्मक हुक्का, ब्लू पॉटरी, सुराहियां, ढालें, विभिन्न प्रकार की हस्तकला सामग्री, अस्त्र-शस्त्र, तीर-कमान-भाले, बग्घियां, कठपुतलियां, लोकवाद्य, धातु पात्र, मृदभाण्ड, रियासत कालीन पोशाकें, मॉडल्स एवं सिक्के आदि प्रदर्शित किए गए हैं।


वामन अवतार, 10वीं शताब्दी ईस्वी, सांभर

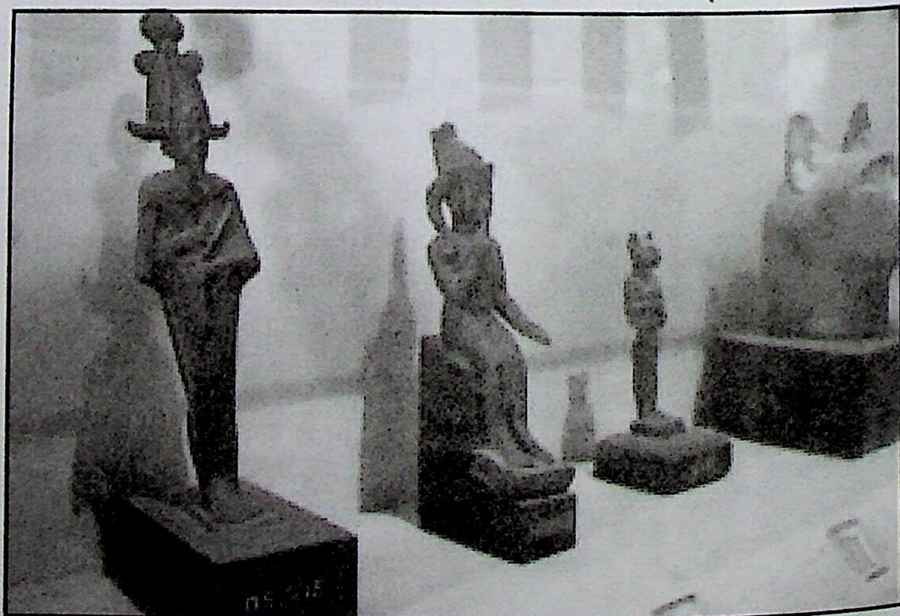
संग्रहालय में प्रदर्शित ममी मिस्त्र के राजपरिवार के पुजारी परिवार की महिला तुतु की है। इसे 19वीं सदी के अंतिम दशक में मिस्त्र की राजधानी काहिरा से जयपुर लाया गया था। यह ममी मिस्त्र के प्राचीन नगर पैनोपोलिस में अखमीन से प्राप्त हुई थी। यह ई.पू.322 से ई.पू.200 के बीच की अवधि की है तथा टौलोमाइक युग की बताई जाती है। यह महिला 'खेम' नामक देव के उपासक पुरोहितों के परिवार की सदस्य थी। देह के ऊपरी आवरण पर प्राचीन

मिस्त्र का पंखयुक्त पवित्र भृंग (गुबरैला) का प्रतीक अंकित है जो मृत्यु के बाद जीवन और पुनर्जन्म का प्रतीक माना जाता है। पवित्र भृंग के दोनों ओर प्रमुख देव का शीर्ष तथा सूर्य के गोले को पकड़े श्येन पक्षी (बाज) अंकित है। यह बाज होरस देवता का प्रतीक है।



मिस्त्र की पुजारिन तुतु की संरक्षित मृतदेह (ममी)

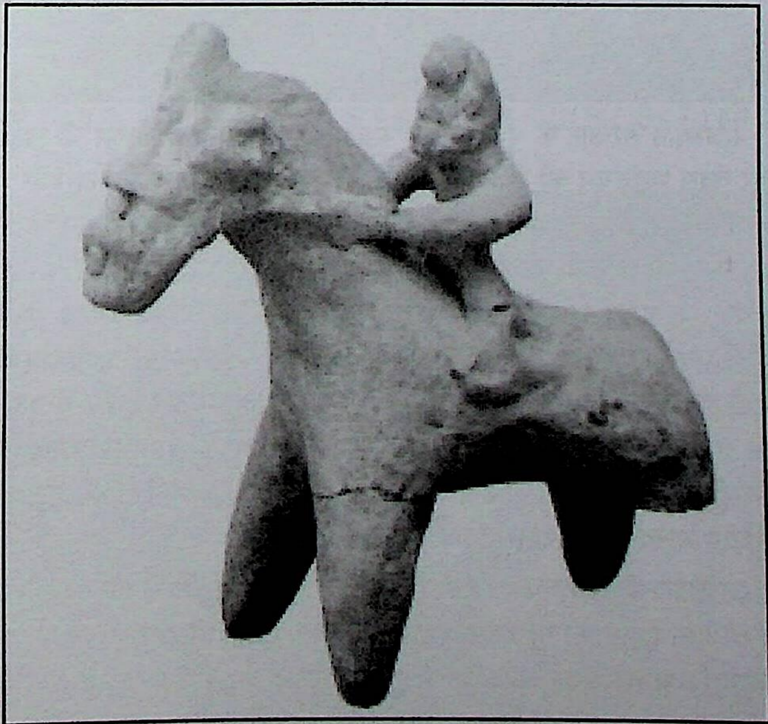
तुतु ने गर्दन से कमर तक चौड़े मोतियों से सज्जित परिधान कॉलर के रूप में पहन रखा है। तुतु की मृत देह की सुरक्षा के लिए पंखदार देवी का अंकन किया गया है। ममी के नीचे के तीन हिस्सों में से पहले में मृतदेह के दोनों ओर महिलाएं बनाई गई हैं। दूसरे हिस्से में पाताल लोक के निर्णायकों की तीन बैठी हुई छवियां हैं और तीसरे हिस्से में होरस देव के चार बेटे अंकित हैं, जो चारों दिशाओं के रक्षक अर्थात् दिक्पाल हैं। इनके



मृतदेह को संरक्षण प्रदान करने वाला देवता ओसिरिस

मुंह क्रमशः मानव, सियार, बंदर और बाज पक्षी के रूप में दर्शाए गए हैं। रक्षित मृतदेह के पार्श्व भाग में एक अभिलेख लिखा है जिसके अनुसार अनुबिस नेक्रोपोलिस के अधिष्ठाता देव हैं और ओसिरिस तुतु को पुनर्जन्म हेतु संरक्षण प्रदान करते हैं। अंतिम फलक में मृत आत्माओं के देवता ओसिरिस का शीर्ष अंकित है जिसके दोनों और दो विषधर नाग हैं। ओसिरिस स्थिरता और सुदृढ़ता का प्रतीक है और दोनों सांप आईसिस और नेफ्टीज नामक देवियों के प्रतीक हैं। यह फलक मृतदेह के संरक्षण एवं मृत्यु के बाद आत्माओं के पुनर्जीवन के लिए न्याय विधान का चित्रण करता है।

ओसिरिस वाले फलक के नीचे का फलक पांवों के ऊपरी आवरण पर बना है। इस फलक में अनुबिस देवता मृतदेह को पकड़े हुए हैं तथा मृतदेह को औषधि के माध्यम से सुरक्षित रखने में सहायता करते हुए दिखाया गया है अनुबिस देवता की पहचान उसके सियार वाले मुंह से की जाती है यह श्मशान भूमि के देवता हैं, जो मृतदेह का संरक्षण करता है और मृत आत्माओं को अपने पिता ओसिरिस के पास ले जाता है जो पाताल लोक का देवता है। इस लोक में मृत्यु के बाद जीवन के बारे में निर्णय होता है। मृत्यु शैय्या के नीचे पांच कुंडीय पात्र आंतों को एकत्रित करने के लिए अंकित है। यहीं चार प्रेतात्माओं की आकृतियां भी दिखाई गई हैं।



टैराकोटा घुड़सवार, रैढ़, ईस्वी पूर्व दूसरी शताब्दी, अल्बर्ट हौल, जयपुर

अध्याय - 26

वैक्स म्यूजियम, जयपुर



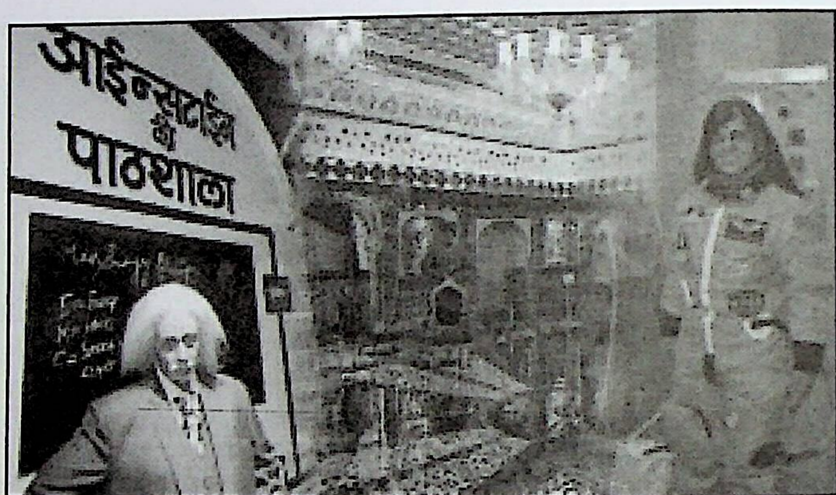
राजस्थान सरकार के पुरातत्व एवं संग्रहालय विभाग द्वारा जयपुर के नाहरगढ़ में जयपुर वैक्स म्यूजियम की स्थापना की गई है। इस दुर्ग का निर्माण अठारहवीं शताब्दी ईस्वी में जयपुर के कच्छवाहा राजाओं द्वारा किया गया था। इस संग्रहालय में इतिहास, कला, संस्कृति, सिनेमा, खेल, विज्ञान आदि क्षेत्रों के प्रसिद्ध व्यक्तियों के मोम एवं सिलिकॉन के पुतले रखे गए हैं। इस संग्रह के पुतलों का निर्माण प्रसिद्ध मोमशिल्पी सुशांत रे द्वारा किया गया है। संग्रहालय के रॉयल खण्ड में जयपुर एवं राजस्थान के अन्य रजवाड़ों के प्रसिद्ध राजाओं एवं रानियों के मोम के पुलते रखे गए हैं। ये पुतले इतने सजीव जान पड़ते हैं मानो अभी बोल पड़ेंगे। प्रत्येक पुतले के साथ उस व्यक्ति के युग का परिवेश जीवित करने का प्रयास किया गया है। इस संग्रहालय की सजावट अंतर्राष्ट्रीय मानदण्डों के अनुसार की गई है।

इस संग्रहालय की संकल्पना वर्ष 2006 में पिंकसिटी फिल्म फेस्टीवल के दौरान अनूप श्रीवास्तव द्वारा की गई। उस समय फिल्म अभिनेता अमिताभ बच्चन के पुतले का अनावरण किया गया। इस प्रकार के पुतलों का संग्रह बनाने के लिए सुशांत रॉय आदि अन्य कलाकारों को इस परियोजना से जोड़ा गया। शीघ्र ही इस संग्रह के लिए 32 पुतले बना लिए गए।



संग्रहालय में एक रॉयल दरबार का निर्माण किया गया है। इसमें प्रसिद्ध महाराजाओं एवं महारानियों के मोम के पुतले प्रदर्शित किए गए हैं। महाराजाओं एवं महारानियों के पुतलों की स्थापना के लिए कक्ष बनाने हेतु नाहरगढ़ में स्थित शीश महल की दीवारों एवं स्तम्भों का जीर्णोद्धार किया गया तथा उनमें पुन: अच्छी गुणवत्ता के शीशे जड़े गए, ताकि मध्यकालीन रियासती ठाठ का पुनर्निमाण किये जाने के साथ ही इसे देखकर दर्शक को उसी युग का आभास हो सके। इस कक्ष में एक ऐसा दर्पण रखा गया है जिसमें देखने पर ऐसा आभास होता है मानो राजसी वस्त्र धारण कर लिए हैं। इस दर्पण को इसी वैक्स म्यूजियम के कलाकारों ने तैयार किया है।





एक अन्य कक्ष जिसमें पहले योद्धा विश्राम किया करते थे, उसे भी शीशमहल में परिवर्तित किया गया है। उसमें श्वेत, नीले, लाल, पीले, हरे कांच के 25 लाख टुकड़े लगाए गए हैं। इसे लगाने में 80 दक्ष कलाकारों ने 180 दिन तक काम किया। इस कक्ष में प्रवेश करते ही 23 कैरेट स्वर्ण मिश्रित जवाहरातों से बनी पट्टियों की रंगोली बनाई गई है। इस कक्ष में पेंटिंग्स, पालकी, झूमर, तथा अन्य कलाकृतियां रखी गई हैं। टीकड़ी कांच के टुकड़ों का प्रयोग करके सुंदर पुष्पाकृतियों का निर्माण किया गया है। संग्रहालय में सुप्रसिद्ध वैज्ञानिक आइंस्टीन, अंतरिक्ष यात्री कल्पना चावला, जयपुर की महारानी गायत्री देवी, फिल्म अभिनेता गोविंदा, तिब्बती बौद्ध धर्मगुरु दलाई लामा, भारत के प्रधानमंत्री अटल बिहारी वाजपेयी, भारत के राष्ट्रपति अब्दुल कलाम, नर्तक माइकल जैक्सन आदि विश्व प्रसिद्ध व्यक्तियों एवं स्पाईडरमैन जैसे फैंटेसी पात्रों के मोम के पुतले रखे गए हैं।



अध्याय - 27

राजकीय संग्रहालय, हवामहल

राजस्थान के कुछ राजकीय संग्रहालय महत्वपूर्ण स्मारकों के अन्दर सज्जित किए गए हैं। राजकीय संग्रहालय, हवामहल एक महत्वपूर्ण स्मारक के अन्दर स्थित प्राचीन ढूंढाड़ प्रदेश की सांस्कृतिक विरासत का अनूठा संग्रहालय है। जयपुर का हवामहल राजस्थान के प्रतीक रूप में सुविख्यात है। जयपुर नरेश सवाई प्रतापसिंह द्वारा हवामहल का निर्माण ई.1799 में उस्ता लालचन्द की देखरेख में करवाया गया। हवामहल का पिछला भाग, जो सिहडयोढ़ी बाजार तथा माणक चौक अथवा बड़ी चौपड़ की ओर मुख्य मार्ग पर पूर्वाभिमुख एवं बहुसंख्य कलात्मक गवाक्षों से अलंकृत एवं सुशोभित है, भारतीय-फारसी सम्मिश्रित शैली में निर्मित है।

हवामहल का मुख्य प्रवेश द्वार माणक चौक अथवा बड़ी चौपड़ से त्रिपोलिया द्वार की ओर चलने पर आता है। दाहिने हाथ पर हवामहल के समकालीन निर्मित और कभी हवामहल के मुख्य भाग में जुड़े रहे महल भाग में राज्य आयुर्वेद विभाग के उपनिदेशक का कार्यालय है।

हवामहल के पश्चिमाभिमुख मुख्य द्वार को आनन्द पोल तथा दूसरे चौक के द्वारपाल युक्त द्वार को गणेशपोल कहा जाता है। मुख्य द्वार आनन्द पोल में प्रवेश करते ही बाएं हाथ पर हवामहल के प्रवेश तथा कैमरा प्राप्ति कक्ष स्थित हैं। प्रथम चौक को पार कर गणेश पोल से प्रवेश करते हुए दूसरे मुख्य एवं बड़े चौक के मध्य में फव्वारों से युक्त संगमरमर का एक बड़ा हौज है। इसी चौक के दक्षिण में महाराजा सवाई प्रताप सिंह (ई. 1778-1803) के निजी उपयोग में रहा प्रतापमंदिर कक्ष है, जिसमें वर्तमान में ढूंढाड़ प्रदेश की शिल्प तथा तक्षण कला की अप्रतिम उदाहरण पाषाण प्रतिमाएं तथा अन्य पुरातत्व सामग्री प्रदर्शित है।

चौक के उत्तर दिशा में मूलतः रसोड़ा (भोजनशाला) रहे भाग में ढूंढाड़ क्षेत्र की प्रतिनिधि चित्रकला एवं हस्तशिल्प का प्रदर्शन है। पूर्वाभिमुख पांच-मंजिला मुख्य भवन के भू-तल पर स्थित 'शरदमंदिर' कक्ष में पूर्व जयपुर राज्य के प्रमुख महाराजाओं और प्रतिष्ठित नागरिकों के चित्र प्रदर्शित किए गए हैं। ऊपर की मंजिलें क्रमशः रत्न मंदिर, विचित्र मंदिर, प्रकाश मंदिर, हवामंदिर तथा उत्तर पूर्व कोने पर बनी खुली छतरी, जो पुरानी शिकार ओढी थी, स्मारक के रूप में दर्शनीय हैं।

हवामहल संग्रहालय का लोकार्पण 23 दिसम्बर 1983 को हुआ। इसमें ढूंढाड़ क्षेत्र की पुरा एवं कला सम्पदा संजाई गई है। प्रतापमंदिर के बाह्यभाग में स्थित मूर्तिकक्ष में 8-9वीं शती की प्रतिहार कालीन प्रतिमा, आबानेरी से प्राप्त स्कन्द कार्तिकेय, महिषासुर मर्दिनी तथा दशानन रावण द्वारा कैलाश पर्वत धारण प्रतिमा, नरहड़ से प्राप्त जैन तीर्थंकर सुमतिनाथ, सांभर से प्राप्त वामन अवतार आदि पाषाण प्रतिमाएं ढूंढाड़ क्षेत्र के शिल्प और तक्षण कौशल की अप्रतिम उदाहरण हैं। आमेर-जयपुर के कछवाहा शासकों के काल की शिल्प एवं तक्षण कला का प्रतिनिधित्व मकराना के श्वेत संगमरमर से निर्मित सुर-सुन्दरी प्रतिमाएं कर रही हैं। 11-12वीं शती में चौहानों के शासनकाल में सांभर-चाकसू क्षेत्र में निर्मित वामन अवतार तथा विष्णु के विभिन्न अवतारों की मूर्तियां मूर्ति-शिल्प के इतिहास की दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण हैं। 18वीं शती में सफेद मकराना संगमरमर से निर्मित वेणुधारी कृष्ण की भव्य प्रतिमा देखते ही बनती है।

प्रताप मंदिर के आंतरिक मुख्य कक्ष में गणेश्वर, जोधपुर, बैराठ, रैढ़, सांभर और नगर आदि प्राचीन पुरातात्विक स्थलों के सर्वेक्षण और उत्खनन से प्राप्त विभिन्न पाषाण, ताम्र एवं लौह उपकरण, मृद्पात्र तथा मृण्मूर्तियां प्रदर्शित हैं। इनके माध्यम से ढूंढाड़ क्षेत्र में मानवीय सभ्यता के उषाकाल की सांस्कृतिक विरासत की झांकी प्रस्तुत की गई है।

प्रताप मंदिर के भीतर दक्षिण-पूर्वी कोने में स्थित एक छोटे कक्ष में ढूंढाड़ क्षेत्र के शिलालेखों, ताम्रपत्रों और सिक्कों का प्रदर्शन किया गया है। बैराठ से प्राप्त तीसरी शती पूर्व के अशोक के शिलालेख, विक्रम संवत् 284 और 335 का बरनाला यूप स्तम्भ (लालसोट के निकट बरनाला गांव से प्राप्त), 10वीं शती का चाकसू अभिलेख, ई. 1363 का फारसी और देवनागरी लिपि में द्विभाषीय शिलालेख, आमेर नरेश मानसिंह का जमवारामगढ़ से प्राप्त वि.सं. 1669 का शिलालेख तथा प्रतिहार कालीन बधाल ताम्रपत्र लिपि, भाषा एवं इतिहास की दृष्टि से महत्वपूर्ण है। इस शिलालेख से ज्ञात होता है कि मानसिंह के पिता का नाम भगवंतदास और पितामह का नाम भारमल था।

इसी कक्ष में छठी शती पूर्व से दूसरी शती पूर्व के मध्य प्रचलित रहे आहत सिक्कों (पंचमार्क), विराटनगर से प्राप्त यूनानी सिक्कों, स्थानीय मालव एवं यौधेय गणराज्यों के सिक्कों, खेतड़ी एवं जमवारामगढ़ से प्राप्त कुषाणकालीन सिक्कों, टोंक जिले से प्राप्त गुप्तकालीन सिक्कों, सेसैनियन वंश के 'द्रम्भ' सिक्कों, अजमेर एवं सांभर के चौहान शासकों तथा जयपुर के कछवाहा शासकों द्वारा प्रचलित सिक्कों के माध्यम से इस क्षेत्र की अर्थव्यवस्था का परिचय मिलता है। सुखपुरा (जिला टोंक) से प्राप्त मुद्राओं में समुद्रगुप्त, काचगुप्त तथा चन्द्रगुप्त (द्वितीय) की मुद्राएं सम्मिलित हैं। ग्राम गांवली से पृथ्वीराज चौहान के सिक्के प्राप्त हुए हैं। आमेर, फागी, दयारामपुरा, बैराठ, बगरू, जयपुर, हर्ष तथा सीकर से अरबी-फारसी भाषा के मुगलिया सिक्के बड़ी संख्या में मिले हैं। सवाई जयसिंह ने ई.1727 में जयपुर में टकसाल की स्थापना की। इस टकसाल में

झाड़शाही सिक्के ढाले गए। जयपुर रियासत के झाड़शाही सिक्कों पर छह शाखाओं वाला झाड़ अंकित है।

उत्तर दिशा में स्थित रसोड़ा (भोजनशाला) में चित्रकला एवं हस्तशिल्प दीर्घा में जयपुर शैली के लघुचित्रों, जयपुर की प्रसिद्ध नीलवर्ण मृदपात्र कला (ब्ल्यू पॉटरी), काष्ठ-तक्षण कला, पीतल एवं धातु से निर्मित अलंकृत बड़े आकार की सजावटी ढालों, पारम्परिक, आभूषणों, अस्त्रों-शस्त्रों के माध्यम से ढूंढाड़ क्षेत्र के हस्तशिल्प का प्रदर्शन किया गया है। खगोल यंत्र का मॉडल, कशीदाकारी, मीनाकारी युक्त थाल का भी प्रदर्शन किया गया है। एक विशाल थाल पर रामायण के दृश्य अंकित हैं। जयपुर शैली के चित्रों में राजसी वैभव, दरबार, शिकार के दृश्य, होली, गणगौर, तीज आदि त्यौहार, बारहमासा एवं विभिन्न राग-रागिनियों का चित्रण किया गया है।

शरद मंदिर एवं रतन मंदिर में जयपुर नगर के संस्थापक महाराजा सवाई जयसिंह (ई.1699-1743) तथा कच्छवाहा वंश के अन्य राजाओं एवं जयपुर राज्य के प्रसिद्धि व्यक्तियों के छायाचित्र प्रदर्शित किए गए हैं। इनमें विद्याधर चक्रवर्ती, रत्नाकर पौण्डरीक, कवि पद्माकर, पंडित टोडरमल, विद्यावाचस्पति मधुसूदन ओझा, स्वामी लक्ष्मीराम, उस्ताद बहराम खाँ डागर, मिर्जा इस्माइल, सेठ जमनालाल बजाज और अर्जुनलाल सेठी आदि के चित्र सम्मिलित हैं।

संग्रहालय के भण्डारों में भी महत्वपूर्ण सामग्री संग्रहित है। इसमें राजस्थान से हड़प्पाकालीन सभ्यता के प्रमुख केन्द्र कालीबंगा से प्राप्त सुप्रसिद्ध ताम्रवृषभ के लगभग समकालीन योग मुद्रा में नग्न पुरुष की प्रतिमा प्रमुख है। जयपुर के प्रसिद्ध तीर्थ गलता के जल-कुण्ड की सफाई से प्राप्त पाषाण एवं धातु की अनेक प्रतिमाएं तथा ज्योतिष यंत्र भी संग्रहित हैं।



अध्याय – 28

प्राकृतिक इतिहास संग्रहालय, जयपुर

जयपुर के रामनिवास उद्यान के मध्य बने जंतुआलय (जू) के दक्षिणी भाग के एक भवन में प्राकृतिक इतिहास संग्रहालय अर्थात् नेचुरल हिस्ट्री म्यूजियम की स्थापना की गई है। जीव जगत के जीवन-व्यवहार तथा उनकी आवासीय पारिस्थितिकी को प्रदर्शित करने वाले संग्रहालय को 'प्राकृतिक इतिहास संग्रहालय' कहा जाता है। इस संग्रहालय में जीवों एवं वनस्पतियों की उत्पत्ति और विकास का वृत्तांत दर्शाया गया है। इस संग्रहालय की स्थापना और विकास का उद्देश्य जंतुआलय भ्रमण करने हेतु आने वाले पर्यटकों को जीव जगत के अतीत एवं वर्तमान के बारे में जानकारी देना है।

विश्व के अनेक देशों में विगत तीन शताब्दियों से ऐसे संग्रहालयों का निर्माण हो रहा है। भारत में ऐसे संग्रहालयों की स्थापना का कार्य विगत सौ-सवा सौ वर्षों से हो रहा है। आज से लगभग 125 साल पहले बम्बई में बॉम्बे नेचुरल हिस्ट्री सोसायटी द्वारा ऐसा ही संग्रहालय स्थापित किया गया था, जो आज विश्व के श्रेष्ठतम प्राकृतिक इतिहास संग्रहालयों में से एक है। राजस्थान में राजा-महाराजाओं द्वारा बनवाए गए संग्रहालयों में एक प्रकोष्ठ इस विषय पर भी बनवाए गए हैं। जोधपुर, मण्डोर, जयपुर, जैसलमेर, कोटा तथा बीकानेर में रियासतों द्वारा बनवाए गए पुरातत्व संग्रहालयों में बने ये 'खण्ड' राजस्थान में जैविक सम्पदा के संरक्षण एवं संग्रहण की गाथा कहते हैं। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् नई दिल्ली में बारह खम्भा रोड पर स्थित फिक्की भवन में राष्ट्रीय प्राकृतिक इतिहास संग्रहालय बनाया गया, जो सजीव जगत की अद्‌भुत कहानी कहता है।

जयपुर में बना यह संग्रहालय, अन्य पुरातत्व एवं लोककला संग्रहालयों से सर्वथा भिन्न है। यह जीव-जन्तुओं, पक्षियों तथा प्राकृतिक संसार की जानकारी देने वाला एक अनोखा संग्रहालय है। इसका निर्माण 1980 के दशक में किया गया। इसके निर्माण का श्रेय प्रसिद्ध वन्यजीव विशेषज्ञ पद्‌मश्री कैलाश सांखला को जाता है, जो भारतीय वन सेवा के वरिष्ठ अधिकारी तथा राज्य के मुख्य वन्यजीव प्रतिपालक थे। उन्होंने विभिन्न मॉडलों, तस्वीरों, चार्ट तथा मानचित्रों की सहायता से इस संग्रहालय को साकार रूप दिया। जयपुर चिड़ियाघर (जंतुआलय) के शताब्दी समारोह के अवसर पर इसे और सुसज्जित किया गया तथा इसे और अधिक जनोपयोगी बनाया गया।

एक विशाल हॉल में बने इस संग्रहालय को तीन भागों मे विभक्त किया गया है। प्रथम खण्ड में विभिन्न प्रकार के चित्रों के माध्यम से जंगल के राजा बाघ (टाईगर) के

प्राकृतिक आवास को दर्शाया गया है। अर्थात् बाघ कैसी वन्य परिस्थितियों में निवास करता है, कैसे उन्मुक्त जीवन व्यतीत करता है, आदि जानकारियाँ दी गई है। इसके साथ एक प्रकोष्ठ में बघेरा (पैंथर), भालू, चिंकारा, काला हिरण, मगरमच्छ, पाटागोह आदि वन्यजीवों के भूसा भरे मॉडल्स को प्राकृतिक अवस्था में दर्शाया गया है। मृत पशुओं की त्वचा में मसाला भरकर रखा गया है, जिससे वे हूबहू जीवित प्राणी जैसे प्रतीत होते हैं। इस खण्ड में दीवार पर जंगल की पेटिंग की गई है।

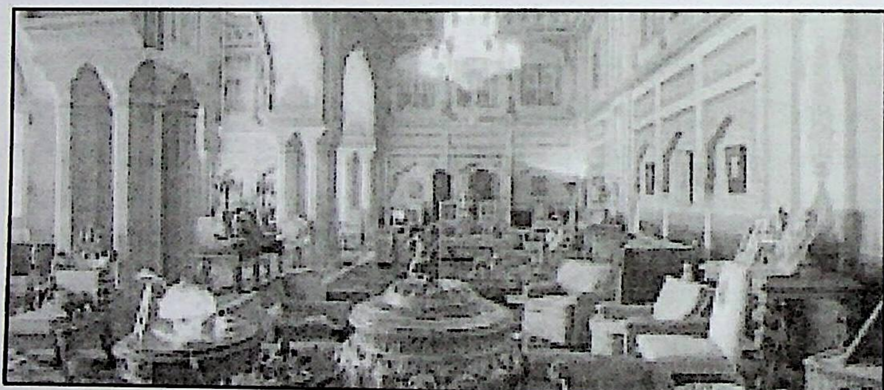
संग्रहालय के मध्य बने खण्ड में प्रदेश की जैव विविधता को दर्शाने के लिए विभिन्न चार्ट्स, मॉडल्स तथा सूचना पट्ट लगाए गए हैं। भारत में लुप्त होते बाघों के संरक्षण हेतु चलाई जा रही 'प्रोजेक्ट टाईगर' योजना तथा देश के विभिन्न बाघ अभयारण्यों की जानकारी एक सूचना पट्ट पर दी गई है। राजस्थान के विभिन्न वन्यजीव अभयारण्यों की सूचना तथा वहाँ के प्रमुख आकर्षणों को छायाचित्रों के माध्यम से प्रदर्शित किया गया है। एक बड़ी मेज पर भू-आकृति का मॉडल बनाकर वन परिस्थितियों की जानकारी प्रस्तुत की गई है। कुछ चित्रों के पैनल इस तरह बनाए गए हैं कि आकाश की पारदर्शिता से उन्हें सहज रूप में देखा जा सकता है। राज्य में विभिन्न स्थानों पर पाए जाने वाले जीव-जन्तुओं की सचित्र जानकारी दी गई है।

संग्रहालय के तृतीय खण्ड में विभिन्न प्रकार के जीव-जन्तुओं, पक्षियों तथा प्राकृतिक दृश्यों के छायाचित्र प्रदर्शित किए गए हैं। इनमें भरतपुर पक्षी अभयारण्य की पक्षी प्रजनन स्थली के चित्र, बाघ के पानी पीने के चित्र, भांति-भांति की चिड़ियों के चित्र तथा भारतीय पक्षियों के चित्र आदि सम्मिलित हैं। दीवार पर चित्रित वन में उन्मुक्त विचरण करते मृग झुण्डों के दृश्य बहुत लुभावने लगते हैं। अल्बर्ट म्यूजियम हॉल के निकट, रामनिवास बाग में स्थित होने से इस संग्रहालय में दर्शकों का तांता लगा रहता है।



अध्याय - 29

महाराजा मानसिंह संग्रहालय, सिटी पैलेस जयपुर



आम्बेर एवं जयपुर का कच्छवाहा राजवंश सोलहवीं शताब्दी से अठारहवीं शताब्दी तक मुगलों के मनसबदारों के रूप में काम करता रहा तथा इस दौरान जयपुर के राजाओं को देश के विभिन्न भागों में मुगल सेनापतियों एवं सूबेदारों के रूप में काम करने का अवसर प्राप्त हुआ। इन नियुक्तियों के दौरान जयपुर नरेशों ने उन प्रदेशों की पुरावस्तुओं, पोथियों, चित्रों, देव विग्रहों, कालीनों, अस्त्र-शस्त्रों तथा विभिन्न प्रकार की कला सामग्रियों का संकलन किया। वे इन वस्तुओं को आम्बेर तथा जयपुर ले आए, जिनसे राजमहलों में दुर्लभ संग्रह तैयार हो गया। महाराजा सवाई जयसिंह (द्वितीय) (ई. 1699-1743) ने अपने राज्य की शासन व्यवस्था को सुचारू बनाने तथा राज्य के कलाकारों को संरक्षण देने के लिए 34 कारखाने (विभाग) स्थापित किए। सिटी पैलेस के पोथीखाने में संग्रहित एवं बखतराम द्वारा लिखित ग्रंथ 'बुद्धि विलास' में इन कारखानों के नाम इस प्रकार दिए गए हैं-

(1.) कपड़ द्वार, (2.) पोथीखाना, (3.) सूरतखाना, (4.) ख्यालखाना, (5.) सिलहखाना, (6.) फर्राशखाना, (7.) पालकीखाना, (8.) फीलखाना, (9.) बग्घीखाना, (10.) सुतारखाना, (11.) रथखाना, (12.) तबेला आतिश, (13.) ग्वालेरा, (14.) शिकारखाना, (15.) रसोड़ा, (16.) मोदीखाना, (17.) तातेड़खाना, (18.) ताम्बोलखाना, (19.) ओखधरखाना, (20.) इमारत खाना, (21.)

मिस्त्रीखाना, (22.) नक्कारखाना (नौबतखाना), (23.) गुणीजनखाना, (24.) कारखाना पुण्य, (25.) बगायत, (26.) रवबर, (27.) तारकशी (गोटा-किनारी), (28.) खुशबूखाना (इत्र की ओरी), (29.) नक्काश (घोड़ों का क्रय-विक्रय), (30.) मशालखाना, (31.) पतंगखाना, (32.) पातरखाना, (33.) रंगखाना, (34.) रोशन चौक। इनमें से कुछ कारखानों में हस्तशिल्प कलासामग्री तैयार की जाती थी। इस कारण जयपुर राज्य का हस्तशिल्प समृद्ध हो गया।

मुगलों के समय मुगल बादशाहों ने तथा अंग्रेजों के समय अंग्रेज अधिकारियों ने जयपुर नरेशों को समय-समय पर बहुमूल्य उपहार दिए। ये उपहार भी राजमहल के संग्रह की कीमती धरोहर बनते चले गए। ई.1959 में जयपुर नरेश सवाई मानसिंह (द्वितीय) ने सिटी पैलेस में कला संग्रहालय की स्थापना की तथा इसे जनसाधारण के लिए भी खोल दिया। बाद में मानसिंह के उत्तराधिकारी ब्रिगेडियर भवानी सिंह ने भी इस संग्रहालय के विकास में योगदान दिया। भवानीसिंह ने ई.1972 में सिटी पैलेस का कुछ भाग तथा अपने संग्रह के कुछ चित्र, हथियार, कालीन, वस्त्र, बग्घियां, हस्तलिखित ग्रंथ, फोटोग्राफ, प्राचीन मुद्रित पुस्तकें, दुर्लभ नक्शे संग्रहालय को उपहार में दिए तथा इस संग्रहालय का नाम 'महाराजा मानसिंह (द्वितीय) संग्रहालय' रखा गया।

वस्त्र संग्रह

मुबारक महल के प्रथम तल पर वस्त्र दीर्घा स्थित है, जिसमें शाही पोशाकों एवं वस्त्रों का प्रदर्शन किया गया है। यहाँ प्रदर्शित सवाई माधोसिंह (प्रथम) का विशाल आतमसुख दर्शकों का ध्यान आकर्शित करता है। यह एक ढीला-ढाला, सर्दी में पहना जाने वाला वस्त्र है। कहा जाता है कि सवाई माधोसिंह (प्रथम) का डीलडौल विशाल था तथा लम्बाई भी काफी अधिक थी। आतमसुख रेशम के कपड़े से बनी हुई है तथा इस पर सुनहरी जरी का काम किया गया है। इसमें हल्के पीले रंग के सूती कपड़े का अस्तर लगाया गया है। पतले सिल्क में बारीक किनारी लगाई गई है। बनारसी किमखाब की बनी सर्दियों की इस भारी पोशाक में रुई भरी हुई है। इसका निर्माण काल ई.1760 के आसपास का है। मुख्य कपड़े की लम्बाई 198.5 सेंटीमीटर तथा बाहों की लम्बाई 91 सेंटीमीटर है। सीना 355 सेंटीमीटर एवं कमर 681 सेंटीमीटर है।

संग्रहालय में महाराजा सवाई प्रतापसिंह (ई.1778-1803) का 320 कली का विशाल घेर वाला लाल सूती पजामा भी प्रदर्शित है जिसमें जयपुरी गोटे से सज्जा की गई है। यह पजामा महाराजा ने अपने विवाह पर पहना था। इसका निर्माण ई.1790 के आसपास का है। इसकी लम्बाई 129 सेंटीमीटर है। इसे जयपुर में ही बनाया गया था। संग्रहालय में प्रदर्शित महाराजा सवाई रामसिंह द्वितीय (ई.1835-80) की अंगरखी भी उल्लेखनीय है। इसे मृगपाली अर्थात् दीपावली के अगले दिन पहना जाता था। इसके किनारों पर घनी कशीदाकारी है। बाहों के किनारों, पृष्ठ भाग एवं कंधे पर कलाबत्तु से



अलंकरण बने हुए हैं। इसके दाम पर कलाबत्तू पर छोटे कोनिये बने हुए हैं। कलाबत्तु के अलंकरणों को स्पष्ट दिखाने के लिए नीले रंग की सिंकिया मगजी तथा गुलाब रंग की चौड़ी मगजी लगाई गई है। इसकी लम्बाई 117 सेंटीमीटर है एवं बाहों की लम्बाई 81 सेंटीमीटर है।

जयपुर की महारानियों द्वारा दीपावली पर पहनी जाने वाली काली सूती पोशाक भी इस संग्रह का मुख्य आकर्षण है। इसमें ओढ़नी, लहंगा तथा कांचली शामिल हैं। इस पोशाक पर सुंदर गोटे का काम किया गया है, चुनरी पर पत्तियों का अलंकरण है, किनारे पर बेल तथा पल्ले पर कैरी की डोर बनी हुई है। यह उन्नीसवीं सदी में जयपुर में ही बनी हुई है। मुबारक महल के इसी कक्ष में कशीदा कार्य के काश्मीरी शॉल, बनारस एवं सूरत के किमखाब, सांगानेर की ठप्पा छपाई के नमूने, जयपुरी बांधनी, जयपुर का गोटा तथा बंधेज से बनी स्त्री-पुरुषों की पोशाकें भी प्रदर्शित हैं।

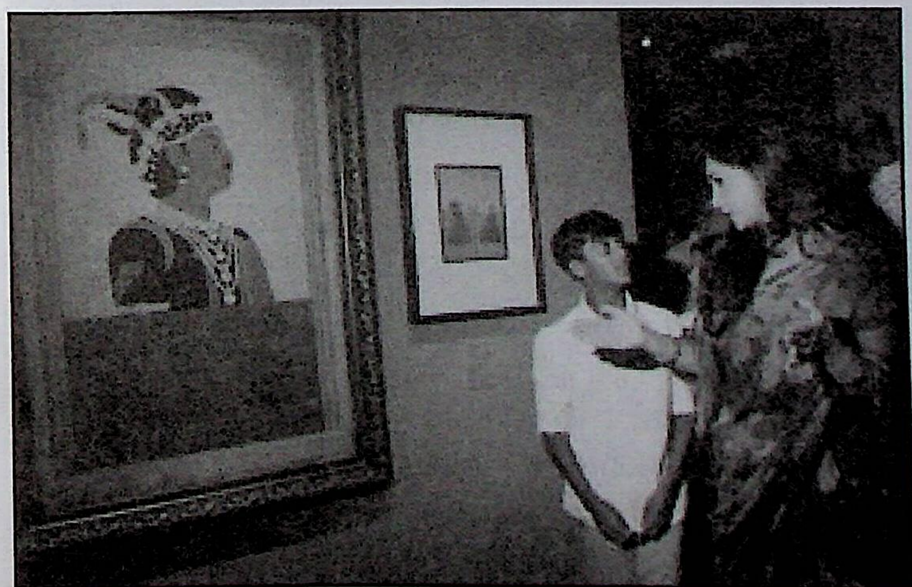
सिलहखाना

संग्रहालय का सिलहखाना अथवा अस्त्र-शस्त्र दीर्घा संगमरमर के स्तम्भों से बने एक विशाल कक्ष में स्थित है, जहाँ देश-विदेश के मध्यकालीन दुर्लभ हथियारों का संग्रह है। धारदार हथियारों में घुमावदार तलवारें, सीधी तलवारें, मुगल शमशीर, दुधारे चाकू, नोक वाली गुप्तियां, कटारें, कुल्हाड़ी, अनेक प्रकार के तीर, शाहजहाँ तथा कुछ अन्य मुगल बादशाहों एवं ईरानी बादशाहों के नाम वाली तलवारें, महाराजा सवाई रामसिंह (द्वितीय), माधोसिंह (द्वितीय) के हथियार प्रदर्शित हैं। 19वीं शती में बनीं यूरोपीय तलवारें जो वायसराय एवं विभिन्न अंग्रेज अधिकारियों द्वारा जयपुर नरेशों को उपहार में दी गई थीं, भी इस संग्रह में प्रदर्शित की गई हैं। तोड़ेदार, पत्थरकला एवं टोपीदार बंदूकें भी रखी गई हैं। पशुओं के सींग, चमड़े, सीप, हाथीदांत की बारूद-दानियां तथा उभरे हुए फूल-पत्तियों के नमूने भी सजाए गए हैं। गैंडे, भैंसे की खालों से बनी ढालें भी प्रदर्शित की गई हैं, जिन पर लाख के रंगों द्वारा फूल-पत्तियों की सजावट की गई है। बहुत अच्छी कारीगरी से युक्त कवच तथा शिरस्त्राण, हाथीदांत, चांदी, क्रिस्टल तथा जस्ते से बने तलवारों के दस्ते भी प्रदर्शित हैं। लोहे से बना 17वीं शती का एक धनुष भी

रखा है जिस पर कोफ्तगिरि का कार्य किया गया है। इस संग्रह की कुछ तलवारें 17वीं शताब्दी में बनी थीं जिन्हें शाहजहाँनी कहा जाता है। वस्तुतः ये ईरान में बनी हुई तलवारें हैं। ये मिर्जा राजा जयसिंह को शाहजहाँ ने भेंट की थीं।

विशाल गंगाजलियाँ

सर्वतोभद्र में चांदी की दो बड़ी गंगाजलियाँ प्रदर्शित की गई हैं। इन्हें संसार में चांदी के सबसे बड़े कलश होने का गौरव प्राप्त है। ये कलश सिटी पैलेस के मिस्त्रीखाना के कारीगरों गोविंदराम तथा माधव ने चांदी के सिक्कों को गलाकर बनाए थे। प्रत्येक कलश के लिए 14 हजार सिक्के काम में लिए गए। इन कलशों में कोई जोड़ नहीं है। इनमें कुंदे तथा ढक्कन भी लगे हुए हैं। प्रत्येक कलश का भार 345 किलोग्रम है। इनकी ऊंचाई 5 फुट 3 इंच, परिधि 14 फुट 10 इंच तथा भराव क्षमता लगभग 4000 लीटर है। इन्हें सरकाने के लिए पहियों की ट्रॉली का उपयोग किया जाता था। इनके मुंह तक पहुंचने के लिए सीढ़ी का प्रयोग किया जाता था। ई.1902 में जब जयपुर नरेश माधोसिंह (द्वितीय) इंगलैण्ड के राजा एडवर्ड (सप्तम) के राजतिलक समारोह में सम्मिलित होने के लिए इंग्लैण्ड गए, तब वह इन गंगाजलियों में गंगाजल भरकर ले गए, उसने अपनी यात्रा में गंगाजल का ही सेवन किया। जब राजा लंदन के विक्टोरिया बंदरगाह पर उतरे तो इन कलशों की धूम मच गई थी।



कला दीर्घा

दीवाने आम में कला दीर्घा बनाई गई है, जिसमें बड़े-बड़े झूमर लगे हुए हैं तथा इसकी भीतरी दीवारों को सुंदर चित्रकारी से सजाया गया है। इसी कक्ष में सरदार पटेल

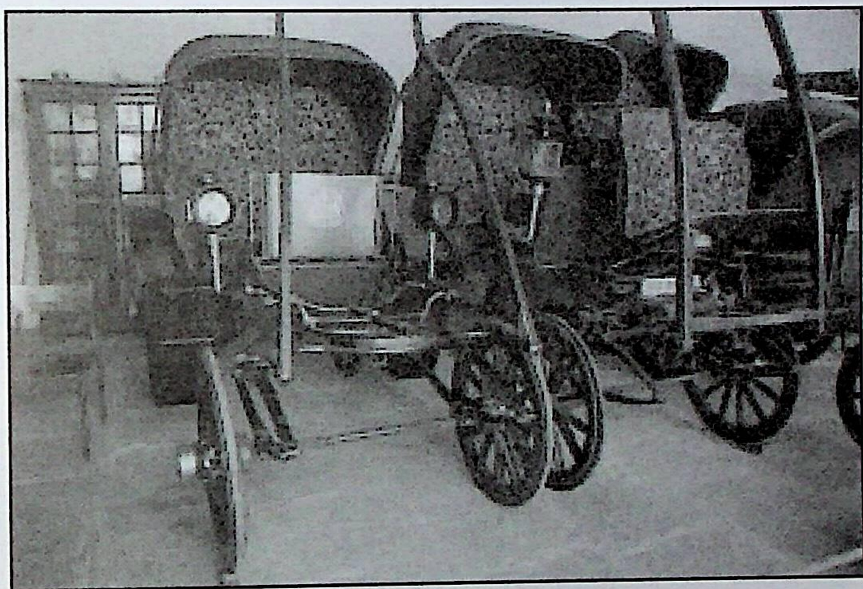
ने 30 मार्च 1949 को राजस्थान का उद्घाटन किया था एवं जयपुर नरेश मानसिंह (द्वितीय) को राजस्थान के महाराज प्रमुख पद की शपथ दिलवाई थी। इस दीर्घा में रियासत कालीन पालकी एवं फर्नीचर का भी प्रदर्शन किया गया है। इस दीर्घा में चित्रकला की ढूंढाड़ शैली, मुगल शैली तथा अन्य शैलियों के कई प्राचीन चित्र रखे हैं जिनमें भागवत पुराण, दुर्गापाठ एवं अन्य ग्रंथों पर आधारित चित्र, राजदरबार, शिकार, युद्ध, पशु-पक्षी आदि चित्रों का दुर्लभ संग्रह प्रदर्शित किया गया है। साहिबराम द्वारा बनाए गए जयपुर के चार शासकों के मानवाकार चित्र, सवाई ईश्वरीसिंह, माधोसिंह (प्रथम), प्रतापसिंह और जगतसिंह के चित्र जयपुर शैली के उत्तम उदाहरण हैं। राधा-कृष्ण का बड़ा चित्र किशनगढ़ शैली का है। 18वीं सदी का साहिब राम द्वारा चित्रित नृत्यरत राधा-कृष्ण का चित्र उल्लेखनीय है।

इसी कक्ष में संस्कृत, अरबी एवं फारसी भाषाओं में लिखित तथा जयपुर के चित्रकारों द्वारा चित्रित ग्रंथ भी प्रदर्शित हैं। चित्रित पुस्तक कवर, ताड़पत्र, कागज पर हस्तलिखित ग्रंथ, पुरानी मुद्रित पुस्तकें, हस्तलिखित ग्रंथों को लिखने के साधन आदि भी प्रदर्शित हैं। आम्बेर का मिर्जा राजा जयसिंह (ई.1650-60) हेरात, लाहौर, आगरा एवं अन्य स्थानों से दुर्लभ कालीन (गलीचे) लेकर आया था। ये कालीन इस कक्ष की दीवारों पर प्रदर्शित किए गए हैं। हेरात का विशाल कालीन 57 फुट 5 इंच लम्बा एवं 16 फुट 2 इंच चौड़ा है। काश्मीर अथवा लाहौर में बना फूलों एवं पत्तियों की बुनाई वाला पश्मीना का कालीन भी प्रदर्शित है। यह कालीन ई.1997-98 में न्यूयार्क के मैट्रोपोलिटन म्यूजियम द्वारा आयोजित प्रदर्शनी 'फ्लॉवर अण्डर फुट' में प्रदर्शित किया गया था।

पालकियाँ एवं बग्घियाँ

महाराजा मानसिंह (द्वितीय) संग्रहालय सिटी पैलेस के बग्घीखाना में रियासती काल में मनुष्य, बैल एवं घोड़ों से खींची जाने वाली बग्घियों, कंधों पर उठाई जाने वाली पालकियों तथा हाथियों पर रखे जाने वाले हौदों का संग्रह प्रदर्शित किया गया है। ई. 1876 में प्रिंस ऑफ वेल्स द्वारा महाराजा रामसिंह (द्वितीय) को भेंट की गई विक्टोरिया बग्घी भी प्रदर्शित है। शाही पालकियों पर लाख की पॉलिश की गई है तथा उन्हें सिल्क, मखमल एवं जालीदार कपड़े से सजाया गया है।

शाही पालकियाँ राजपरिवार की महिलाओं के लिए बनती थीं। इसी संग्रह में अम्बाबाड़ी (ठाकुरजी का रथ) भी प्रदर्शित हैं, जो विभिन्न त्यौहारों एवं उत्सवों में देव विग्रह की सवारी के काम आते थे। सोने एवं चांदी से बनी एक शाही पालकी तख्त-ए-रवाँ अर्थात् चलता-फिरता सिंहासन कहलाती है। इसमें सोने एवं चांदी की जड़ाई की गई है। औरंगजेब अपनी वृद्धावस्था में इस तरह की एक पालकी में बैठकर घूमा करता था। उस पालकी को संग्रहालय के एक चित्र में भी दर्शाया गया है। महाडोल



पालकी में आगे तथा पीछे की तरफ बांस का एक हत्था लगा हुआ है। इस प्रकार के महाडोल 13वीं शताब्दी की मूर्तियों, चित्रों एवं हस्तलिखित ग्रंथों में देखने को मिलते हैं। यह पालकी राजवंश के मंदिरों के पुजारियों द्वारा काम में ली जाती थी और इसे दो या दो से अधिक कहार मिलकर उठाते थे।

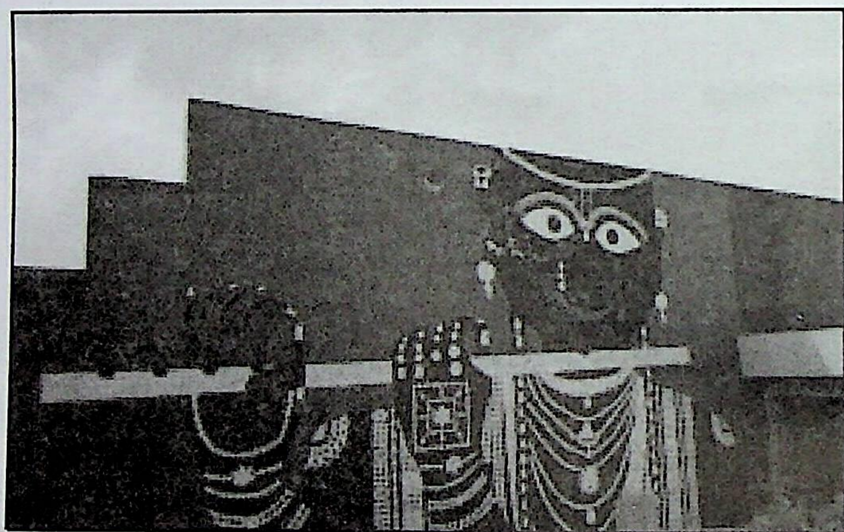
पोथीखाना

संग्रहालय के पोथीखाना में दुर्लभ हस्तलिखित ग्रंथ, चित्रित ग्रंथ, गुटखे एवं मानचित्र आदि संग्रहित किए गए हैं। रीति, शृंगार एवं भक्ति पर आधारित हस्तलिखित ग्रंथ 'वेलीकृष्णरुक्मणि', नाटक 'पलण्डु मण्डनं', ई.1725 में सवाई जयसिंह (द्वितीय) द्वारा प्राप्त की गई पारसी हस्तलिखित ग्रंथ जमात्री (ज्यामिति) जिस पर आलमगीर बादशाह गाजी हिजरी 1078 अकबराबाद (दिल्ली) की मुहर लगी है इत्यादि प्रमुख हैं। ज्योतिष (सं.1557), गणित, चिकित्सा, कला, संस्कृति, इतिहास, स्थापत्य इत्यादि से सम्बन्धित अनेक हस्तलिखित एवं मुद्रित पुस्तकें पोथीखाना में उपलब्ध हैं।

महाराजा सवाई भवानीसिंह दीर्घा

जयपुर की परम्परागत कला एवं शिल्प के नमूनों को संरक्षित करने के उद्देश्य से जयपुर राजवंश के उत्तराधिकारी भवानीसिंह के सहयोग से सिटी पैलेस में 'फ्रैण्ड्स ऑफ दी म्यूजियम, आर्टिस्ट एण्ड क्राफ्ट्समैन' नाम से म्यूजियम आरम्भ किया गया। राष्ट्रीय एवं प्रांतीय स्तर पर पुरस्कृत विभिन्न कलाकारों एवं शिल्पियों की कलाकृतियों को इस संग्रह में स्थान दिया गया। यह संग्रह अब महाराजा सवाई भवानीसिंह दीर्घा कहलाता है। इसकी कलाकृतियां पर्यटकों द्वारा खरीदी भी जा सकती हैं।

जवाहर कला केन्द्र, जयपुर



जवाहर कला केन्द्र संग्रहालय नहीं है, कला संस्थान है, किंतु उसमें रखी कलाकृतियां एवं वास्तु-रचनाएं उसके संग्रहालय होने का आभास देती हैं। यह लगभग 9.5 एकड़ क्षेत्र में फैला हुआ है। इसका उद्घाटन 8 अप्रेल 1993 को तत्कालीन राष्ट्रपति डॉ. शंकर दयाल शर्मा ने किया था। भारत भवन भोपाल और गोवा आर्ट अकादमी जैसे कला संस्थानों के ख्यातिप्राप्त वास्तुविद् चार्ल्स कोरिया की वास्तुकला पर खड़ा और विशाल परिसर में करौली के लाल पत्थरों से निर्मित यह भवन, दर्शकों को सहज ही आकर्षित करता है। इस बहुआयामी कला संस्थान में ऑडियो-विजुअल विभाग, चाक्षुष कला विभाग, संगीत एवं नृत्य विभाग तथा नाटक विभाग के साथ-साथ एक समृद्ध पुस्तकालय भी है जहाँ कला एवं संस्कृति से सम्ब) हजारों दुर्लभ ग्रंथ संग्रहित हैं। इसके विशाल तोरणद्वार से प्रवेश करते ही दाईं ओर थियेटर है जिसके मुख्य द्वार पर नाट्यकला के प्रतीक स्वरूप दो स्तम्भों पर कठपुतलियां खड़ी हैं। थियेटर भवन में मुख्य थियेटर और 'एरेना' है, जिन्हें क्रमश: 'रंगायन' एवं 'कृष्णायन' कहते हैं।

इसी भाग में नाट्य विभाग का कार्यालय भी है। नाट्य विभाग के ठीक सामने संदर्भ कक्ष है जिसके निचले खण्ड में पुस्तकालय और ऊपर ऑडियो-विजुअल भाग है, जहाँ संदर्भ सामग्री के अलावा रिकॉर्ड्स (ग्रामोफोन) और ऑडियो-वीडियो कैसेट्स संग्रहित हैं।

मुख्य द्वार से प्रवेश करने के बाद बरामदा पार करके गोल गुम्बद है। इस गुम्बद के ऊपरी हिस्से में एक द्वीप का चित्र बना है जिसका चित्रांकन प्रसिद्ध चित्रकार श्रीलाल जोशी, घनश्याम निम्बार्क और मोहन सोनी ने किया है। गोल गुम्बद से ही गोलाकार मंच और प्रेक्षागृह दिखाई देता है जो 'मध्यवर्ती' कहलाता है। राजस्थान के बावड़ी स्थापत्य पर आधारित इस खुले प्रांगण के बीचोंबीच गोलाकार रंगमच है, जो लोकनृत्यों और लोकनाट्यों के प्रदर्शन के लिए आदर्श स्थान है। गोल गुम्बद के नीचे से बाईं ओर सीढ़ियां बनी हैं। उन्हें चढ़कर प्रशासनिक विभाग में जा सकते हैं। नीचे सत्कार-गृह है। इसके बाईं ओर लोक कला केन्द्र अथवा संग्रह-1 है जिसमें 'सुकृति', 'सुरेख' एवं 'सुदर्शन' कक्ष है। यहाँ अस्थाई प्रदर्शनियाँ आयोजित की जाती हैं। लोक कला केन्द्र के ऊपर जो वीथिका है, वह चारों ओर निर्मित होने के कारण 'चतुर्दिक' कहलाती है। लोककला केन्द्र से हम संग्रह-2 और अलंकार गैलेरी की ओर जाते हैं जहाँ राजस्थान के जनजीवन से सम्बद्ध घरेलू बर्तन भाण्डे, रंग-बिरंगे कपड़े, तरह-तरह के आभूषण और शादी-विवाह के अवसरों पर काम में आने वाली मूर्तियां, तोरण-थंभ, मंदिरों में रथयात्रा के अवसर पर प्रयुक्त होने वाले रथ, हाथी, घोड़े, दरवाजे-चौखट और पालने आदि प्रदर्शित हैं।

राजस्थानी धार्मिक-संस्कृति की पहचान पड़ एवं कांवड़ भी यहाँ देखी जा सकती है। कपड़े पर चित्रित राजस्थानी वीरों के जीवन वृत्त को पड़ कहते हैं। इनका चित्रण भीलवाड़ा जिले में होता है। कांवड़ लकड़ी के चित्रित मंदिर होते हैं, जिन्हें लेकर नायक गांव-गांव में घूमते हैं और लोगों को रामकृष्ण के दर्शन कराकर उनकी कथाएं गाकर सुनाते हैं। अलंकार गैलेरी से निकलते ही हम 'सृजन खण्ड' में प्रवेश करते हैं। यहाँ दाईं ओर स्टूडियो में कलाकार प्रिण्ट बनाते हैं। एक मूर्तिकला स्टूडियो भी बनाया गया है। 'सृजन' में बाईं ओर पारिजात-1 एवं पारिजात-2 नामक दो कलाकक्ष हैं, जहाँ नवोदित कलाकारों की कृतियां प्रदर्शित की जाती हैं। श्वेत संगमरमर और काले ग्रेनाइट के संयोजन से बने फर्श के कारण यह कक्ष अपने आप में अनूठा है। यहाँ केन्द्र का स्थाई संग्रह- समसामयिक कलाकृतियां प्रदिर्शत हैं। यह भी दो मंजिला है तथा एक स्तम्भ पर टिकी छत अत्यंत भव्य है। स्फटिक वीथिका से लगा एक छोटा कक्ष है जिसमें अस्थाई प्रदर्शनियों का आयोजन किया जाता है।

केन्द्र का चाक्षुष कला विभाग चित्रों, मूर्तियों और अन्य कलाकृतियों को प्रदर्शित करता है। केन्द्रीय कला अकादमी तथा भारतीय सांस्कृतिक परिषद, नई दिल्ली के सहयोग से विदेशी कलाकारों की प्रदर्शनियां भी आयोजित की जाती हैं। चाक्षुष कला विभाग के अंतर्गत ही आता है- 'शिल्पग्राम' जो समय-समय पर शिल्प बाजार लगाकर हस्तकौशल को बढ़ावा देता है और आम लोगों को शिल्पियों के कला-कौशल से परिचय करवाता है। शिल्पग्राम के प्रांगण में बने घर राजस्थान के मारवाड़, शेखावाटी,

ब्रज, हाड़ौती, वागड़ और मरुक्षेत्र के स्थापत्य का प्रतिनिधित्व करते हैं। नाट्य विभाग, केन्द्र में नाटक तैयार करता है, बाहरी निर्देशकों को आमंत्रित कर उनकी कृतियां प्रस्तुत करता है तथा बालकों के लिए प्रशिक्षण शिविरों का आयोजन करता है। इन शिविरों में नाट्य विद्या से सम्बद्ध सभी पक्षों पर जानकारी दी जाती है। जनजीवन में नाट्य चेतना जागृत करने के लिए राजस्थान के विभिन्न क्षेत्रों में रंग चेतना शिविरों का आयोजन किया जाता है। यह विभाग प्रदेश के लोकनाट्यों को प्रकाश में लाने और नाटक की मुख्य धारा से जोड़ने का प्रयास करता है।

केन्द्र का चौथा विभाग है- प्रलेखन, जिसके अंतर्गत पुस्तकालय और ऑडियो-वीडियो विभाग आते हैं। केन्द्र में होने वाले कार्यक्रम का प्रलेखन तो यह विभाग करता ही है, विलुप्त होती कला विद्याओं के ऑडियो-वीडियो कैसेट्स में रिकॉर्डिंग कराकर उन्हें सुरक्षित भी करता है।

जवाहर कला केन्द्र द्वारा प्रदेश की संस्कृति, भूगोल, पुरातत्व, पुरा-इतिहास आदि विविध विषयों पर पुस्तकों की पाण्डुलिपियां आमंत्रित कर उनका प्रकाशन करवाया जाता है। केन्द्र द्वारा नाट्य लेखन प्रतियोगिताओं का आयोजन कर सर्वश्रेष्ठ नाटकों का प्रकाशन एवं मंचन करवाता है।



अध्याय - 31

आधुनिक कला संग्रहालय, जयपुर

आधुनिक कला संग्रहालय की स्थापना ई.1977 में की गई। इसमें राष्ट्रीय एवं राज्य स्तरीय कलाकारों की कृतियों को प्रदर्शित किया गया है। संग्रहालय स्थापित करने का मुख्य उद्देश्य आधुनिक कला के ऐतिहासिक विकास को उजागर करना है। यह कला संग्रहालय पहले पुरातत्व विभाग के अधीन था, किंतु अब राजस्थान ललित कला अकादमी के अधीन कार्यरत है तथा राम निवास बाग में रवीन्द्र मंच भवन की पहली मंजिल पर ललित कला अकादमी परिसर में स्थित है। रविवार तथा राजकीय अवकाशों को छोड़कर शेष दिवसों में प्रातः 10 बजे से सायं 5 बजे तक यह संग्रहालय दर्शनार्थियों के लिए खुला रहता है। इस संग्रहालय में अंतर्राष्ट्रीय एवं राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त 125 चित्रकारों के चित्र संग्रहित हैं। इनमें जे. स्वामीनाथन, वेद नायर, जी. आर. संतोष, शैलोज मुखर्जी, ए. रामचंद्रन, सतीश गुजराल, देवकीनंदन शर्मा, कृपालसिंह शेखावत, रॉरिक निकोलस, शैल चोयल, पी. एन. चोयल, प्रभाकर बरवै, गोवर्धन लाल जोशी, बसंत कश्यप, रामगोपाल विजयवर्गीय, जगमोहन चौपड़ा, विद्यासागर उपाध्याय, नरीन नाथ, एफ. एन. सूजा, मोहन शर्मा, रामेश्वर सिंह, सूर्यप्रकाश, अनुपम सूद, परमजीतसिंह, कृष्ण खन्ना, विमलदास गुप्त, राधा वल्लभ गौतम, एस. नंदगोपाल, हिम्मत शाह, ज्योति स्वरूप, पिराजी सागरा, ब्रई प्रकाश, समंदर सिंह खंगारोत, भूरसिंह शेखावत तथा नाथूलाल वर्मा आदि सम्मिलित हैं। आधुनिक कला संग्रहालय के साथ राजस्थान ललित कला अकादमी में भी आधुनिक कलाकारों के चित्रों का संग्रहण एवं प्रदर्शन किया जाता है। अकादमी के संग्रह में 400 वरिष्ठ एवं युवा चित्रकारों के चित्र संग्रहित हैं।



अध्याय - 32

श्री रामचरण प्राच्य विद्यापीठ एवं संग्रहालय, जयपुर

इस संग्रहालय की स्थापना ई.1960 में हुई। ई.1979 में इसे पंजीकृत न्यास बनाया गया। इसके दो प्रमुख विभाग हैं- (1.) प्राच्य विद्यापीठ तथा (2.) प्राच्य संग्रहालय। इस संस्था के प्रमुख कार्य प्राचीन पाण्डुलिपियों की खोज, प्रकाशन तथा संरक्षण एवं कला वस्तुओं का संग्रहण, प्रदर्शन और संरक्षण है। संस्था में 18 विभाग बनाए गए हैं-

(1.) हस्तलिखित एवं प्रकाशित ग्रंथ विभाग,

(2.) ऐतिहासिक पुरालेख विभाग,

(3.) धातुशिल्प,

(4.) काष्ठकला,

(5.) प्रस्तर शिल्प एवं पक्व मृद्,

(6.) खनिज, रत्नोपल एवं जीवाश्म,

(7.) वस्त्रकला,

(8.) प्राचीन आयुध,

(9.) विनिमय मुद्रा, टंक मुद्रा एवं डाक मुद्रादि,

(10.) लोक एवं समसामयिक चित्रकला,

(11.) तंत्र-मंत्र कला, चित्र एवं पराप्राकृत वस्तु विभाग,

(12.) वास्तुशिल्प चित्रादि,

(13.) ललित कला,

(14.) घरेलू कला एवं लोककला,

(15.) चीनी मिट्टी एवं कांच कला,

(16.) आयुर्वेद एवं रस-रसायन,

(17.) खगोल, ज्योतिष विज्ञान,

(18.) शोध एवं प्रकाशन विभाग।

प्रदर्शित विभागों में लगभग 45 हजार प्राचीन हस्तलिखित ग्रंथ एवं 1 लाख दुर्लभ

वस्तुओं की वर्गीकृत सामग्री विधिवत् सुरक्षित है। 11वीं शताब्दी से लेकर 19वीं शताब्दी तक के संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश, ब्रज, राजस्थानी, गुजराती, मराठी आदि विभिन्न भारतीय भाषाओं के बहुमूल्य ग्रंथ हैं। धर्म, दर्शन, वेद, पुराण, अध्यात्म, ज्योतिष, व्याकरण, तंत्र-मंत्र, इतिहास, भूगोल, आयुर्वेद, काव्य, जैन साहित्य, कामशास्त्र, पाकशास्त्र, सामुद्रिक शास्त्र, वास्तुकला, स्थापत्य, चित्रकला, अस्त्र-शस्त्र एवं विभिन्न कलाओं तथा विधाओं से सम्बन्धित प्राचीन ग्रंथ हैं। काली सहस्त्रनाम, विष्णु सहस्त्रनाम आदि सहस्रनामों एवं गणेश तथा लक्ष्मी विषयक अनेक ग्रंथ भी संगृहीत हैं। हेमचंद्राचार्य द्वारा 11वीं शताब्दी में रचित धर्म एवं काव्य शास्त्र विषयक कृतियां विशेष रूप से दृष्टव्य हैं।



ज्योतिष पर संस्कृत के लगभग 250 ग्रंथों में से भृगु संहिता, मीनराज, नरचंद्र आदि एवं प्राचीन पंचांग तथा जन्मकुण्डलियां उपलब्ध हैं। भोजपत्र, हाथीदांत, ताड़पत्र और ताम्रपत्र पर लिखित लगभग 50 ग्रंथ भी संग्रहित हैं। इसी प्रकार 12वीं शती से 14वीं शती के संस्कृत ग्रंथों में वृहत् रत्नाकर, नैषध्, किरातार्जुनीय उल्लेखनीय हैं। मूर्तिकला, चित्रकला, देवी-देवताओं, पूजा-विधान और प्राचीन काल के विज्ञानों पर अनेक दुर्लभ पाण्डुलिपियां संग्रहित हैं।



अध्याय - 33

दिलाराम बाग संग्रहालय, आमेर

यह राजकीय संग्रहालय ई.1940 में हवामहल में स्थापित किया गया था। कुछ वर्ष बाद इसे पुराने घाट स्थित विद्याधर बाग में स्थानांतरित किया गया। ई.1950 में इस संग्रहालय को दिलाराम बाग में स्थानांतरित किया गया। दिलाराम बाग का वास्तविक नाम दिल-ए-आराम बाग है। इस संग्रहालय में तीन कमरे और दो बरामदे हैं। कमरों के शो-केसों में रैढ़, बैराठ, आहड़, नगर, चंद्रावती तथा सांभर आदि स्थलों के उत्खनन से प्राप्त पुरातात्विक सामग्री प्रदर्शित की गई है। संग्रहालय में प्राचीन प्रस्तर प्रतिमाएँ एवं उत्खनन से प्राप्त मृद्पात्र, मृण्मय मूर्तियां, पाषाण मनके, मिट्टी के मनके, ताम्र वस्तुएं, लौह सामग्री, शृंगार की नित्य उपयोग की सामग्री, खिलौना गाड़ी आदि प्रदर्शित हैं। बैराठ से मौर्य कालीन सभ्यता के अवशेष मिले हैं जिनमें प्रमुख रूप से उत्तरी भारत के पॉलिश युक्त मृद्पात्र हैं। इसी प्रकार रैढ़, बैराठ, सांभर नगर से प्राप्त मिट्टी की मूर्तियों में विदेशी प्रभाव परिलक्षित होता है, विशेषत: उन प्रतिमाओं में जो मृद्पात्रों के हैण्डल पर बनाई गई हैं। आहड़ की खुदाई से प्राप्त तीन हजार साल पुराने काले एवं लाल रंग के मृदपात्र तथा कालीबंगा की खुदाई से प्राप्त हड़प्पा संस्कृति के विशेष प्रकार के मृद्पात्र भी प्रदर्शित हैं। चन्द्रावती, आमेर, पिलौदा, देवयानी, किराड़ू, ओसियां, नगर, आभानेरी की प्रतिमाएँ भी प्रदर्शित की गई हैं। इसमें सबसे महत्वपूर्ण प्रतिमाओं का समूह- आभानेरी (दौसा) से उपलब्ध 8-9वीं शताब्दी की प्रतिहार कालीन प्रतिमाओं का है। इन प्रतिमाओं में गजलक्ष्मी, शृंगार दुर्गा, लक्ष्मी नारायण, पार्वती, वेणुवादक, केशिनीसूदन, सूर्य, गणेश तथा अन्य देवी-देवता दर्शनीय हैं। बरनाला से प्राप्त लाल पत्थर के दो 'यूप स्तम्भ' ऐतिहासिक दृष्टि से उल्लेखनीय हैं। 'नगर' की खुदाई कृष्णदेव के नेतृत्व में हुई थी। यहाँ के उत्खनन का विवरण प्रकाशित नहीं हुआ है तथापि पुरातत्व संग्रहालय, आमेर में नगर से उपलब्ध सामग्री रखी हुई है। मृद्पात्रों के ऐसे उदाहरण भी मिले हैं जो तांबे के तार द्वारा जोड़े गए हैं। विराटनगर के उत्खनन से ऐसे ही मृद्पात्र उपलब्ध हुए हैं, जो राजकीय संग्रहालय आमेर में सुरक्षित हैं।



अध्याय - 34

गुड़िया एवं कठपुतली संग्रहालय, जयपुर



जयपुर नगर में जवाहर लाल नेहरू मार्ग पर स्थित तीन मूर्ति सर्किल पर सेठ आनंदी लाल पोद्दार मूक-बधिर विद्यालय परिसर में गुड़ियों एवं कठपुतलियों का संग्रहालय स्थापित किया गया है जिसे गुड़ियाघर के नाम से जाना जाता है। इसका निर्माण भगवानी बाई सेखसरिया चैरिटी ट्रस्ट जयपुर द्वारा करवाया गया है। यह एक सांस्कृतिक संग्रहालय है। 7 अप्रेल 1979 को राजस्थान के तत्कालीन मुख्यमंत्री भैरोंसिंह शेखावत द्वारा इस संग्रहालय का उद्घाटन किया गया। इस गुड़ियाघर में भारत सहित अनेक देशों की गुड़ियाएं प्रदर्शित की गई हैं। इन गुड़ियों की बनावट, सजावट एवं चेहरे की आकृति, अपने देश की संस्कृति, कला, वेशभूषा और चेहरों का ज्ञान कराती है। संग्रहालय की प्रत्येक गुड़िया अपने क्षेत्र, प्रदेश एवं राष्ट्र की संस्कृति को उजागर करती है। इन गुड़ियों के माध्यम से उसके देश की संस्कृति, सभ्यता, वस्त्र-पोशाक व्यवसाय, रीति-रिवाज तथा उस देश के नागरिकों के मनोविज्ञान की जानकारी मिलती है।

संग्रहालय में भारत के विभिन्न प्रदेशों में प्रचलित गुड़ियाओं एवं कठपुतलियों के नमूने प्रदर्शित किए गए हैं जिनमें राजस्थानी ग्रामीण युगल, पंजाबी तथा गुजराती वेशभूषा से सजे-सवरे दम्पत्ति, गहनों से सजी बंजारन, कुल्लू में सेव के बगीचे में फल ढोते हुए

कृषक दम्पत्ति की अनुकृति, गर्म अंगीठी हाथ में लिए हुए कश्मीरी लड़कियों आदि की गुड़ियाएं प्रमुख हैं। महाराष्ट्र, तमिलनाडु, आसाम, बंगाल, नागालैण्ड, बिहार के संथाल, मध्यप्रदेश के बस्तर आदि में रहने वाले स्त्री-पुरुषों की पोशाकों में सजी-धजी गुड़ियाओं के युगल देखते ही बनते हैं। कुछ गुड़ियाएं विभिन्न व्यावसायिक जातियों के स्त्री-पुरुषों की भी हैं, जैसे- सपेरा, मछियारिन आदि।



विदेशी संस्कृति एवं लोकजीवन से परिचय कराने के उद्देश्य से इस संग्रहालय में अनेक विदेशी गुड़ियों का प्रदर्शन किया गया है। वाद्ययंत्र बजाती जापानी युवती, बेल्जियम के लोकनर्तक, ब्राजील की स्कूली छात्राएं परम्परागत पोशाकों में सजी हुई हैं। बल्गारिया, स्पेन, डेनमार्क, मिस्त्र, जर्मनी, ग्रीस, मेक्सिको, आयरलैण्ड आदि राष्ट्रों की गुड़ियाएं भिन्न-भिन्न आकार, वेशभूषा एवं साज-सज्जा से युक्त हैं।



अध्याय - 35

श्री संजय शर्मा संग्रहालय एवं शोध संस्थान, जयपुर



श्री संजय शर्मा संग्रहालय एवं शोध संस्थान जयपुर, आमेर रोड पर जलमहल के समक्ष स्थित है। इस नवीन भवन का निर्माण सितम्बर 2013 में पूरा हुआ। इससे पहले यह संग्रहालय चौड़ा रास्ता के निकट ठठेरों का रास्ता में स्थित था, जहाँ इसकी स्थापना ई.1955 में पण्डित रामकृपालु शर्मा ने की थी। कला एवं सांस्कृतिक विरासत के इस विलक्षण संग्रहालय में हजारों कलाकृतियों सहित लगभग 1.25 लाख पांडुलिपियों का विपुल संग्रह विद्यमान है। यह भारतीय साहित्य, संस्कृति और कला वस्तुओं का अद्‌भुत एवं अद्वितीय संग्रहालय है जिसे पं. रामकृपालु शर्मा ने अर्ध-शताब्दी की एकनिष्ठ साधना, समर्पण और श्रद्धा से निर्मित किया है। यहाँ वेद विद्या, रसायन, ज्योतिष, तंत्र-मंत्र, आयुर्वेद, धनुर्वेद, चिकित्सा, तांत्रिक साधना, अवतार कथाओं से सम्बन्धित प्रामाणिक और प्रायोगिक ज्ञान का दुर्लभ संग्रह उपलब्ध है।

यहाँ भवन निर्माण, मंदिर निर्माण, ग्रह-नक्षत्र, तारक मण्डल, पंचांग निर्माण से सम्बन्धित असंख्य चित्रों, यंत्र-मंत्र-तंत्र के विलक्षण रेखाचित्रों, विभिन्न शैलियों के चित्रों, कलाकृतियों और मानचित्रों का विशाल संग्रह है। यह संग्रह काष्ठ कला, शिल्प कला, कलम-दवात, लेखन सामग्रियों, शस्त्रास्त्र, पारद कृतियों, रत्नमय गणेश

प्रतिमाओं, विभिन्न धातुओं से निर्मित चरण पादुकाओं, शताब्दियों पुराने दीपकों, दीपाधारों, वेदों और वैदिक देव स्वरूपों की चित्रकृतियों से अलंकृत है।

कलाकृतियाँ

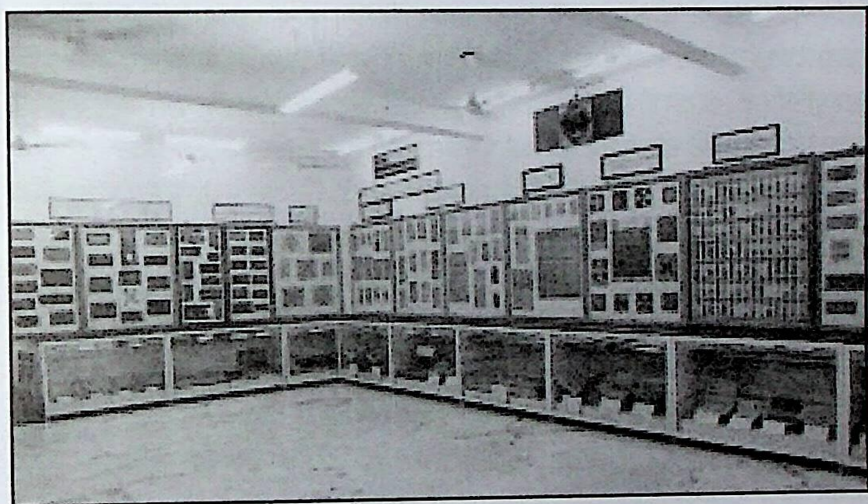
इस संग्रहालय में विभिन्न सम्प्रदायों, पंथों, महाराजाओं, बादशाहों, श्रेष्ठियों द्वारा पहनी जाने वाली चरण पादुकाओं के साथ ही पूजा में रखी जाने वाली, प्रायश्चित के लिए स्वयं को दण्डित करने वाली, चाँदी, सीप, तारकशी, पच्चीकारी, हाथी दाँत, लौह तथा काष्ठ की विविध प्रकार की पादुकायें संग्रहित हैं। विविध प्रकार के शस्त्रास्त्र यथा धनुष-बाण, तरकश और दिव्यास्त्रों का संग्रह भी है। संग्रहालय में शताब्दियों तक जलते रहे दीप जैसे- गरुड़ दीप, राजलक्ष्मी दीप, वानराकृति दीप, शुकाकृति दीप और वायुदाब पर संचालित होने वाले दीप प्रदर्शित किए गए हैं तथा 14वीं शताब्दी से लेकर 20वीं शताब्दी तक के दीपक उपलब्ध हैं। राजाओं-रानियों और श्रेष्ठि-पत्नियों द्वारा आमोद-प्रमोद के साधनों के रूप में प्रयुक्त विविध प्रकार की चौपड़, शतरंज, गंजीफा, दसकौड़ा, सर्पसीढ़ी आदि खेल सामग्री भी प्रदर्शित है।

चित्र प्रभाग

संग्रहालय में ग्लास पेंटिंग्स के रूप में चीन, डच, फ्रान्स शैली तथा देश की महाराष्ट्र, तंजौर, मैसूर, बंगाल, बुन्देलखण्ड, उज्जैन, मालवा, अवध, शेखावाटी आदि की 15 शैलियों और ऐतिहासिक विषयों से सम्बन्धित सैकड़ों चित्रकृतियाँ उपलब्ध हैं। श्रीमद्भागवत के कथानायक भगवान श्रीकृष्ण और उनकी लीलाओं के महाराष्ट्र शैली के चित्र तथा श्रीनाथजी के विविध स्वरूपों की मनोहारी झांकियों की चित्र श्रृंखला भी उपलब्ध है। संग्रहालय में 15वीं शताब्दी से लेकर अद्यतन चित्रकला का इतिहास जीवन्त हो उठा है। जयपुर, जोधपुर, मेवाड़, बूंदी, कोटा, सिरोही, झालावाड़, किशनगढ़, नाथद्वारा, तंजौर, हैदराबाद, मैसूर, गुजरात, मुगल, पहाड़ी, इस्लामी, उड़िया, पंजाबी और बंगला शैली के चित्रों का भरपूर प्रतिनिधित्व हुआ है।

सर्वोपयोगी 18वीं शती की योग चित्रावली, बालक-बालिकाओं के मनोरंजन से सम्बन्धित खेल चित्रावली, तांत्रिक चित्रावली, जैन चित्रावली, विभिन्न शैलियों की पिछवाइयां, राजा-महाराजाओं के चित्र, ईस्ट इण्डिया कम्पनी काल की पटना शैली की अभ्रक चित्रावली तथा लोक कला से सम्बन्धित सहस्त्राधिक चित्रों का संग्रह इस संग्रहालय की अमूल्य निधि है। प्राचीन भारत में खेले जाने वाले 22 से अधिक प्रकार के इन्डोर एवं आउटडोर गेम्स के साथ ही बच्चों के मनोविज्ञान को समझने हेतु विभिन्न प्रकार की खेल पहेलियाँ एवं त्रिआयामी चित्र भी उपलब्ध हैं।

संग्रहालय में अनेक सुप्रसिद्ध चित्रकारों के हस्ताक्षरित चित्र भी विद्यमान हैं। इनमें उल्लेखनीय चित्रकार हैं- बघेरा (अजमेर) के कालूराम साध, झालावाड़ के काशीराम



दादूजी के शिष्य जयतराम, बीकानेर के मुरादबक्श और गज चितेरा– नाथू चितेरा, जयपुर निवासी सालिगराम, गणेश मुसब्बर, रामप्रताप, रामचन्द्र, छाजू चितेरा, चन्द्र चितेरा, यजेन्द्र शर्मा, जोधपुर के दाना भाटी, आसिन्द देवगढ़ निवासी सांवलदान, बुन्देलखण्ड निवासी मुरलीधर बक्शी, उदयपुर निवासी साहिबदीन, सांवर निवासी गंभर आदि।

संग्रहालय में 15वीं शताब्दी से 20वीं शताब्दी तक के बूंदी, तंजौर, मेवाड़, सिरोही, उड़ीसा, बीकानेर, पंजाब, मुगल आदि शैलियों के आकर्षक ग्रन्थ आवरण भी उल्लेखनीय हैं।

वस्त्र विभाग

संग्रहालय में शताब्दियों का वैविध्यपूर्ण इतिहास समेटे वस्त्रों के विविध प्रकार के सैकड़ों नमूने सुसज्जित हैं। मध्यकाल में प्रयुक्त विभिन्न प्रकार की बिछायतें, गोटा, बन्धेज और जरी के काम के कपड़े, मेनचेस्टर में सांगानेरी डिजाइन की छींटे, मछलीपट्टम् की कलमकारी, कश्मीरी कशीदाकारी के अतिरिक्त शेखावाटी, मुगल, बनारस, मेवाड़ शैलियों के अलंकृत वस्त्र भी यहाँ संरक्षित हैं। 15वीं से 20वीं शताब्दी तक के राजस्थानी और गुजराती छपाई के नायाब नमूने भी संग्रहालय की शोभा बढ़ा रहे हैं। यहाँ विश्वविख्यात सांगानेरी प्रिन्ट पर दशावतार का आलंकारिक तोरणद्वार है जिस पर 18वीं शताब्दी की उत्कृष्ट कलमकारी देखते ही बनती है।

शिल्प प्रभाग

यहाँ नागौर शैली की काष्ठ निर्मित वाद्यवादिका मण्डली की दुर्लभ और मनोहारी कलाकृतियों के साथ ही जयपुर, बूंदी, महाराष्ट्र, उड़ीसा और बुन्देलखण्ड एवं बीकानेर की मुंह–बोलती काष्ठ प्रतिमाएँ भी विद्यमान हैं। बंगाल और कम्पनी शैली के पक्वमृद (टेराकोटा) की प्रचीन मूर्तियां, प्रस्तर व लकड़ी की विभिन्न आकार की खूंटियां,

विभिन्न प्रकार के दीपक, पानी वाला पत्थर, हिलने वाला पत्थर, विभिन्न प्रकार के कलमदान, फोल्डिंग कमलदान, सीप और लोहे की दवातों के साथ हस्तलिखित पाण्डुलिपियों, ताड़पत्रों तथा भुर्जपत्रों के पठन में प्रयुक्त होने वाली रहलें और सीप के काम का झूला भी संग्रहालय की अनुपम धरोहर है।

पाण्डुलिपि प्रभाग

संग्रहालय में पाण्डुलिपियों के समृद्ध संग्रह की शुरुआत मात्र चार हस्तलिखित ग्रन्थों से हुई थी, किन्तु आज यहाँ एक लाख पच्चीस हजार से भी अधिक हस्तलिखित ग्रन्थ, ताड़पत्र ग्रन्थ और भुर्जपत्र ग्रन्थों का अमूल्य संग्रह है, जिसमें संसार की 16 भाषाओं और 56 से अधिक विषयों का व्यापक विषय विश्लेषण विद्यमान है। संग्रहालय की हस्तलिखित प्राचीन पाण्डुलिपियों में ब्राह्मी, शारदा, तिब्बती, अरबी, फारसी, उर्दू, तिरहुत, मलयालम, कन्नड़, गुजराती, मराठी, उड़िया, संस्कृत, प्राकृत, हिन्दी, बर्मी, अंग्रेजी आदि लिपियों तथा भाषाओं की पाण्डुलिपियां संग्रहीत एवं संरक्षित हैं। संग्रहीत पाण्डुलिपियां एवं कलात्मक सामग्री श्री रामकृपालु शर्मा ने भारत के विभिन्न प्रान्तों तथा गांवों के आन्तरिक स्थानों पर पहुँचकर एकत्र की है। इन्होंने प्रमुख रूप से उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, गुजरात, कश्मीर, पंजाब, हरियाणा, महाराष्ट्र, तमिलनाडु, केरल, गोवा, बंगाल, उड़ीसा, दत्रिणी भारत, राजस्थान में जयपुर के अतिरिक्त जोधपुर, कोटा, बूंदी, उदयपुर, सिरोही, किशनगढ़, नागौर, नाथद्वारा, बीकानेर आदि हैं।

संग्रहालय की अनूठी धरोहर के रूप में शब्दभेदी बाण विद्या का ग्रन्थ, संगीत, नृत्य और नाटय शास्त्र के सचित्र ग्रन्थ, वाद्य यंत्रों के निर्माणपरक सचित्र ग्रन्थ, परा–अपरा विद्याओं से सम्बन्धित चित्रमय ग्रन्थ, रसायन विज्ञान से सम्बन्धित सचित्र ग्रन्थ, शकुन शास्त्र के सचित्र ग्रन्थ, गज चिकित्सा और अश्व चिकित्सा से सम्बन्धित चित्रमयी कृतियां तथा 15वीं शताब्दी की कल्पसूत्र पद्धति पर आधारित सचित्र भागवत आदि कृतियां इस संग्रहालय की समृद्धि को द्विगुणित कर रही हैं। प्रमख ग्रन्थकारों में सेवग अखेराम, मूलचन्द, कवीन्द्र प्रभाकर, काशीनाथ शास्त्री, मधुसूदन ओझा, टिहरी गढ़वाल के महाराजा उत्तम सिंह आदि के स्वलिखित, स्वरचित अलभ्य ग्रन्थ बड़ी संख्या में उपलब्ध हैं। इनके अतिरिक्त बहुत से विद्वानों के अपने जीवनकाल के स्वलिखित, स्वरचित सहस्त्राधिक ग्रन्थ भी संग्रहालय में विद्यमान हैं।

तंत्र, मंत्रख यंत्र

भारतीय तंत्र, मंत्र, यंत्र से सम्बन्धित अत्यन्त दुर्लभ सामग्री के साथ वैविध्यमूलक यंत्रों के सैकड़ों वर्ष पुराने चित्र संग्रहालय में विद्यमान हैं। सर्व सिद्धिदायक और शिव शक्ति को प्रसन्न करने वाली तांत्रिक साधना की आधारभूत सामग्री और शिवाम्बु कल्प (मूत्र चिकित्सा) पर भी महत्त्वपूर्ण कृतियां संग्रहालय में विद्यमान हैं।

ज्योतिष

संग्रहालय में मानव की भविष्य सम्बन्धी जिज्ञासाओं को शांत करने वाले ज्योतिष से सम्बन्धित बहुमूल्य ग्रन्थ विद्यमान हैं। यथा- फलित ज्योतिष, गणित ज्योतिष, स्वर ज्योतिष, स्वप्न ज्योतिष, छाया ज्योतिष, शकुन ज्योतिष, सामुद्रिक ज्योतिष, और रमल ज्योतिष की पाण्डुलिपियां संग्रहालय में सुलभ हैं। यहाँ भूगोल खगोल से सम्बन्धित विद्यावाचस्पति पंडित मधुसूदन ओझा के हाथ से बनाए हुए सैकड़ों चित्रों तथा ग्रन्थों का अद्वितीय संग्रह है। महाराजा सवाई जयसिंह ने दिल्ली, जयपुर, उज्जैन, बनारस और मथुरा में जिन वेधशालाओं का निर्माण किया था, उनके सूक्ष्म प्रतिरूप यंत्र और यंत्रों को निर्मित करने वाले औजार भी संग्रहालय की विलक्षण विशेषता है। सृष्टि के उद्भव को रेखांकित करती देव ऋषि, मनुष्य, तिर्यक वर्गों की उत्पत्ति से सम्बन्धित सचित्र ग्रन्थावली और 'सचित्र पट' भी यहाँ उपलब्ध है।

वास्तु शास्त्र प्रभाग

भवनों और मन्दिरों के निर्माण से सम्बन्धित विविध और वास्तुविद्या का विश्लेषण करने वाले सचित्र ग्रन्थों के साथ सैकड़ों दुर्लभ मानचित्रों का वैशिष्ट्यपूर्ण संग्रह भी यहाँ विद्यमान है।

आयुर्वेद शास्त्र प्रभाग

पंचम वेद के रूप में स्वीकार्य आयुर्वेद और भारतीय चिकित्सा पद्धति के कल्प, रसायन, भेषज, शल्य, निदान आदि से सम्बन्धित महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ, साथ ही अयुर्वेद के अनुभूत प्रयोगों, घरेलू चिकित्सा पद्धतियों, औषधियुक्त व्यंजनों की निर्माण प्रक्रिया और रोगोपचार, बाल चिकित्सा, स्त्री चिकित्सा और सौंदर्य कल्प पर भी महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ हैं।

अभिलेख

संग्रहालय में पुरातात्विक दृष्टि से महत्त्वपूर्ण (पुराने दबे हुए खजानों की खोज से सम्बन्धित) कई बीजक पत्र हैं। इनके अतिरिक्त तत्कालीन राज्य प्रबन्ध और शासकीय कूटनीति से सम्बन्धित पट्टे परवाने, दस्तूर बहियां, राजदरबारों एवं रनिवासों के दैनिक खर्च का ब्यौरा, राजवंशावलियां, इतिहास में महत्त्वपूर्ण स्थान रखने वाले शासकों के पत्र भी यहाँ की विशिष्ट निधि है। इनके अलावा अरबी, फारसी, उर्दू के स्वर्णांकित खुशखत और सुलेख के भी नायाब नमूने यहाँ देखे जा सकते हैं।

प्रकाशन

संग्रहालय के समृद्ध संग्रह को अधिक उपयोगी बनाने के लिए संग्रहीत सामग्री के प्रलेखीकरण द्वारा ग्रन्थ-सूचियों एवं अन्य हस्तलिखित ग्रन्थों का प्रकाशन किया जा रहा है। संग्रहालय में संग्रहित 16वीं शताब्दी से 20वीं शताब्दी के हिन्दी भाषा के 657 लेखकों एवं काव्यकारों की 38 विषयों की 2,236 हस्तलिखित पाण्डुलिपियों की

वर्गीकृत सूची के रूप में ग्रन्थ पारिजात (खण्ड-1) का प्रकाशन वर्ष 2001 में किया गया है। ग्रन्थ पारिजात का दूसरा खण्ड मुद्रणाधीन है, जिसमें सेवग अखेराम एवं उनके रिश्तेदारों की रचनाओं का विवरण सम्मिलित किया गया है। संग्रहालय द्वारा तंत्र शास्त्र पर बालातप भाष्य श्रीललितासहस्त्रानामस्तोत्र (हिन्दी टीका सहित) तैयार कर प्रकाशित किया गया है। श्री संजय शर्मा संग्रहालय एवं शोध संस्थान (समर्पण की विकास यात्रा- 1955-2003) शीर्षक से प्रकाशित पुस्तिका में संग्रहालय के बारे में संक्षिप्त जानकारी दी गई है। रामकृपालु शर्मा की काव्यकृति प्रांजलि का प्रथम संस्करण 1954 में प्रकाशित हुआ। पुस्तक का सचित्र द्वितीय संस्करण वर्ष 2015 में पुनर्मुद्रित हुआ है जो विक्रयार्थ उपलब्ध है। श्री संजय शर्मा संग्रहालय एवं शोध संस्थान के संस्थापक अध्यक्ष रामकृपालु शर्मा द्वारा रचित काव्य-कृति प्रांजलि के द्वितीय संस्करण के लोकार्पण समारोह से सम्बन्धित पुस्तिका काव्य संग्रह प्रांजलि का लोकार्पण : एक प्रलेख, वर्ष 2018 में प्रकाशित हुआ।



अध्याय - 36

जयपुर के कतिपय विशिष्ट संग्रहालय

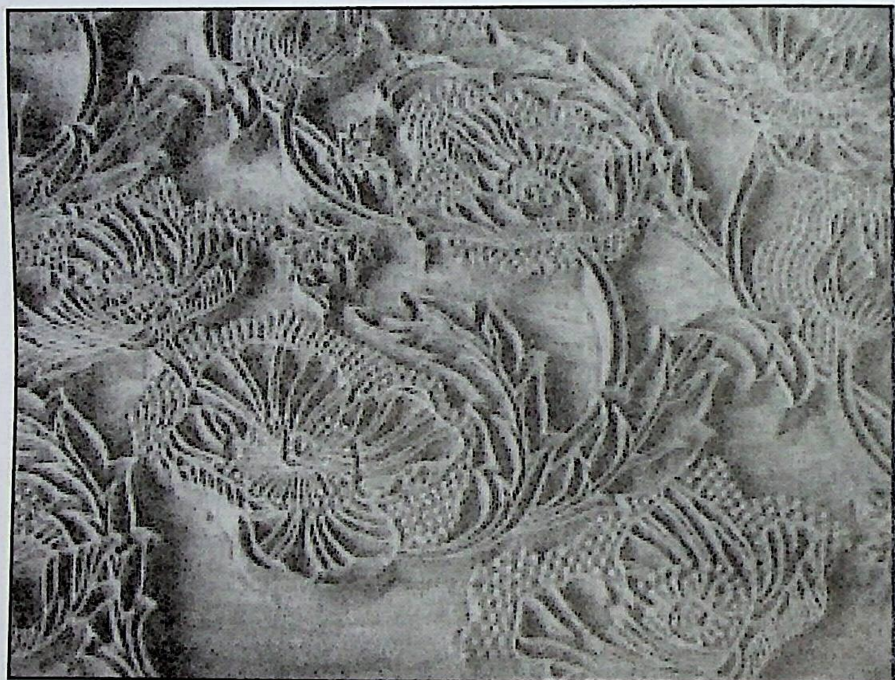
पेपरवेट संग्रहालय

यह संग्रहालय श्री गजेन्द्र जैन का निजी संग्रहालय है, जिसमें विभिन्न प्रकार के पेपरवेट संग्रहित किए गए हैं। इन पेपरवेट्स के भीतर की दुनिया बड़ी आकर्षक एवं रंग-रंगीली है। इनके भीतर विभिन्न प्रकार के पशु, पक्षी, वनस्पति, मानव आकृतियां तथा ज्यामितीय अंकन समाए हुए हैं। इस संग्रहालय में विविध विषयों के दृश्य वाले लगभग 80 पेपरवेट हैं। इस तरह के कांच के पेपरवेट ई.1850 के आसपास फ्रांस में बकारा, क्लीची और सेंटलुई नामक कम्पनियों ने बनाए। इन कम्पनियों द्वारा बनाए गए पेपरवेट में कांच के साथ लेड का मिश्रण होने से वह मजबूत, वजनी और अधिक चमकदार होते हैं। इस तरह के पेपरवेट बनाने के लिए सांचे में कांच की घास पर चीनी पॉर्सलीन से बने वांछित डिजाइन को रख देते हैं और ऊपर से पिघला हुआ कांच डाल देते हैं। इससे कांच की घास भी पिघलकर पेपरवेट के रूप में समा जाती है, किंतु पोर्सलीन नहीं पिघलता और वह डिजाइन पिघले कांच के भीतर से दमकने लगता है। ढले हुए पेपरवेट की फिनिशिंग की जाती है।

हैण्ड प्रिंटिंग अनोखी म्यूजियम

अनोखी म्यूजियम ऑफ हैंड आर्ट प्रिंटिग, जयपुर में पुराने चानवार पालकी वालों की हवेली में स्थित है। संग्रहालय में क्राफ्ट एवं ब्लॉक प्रिंटिंग के नमूने प्रदर्शित किए गए हैं। इसमें विभिन्न कालखण्डों में की गई ब्लॉक छपाई के वस्त्र भी प्रदर्शित किए गए हैं। इसमें राजस्थान की प्राचीन वस्त्र छपाई कला का भी संग्रहण किया गया है। प्रत्येक कपड़े के साथ उसकी विशेषताओं को भी दिखाया गया है। इसमें एक सौ से अधिक कपड़े प्रदर्शित किए गए हैं। साथ ही लकड़ी से बने ब्लॉक भी रखे गए हैं, जिनसे कपड़े पर ब्लॉक प्रिंटिंग की जाती है। इसे यूनेस्को से गुणवत्ता सम्बन्धी प्रमाणपत्र भी प्राप्त हुआ है। यह एक चौरिटेबल फांउडेशन है, जो जयपुर के पारंपरिक कलाकारों के संरक्षण के लिए काम करती है।

यह गैर सरकारी संगठन है तथा युवाओं को न केवल रोजगार पाने का प्रशिक्षण देता है, अपितु उभरते हुए कलाकारों और कारीगरों को रोजगार के अवसर भी दिलवाता है। इस फाउंडेशन का मुख्य उद्देश्य हाथ ब्लॉक छपाई को बढ़ावा देना है जो जयपुर की प्राचीन परंपरा है। इस संग्रहालय में एक कैफे और दुकान है जिसमें हस्तनिर्मित कार्ड,



आभूषण और कपड़े बिकते हैं।

विरासत संग्रहालय, जयपुर

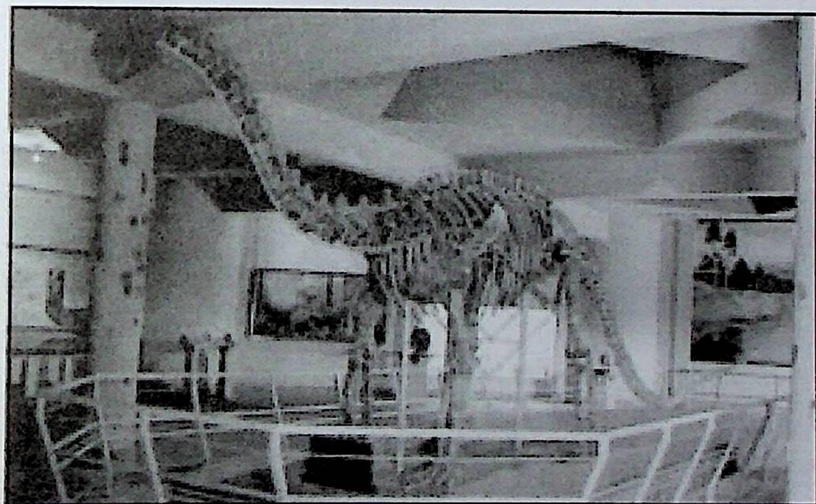
मुख्यमंत्री वसुन्धरा राजे ने 10 दिसम्बर 2017 को जयपुर के किशनपोल बाजार स्थित महाराजा स्कूल ऑफ आर्ट्स एण्ड क्राफ्ट्स के भवन में विरासत संग्रहालय का उद्घाटन किया। इस संग्रहालय में वर्तमान में खोली गई पांच दीर्घाओं में देश के नामचीन कला, आभूषण डिजाइन, चित्रकारी एवं शिल्प विशेषज्ञों की कृतियों का प्रदर्शन किया गया है।

स्कल्पचर पार्क, जयपुर

राजस्थान की मुख्यमंत्री वसुंधरा राजे ने नाहरगढ़ किले के माधवेंद्र पैलेस में स्कल्पचर पार्क का उद्घाटन किया। सीएम राजे ने इस अवसर पर कहा कि कला और रचनात्मकता का ऐसा संग्रह जयपुर शहर के लिए गौरव का विषय है। यहाँ दर्शायी जाने वाली कलाकृतियां हमारी अनूठी विरासत की झलक हैं।

अध्याय - 37

बिड़ला साइंस म्यूजियम, जयपुर



बी. एम. बिड़ला फाउण्डेशन द्वारा जयपुर में स्टेच्यू सर्किल के निकट बिड़ला वैज्ञानिक अनुसंधान संस्थान विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी केन्द्र स्थापित किया गया है। इस संस्थान में विज्ञान के शिक्षण-प्रचार और प्रौद्योगिकी के प्रचार के लिए बी. एम. बिड़ला प्लेनेटेरियम और साइंस म्यूजियम स्थापित किए गए हैं। विज्ञान और प्रौद्योगिकी के विभिन्न क्षेत्रों में गहन अनुसंधान और विकास हेतु प्रयोगशालाएं स्थापित की गई हैं। संस्थान में पुस्तकालय, कम्प्यूटर सेंटर तथा आधुनिकतम ऑडिटोरियम की भी स्थापना की गई है। यहाँ स्थापित तारामण्डल में बैठकर कोई भी व्यक्ति आकाश, आकाशीय पिण्ड तथा आकाशीय घटनाओं के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकता है। प्लेनेटेरियम के चारों ओर बनी वृत्ताकार गैलेरी में उपग्रह, रॉकेट, विशाल दूरबीनों, रेडियो, टेलिस्कोप, ग्रहों की गति, चंद्रमा के धरातल तथा विभिन्न आकाशीय पिण्डों से सम्बन्धित मॉडल तथा चार्ट रखे हुए हैं। इस संस्थान में वर्ष भर में अनेक राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय संगोष्ठियां, सम्मेलन एवं प्रयोगिक कार्यशालाएं आयोजित की जाती हैं। विभिन्न देशों से आई विज्ञान शिक्षण की फिल्मों का प्रदर्शन भी किया जाता है।

विज्ञान उद्यान

संस्थान के मुख्य द्वार के पास तीन मंजिला, लगभग 50 हजार वर्गफुट क्षेत्र में

साइंस म्यूजियम बनाया गया है। विज्ञान की भिन्न-भिन्न विधाओं पर ऐसे मॉडल तैयार किए गए हैं, जिन पर जन-साधारण स्वयं प्रयोगात्मक कार्य कर उसमें छिपे विज्ञान के सिद्धांत, महत्व और जीवन में उपयोग को सरलता से जान सकता है। विद्यार्थी, विज्ञान की जिन महत्वपूर्ण बातों को पुस्तकों से नहीं समझ पाते, उन्हें वे यहाँ आसानी से समझ लेते हैं। यांत्रिकी, ध्वनि, प्रकाश, अंतरिक्ष प्रौद्योगिकी, गणित, रक्षा विज्ञान और ऊर्जा आदि पर खेल-खेल में और मनोरंजक ढंग से विज्ञान की बड़ी बातों को समझा जा सकता है।

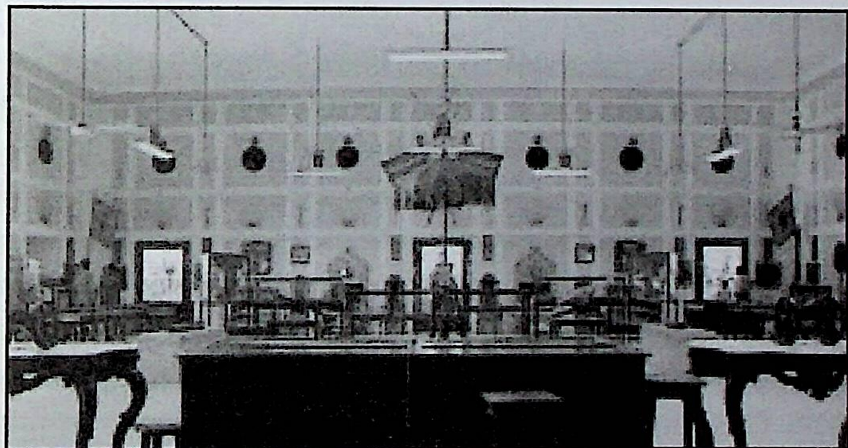
यह साइंस म्यूजियम 12 दिसम्बर 1994 को प्रारम्भ हुआ। इस विशाल संग्रहालय में 75 बड़े-बड़े मॉडल और प्रदर्श तथा छोटे बच्चों के लिए मनोरंजक खेल-खिलौने रखे गए हैं। साइंस म्यूजियम के मुख्य द्वार के बाईं ओर भविष्य की अंतरिक्ष प्रौद्योगिकी के संदर्भ में अंतरिक्ष यात्रियों को विशाल अंतरिक्ष यान से उतर कर आकाशीय चट्टान पर खुदाई करते हुए दिखाया गया है। भविष्य में होने वाले इस घटना को अंतरिक्ष ध्वनि से समझाने का प्रयास किया गया है।

विज्ञान संग्रहालय में एक विशाल डायनासोर भी बनाया गया है जो जीवित डायनासोर की तरह हिलता है। इससे यह विज्ञान संग्रहालय, देश भर में आकर्षण का केन्द्र बन गया है। केन्द्रीय कक्ष के गुम्बद पर कई प्रोजेक्टरों के माध्यम से एक साथ एक सम्पूर्ण दृश्य (पैनोरामा) बनाया गया है। केन्द्रीय कक्ष की दीवारों पर विज्ञान के विकास की कहानी को जीवंत और कलात्मक ढंग से चित्रित और अंकित किया गया है। विज्ञान के विकास में भारत के योगदान को विशेष रूप से और प्रभावी ढंग से चित्रित किया गया है।



अध्याय - 38

राजकीय संग्रहालय, अलवर



कच्छवाहा राजकुमार प्रतापसिंह ने ई.1775 में अलवर राज्य की स्थापना की। अलवर रियासत के तृतीय शासक विनयसिंह (ई.1815-57) के शासन काल में अलवर रियासत की पुरातात्विक, ऐतिहासिक एवं कलात्मक पुरासामग्री की खोज एवं संग्रहण का कार्य आरम्भ हुआ। रियासत के अन्तिम शासक तेजसिंह (ई.1911-2009) के शासनकाल में नवम्बर 1940 में अलवर संग्रहालय की विधिवत् स्थापना हुई। यह संग्रहालय राजप्रासाद (सिटी पैलेस) की पांचवी मंजिल पर स्थित है। संग्रहालय में दुर्लभ प्रतिमाएँ, शिलालेख, हस्तलिखित ग्रन्थ, लघुचित्र, अस्त्र-शस्त्र तथा विविध कलात्मक सामग्री उपलब्ध है, जिसे चार कक्षों में प्रदर्शित किया गया है-

(1.) प्रतिमाएं एवं शिलालेख कक्ष

(2.) हस्तशिल्प कला कक्ष

(3.) चित्रकला कक्ष

(4.) अस्त्र-शस्त्र कक्ष

प्रतिमाएं एवं शिलालेख कक्ष

अलवर संग्रहालय में प्रदर्शित प्रतिमाओं में 11वीं-12वीं शताब्दी की प्रस्तर प्रतिमाएँ विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं जो अलवर क्षेत्र के राजोरगढ़, नीलकण्ठ, सैंथली आदि प्राचीन मंदिरों एवं उनके खण्डहरों से लाई गई हैं। इनमें नृत्यरत अष्टभुजी गणेश

(जिस पर वि.सं. 1101 का लेख उत्कीर्ण है), स्थानक विष्णु, सात अश्वों के रथ पर विराजमान सूर्य, नंदी पर सवार शिव-पार्वती, सुखासन में विराजमान शिव-पार्वती, ललितासन में शिव-पार्वती, ध्यान मुद्रा में महावीर स्वामी एवं पार्श्वनाथ अत्यंत महत्वपूर्ण हैं।

संग्रहालय में प्रदर्शित संस्कृत एवं हिन्दी भाषाओं के शिलालेख देवनागरी लिपि में तथा फारसी भाषा के शिलालेख अरबी लिपि में हैं। संग्रहालय में राजोरगढ़, नीलकंठ, माचेड़ी बहादुरपुर, नवगाँव, तिजारा तथा अलवर नगरीय क्षेत्र से प्राप्त शिलालेख प्रदर्शित किए गए हैं। कन्नौज के गुर्जर प्रतिहार शासक महाराजा श्री भट्टारक श्री विजयपाल देव के पुत्र महाराजाधिराज परमेश्वर श्री मथनदेव का वि.सं.1016 (ई.959) का शिलालेख ऐतिहासिक दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण है। मथनदेव ने अपनी माता लुच्छुका की स्मृति में व्याघ्रवटक (आधुनिक राजगढ़) में लच्छुकेश्वर महादेव का मंदिर बनवाया तथा इसे गांव को दान में दिया। इस शिलालेख की भाषा संस्कृत है।

संग्रहालयों में रखे गए शिलालेखों में राजोरगढ़ से प्राप्त रानी प्रभावती का शिलालेख वि.सं.1052 का तथा शाह हीराचन्द का शिलालेख वि.सं.1645 का है। अलवर से 15 मील दूर पूर्व में स्थित बहादुरपुर गांव से अकबर के समय का एक शिलालेख प्रदर्शित किया गया है। इसमें जैन तीर्थंकर आदिनाथ का मंदिर बनाए जाने का उल्लेख है। यह मंदिर खारालारा दुर्ग में बनाया गया था। तीन पंक्तियों के इस शिलालेख की भाषा संस्कृत तथा लिपि देवनागरी है। एक शिलालेख जयपुर नरेश महाराजा सवाई जयसिंह (ई.1699-1743) की पिण्डी क्रिया से सम्बद्ध है। वि.सं.1839 (ई.1782) के इस शिलालेख में लिखा है कि जिस प्रकार राजा रामचंद्र ने गया में अपने पिता दशरथ का पिण्डदान किया था उसी प्रकार महाराजा प्रतापसिंह (ई.1778-1803) ने अपने पिता सवाई जयसिंह का पिण्डदान शिवपुरी में करवाया। एक फारसी शिलालेख बहलोल लोदी के काल का है, जिसमें नवगाम के दुर्ग के द्वार के पुनर्निर्माण की बात कही गई है, जो मुहम्मदशाह के समय गिर गया था। इसकी तिथि हिजरी 991 है।

हस्तशिल्प कला कक्ष

इस कक्ष के प्रथम शो केस में अलवर नरेशों के विभिन्न परिधान प्रदर्शित हैं। इनमें मंदील, चुगा, दस्तार सदरी, अलवान, फरगुल, जामा, कनवाल, अंगरखा, यौगोरह एवं गोशह की टोपियां विशेष रूप से आकर्षित करती हैं। नाना प्रकार के परिधानों में मखमल, कमखरण, पाइचा, मलमल, साहन, रेशम आदि के वस्त्रों पर कलाबत्तू, जरदोजी, गंगा-जमनी, डाक एवं हुबाब तथा सलमा-सितारे आदि का काम अत्यंत शोभनीय है। इन वस्त्रों पर बेल, फुल्कारी, लाली के काम के साथ-साथ तिलाई एवं नुकरइ का काम देखते ही बनता है।

संग्रहालय में चंदन की लकड़ी, हाथीदांत, बीदरी, लाख, लकड़ी, संगे-अबरी, यशब, अकीक, बिल्लौरी आदि कीमती पत्थरों के अद्‌भुत शिल्प-नमूने प्रदर्शित किए गए हैं। बीदर के बने दस्ताने फरशी, काश्मीर की लकड़ी पर लाख का काम तथा आबनूस की लकड़ी के संदूकचों पर हाथी दांत की पच्चीकारी, चंदन पर मैसूर शैली की नक़्क़ाशी, चंवर, नक्काशीदार सिंगारदान, संदूकचें आदि कला के उत्कृष्ट नमूने हैं। हाथी दांत की पंखी, फूलदान, मोहरें, खिलौने, एक गोला जिसके अंदर कई गोले बने हैं, उच्च श्रेणी के कला नमूने हैं। भावगढ़ से प्राप्त गुलाबी तथा बादामी पत्थर से बने हुक्का, सुराही, मुग्दर एवं गिलास आदि दर्शनीय हैं।

विनय-विलास सरिस्का महल, माउन्ट आबू स्थित जय-विलास सहित अन्य कई वास्तुकला के नमूने यहाँ (काष्ठ के) मॉडल रूप में प्रदर्शित हैं। कुछ पशु-पक्षियों को मसाला भर कर रखा गया है। अन्य आकर्षणों में अमरोहा, बंगाल, बीकानेर, जयपुर आदि स्थलों के पीतल एवं मिट्टी के बर्तन रखे हुए हैं।

इस कक्ष में प्रदर्शित चांदी से निर्मित मेज आकर्षण का केन्द्र है। स्थानीय कलाकार लाला नन्द किशोर द्वारा निर्मित चांदी की इस मेज में नीचे एक ऐसा यंत्र लगा है, जिसके संचालन से मेज के ऊपरी भाग पर बनी नहरों में मछलियों के, जल में तैरने जैसा आभास होता है। ई.1892 बानसूर में आकाश से गिरा एक उल्का पिण्ड भी प्रदर्शित है, जो दर्शकों को चकित करता है। इसी प्रकार चरखी-दादरी (हरियाणा) से प्राप्त लरजदार पत्थर से निर्मित तथा तिजारा के शासक बलवंतसिंह इन्द्र-विमान का मॉडल भी प्रदर्शित है।

अलवर नरेश शिवदानसिंह (ई.1857-1874) के गुणीजनखाने में सैकड़ों गायिकाएं राज्य-प्रश्रय पाती थीं। महाराजा जयसिंह (ई.1892-1937) भी संगीत का अनुरागी था। उसके गुणीजन खाने के कई वाद्ययंत्र अब भी सुरक्षित हैं। वाद्ययंत्रों के इस संग्रह में, विभिन्न प्रकार की वीणाएं, मृदंग, सारंगी, सितार, तानपुरा, दिलरुबा, पखावज आदि सम्मिलित हैं जिन पर नक्काशी और चित्रकारी की गई है। वस्त्र मंडित ढोलक और तबला जोड़ी, दर्शकों के विशेष आकर्षण के केन्द्र हैं।

चित्रकला एवं चित्रित ग्रंथ कक्ष

अठारहवीं शताब्दी ईस्वी में जब मुगलिया सल्तनत पतनोन्मुख हुई तो दिल्ली के अनेक कलाकार अपनी कला-सामग्री लेकर राजपूत रियासतों में आ गए। दिल्ली से निकट होने के कारण बहुत से कलाकार अलवर भी आए। अलवर नरेशों ने बहुत से कलाकारों को राज्याश्रय प्रदान किया तथा उनसे बहुत सी कला सामग्री खरीदी। आज यह सामग्री अलवर के राजकीय संग्रहालय की धरोहर है। यहाँ संग्रहित अधिकतर सामग्री महाराजा बख़्तावर सिंह (ई.1791-1815) और महाराजा विनयसिंह (ई.

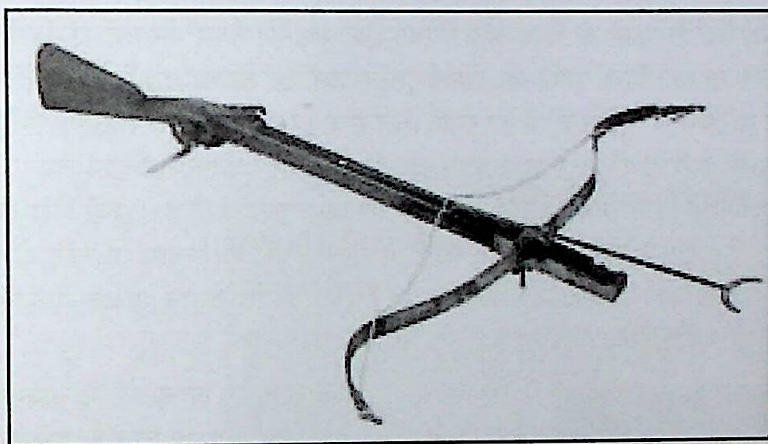


1815-57) के समय की है। राजपूत शैली का सिद्धहस्त चित्रकार डालचंद, महाराजा प्रतापसिंह (ई.1770-91) के राजदरबार की शोभा था। बलदेव और सालिगराम नामक चित्रकार, महाराजा बख्तावरसिंह के समय हुए। महाराजा विनयसिंह के समय गुलाम अली, गंगाविशन, किशना, बलदेव, सालिगराम, जमनादास, भोरे लाल, बक्साराम, नन्दराम, आदि कलाकार मौजूद थे जिनके बनाए चित्र संग्रहालय में उपलब्ध हैं।

इस संग्रहालय में राग-रागिनियों की चित्रावलियों में मुगल, बूंदी, जयपुर और अलवर शैली के एक-एक पूर्ण सेट उपलब्ध हैं। अलवर शैली के काम की सफाई और रंग संयोजन देखते ही बनता हैं। नायिकाओं के केश, जूड़ों में बंधे हैं। चेहरे गोल और भरे हुए हैं। परदाज का काम भी देखने योग्य है। हिरमिच, नील, सफेद रंग और सिंदूर का खूब प्रयोग किया गया है। नारी चित्रों के होंठ कम मोटे और कम रक्तिम हैं, नेत्रों की स्वाभाविकता आकर्षित करने वाली है।

बूंदी शैली के चित्र यहाँ उपलब्ध सभी चित्रों में श्रेष्ठ हैं। ये सौंदर्य और लावण्य से परिपूर्ण हैं। राग-रागिनी, नायिका भेद, बारहमासा, कृष्णलीला, गीतगोविंद आदि विषयों के कई चित्र प्रदर्शित हैं। ढोला-मारू, मधु-माधवी, सावलिंगा, वीजा-सोरठ आदि प्रेमाख्यानों पर आधारित कई चित्र हैं। राजाओं के कई चित्र जोधपुर शैली में चित्रित हैं। कृष्णलीला सम्बंधी लगभग 150 चित्र उपलब्ध हैं। राजाओं के शिकार दृश्य आमोद-प्रमोद, दरबार दृश्य तथा पशु-पक्षियों के अनेक चित्र प्रदर्शित हैं। मुगल शैली के चित्रों के अद्वितीय संग्रह के लिए यह संग्रहालय विश्व-प्रसिद्ध है। भारत में मुगलिया सल्तनत का संस्थापक बाबर स्वयं भी चित्रकार था और वह बहुत से चित्रकारों को समरकंद एवं फरगना से अपने साथ लेकर आया था। इन चित्रकारों ने भारतीय चित्रकारों के साथ मिल कर नए प्रयोग किए। बाबर के समय मानव आकृतियों और पक्षियों के चित्र बहुतायत में बनाए गए। हुमायूं ने स्वतंत्र चित्रों के साथ-साथ सचित्र ग्रंथ तैयार करवाए। उस काल में अनुवार सुहेली, चंगेजनामा, जफरनामा, रजनामा, नलदमन, कालिका दमन, अचार दनिश आदि कई सचित्र ग्रंथ तैयार किए गए।

मुगल चित्रकार दसवन्त, बसावन, मिसकीन, तब्रेजी, सैयद अली, वेहजाद, अब्दुल समद शिराजी, केसूलाल, मुकुंद, फारुख, माधो, महेश, खेमकरण, तारा सांवलदास हरिवंश, जगन्नाथ, डालचंद आदि ने मुगल बादशाहों, बेगमों, दरबारियों,



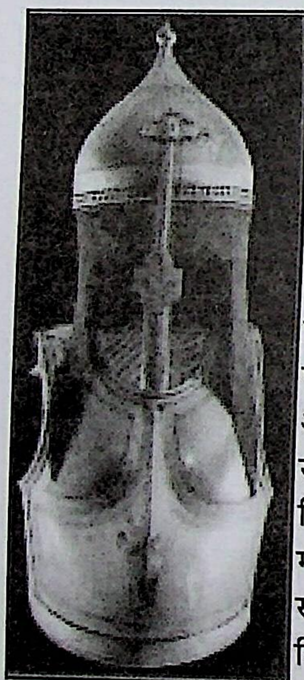
तीर फैंकने की बन्दूक

रईसों, पक्षियों और भवनों के अनेकों चित्र बनाए। एक चित्र में ढाल एवं तलवार से सुसज्जित बादशाह जहांगीर तीर चलाता हुआ दिखाया गया है, इसी चित्र में फरिश्ते, बादशाह को तीर सौंपते हुए दिखाए गए हैं। नीचे की ओर एक बैल चित्रित है तथा उसके नीचे मछली बनी हुई है। चारों ओर मुगल वंश के बादशाहों के चित्र अंकित हैं। शाहजहाँ का अण्डाकार चित्र, संगीत सुनते हुए औरंगजेब, शेरशाह सूरी, मोहम्मद गौरी, फौजी वर्दी में हरनियत खाँ, ख्वाजा मोइनुद्दीन चिश्ती, वाजा कुतुबदीन, अब्दुल रहीम खानखाना, मिर्जा हिन्दाल, नूरजहाँ बेगम, मुमताज बेगम, बेगम खातून जेबुन्निसा, वहार बानु, जोधाबाई, हमीदा बेगम, जुलेखा बेगम आदि के चित्रों के साथ रानी रूपमती, बाज बहादुर आदि के चित्र उपलब्ध हैं।

अलवर संग्रहालय के ग्रंथ अपनी उच्च कोटि की जिल्दसाजी के लिए प्रसिद्ध हैं। महाराजा विनयसिंह (ई.1818–57) के समय कारीगर अहमद और उसके पुत्रों ने परशियन शैली की जिल्दसाजी पर अनूठे प्रयोग किए। यहाँ उपलब्ध ग्रंथों की सूची लम्बी है जिनमें वाकयात बाबरी, शाहनामा, कुरान शरीफ, गुलिस्तां, अकबरनामा, सिकंदरनामा, नल दमयंती, दोस्तान, करीमा, बदरे मुनीर आदि ग्रंथ संग्रहालय की बेजोड़ निधि हैं। शेख सादी की कृति गुलिस्तां मूलत ई. 1258 में लिखी गई थी। महाराजा विनयसिंह ने ई. 1840 में खतों के उस्ताद मीर मन्जाकरा के शागिर्द मिर्जा आगा खां को दिल्ली से बुलवाया तथा उससे



गुलिस्तां चित्रित करने के लिए कहा। एक-एक पृष्ठ को तैयार करने में 15 दिनों का समय लगता था। मिर्जा आगा खां, मिर्जा गुलाम अली खां तथा प्रसिद्ध चितेरे बलदेव के अथक परिश्रम से 'गुलिस्तां' में 17 रंगीन चित्र संजोए गए। नत्थासिंह पंजाबी द्वारा तैयार 'गुलिस्तां' प्रसिद्ध जिल्दसाज अब्दुल रहमान की सुंदर जिल्दसाज का नमूना है। फिरदौसी कृत 'शाहनामा' फारसी ज्ञान का चमत्कार मानी जाती है। 17वीं शताब्दी में लिखित इस शाहनामा को 21 रंगीन चित्रों से सजाया गया है। पचास परिच्छेद के इस महाकाव्य के 474 वर्कों की जिल्द को विनयसिंह के जिल्दसाज अब्दुल रहमान ने चमड़े की सुन्दर जिल्द में बांधा है।

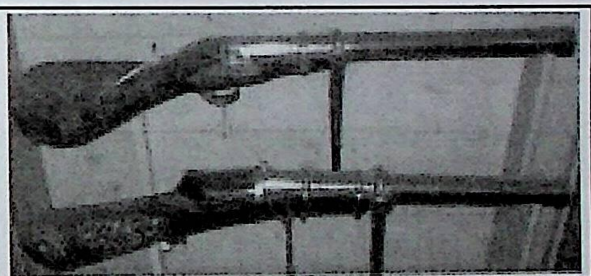


युद्ध में काम आने वाला शिरस्त्राण

बाबरनामा अथवा वाकयात ए बाबरी में बाबर की आत्मकथा है। इसमें 457 वर्क और 18 चित्र हैं। इसे हुमायूं के समय में तुर्की से फारसी भाषा में अनुवादित करवाया गया था। सुलेख-अर्ल-अलकातिब हिजरी-937 (ई. 1530) में कलाकार सादुल्ला मोहम्मद एवं अन्य चित्रकारों द्वारा चित्रित की गई थी।। महाराजा विनयसिंह ने यह चित्रित ग्रंथ 5 हजार रुपये में खरीदा था। 'कुरान' विनयसिंह के खजाने का अमूल्य रत्न है। इसमें अरबी और फारसी भाषा का, अरबी और मिश्री भाषा का एवं फारसी और ईरानी भाषा का अद्भुत ढंग से उत्कृष्ट इबारत में समायोजन किया गया है। इस कुरान को महाराजा विनयसिंह ने ई.1840 में दिल्ली के प्रसिद्ध सौदागर सैय्यद मोहम्मद इस्माइल से तीन हजार रुपये और इनाम-इकराम सहित पोशाक देकर खरीदा था। इसमें 472 वर्क हैं। जिल्दबंदी अब्दुल रहमान ने की है। अकबर ने कई ग्रंथों का बहुत सी भाषाओं में अनुवाद करवाया था। आईने-ए-अकबरी या अकबरनामा अबुल फजल की कृति है। यहाँ उपलब्ध एक प्रति खुशनवीस-मोहम्मद अनवर खाँ की है तथा दूसरी प्रति मीर क्रन की है। संग्रहालय में अहवाल नई दुनिया लेखक अहसन उल्ला जिदवल सुनहरी जिल्द/कलमी/जिल्द अब्दुल रर्हमान/तारीख फरिश्ता/सिकन्दर नामा-नमाजी/ लेखकाल- जमादी उस्सानी हि. सन 1236 जुलेखा तसनीफी इब्बर मामकी, तर्जुमा- मुहम्मद मुलकिब कमालउद्दीन, हस्तबद काशी- तसनीफकर काशी लेखक-नुरुल्ला हाफिज लखनवी/काल 1835 ई./महमूदनामा लेखक-मिर्जा मुहम्मद, पदंनामा-लेखक मिर्जा मुहम्मद, करीमा सादी लेखक-चाकूब वेग, तर्जुमा महाभारत, तर्जुमा श्री भगवद्गीता आदि ग्रंथों का विशाल भण्डार उपलब्ध है।

इस संग्रहालय में चित्रित एवं अ-चित्रित ग्रंथों की संख्या इस प्रकार है- संस्कृत - 4863, फारसी - 608, हिन्दी - 374, उर्दू - 73.

अस्त्र-शस्त्र कक्ष



अलवर के राजा प्रतापसिंह एवं बख्तावर सिंह कुशल योद्धा थे। उनके समय में अलवर राज्य में अनेक तलवारसाज और सिकलीगर कार्यरत थे। अलवर का सिलहखाना अद्‌भुत अस्त्र-शस्त्रों के लिए विख्यात है। यहाँ लोहे और फौलाद के अस्त्र-शस्त्र बनाने के छोटे-छोटे अनेक केन्द्र थे। माचेड़ी, तिजारा, थानागाजी, राजगढ़ आदि स्थानों पर बन्दूकें एवं तोपें ढाली जाती थीं। निवाना और पाटन में अच्छे कारीगर कार्यरत थे। राजगढ़ में ढाली गई एक बड़ी तोप अपने समय में विख्यात रही है। इस प्रकार की अनेक तोपें अब भी अलवर के बाला किले में रखी हुई हैं। महाराजा विनयसिंह ने दिल्ली से अनेक कुशल शमशीरसाज बुलाए थे। फौलाद का कार्य करने में शेख इब्राहीम एवं नूर मोहम्मद सिद्धहस्त थे। फौलाद, सकेला, कामड़ा आदि मिश्र-धातुओं की अनेक तलवारें इस संग्रहालय में प्रदर्शित की गई हैं।

अस्त्र-शस्त्र दीर्घा में रखी हजरत अली की तलवार किस्म-सकेला, महाराजा विनयसिंह ने इस्माइल सौदागर से खरीदी थी। दारा शिकोह की तलवार पर फारसी लेख अंकित है। साख-मुहम्मद तलवार पर ई.1264 तिथि युक्त फारसी शेर अंकित है। तलवार-जनूनी पर मीर खां ई.1166 अंकित है। तलवार सहरदार, तलवार साख मोहम्मद इब्राहीम, तलवार वलन्देजी, साख-गुजरात, कब्जा-शाहजंहानी, शुतुरगरदन सकेला तलवार, तलवार-लक्खी, तलवार पत्थर काटने की, तलवार भारबाडा, तलवार अकबर आदि ऐतिहासिक तलवारों के साथ-साथ मोहम्मद गौरी का जिरह बख्तर, यशवंत राव होल्कर का जिरह बख्तर, तीर फेंकने वाली बंदूक, कारतूसी बंदूकें, पत्थर कला बंदूकें, तोड़दार बंदूकें, नागफांस, बाघनखा, सलावा, तेजा, मारकैस, दमतमाया, जफर तकिया, सोसनमता, गधारा, जुल्फिकार, बांक, सुभतराश, पेशकब्ज, शाहपसंद खंजर, दाब आरसी और कमरखी गुर्ज जैसे सैकड़ों दुर्लभ अस्त्र-शस्त्र इस संग्रहालय में प्रदर्शित किए गए हैं। संग्रहालय में रखा एक म्यान में दो तलवारें रखी गई हैं। इस संग्रहालय में साप्ताहिक अवकाश नहीं रहता है।

अध्याय - 39

राजकीय संग्रहालय, विराटनगर

विराट नगर संग्रहालय की स्थापना ई.1987 में हुई। संग्रहालय के मुख्य द्वार में प्रवेश करते ही बांयीं तरफ बरामदे में पाषाण युगीन मानव द्वारा प्रयुक्त पाषाण उपकरणों, उस युग में जीवन यापन करने की विधियों तथा आखेट द्वारा उदरपूर्ति करने के तरीकों को हार्डबोर्ड काल्पनिक रंगीन चित्रों के माध्यम से प्रदर्शित किया गया है। साथ ही मत्स्य देश के पुरावैभव को संक्षेप में लिपिबद्ध करके प्रदर्शित किया गया है।

संग्रहालय की दीवारों पर लगे शोकेशों में बीजक की पहाड़ी के उत्खनन से प्राप्त सामग्री प्रदर्शित की गई है, जिनमें प्रमुख रूप से मृदभाण्ड तथा बड़े आकार की पकी हुई ईंटें प्रमुख हैं। संग्रहालय में प्रदर्शित केलू (मिट्टी की टायल्स) दो प्रकार के हैं, कुछ केलू साधारण प्रकार के हैं एवं कुछ केलू चित्रित हैं। ये केलू बीजक की सभ्यता में घरों की छतों को बनाने में प्रयुक्त हाते थे। कुछ लौह उपकरण जैसे छैनी, कुल्हाड़ी आदि को भी संजोया गया है। संग्रहालय में मौर्यकालीन पंचमार्क चांदी के सिक्कों के साथ इण्डोग्रीक एवं मुगल बादशाहों के सिक्के भी प्रदर्शित हैं जिनमें अकबर, जहांगीर तथा अन्य बादशाहों के सिक्के सम्मिलित हैं, कुछ सिक्कों के छायाचित्र भी प्रदर्शित किए गए हैं।

संग्रहालय में सम्राट अशोक के शिलालेखों के छायाचित्रों के साथ बीजक की पहाड़ी पर सम्पन्न पुरातात्विक उत्खनन स्थल के छायाचित्रों को भी देखा जा सकता हैं। बौद्धकालीन स्तूप छत्र के टुकड़े भी दर्शनीय हैं। काले प्रस्तर की खण्डित आसनस्थ बुद्ध एवं पार्श्वनाथ प्रतिमाएँ संग्रहालय की शोभा हैं। संग्रहालय में 16वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में निर्मित मुगलकालीन दरवाजों के छायाचित्र भी प्रदर्शित हैं। भीमसेन पहाड़ी के पास स्थित मुगलद्वार के ऊपरी मंजिल के गोलाकार गुम्बदों में हिन्दू पौराणिक गाथाओं तथा मुगल दरबार के दृश्यों को भित्तिचित्रों के रूप में देखा जा सकता है। अकबर ने शिकार करने के लिए इस स्थल पर अपने डेरे लगाए थे। मुगलकाल में विराटनगर में एक व्यवस्थित टकसाल भी थी।

अध्याय - 40

श्री राजकुमार हरदयालसिंह राजकीय संग्रहालय, सीकर



सीकर नगर के मध्य में माधोसागर तालाब के निकट स्थित राजकीय संग्रहालय में शेखावाटी क्षेत्र की पुरा-धरोहर प्रदर्शित की गई है। सीकर संग्रहालय की स्थापना का उद्देश्य शेखावाटी क्षेत्र की कला-पुरा सामग्री को संकलित कर संरक्षित करना है, ताकि इस महान विरासत को आने वाली पीढ़ियों के लिए सुरक्षित किया जा सके। सीकर संग्रहालय की स्थापना पुरातत्व संग्रहालय विभाग द्वारा सार्वजनिक निर्माण विभाग द्वारा निर्मित भवन में ई.2006 में की गई। इस संग्रहालय में 1,436 कला एवं पुरा सामग्री संग्रहित एवं प्रदर्शित है। यह पुरा सम्पदा शेखावाटी क्षेत्र की संस्कृति के विभिन्न आयामों का दर्शन कराती है। संग्रहालय में इस क्षेत्र की प्राचीन प्रतिमाओं का संग्रह उल्लेखनीय है। विभाग के अन्य संग्रहालयों में संग्रहित एवं प्रदर्शित शेखावाटी क्षेत्र की पुरासामग्री को इस संग्रहालय में स्थानान्तरित किया गया है। भेंट-स्वरूप तथा अन्य स्त्रोतों से भी पुरासामग्री अवाप्त की गयी है। सीकर संग्रहालय को आठ दीर्घाओं में विभाजित किया गया है जिनमें उत्खनन से प्राप्त सामग्री, पाषाण प्रतिमाएं, शिलालेख,

लघुचित्र, सिक्के और कलात्मक पुरावस्तुओं का प्रदर्शन किया गया है। रावराजा सीकर द्वारा हर्षनाथ मंदिर का एक शिलालेख एवं 252 प्रस्तर प्रतिमाएँ संग्रहालय को प्रदान की गई थीं।

उत्खनन सामग्री

संग्रहालय में संकलित पुरासामग्री में गणेश्वर पुरास्थल से प्राप्त 3000 ई.पू. की पुरासामग्री प्रदर्शित है। इसमें विभिन्न प्रकार के मृदभांड, जिनमें अलंकृत तथा सादे दोनों प्रकार के हैं। ये मृदभांड संकरे और चौड़े मुँह वाले लोटे, छोटे प्याले, छोटी हांडियां तथा विभिन्न आकार-प्रकार के हैं। सम्भवतः संकरे मुँह वाले बेलनाकार बर्तनों का प्रयोग बहुमूल्य द्रव्य तथा छोटे प्यालों का प्रयोग चषक के रूप में किया जाता था। इसके अलावा उत्खनित सामग्री में ताम्र धातु के बाणाग्र, मछली पकड़ने के कांटे, चूड़ियाँ, मनके, चकरी, ताम्र कुल्हाड़ियां आदि प्रदर्शित हैं। झुंझुनू के पुरास्थल सुनारी से प्राप्त प्रस्तर एवं मृण्मय मनके, खेलने की मोहरें, अस्थि उपकरण, खिलौना गाड़ी के पहिये, बौद्ध मांगलिक चिह्न युक्त फलक, चूड़ियाँ, लौह कुल्हाड़ियाँ, कूबड़दार वृषभ (खिलौना) आदि प्रदर्शित किए गए हैं। इसी दीर्घा में गालावाश्रम पुरास्थल से प्राप्त कलश, मृण्मय कन्दुक, प्रस्तर एवं मृण्मय मनके, लौह एवं शंख की चूड़ियां, अलंकृत मृदुल प्रस्तर खण्ड, लौह भालाग्र, हंसिया आदि प्रदर्शित किये गए हैं। गणेश्वर, सुनारी (झुंझुनूं) एवं गालावश्रम पुरास्थलों से प्राप्त पुरा सामग्री को तुलानात्मक अध्ययन की दृष्टि से एक साथ प्रदर्शित किया गया है। उत्खनन की प्रणाली पर आधारित एक मॉडल प्रदर्शित किया गया है, जो विभिन्न काल खण्डों की परतों को दर्शाता है। प्राचीन जनजीवन के दृश्यों को प्रदर्शित करते हुए कुछ चित्र भी प्रदर्शित किए गए हैं।

पाषाण प्रतिमाएं

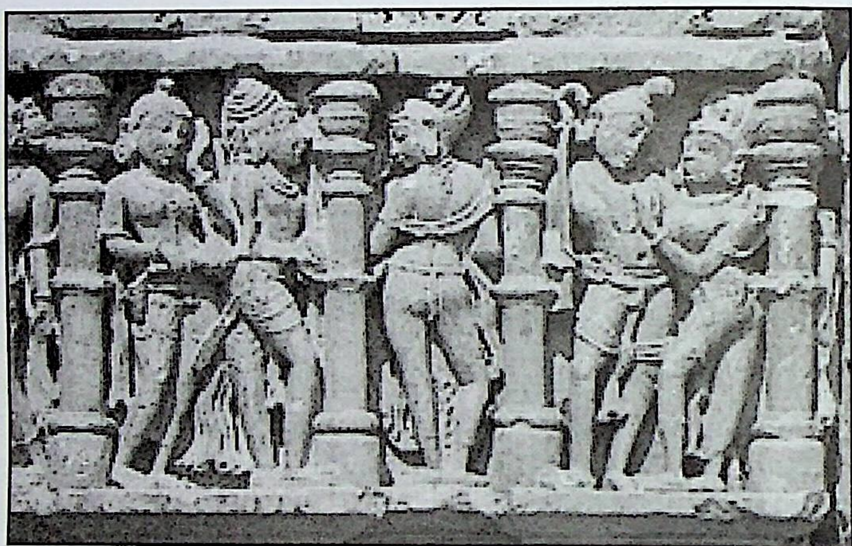
संग्रहालय में संकलित पाषाण प्रतिमाओं में हर्ष से प्राप्त प्रतिमाएं उल्लेखनीय हैं जिनमें शेषशायी विष्णु, बैकुंठ विष्णु, हरिहर, पितामह मार्तण्ड, आसनस्थ शिव, उध्वरितस शिव, नृत्यरत शिव, लक्ष्मी, सपत्नीक ब्रह्माजी, गणेश, दशहस्ता माहेश्वरी, भैरवी, इन्द्राणी, चामुण्डा, ब्रह्म, कुमारी, अश्वत्थामा से युद्धरत भीम, सूर्यपुत्र रेवंत, स्थानक विष्णु, नवग्रह फलक तथा अष्ट दिक्पाल- इंद्र, अग्नि, यम, नैऋत्य, वरुण, वायु, कुबेर और ईशान, सुरसुन्दरी, शैवाचार्य, योगिनियां तथा विभिन्न प्रकार के जनजीवन और संगीत नृत्य आदि से सम्बन्धित फलक शामिल हैं। हर्षनाथ मंदिर से प्राप्त विश्व प्रसिद्ध लिंगोद्‌भव शिल्प खण्ड राजकीय संग्रहालय अजमेर में प्रदर्शित किया गया है। हर्ष से प्राप्त ललितासन में विराजमान त्रिमुखी विष्णु को अष्टहस्त वैकुण्ठ स्वरूप में प्रदर्शित किया गया है। वाम भाग में वराहमुख एवं दायीं तरफ नृसिंह मुख बने हुए हैं। आठ हाथों में से पांच हाथ खण्डित हैं तथा तीन हाथों में धारण किए गए आयुध दृष्टव्य हैं। विष्णु के शीर्ष पर मुकुट, कानों में कुण्डल, गले में वनमाला, कंठाभूषण आदि धारण

किए हुए हैं। मूर्तिफलक के दक्षिण पार्श्व भाग में दो परिचारिकाएं तथा वाम भाग में चंवरधारिणी एवं वीणावादिनी का अंकन है। किनारे के भाग पर अन्य स्त्री परिचारिका को दिखाया गया है।


हर्षनाथ स्तंभ खण्ड, 10वीं शती

हर्षनाथ से प्राप्त मातृकाएं एवं देवी प्रतिमाएँ उल्लेखनीय हैं। इन प्रस्तर प्रतिमाओं को पृथक दीर्घा में प्रदर्शित किया गया है। हर्षनाथ मंदिर से प्राप्त प्रमुख प्रतिमाओं में द्विबाहु नटेश शिव का शिल्पखण्ड संग्रहालय के मुख्य प्रांगण में नृत्य वादन फलक के साथ प्रदर्शित किया गया है। द्विबाहु नटेश शिव के समतल शिलाफलक के मध्यवर्ती भाग में आयताकार स्थान पर चारों ओर बेलबूटे बने हैं। ढोल, बांसुरी, खड़ताल आदि लिए संगीत-वादकों के मध्य द्विबाहु नटराज शिव का भव्य अंकन किया गया है। नृत्य मुद्रा में शिव के ऊपर दाहिनें हाथ में डमरू है, वाम हस्त में त्रिशूल है। शिव के बांई ओर पार्वती एवं उसके आगे शिवभक्त ऋषि श्रृंगी का अंकन किया गया है। भारतीय शिल्प में ऐसा फलक इस फलक की प्राप्ति से पूर्व तक अज्ञात था।

हरिहर मंदिर से प्राप्त हरिहर-पितामह-मार्तण्ड प्रतिमा अद्‌भुत है। इसमें विष्णु, शिव, ब्रह्मा और सूर्य का संयुक्त अंकन है। इस अष्टभुजी प्रतिमा के शरीर पर कवच, शीष पर मुकुट, दोनों ओर के मध्य हाथों में कमल तथा शेष हाथों में चक्र, त्रिशूल, सर्प, शंख, जलपात्र तथा पैरों में जूते हैं। देवता के वाहनों के रूप में नीचे दायीं ओर हंस, अश्व तथा बायीं ओर नंदी एवं गरुड़ उत्कीर्ण हैं। एक विराट् शिलाफलक पर वाम हस्त में वीणा लिए स्थानक सुर-सुन्दरी का अंकन किया गया है। इस दीर्घा में कृष्ण पाषाण पर उत्कीर्ण शिलालेख से क्रमशः स्थानक शिव त्रिभंग मुद्रा में, अन्य स्थानक शिव, आसनस्थ शिव, शिवलिंग आराधना, द्वारशाखा पर प्रेमी युगल का अंकन विष्णु द्वारा गजासुर संहार, पुनः द्वारशाखा पर प्रेमी युगल का अंकन, शेषशायी विष्णु, नृसिंह वराह (वैकुण्ठ), नवग्रह फलक, दिक्पाल यम और नैर्ऋत्य, वीणाधारिणी, दिक्पाल वरुण एवं वायु, चतुर्हस्ता लक्ष्मी, रेवन्त दिक्पाल कुबेर एवं ईशान, दिक्पाल इन्द्र, अग्नि, सपत्नीक-शैवाचार्य एवं अन्य स्त्री, पद्‌महस्ता स्त्री, केश-सज्जा युक्त स्त्री का शीश भाग, स्थानक अनुचर, देवी शीष भाग आदि प्रतिमाएँ भारतीय शिल्प कला की अनुपम कृतियां हैं।



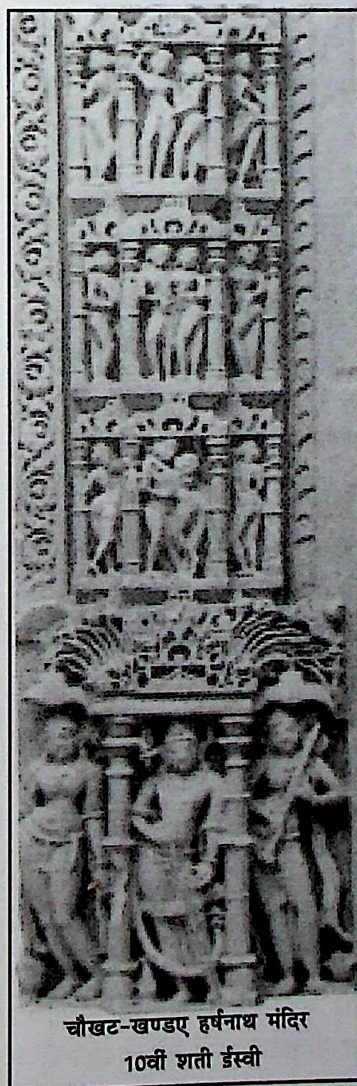
हर्षनाथ मूर्ति पैनल, 10वीं शती

कृष्ण-पाषाण पर उत्कीर्ण प्रभामण्डल युक्त चतुर्हस्त विष्णु का सुन्दर अंकन है। इनके वाम हस्त में चक्र एवं शंख तथा दक्षिण हस्त में गदा एवं अभय मुद्रा का अंकन है। विविध प्रतिमा दीर्घा में संयोजित खरसाडू (सीकर) से प्राप्त 10वीं शताब्दी की लघु आकार प्रतिमाओं का शिल्प अनुपम है। इनमें हरिहर तथा विष्णु की प्रस्तर प्रतिमाएँ कला की दृष्टि से उत्कृष्ट हैं। इस दीर्घा में सुदरासन (नागौर) से प्राप्त 9वीं शताब्दी ईस्वी की विराट प्रस्तर प्रतिमाएँ प्रदर्शित हैं।

इस दीर्घा में गौराऊ (जिला नागौर) से प्राप्त ऋषभनाथ, पार्श्वनाथ, आदिनाथ एवं पद्मप्रभु की जैन धातु प्रतिमाएँ भी प्रदर्शित हैं। जैन प्रतिमाओं के परिकर में आसन के दोनों ओर विद्या देवियों का अंकन गौराऊ की प्रतिमाओं को विशिष्टता प्रदान करता है। तीर्थंकर के दोनों ओर खड्गासन में एक-एक अन्य तीर्थंकर दर्शाये गए हैं। जायल से प्राप्त पार्श्वनाथ तथा रघुनाथगढ़ से प्राप्त महिषासुर मर्दिनी की प्रतिमाएँ भी दर्शनीय हैं। जैन धर्म के 23वें तीर्थंकर पार्श्वनाथ पद्मासनावस्था में विराजमान हैं। पादपीठ के नीचे दोनों तरफ सिंह आकृतियां हैं, इनके नीचे नवग्रहों का अंकन है।

खरसाड्डु से प्राप्त महिषासुर मर्दिनी, हरिहर, गणेश, स्थानक विष्णु और अश्वनी कुमारों के साथ सूर्य एवं रगुनाथगढ़ से प्राप्त महिषासुरमर्दिनी और सुरसुन्दरी आदि भी प्रदर्शित हैं। मंडा सुरेरा से प्राप्त गजेंद्र मोक्ष, आसनस्थ शिव, यमदण्ड-धारिणी देवी और जटाधारी देव, बालेश्वर से प्राप्त शेषशायी विष्णु और स्थानक विष्णु, सुद्रासन से प्राप्त नृत्यरत शिव, तपस्यालीन पार्वती और अष्ठ दिक्पाल, खंडेला से प्राप्त सूर्यपुत्र रेवंत और विष्णु मंदिर का कलश आदि महत्वपूर्ण हैं।

संग्रहालय की महत्वपूर्ण पाषाण प्रतिमाओं में हरिहरपितामह मार्तण्ड अद्भुत प्रतिमा है, जिसमे सूर्य के साथ-साथ ब्रह्मा, विष्णु और शिव को प्रदर्शित करते हुए सभी चारों देवों के आयुधों के साथ-साथ वाहनों का भी अंकन किया गया है। दूसरी महत्वपूर्ण प्रतिमा नवग्रह फलक है जिसमे शुक्र, शनि, राहु और केतु के अंकन के साथ एक नारी प्रतिमा का अंकन है, जो लम्बे उतरीय तथा बिजोरा-फल को थामे हुए है। प्रतिमा-विधान में यह अंकन अनोखा और दुर्लभ है। तीसरी प्रतिमा सूर्यपुत्र रेवंत की है, जिसमें अश्वारूढ़ रेवंत के साथ सूर्य के परिचारकों- दांडी और पिंगल को भी अश्व पर सवार दिखाया गया है। यह स्वतंत्र प्रतिमा है, जो किसी देवकुलिका में पूजांतर्गत रही होगी। चौथी प्रतिमा गजेंद्रमोक्ष है, जिसमें भगवान विष्णु को ग्राह से गजेन्द्र का उद्धार करते हुए प्रदर्शित किया गया है। इसमें मानव रूप में गरुड़ का अंकन है। पांचवी प्रतिमा भैरवी की है, जटामुकुटधारी देवी के हाथों में पुस्तक, पुष्पकलिका और पानपात्र का अंकन है। छठी प्रतिमा नटेश शिव की है, जो अपने गणों के साथ नृत्य कर रहे हैं। सातवीं प्रतिमा पाशुपत पूजा फलक है, जिसमें मनुष्यों को मांसभक्षण तथा सुरापान करते हुए दिखाया गया है। संग्रहालय में संकलित पाषाण प्रतिमाओं के अलावा गौराउ (जिला नागौर) से प्राप्त धातु प्रतिमाएं उल्लेखनीय हैं, जिनमे ऋषभदेव, पार्श्वनाथ और पद्मप्रभु की प्रतिमाएं सम्मिलित हैं। ये प्रतिमाएं 11 शताब्दी ईस्वी की हैं।


चौखट-खण्डए हर्षनाथ मंदिर
10वीं शती ईस्वी

शिलालेख

इस संग्रहालय में शेखावाटी से सम्बन्धित शिलालेखों का अच्छा संकलन है। हर्षनाथ मंदिर से प्राप्त काले पत्थर पर उत्कीर्ण 1030 वि.सं. (973 ई.) का शिलालेख संस्कृत भाषा एवं देवनागरी लिपि में है। इस अभिलेख का प्रारम्भ शिव की स्तुति से हुआ है। इसमें चौहान शासकों की वंशवली दी गयी है। इसलिए यह चौहान वंश के राजनीतिक इतिहास की दृष्टि से महत्वपूर्ण है। इसमें हर्षगिरी तथा हर्षनाथ का भी विवरण दिया गया है। वि.सं. 1221 का सीकर से प्राप्त

शिलालेख तथा वि.सं. 1243 के रैवासा से प्राप्त चन्देलों के शिलालेख भी प्रदर्शित किए गए हैं।

लघु चित्र

संग्रहालय में जयुपर शैली की राग-रागिनी चित्रकला के साथ-साथ राधाकिशन, मायावी हाथी, राम का राज्याभिषेक, राम-रावण युद्ध, महिषासुर मर्दिनी और कुछ रेखाचित्र भी प्रदर्शित हैं। राग-रागिनी लघुचित्रों में छह रागों- भैरव, मालकौंस, हिंडोल, दीपक, श्री और मेघ तथा इन रागों की पांच-पांच रागनियों का चित्रण किया गया है। चित्रों की पृष्ठ भूमि में छह ऋतुओं के अनुसार मौसम का चित्रण किया गया है, शास्त्रीय मान्यताओं में रागों को गाने का समय और ऋतु निश्चित है। श्रृंगाररत नायिका अपने केशों को विशिष्ट मुद्रा में पकड़े हुए दृष्टव्य है। विभिन्न भाव-भंगिमाओं में नायिकाएं तथा विभिन्न मुद्राओं में राधा-कृष्ण के चित्र भी उपलब्ध हैं। संग्रहालय के प्रांगण में शेखावाटी क्षेत्र की प्रमुख हवेलियों एवं छतरियों के छायाचित्र प्रदर्शित किये गए हैं।

अस्त्र-शस्त्र

इसी दीर्घा में भरतपुर से प्राप्त हथियारों को प्रदर्शित किया गया है जिनमें विभिन्न प्रकार की तलवारें, तेगा, खांडा, किरिच, सेखला, नीमचा, ऊना, सुदेट और कत्ता आदि हैं। तोड़ेदार, पत्थरकला, टोपीदार और कारतूसी आदि विभिन्न प्रकार की बंदूकें और इसके अलावा पेशकब्ज, छुरियाँ, भाले और सैनिकों के कवच और ढाल प्रदर्शित किये गए हैं।

सिक्के

संग्रहालय में शेखावाटी के विभिन्न स्थानों से प्राप्त सिक्के प्रदर्शित किए गए हैं। इनमें कुराधन (नीम का थाना), डाडा, फतेहपुरा (खेतड़ी, झुंझुनू) से प्राप्त कुषाण कालीन सिक्के, धमव (चूरू) से प्राप्त इंडो-ससैनियन सिक्के, गलेर (राजगढ़, चूरू) तथा गनेड़ी (सीकर) से प्राप्त आदिवराह सिक्के, लाडुसर (सीकर) गनेड़ी और गलेर से प्राप्त अश्वारोही एवं बृषभ प्रकार के सिक्के, हर्ष से प्राप्त दिल्ली सल्तनत कालीन सिक्के, झुंझुनू, कटराथल (सीकर), विलंगा की रोही (सुजानगढ़, चूरू) तथा खगीपावड़ा (सुजानगढ़, चूरू) से प्राप्त जौनपुर सुल्तान के सिक्के तथा सराय (उदयपुरवाटी, झुंझुनू) से प्राप्त विभिन्न रियासतों के सिक्कों का प्रदर्शन किया गया है।

खण्डेला के निकट ग्राम गुरारा से 2,744 पंचमार्क सिक्के मिले थे, जो जयपुर संग्रहालय में प्रदर्शित किए गए हैं। पंचमार्क सिक्के भारतीय मुद्रा इतिहास के प्राचीनतम सिक्के माने जाते हैं। विश्वस्तर पर इनका प्रचलन काल 600 ई.पू. से 200 ई.पू. तक माना गया है। ग्राम गुरारा में मिले सिक्कों में से 10 श्रेणी के सिक्कों के छायाचित्र संग्रहालय प्रांगण में प्रदर्शित किये गए हैं। सिक्कों पर टंकित चिह्नों को छायाचित्रों के

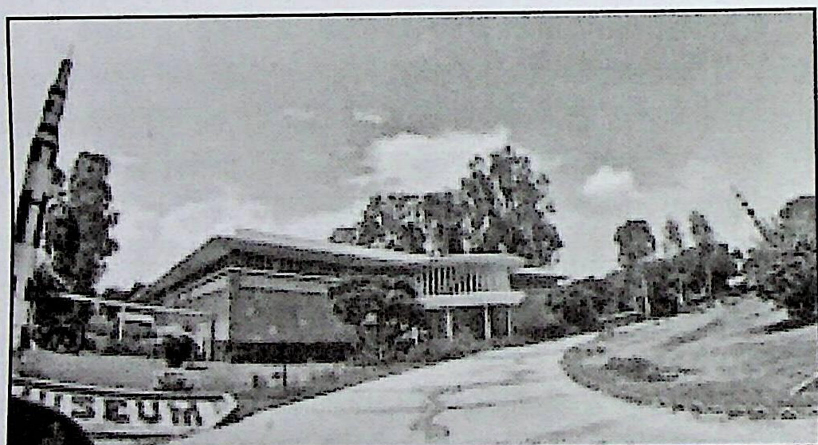
माध्यम से प्रदर्शित किया गया है। प्रथम दो पुरुष आकृतियों के सिर पर केवल एक-एक जूड़ा बंधा हुआ है। जबकि प्रथम सिक्के पर अंकित तीसरी महिला आकृति के सिर पर तीन जूड़े बंधे हुए हैं। इस प्रकार तीसरी महिला आकृति दो चोटियाँ अथवा तीन जूड़े वाली हैं जो वामांग में विराजमान है। इस प्रकार के 7 श्रेणी के सिक्कों में अंकित तीसरी महिला आकृति, प्रत्येक सिक्के पर वामांग (बाएं) हाथ पर अंकित की गयी है। इन सिक्कों पर भगवान श्रीराम, वामांग में देवी सीता एवं दाहिनी ओर श्री लक्ष्मण का अंकन दर्शनीय है। खंडेला तहसील के गुरारा गाँव से मिली चांदी की आहत मुद्राएं, लाडुसर से प्राप्त 11-12वीं शताब्दी की अश्वारोही एवं वृषभ प्रकार की ताम्र मुद्राएं, गनेड़ी से प्राप्त नौवीं शताब्दी के आदिवराह प्रकार की चाँदी की मुद्राएं भी प्रदर्शित की गई हैं।

लोकजीवन

प्लास्टर ऑफ पेरिस से बनी प्रतिमाओं के माध्यम से शेखावाटी के लोकजीवन को प्रदर्शित किया गया है। पहली दीर्घा में रसोई का दृश्य है, जिसमें एक महिला बाजरे की रोटियां बना रही है और रसोई में काम आने वाली विभिन्न वस्तुओं के साथ-साथ पुरुष को भोजन करते हुए एवं बच्चों को खिलौनों से खेलते हुए प्रदर्शित किया गया है। दूसरी दीर्घा में शेखावाटी के प्रसिद्ध गींदड़ नृत्य का प्रदर्शन किया गया है। आठवीं दीर्घा में शेखावाटी से सम्बन्धित कला-पुरा सामग्री को छायाचित्रों के माध्यम से प्रदर्शित किया गया है।



बिड़ला तकनीकी संग्रहालय, पिलानी



इस संग्रहालय की स्थापना ई.1954 में की गई थी। इसके लिए ई.1964 में भव्य भवन बनाया गया तथा ई.1970 में इसे नए भवन में स्थानांतरित किया गया। यह लगभग 50 हजार वर्ग फुट क्षेत्रफल में स्थित है। इस संग्रहालय में स्वतंत्र भारत में विज्ञान एवं तकनीकी क्षेत्र में हो रहे विकास एवं उपलब्धियों को दर्शाने वाली दीर्घाएं स्थापित की गई हैं।

कोयला खान दीर्घा : संग्रहालय में कोल माइन्स का प्रदर्शन पूरे एशिया में अकेला माना जाता है। इसमें खान से कोयला निकालने एवं अन्य खनिज निकालने का तरीका एवं शोधन की विधियां दिखाई गई हैं। बटन दबाते ही विभिन्न रंगों की रोशनी में कोयला, खान एवं खनिज दिखाई देते हैं, जिन्हें देखना एक रोमांचक अनुभव है।

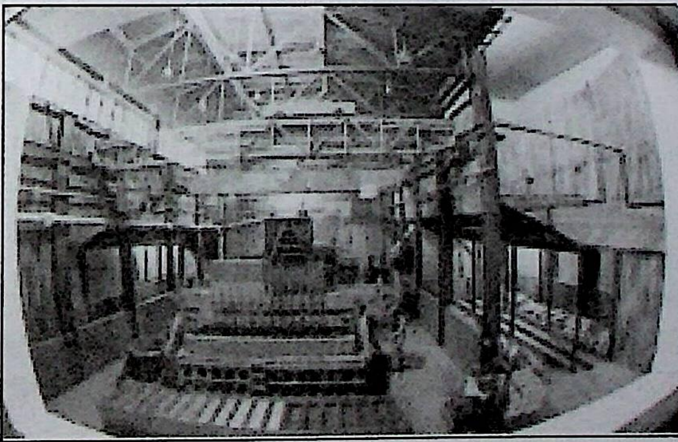
विद्युत शक्ति : इस दीर्घा में भाप का इंजन, टर्बाइन, कोयले से विद्युत उत्पादन, बांध एवं नदी घाटी परियोजनाएं, आण्विक ऊर्जा आदि की जानकारी दी गई है। आज के युग में विद्युत की कमी को दूर करने के लिए किस प्रकार ऊर्जा प्राप्त करें तथा इसका सदुपयोग कैसे किया जाए, इसकी भी जानकारी मिलती है।

खनिज धातु : इस दीर्घा में दिखाया गया है कि भूगर्भ में छिपे खनिज अयस्क से धातु किस प्रकार प्राप्त की जा सकती है। लौह अयस्क से लोहा प्राप्त करने एवं लोहे को इस्पात में परिवर्तित करने की विधि बताई गई है। इसके अलावा यहाँ एल्यूमिनियम बनाने और विभिन्न प्रकार की मशीनरी का भी प्रदर्शन किया गया है।

यातायात (सामान ढुलाई) : सामान ढुलाई के संसाधन के अभाव में मनुष्य की

प्रगति संभव नहीं है। इस दीर्घा में सड़क, रेलवे तथा यातायात के विभिन्न साधनों के साथ समुद्री जहाज के विभिन्न भागों यथा इंजन, यात्री कक्ष, मनोरंजन कक्ष एवं सामान रखने की जगह का प्रदर्शन किया गया है। इसके अतिरिक्त अन्य यातायात साधनों के विकास को भी दर्शाया गया है।

अंतरिक्ष विजय : इसमें एक अंधेरी सुरंग बनी हुई है, जिसमें सैलानियों के प्रवेश करते ही अंतरिक्ष के समान दृश्य दिखाई देता है। देखने वालों को ऐसा लगता है जैसे वह अंतरिक्ष में सैर कर रहे हैं। उन्हें चंद्रमा एवं तारे साकार रूप से देखने का आभास होता है। इस प्रदर्शन में चंद्रमा पर अपोलो यान किस तरह से उतरा तथा भविष्य में बसने वाले लूनर सिटी (चांद-तारों का शहर) की बसावट की कल्पना की गई है।



खान एवं भूगर्भ खनन : इस दीर्घा में भारत एवं विश्व की महत्वपूर्ण खानों के मॉडल बनाकर प्रदर्शित किए गए हैं। महत्वपूर्ण खनिजों के नमूने एवं उनकी विस्तृत जानकारी के साथ खानों के नक्शे भी दर्शाए गए हैं।

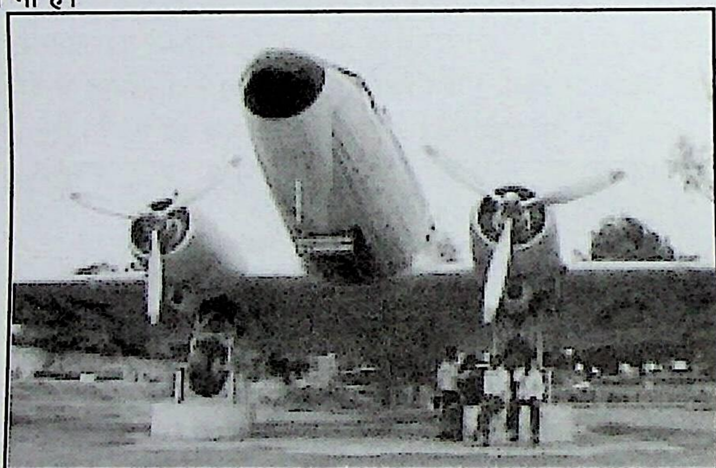
इलेक्ट्रोनिकी युग : वैज्ञानिक युग में इंसान की जीवन शैली में काफी परिवर्तन आया है जिसे यहाँ प्रदर्शित किया गया है। यहाँ मनुष्य की आकृति में बनाया हुआ एक रोबोट है जो माइक्रो प्रोसेसर से नियंत्रित है। यह रोबोट दर्शकों का अभिवादन करता है एवं इलेक्ट्रोनिक दीर्घा का वृत्तांत सुनाता है। इसमें कम्प्यूटर पहेलियां, वीडियो और स्लाइड प्रदर्शन एवं संगीत फव्वारा भी बना हुआ है।

रसायन एवं रसायन शास्त्र : इस दीर्घा में भूगर्भ से निकलने वाले कच्चे तेल एवं गैस की विधियां तथा उन्हें संयंत्र द्वारा संशोधित करने की विधि का प्रदर्शन किया गया है। सीमेंट, कागज, रबड़, सोड़ा, कैल्शियम कार्बाइड तथा दूसरे अन्य महत्वपूर्ण उत्पाद बनाने की विधियों की सम्पूर्ण प्रक्रिया को नक्शे एवं चार्टों के माध्यम से दर्शाया गया है।

वस्त्र निर्माण : वस्त्र निर्माण के तहत कॉटन, जूट, रेयन एवं अन्य धागे बनाने के

बारे में बताया गया है। पुराने वस्त्र बनाने की जुलाहा पद्धति से लेकर आधुनिक मशीनों से वस्त्र बनाने की विधि प्रदर्शित की गई है।

यूरेका गैलेरी (साइंस गैलेरी) : साइंस गैलेरी में भौतिक विज्ञान के सिद्धांतों को प्रदर्शित किया गया है। इसमें यांत्रिक, ऊष्मा, ध्वनि, प्रकाश, चुम्बकत्व एवं विद्युत प्रगति की प्रदर्शनियां हैं। विज्ञान की अन्य शाखाओं के सिद्धांत जैसे गणित आदि का प्रदर्शन भी है।



अस्त्र-शस्त्र : इस दीर्घा में पुराने हथियारों को प्रदर्शित किया गया है। राजपूताना के परम्परागत अस्त्र-शस्त्रों एवं पेंटिंग के माध्यम से हल्दीघाटी के युद्ध के दृश्य दिखाए गए हैं।



आर्ट गैलेरी : म्यूजियम में आर्ट गैलेरी दर्शनीय है। इस दीर्घा में चित्रकला एवं मूर्तिकला के माध्यम से परम्परागत एवं आधुनिक पाश्चात्य शैली का प्रभावशाली चित्रांकन किया गया है। इसमें सुदूरवर्ती भारतीय चित्रकला एवं मूर्तियों के चित्र लगे हुए हैं, जिनमें बंगाल स्कूल पेंटिंग, महत्वपूर्ण मंदिरों एवं पुराने वस्त्र निर्माण का चित्रण किया गया है।

❀❀❀

अध्याय - 42

ज्योतिष यंत्र संग्रहालय, जयपुर

जयपुर नगर के संस्थापक महाराजा सवाई जयसिंह (द्वितीय) (ई.1699-1743) ने पुर्तगालियों, फ्रांसीसियों तथा जर्मन विद्वानों को जयपुर में बुलाकर उनके यहाँ विकसित हो रहे ज्ञान की जानकारी प्राप्त की। वहाँ से पुस्तकें खरीद कर मंगवाईं तथा जयपुर के लोगों को उस ज्ञान से परिचित करवाया। जयसिंह की बनाई वेधशालाओं में अनेक विदेशी विद्वान काम करते थे। उसने सूरत से अंग्रेजों के कीप जैसे यंत्र, मानचित्र तथा ग्लोब भी मंगवाए। जयसिंह ने मेनोल फिगूएरेडो नामक यूरोपीय विद्वान को पुर्तगाल भेजा, ताकि वह पुर्तगाल से ग्रंथ और यंत्र क्रय करके ला सके। पैड्रो दा सिल्वा का पौत्र हकीम शेवायर के नाम से प्रसिद्ध था।

वेधशालाओं का निर्माण

सवाई जयसिंह को गणित, ज्योतिष एवं नक्षत्र विद्या के अध्ययन में गहन रुचि थी। जयसिंह ने अपने बारे में लिखा है- 'मैंने बचपन से गणित का अध्ययन किया, जो युवावस्था तक चलता रहा। मुझे भगवत् कृपा से यह ज्ञात हुआ कि संस्कृत, अरबी और यूरोपियन पंचांगों के ग्रहों की स्थिति उससे भिन्न मिलती है जो स्वयं के पर्यवेक्षण से पता चलती है, विशेषतः द्वितीया के चंद्र की स्थिति।' ई.1725 में उसने बादशाह मुहम्मदशाह से अनुमति लेकर दिल्ली के जयसिंहपुरा क्षेत्र में एक वेधशाला का निर्माण करवाया। राजा जयसिंह, जहाँ-जहाँ रहा, वहाँ-वहाँ उसने वेधशालाएँ बनवाईं। जयपुर उसकी स्वयं की राजधानी थी। उज्जैन उसके मालवा सूबे की राजधानी थी। बनारस और मथुरा उसके आगरा सूबे में स्थित थे। दिल्ली की वेधशाला भी जयसिंहपुरा नामक उपनगर में बनवाई गई, जो जयसिंह का अपना क्षेत्र था। उसने वेधशालाओं में बड़े-बड़े यन्त्र बनवाकर नक्षत्रों की गति को शुद्ध रूप से जानने के साधन उपलब्ध कराये। मथुरा की वेधशाला अब अस्तित्व में नहीं है तथा दिल्ली की वेधशाला काम नहीं करती है। शेष वेधशालाएं आज भी काम करती हैं।

वेधशाला यंत्रों का आविष्कार

जयसिंह ने प्रथम प्रयास में पीतल धातु से निर्मित छोटे यंत्र लगाए, जिससे समय के छोटे खण्डों का सही पता नहीं चल पाता था। धातु से बने यंत्रों की सबसे बड़ी कमजोरी यह थी कि वे तापमान के बढ़ने और घटने के साथ फैलते और संकुचित होते थे। इसलिए

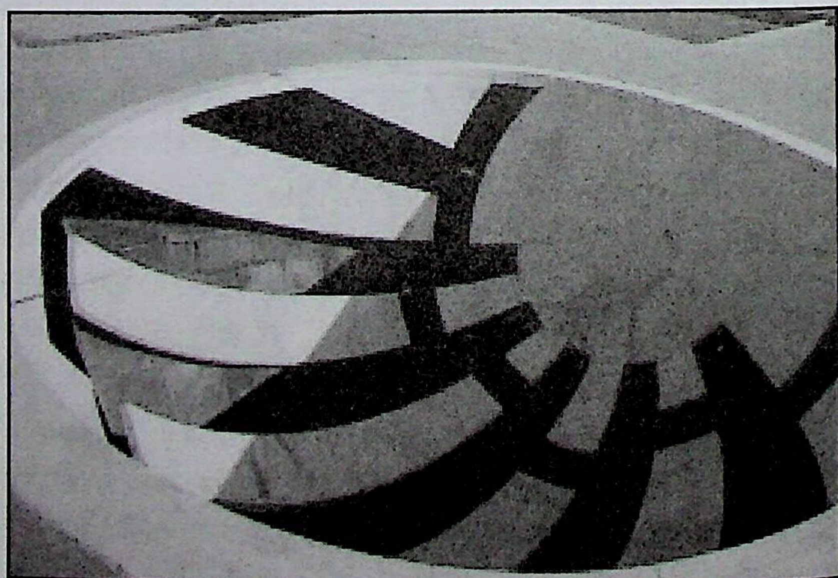
जयसिंह ने पत्थर और चूने की सहायता से स्वयं अपने द्वारा आविष्कार किये हुए बड़े यंत्र बनवाये। माना जाता है कि जय प्रकाश, राम यंत्र तथा सम्राट यंत्र, जयसिंह के स्वयं के आविष्कार थे।

सम्राट यंत्र

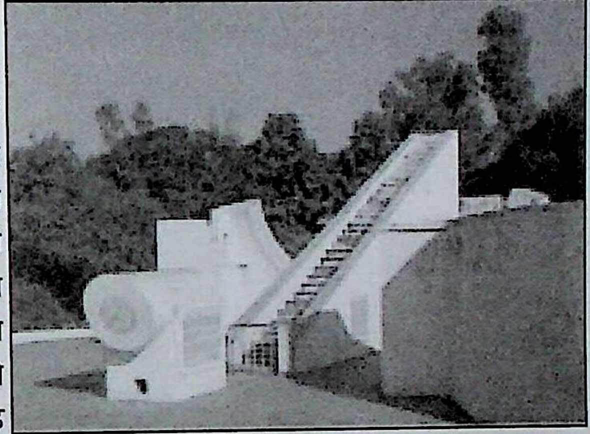
सम्राट यंत्र पर एक ऐसी घड़ी बनी हुई है, जो भूमध्य रेखा पर सूर्य के समय को दर्शाती है। उसके नीचे एक त्रिभुजाकार सुई लगी है, जो सूर्य की स्थिति को छाया के रूप में दर्शाती है। इसका त्रिभुजाकार सुई का कर्ण पृथ्वी की धुरी के समानान्तर है और उसका दूसरा पक्ष गोले का एक चौथाई भाग बनाता है, जो भूमध्य रेखा के समानान्तर है। इसके सिरों पर घण्टे, मिनट और डिग्री अंकित हैं और त्रिभुज के तीनों छोर चौथाई गोलों पर अलग-अलग स्पर्श रेखाएं बनाते हैं, जिनके दोनों छोर चिह्नित हैं। जयपुर की वेधशाला के इस यंत्र की ऊँचाई 90 फुट और लम्बाई 147 फुट है। गोले के दोनों चौथाई भागों का अर्धव्यास 50 फुट है। दिल्ली का सम्राट यंत्र आकार में इससे कुछ छोटा है।

जयप्रकाश यंत्र

जयप्रकाश यंत्र एक गोलार्द्ध है जिसके भीतरी ओर कुछ चिह्न अंकित हैं। इस पर उत्तर से दक्षिण और पूर्व से पश्चिम जाते हुए तार लगे हुए हैं और जहाँ तार एक दूसरे को काटते हैं, उस बिंदु की छाया से सूर्य की स्थिति का पता चलता है। चिह्नित स्थानों पर दृष्टि डालने से दूसरे ग्रह-नक्षत्रों की स्थिति जानी जा सकती है। जिस ग्रह-नक्षत्र का चिह्न है, उस पर पड़ती हुई छाया की स्थिति नक्षत्र की स्थिति बताती रहती है। इसलिए यह यंत्र अलग-अलग दो गोलार्द्धों में बनाया गया है। दिल्ली के जयप्रकाश यंत्र का व्यास 27 फुट और जयपुर के जयप्रकाश यंत्र का व्यास 17 फुट है।

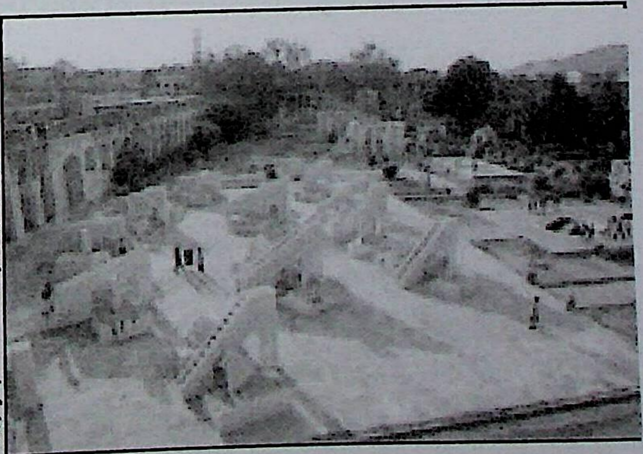


रामयंत्र



रामयंत्र दो बेलनाकार शीर्षों की ओर खुला हुआ है। इसकी भीतरी और बाहरी दीवारों पर चिह्न अंकित हैं। इनसे नक्षत्र की ऊँचाई आदि का ज्ञान होता है। पर्यवेक्षण की सुविधा के लिए नीचे की ओर से दोनों ओर खुले हुए खण्ड हैं। इस यंत्र में दिक्-अंश यंत्र और नाड़ी वलय भी हैं, जो ज्योतिषीय पर्यवेक्षण में उपयोगी हैं। इससे पूर्व इतने सटीक यंत्र नहीं बन सके थे। इन्हें भारत में सर्वप्रथम होने का गौरव भी प्राप्त है। जयसिंह ने पंचांग के शुद्धिकरण का कार्य किया ताकि तिथियां सही समय पर पहचानी जा सकें। ग्रहण कब पड़ेगा, इसकी भी सटीक भविष्यवाणी की जा सकती है।

यंत्रों के लघु प्रारूप



वेधशालाओं में विशालकाय यंत्रों को स्थापित करने से पहले लकड़ी, क्ले, पत्थर तथा पीतल के लघु प्रारूप तैयार करवाए गए थे। ये नमूने यंत्रशाला के संग्रहालय में रखे हुए हैं। महाराजा सवाई जयसिंह की 309वीं जयंती के अवसर पर 3 नवम्बर 1996 को पहली बार इन यंत्रों की प्रदर्शनी लगाई गई।



जोधपुर संभाग के संग्रहालय

अध्याय - 43

सरदार राजकीय संग्रहालय, जोधपुर



ई.1909 में लॉर्ड किचनर जोधपुर आया। उसे मारवाड़ में जंगी लाट कहा जाता है। किचनर को दिखाने के लिए मारवाड़ रियासत की विभिन्न प्रकार की हस्तकला वस्तुएं एकत्र की गईं तथा उन्हें एक स्थान पर प्रदर्शित करने के लिए इण्डस्ट्रीयल म्यूजियम की स्थापना की गई। उस समय जोधपुर रियासत पर महाराजा सरदारसिंह (ई. 1895-1911) का शासन था। इसलिए यह सरदार संग्रहालय कहलाने लगा। सर्वप्रथम यह संग्रहालय सोजती गेट के बाहर एक भवन में खोला गया था। वहाँ से इस संग्रहालय को राईकाबाग के बाहर एक भवन में स्थानान्तरित किया गया तथा बाद में सूरसागर ले जाया गया। ई.1916 में भारत सरकार ने सरदार संग्रहालय को मान्यता प्रदान की। ई. 1921 में सरदार संग्रहालय को दरबार स्कूल भवन में स्थानांतरित किया गया। ई.1935 में डीडवाना के सेठ मंगनीराम बांगड़ ने इस संग्रहालय और सुमेर पब्लिक लाइब्रेरी के लिए जोधपुर स्थित सार्वजनिक उद्यान (पब्लिक पार्क) में एक नवीन भवन बनवाया। 17 मार्च 1936 को वायसराय विलिंगडन ने नवीन संग्रहालय भवन और सुमेर पब्लिक लाइब्रेरी का उद्घाटन किया।

यह संग्रहालय अब सरदार राजकीय संग्रहालय कहलाता है तथा आज भी उसी सार्वजनिक उद्यान में स्थित है, जो अब उम्मेद उद्यान के नाम से जाना जाता है। इस संग्रहालय में आठ मुख्य दीर्घाएं हैं, जिनमें मारवाड़ रियासत के विभिन्न नगरों एवं गांवों



चतुर्भुज विष्णु, किराडू, 12वीं शताब्दी ईस्वी, सरदार संग्रहालय

तथा रियासत के बाहर से लाई गई ऐतिहासिक एवं कलात्मक सामग्री संग्रहित है।

प्रस्तावना कक्ष

प्रस्तावना कक्ष में संग्रहालय के विभिन्न कक्षों में प्रदर्शित सामग्री को प्रस्तावना के रूप में स्थान दिया गया है। इस कक्ष में पाषाण प्रतिमा, चित्र, लकड़ी, हाथीदांत, पीतल, चीड़, खस तथा मिट्टी से निर्मित कलात्मक वस्तुओं एवं जनजीवन की झांकियों को

प्रदर्शित किया गया है।

प्राणी कक्ष

इस कक्ष में दुर्लभ प्राणियों के शरीरों अथवा उनके सिर को स्टफ करके प्रदर्शित किया गया है। इनमें शेर, मगरमच्छ, घड़ियाल, भेड़िया एवं सूअर आदि के सिर मुख्य हैं। प्राणी कक्ष में विभिन्न प्रकार के शंख, मछलियां, बिच्छू, कछुए, चिड़िया, अजगर आदि के स्टफ भी रखे गए हैं। इसी कक्ष में कायलाना झील तथा रेगिस्तान का सुंदर मनोरम दृश्य मॉडल्स के माध्यम से प्रदर्शित किए गए हैं।

अस्त्र-शस्त्र कक्ष

इस कक्ष में प्राचीन खंजर, भाले, तलवारें, ढालें, कुल्हाड़ियां, बंदूकें, पिस्तौलें, गुप्तियां, बंदूकों के बेनट, तोप के गोले, शिरस्त्राण, हाथियों के अंकुश आदि प्रदर्शित हैं। बख्तरबंद, हवाई जहाज एवं भारवाहक पानी के जहाजों के मॉडल भी प्रदर्शित किए गए हैं।



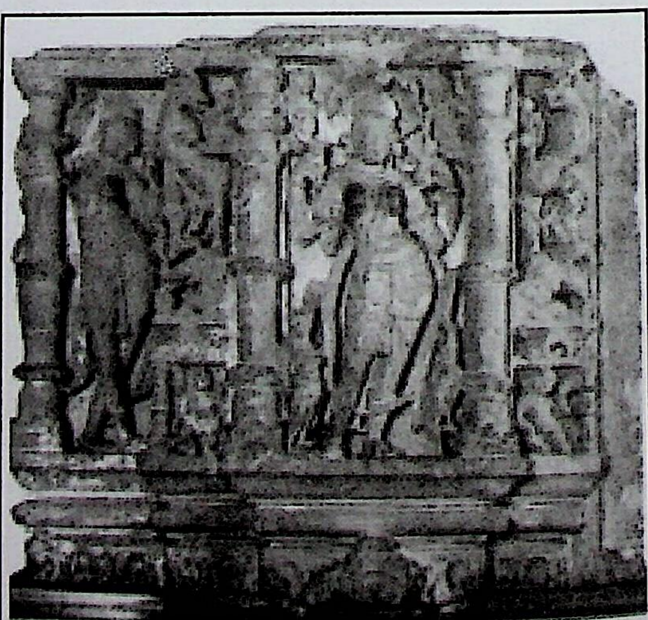
प्रतिमा कक्ष

इस कक्ष में प्रदर्शित मण्डोर दुर्ग से प्राप्त 4-5वीं शताब्दी के तोरण स्तम्भ उल्लेखनीय हैं, जिन पर कृष्ण लीलाओं का अंकन है। इन लीलाओं में श्रीकृष्ण द्वारा अंगुली पर गोवर्धन धारण, दधिमंथन, शकटभंग, धेनुकासुर वध, कालियदमन, सुदामा के

साथ क्रीड़ा, अरिष्ठासुर से युद्ध तथा केशीवध के दृश्य शामिल हैं। आगोलाई से प्राप्त शेषशायी विष्णु की भीमकाय प्रतिमा 10वीं शताब्दी ईस्वी की है, जिसमें विष्णु शेषशैय्या पर शयन कर रहे हैं। उनके पैरों के पास लक्ष्मी विराजमान हैं तथा सिराहने गदा रखी है। किराडू से प्राप्त 12वीं शताब्दी ईस्वी की चतुर्भुजी प्रतिमा स्थापत्य की दृष्टि से महत्वपूर्ण है। इसमें पंखों का भी अंकन किया गया है। डीडवाना से प्राप्त काले पत्थर की योगनारायण प्रतिमा 12–13वीं सदी की है। योगनारायण कमलपुष्प पर आसीन हैं। प्रतिमा चतुर्भुजी है। भगवान ने वैजन्तीमाला धारण कर रखी है। यह प्रतिमा विदेशों में भी प्रदर्शन के लिए भेजी जाती रही है। ओसियां, बाप, देवांगना, चंद्रावती तथा निमाज से प्राप्त प्रतिमाएँ रखी गई हैं।



शेषशायी विष्णु, सरदार संग्रहालय, जोधपुर



देवी प्रतिमा, किराडू, 12वीं शताब्दी ईस्वी, सरदार संग्रहालय

महावीर कक्ष

महावीर कक्ष में खींवसर से प्राप्त जीवन्त स्वामी की मनुष्याकार प्रतिमा प्रदर्शित है, जो 10वीं शताब्दी ईस्वी की है। यह विभिन्न अलंकरणों से सुसज्जित है। इसके सिर के ऊपर छत्र है जिसके दोनों तरफ हाथी बने हुए हैं। इसी कक्ष में ओसियां से प्राप्त जीवन्त स्वामी एवं

पार्श्वनाथ की बड़ी प्रतिमाएँ, सांचोर से प्राप्त जैन तीर्थंकरों की धातु प्रतिमाएँ भी प्रदर्शित हैं। इस कक्ष में श्रीमद्भगवतगीता के कुछ चित्र, बारहमासा, राग-रागिनियों के चित्र, जम्बूद्वीप का मानचित्र एवं प्राचीन शिलालेखों के ठप्पे भी प्रदर्शित हैं।

ऐतिहासिक कक्ष

इस कक्ष में मारवाड़ रियासत के शासकों के मानवाकार चित्र, लघुचित्र, हाथीदांत पर बनाए गए चित्र एवं ढोला-मरवण का चित्र सम्मिलित हैं।

मुद्रा संग्रह

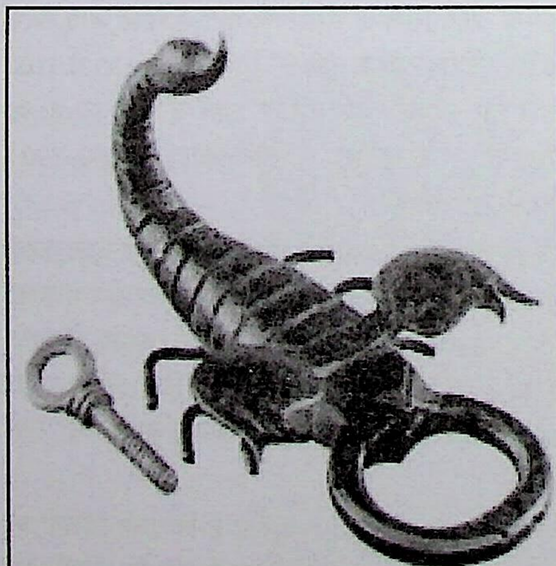
सरदार संग्रहालय में मुद्राओं (सिक्कों) का भण्डार विशेष निधि के रूप में सुरक्षित है। इन सिक्कों में मारवाड़ रियासत में विभिन्न कालखण्डों में प्रचलित मुद्राओं के साथ-साथ देश के विभिन्न भागों में समय-समय पर प्रचलित मुद्राएं, राजपूताना की देशी रियासतों की मुद्राएं, मुस्लिम आक्रांताओं की मुद्राएं तथा ऑस्ट्रिया, फ्रांस, बगदाद, बुखारा एवं बेल्जियम आदि देशों की मुद्राएं भी शामिल हैं। सरदार संग्रहालय में मारवाड़ की प्राचीन राजधानी मण्डोर में स्थित मण्डोर उद्यान की खुदाई के समय भूगर्भ से मिली 7वीं एवं 8वीं शताब्दी की चांदी की 30 गोलाकार छोटी-छोटी मुद्राएं सुरक्षित रखी गई हैं। इन मुद्राओं ने पश्चिमी भारत के प्राचीन इतिहास की कड़ियों को खोलने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। इन मुद्राओं का तौल 7 से 9 ग्रेन के मध्य और परिधि 4 इंच है। इन सिक्कों के एक ओर अरबी में कलमा तथा दूसरी तरफ अरब गवर्नरों के नाम अंकित हैं। इन मुद्राओं पर अमीर अब्दुल्ला, वाली अब्दुल्ला, मुहम्मद बनु अमराविया, बनु अलविया, बनु अब्दुर्रहमान, मुहम्मद आदि सिंध के रेगिस्तानी मार्ग से भारत आए अरब आक्रमणकारियों-के नाम अंकित हैं। गुजरात और राजस्थान में प्रचलित ई.650 से 1100 के सिक्के देसूरी, नागौर, सांभर, जालोर, चौहटन और सरदार शहर से प्राप्त हुए हैं, जो सरदार संग्रहालय में सुरक्षित हैं। इसी प्रकार नागभट्ट के शासनकाल (ई.840-890) की 62 रजत मुद्राएं भी संग्रहालय में सुरक्षित हैं।

15वीं शताब्दी ईस्वी में गुजरात के मुस्लिम शासकों इब्राहिम शाह, मोहम्मद शाह, हुसैन शाह तथा हुसैन गौरी, एवं उसी काल में मालवा के मुस्लिम शासकों ग्यासशाह खिलजी, नासिरशाह खिलजी और मोहम्मद खिलजी (द्वितीय) के सांभर से प्राप्त सिक्के भी इस संग्रहालय में रखे गए हैं। इन सिक्कों से ज्ञात होता है कि 15वीं शताब्दी में दिल्ली, गुजरात एवं मालवा के मुस्लिम शासकों की गतिविधियां राजस्थान में अपने चरम पर थीं।

संग्रहालय में विविध प्रकार की स्वर्ण मुद्राएं भी उपलब्ध हैं जिन पर दिल्ली के शासक जलालुद्दीन फिरोज (द्वितीय), अल्लाउद्दीन मोहम्मद शाह (द्वितीय) आदि के नाम अंकित हैं। ये सिक्के राजकीय कोषालय जोधपुर से प्राप्त हुए थे। जयपुर संग्रहालय

द्वारा प्रदत्त गयासुद्दीन तुगलक (प्रथम), फिरोज शाह तुगलक (तृतीय), तैमूरशाह, अकबर, शाहजहाँ, शाहआलम (द्वितीय), फर्रूखसियर, मोहम्मदशाह, शाहआलम (द्वितीय), नादिरशाह, अबुल अब्बास एवं अहमद बगदाद (बसरा) के समय के सिक्कों के अलावा बुखारा, बेल्जियम और ऑस्ट्रिया आदि देशों के सोने के सिक्के भी प्रदर्शित किए गए हैं। जोधपुर कोषालय से फ्रांस के सम्राट नैपोलियन बोनापार्ट, ऑस्ट्रिया, ईस्ट इण्डिया कंपनी, महारानी विक्टोरिया, बड़ौदा, उदयपुर, जयपुर आदि देशी रियासतों के सिक्के भी प्राप्त हुए थे, जो इस संग्रहालय में सुरक्षित हैं। गुप्त सम्राट समुद्रगुप्त एवं चन्द्रगुप्त (द्वितीय), काश्मीर नरेश प्रतापादित्य (द्वितीय, ई.500), कन्नौज नरेश गोविन्द चन्द्र (ई.1112-60), मुगल बादशाह अकबर, जहांगीर एवं उसकी बेगम नूरजहाँ तथा शाहजहाँ के समय के सिक्के भी उपलब्ध हैं। आंध्र प्रदेश के वर्तमान नेलोर जिले की पुरानी रियासत के 13वीं सदी के सिक्के भी हैं, जिन पर भुजवीर और मदन के नाम अंकित हैं। महेन्द्र वर्मा (प्रथम), जगदेव (प्रथम), जगदेव (द्वितीय), कृष्णराय (मैसूर) और वासुदेव के सोने के सिक्के भी संग्रहित है।

लखनऊ संग्रहालय से प्राप्त थानेश्वर के शासक शिलादित्य, लखनऊ के शासक नसरूद्दीन मोहम्मद (प्रथम), अल्लाउद्दीन मोहम्मदशाह (द्वितीय), मुगल शासक जहांगीर, औरंगजेब, मोहम्मदशाह, शाहआलम (द्वितीय) आदि के चांदी के सिक्के जोधपुर संग्रहालय की विशेष निधि हैं। चांदी के सिक्कों में विलियम चतुर्थ, ईस्ट इंडिया कम्पनी, जोधपुर नरेश विजयसिंह (ई.1752-93) के विजयशाही सिक्के, महाराजा तख्तसिंह (ई.1843-73) के समय के सिक्के, कुमार गुप्त, सोमदेव आदि के सिक्कों का खजाना भी जोधपुर संग्रहालय में सुरक्षित है। लखनऊ से इस संग्रहालय को जौनपुर के शासक हुसैनशाह, मोहम्मद बिन कासिम, शम्मुद्दीन और अल्लाउद्दीन मसूद के ताम्बे के सिक्के प्राप्त हुए हैं। ताम्बे के सिक्कों में नागौर एवं मेड़ता के सिक्के, इतबुद्दीन, मुबारकशाह (प्रथम), गयासुद्दीन तुगलक, जलालुद्दीन तुगलक, महमूद बिन कासिम (प्रथम),


ताला-चाबी, घाणेराव, 19वीं शताब्दी ईस्वी

जलालुद्दीन, रजिया, शमसुद्दीन, नसरूद्दीन, सिकन्दरशाह लोदी और स्कन्दशाह लोदी के सिक्के भी संग्रहालय में सुरक्षित हैं।

संग्रहालय में सिक्कों को वर्गीकृत करके पृथक-पृथक कैबिनेट में रखा गया है। वर्गीकृत सिक्कों में 160 सोने के, 820 चांदी के, 329 तांबे के, 2 शीशे के, 132 विलीयोन के, 10 निकल के और 4 इलक्ट्रोन के सिक्के हैं जिनका कुल योग 1465 है। ये सिक्के तीन कैबिनेटों मे रखे गए हैं। प्रथम कैबिनेट में वे सिक्के है जो प्राचीन युगीन इण्डोग्रीक, बैक्टीरियन, इण्डोपर्शियन कुषाण, प्राचीन दक्षिण एवं उत्तर साम्राज्य के शासकों के सिक्के हैं जो 400 ई.पू. से प्रारम्भिक मुगल युग के हैं। इनमें सबसे प्राचीन ई.पू. 400 की पंचमार्क मुद्राएं हैं। दूसरे कैबिनेट में ई.1193 से 1858 तक के मुगलिया, तैमूर, बुखारी, सफवी, पर्शिया, बगदाद, तुर्की आदि के सिक्के हैं। इन सिक्कों में विभिन्न प्रकार के लेख और चिह्न अंकित हैं। तीसरे कैबिनेट में बेल्जियम, ऑस्ट्रिया, फ्रांस, इंग्लैण्ड, अफ्रीका, चीन, अमरीका, ईस्ट इंण्डिया कंपनी, ईरानी, डच इंडिया कंपनी और फ्रैंच ईस्ट इंडिया कंपनी के साथ साथ बड़ौदा, उदयपुर, जयपुर, जामनगर, बीकानेर, बूंदी, हैदराबाद, जोधपुर, इंदौर, मालवा, जौनपुर, चंदेरी, सिरोही, आदि भारतीय रियासतों के सिक्के रखे हुए हैं।

मारवाड़ में कुछ समय के लिए कन्नौज राज्य के सिक्के भी प्रचलित हुए, जिनमें से कुछ महत्वपूर्ण सिक्के जोधपुर संग्रहालय में हैं। जोधपुर रियासत की जोधपुर, नागौर, पाली, सोजत एवं कुचामन आदि टकसालों में बने सिक्के भी सुरक्षित हैं। जोधपुर रियासत के सिक्कों का स्वतंत्र स्वरूप मुगल सल्तनत के पराभव काल में आरंभ हुआ, जब महाराजा विजयसिंह ने अपने सिक्के चलाए। ये सिक्के विजयशाही के नाम से प्रसिद्ध हैं। महाराजा विजयसिंह ने ई.1761 में राज्य की अलग टकसाल स्थापित की। उसने सर्वप्रथम मुगल बादशाह शाह आलम के समय (ई.1759-86) उसी के नाम के सिक्के ढाले। विजयशाही सिक्कों के पूर्व मारवाड़ में दिल्ली के बादशाहों के सिक्के प्रचलित थे। सरदार संग्रहालय जोधपुर में जहांगीर द्वारा जारी राशि बोधक सिक्कों में से मेष और कर्क राशि बोधक दो चांदी के रुपए भी संग्रहित है। ऐसा एक सिक्का जयपुर के केन्द्रीय संग्रहालय में एवं एक रुपया बीकानेर के राजकीय संग्रहालय में देखा जा सकता है।

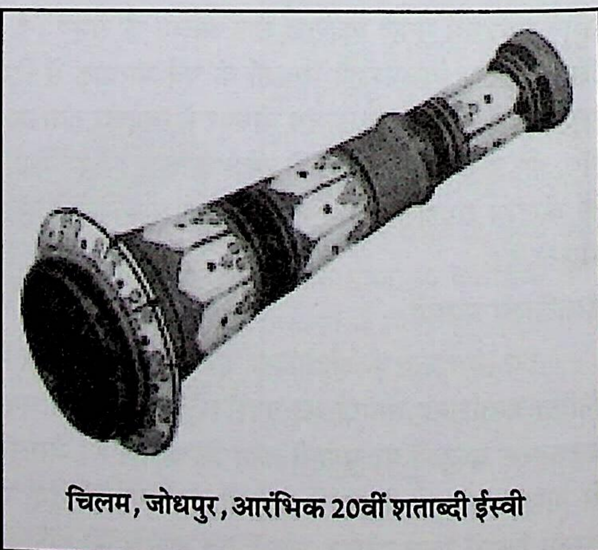
हस्तशिल्प सामग्री

इस संग्रहालय के औद्योगिक कक्ष प्रथम एवं द्वितीय में मारवाड़ के कलाकारों द्वारा निर्मित हस्तशिल्प सामग्री का प्रदर्शन किया गया है। मकराना से प्राप्त संगमरमर की कलात्मक वस्तुओं पर सुनहरी काम किया गया है। जैसलमेर के पीले पत्थर एवं सांभर से प्राप्त नमक के क्रिस्टलों से बनी कलात्मक वस्तुएं, मेड़ता से प्राप्त हाथीदांत की वस्तुएं जिनमें रेलवे स्टेशन, चौपड़ एवं शतरंज की गोटियां, सोजत एवं रायपुर से प्राप्त


ताला-चाबी, नागौर, आरंभिक 20वीं शताब्दी ईस्वी

लकड़ी की वस्तुएं जिनमें चारपाई के पाए, तश्तरियां और विभिन्न प्रकार के खिलौने सम्मिलित हैं। सीप से निर्मित कुछ सामग्री भी उल्लेखनीय है, जिसमें इत्रदानियां एवं फोटो एलबम प्रमुख हैं। पीतल से निर्मित कलाकृतियां प्रदर्शित की गई हैं जिनमें तश्तरियों पर मीनाकारी का काम, विभिन्न प्रकार के ताले एवं दीपक, लकड़ी पर चित्रकारी (कावड़) चमड़े पर कशीदाकारी, कांच पर सुनहरी काम की कलाकृतियां, सलमा सितारे का काम, बंधेज की साड़ियां, लहरिया, सुई का काम एवं एम्ब्रॉयडरी को प्रदर्शित किया गया है। इसी कक्ष में चमड़े से निर्मित कुप्पे, ईसर गणगौर की झांकी एवं काष्ठ निर्मित सुनहरी झूला प्रदर्शित किया गया है।

सरदार संग्रहालय में जोधपुर और मेड़ता के कुशल कारीगरों द्वारा निर्मित कलाकृतियां संग्रहित की गई हैं। इनमें चारपाई के कलात्मक पाये सम्मिलित हैं, जिनमें कारीगर ने वाद्य यंत्रों को धारण करती हुई भावमयी मनमोहक नारी प्रतिमाओं को उत्कीर्ण किया है। इन्हें बागरी काम के नाम से भी जाना जाता है। मेड़ता के कारीगरों द्वारा निर्मित तम्बाकू रखने का गोलाकृति का एक बक्सा है, जिसमें कलात्मक ढंग से हाथीदांत की जड़ाई की गई है। खिलौनों की आकृति के चौपड़ के पासे, जिन्हें लाख चढ़ा कर आकर्षक बनाया गया है, शतरंज की कलात्मक 32 गोटी, लाख चढ़ा हुआ लकड़ी का तीन दराज वाला बक्सा, गुलाबदानी, चकलौटा, तश्तरी, कलमदान, लोटा,


चिलम, जोधपुर, आरंभिक 20वीं शताब्दी ईस्वी

गिलास, तम्बाकू रखने का बक्सा, बोतल, चिलम, खिलौने, गेंद, छड़ी, टेबिल लैम्प, कलश, बेलन, कटोरदान, गड़वा-चकरी, सीताफल, खरबूजा, बैंगन, केरी तुर्रा-स्टैण्ड, कप, तश्तरी, फलाकृति वाला बक्सा, हुक्का, इत्रदानी, ऊँट की नकेल, जैन साधुओं का पटरा और साधुओं का तूम्बा आदि विशेष स्थान रखते हैं। इन हस्तकलाकृतियों को बनाने के लिए कलाकारों ने रोहिड़ा, सागवान और शीशम की लकड़ी का प्रयोग किया है। इन कलाकृतियों पर लकड़ी की प्रकृति के अनुसार रंगों का चयन किया गया है। साथ ही कलाकृतियों को आकर्षक बनाने के लिए पच्चीकारी और खुदाई का कार्य किया गया है एवं उन पर हाथी दांत, सीप, धातु या अन्य काष्ठ का उसी के बराबर टुकड़ा काटकर लाख या अन्य मसाले से रिक्त स्थान पर चिपका दिया गया है। ऊपर लगी हुई लाख को चाकू से साफ करके चमक के लिए पॉलिश की गई है। कलाकृतियों पर लाख का लेप करके विविध प्रकार की चित्रकारी की गई है। लकड़ी की वस्तु पर लाख की विविध रंगों की तहें चढ़ाकर उनको रुखाई से तराशा गया है, जिससे रंग उभर कर दृष्टिगत होते हैं। इस कार्य को 'लुक' कहा जाता है। 19वीं शताब्दी में जोधपुर 'लुक कला' का प्रमुख केन्द्र था। संग्रहालय में प्रदर्शित खिलौनों में अधिकांश लक्ष्मण कुम्हार द्वारा निर्मित हैं। इनकी कीमत 2 पैसे से 12 पैसे तक थी। कुछ खिलौने ऐसे भी हैं, जिनकी कीमती रुपयों में आंकी गई थी।

लकड़ी एंव मिट्टी के खिलौनों में विविध प्रान्तों एवं देशों मे रहने वाले व्यक्तियों के मॉडल भी प्रदर्शित हैं, जैसे जाट, श्रीमाली ब्राह्मण, राजपूत, बंगाली, फारसी, अफगानी और गुजराती आदि। उनके रहन-सहन और वेशभूषा, स्थल की संस्कृति का परिचय देते हैं। कुछ खिलौनों में विभिन्न व्यक्तियों को कार्यरत स्थिति में दर्शाया गया है, जैसे खेत जोतते हुए किसान, पानी का छिड़काव करते हुए भिश्ती, हजामत बनाते हुए नाई, धार धारते हुए सिकलीगर, गहने गढ़ते हुए सुनार, लकड़ी काटते हुए लकड़हारा, दर्जी, गांधी, मोची, माली, रंगरेज, पोस्टमेन, कालबेलिया, सपेरा, सिपाही, कावड़िया, पत्थर का कार्य करते हुए सिलावट, बर्तन बनाते हुए ठठेरा, फल बेचते हुए फल विक्रेता, सफाई करते हुए सफाईकर्मी, मशालची, धोबी, भड़भूंजा, लुहार, हमाल, तेली, हलवाई, खोमचेवाला, मशकिया, डॉक्टर, हाकिम, महाजन, दूधवाला, शिकारी आदि। खिलौनों में देवी-देवताओं को भी प्रमुखता से स्थान दिया गया है। कुछ खिलौने ऐसे हैं, जिन्हें देखकर बच्चा हंसते-हंसते-लोट-पोट हो जाता है, जैसे शराबी, जोकर, भंगेड़ी, चिलमची, अफीमची, भोजन भट्ट पाण्डे, होली का स्वांग, मोटे पेट वाला व्यक्ति आदि। कुछ खिलौनों में समूचा दृश्य ही मिट्टी में ढाल दिया गया है जैसे विवाह के दृश्य में वर-वधू तथा पण्डित, वेदी और सखियाँ आदि, शराबियों की महफिल, भगवान भजन में रत साधु-दल, नृत्य समूह, ऑपरेशन का दृश्य, ग्राम के घर, चटशाला का दृश्य आदि। इन खिलौनों में केश, नेत्र, मांसपेशियाँ आदि को विविध रंगों से सजाया गया है। लखनऊ

से प्राप्त मिट्टी के फल एवं सब्जी, आम, केला, सिंगाड़ा, ककड़ी, मक्का, काचरी, करेला, बैंगन, तोरू, आलू, काजू, बादाम, किशमिश एवं अखरोट आदि इतने सच्चे प्रतीत होते हैं कि नेत्र धोखा खा जाते हैं।

संग्रहालय में नमक के क्रिस्टलों से बने 100 वर्ष पुराने सुराही, कप, प्लेट, कटोरे, जाम, गिलास आदि भी दर्शनीय हैं। सांभर के नमक से बने इन बर्तनों की कुल संख्या 19 है। बर्तनों के साथ नमक से बने फूलदान, हाथी, घोड़ा भी दर्शनीय हैं। सोजत, बगड़ी, रायपुर, मकराना, मेड़ता आदि क्षेत्रों में निर्मित सुंदर कलाकृतियों को भी संजोया गया है। संगमरमर, चन्दन की लकड़ी, पीतल, ऊँट के चमड़े एवं जैसलमेर के पीले पत्थर से निर्मित कलात्मक सामग्री भी संग्रहित की गई है।

कुल मिलाकर इस संग्रह में 397 पत्थर की मूर्तियां, 10 शिलालेख, 1,951 लघुचित्र, 12 मृदभाण्ड, 32 धातु निर्मित सामग्री, 178 शस्त्र, 1,11,703 सिक्के, 4,107 विविध प्रकार की सामग्री प्रदर्शित की गई है।



अध्याय – 44

राजकीय संग्रहालय, मण्डोर

मण्डोर संग्रहालय की स्थापना ई.1968 में जनाना बाग के प्राचीन महलों में की गई। इस संग्रहालय में वास्तुकला, प्रस्तर कला और मूर्तिकला के अवशेष, शिलालेख, चित्र, खुदाई से प्राप्त सभ्यताओं के अवशेष, हस्तकला, शरीर और प्रकृति विज्ञान की सामग्री आदि का संग्रह है। इस समस्त पुरा सामग्री एवं कला सामग्री को अलग-अलग कक्षों में प्रदर्शित किया गया है। मूर्तिकक्ष में मण्डोर, ओसियां, किराडू, घंटियाली, जूना, सालावास आदि से प्राप्त मूर्तियां एवं उनके खण्ड प्रदर्शित किए गए हैं। मण्डोर से प्राप्त पुरा सामग्री के लिए पृथक् से एक कक्ष बनाया गया है जिसमें 9-10वीं शताब्दी की सूर्य, त्रिविक्रम, सुर सुन्दरी, नट, यक्ष, दुर्गा, शिव, कीचक, नवग्रह आदि प्रतिमाओं के साथ अलंकृत वास्तुकला के महत्वपूर्ण खण्ड सजाए गए हैं। इस काल में मण्डोर क्षेत्र कला के प्रमुख केन्द्र के रूप में प्रतिष्ठित था।

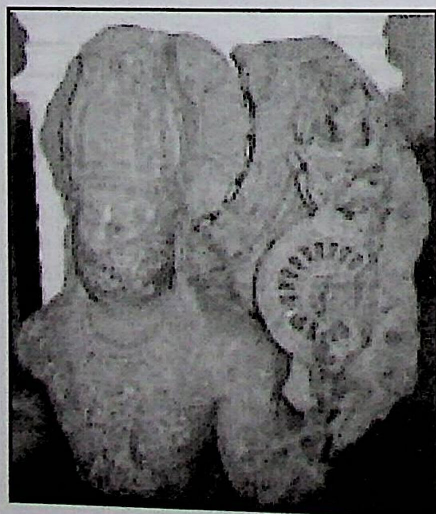


मण्डोर संग्रहालय में प्रदर्शित अरहट के नाम से सम्बोधित दो फलक मूर्तिकला, सांस्कृतिक विकास, धर्म एवं इतिहास की दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं। प्रथम खण्ड में वीर योद्धा अपने शस्त्रों से सुसज्जित होकर जा रहे हैं और एक अश्वारोही तथा कुछ व्यक्ति ऊँटगाड़ी में सवार हैं। इसी खण्ड में अरहट का अंकन किया गया है। पास ही पानी पीते हुए ऊँट का अंकन है। यह दृश्य मारवाड़ की वास्तविक झांकी प्रस्तुत करने के साथ ही

प्राचीन समय में कुएं से पानी निकालने की पद्धति का परिचायक है। द्वितीय फलक पर युद्ध करते हुए सैनिक और अश्वचालित रथ में बैठे सैनिकों का अंकन है। मण्डोर से ही प्राप्त एक पाषाण स्तम्भ पर स्त्री-पुरुष के परस्पर स्नेहाकर्षण युक्त दृश्य का अंकन है। इस फलक में कीर्तिमुख गोल घेरे में एक प्रेमालाप सूचक दृश्य अंकित है। इसी स्तम्भ में गवाक्ष, फूल-पत्तियां एवं अन्य मनमोहक आकृतियों का भी अंकन है। द्वितीय स्तम्भ में प्रेमालाप सूचक दृश्य के साथ-साथ नृत्य-गायन-वादन मुद्रा में पुरुषाकृतियां, घट, कीर्तिमुख तथा फूल-पत्तियों का सजीव अंकन है। सातवीं से तेरहवीं शताब्दी के बीच निर्मित हिन्दू मंदिरों में प्रणयभाव से ओत-प्रोत आकृतियों का अंकन किया जाता था। उसी परम्परा का निर्वाह यहाँ भी हुआ है। प्रतिमाओं पर केश विन्यास एवं आभूषणों का अंकन अत्यंत आकर्षक है। घंटियाली से प्राप्त सर्वतोभद्र गणेश की प्रतिमा भी प्रदर्शित है।यह प्रतिमा स्तम्भ पर चारों दिशाओं की तरफ मुख किए हुए स्थापित की गई थी, किंतु वर्तमान में इस प्रतिमा के दो मुख ही शेष हैं।



नृसिंह अवतार, राजकीय संग्रहालय, मण्डोर



द्वितीय कक्ष में विविध स्थलों से प्राप्त प्रतिमाओं, शिला-खण्डों एवं शिलालेखों का प्रदर्शन किया गया है। ओसियां से प्राप्त शिवलिंग, शिखर का अग्रभाग जिसके मध्य में शेषशायी विष्णु, सालावास (जोधपुर) से प्राप्त

लक्ष्मीनारायण, किराडू से प्राप्त ब्रह्मा, कुबेर, युद्धरत स्त्री एवं विभिन्न नृत्य मुद्रा में स्त्रियों के साथ-साथ जोधपुर, सिरोही, नागौर एवं मण्डोर से प्राप्त शिलालेखों को प्रदर्शित किया गया है।

चित्रकक्ष में प्रदर्शित मण्डोर के शासक राव चूण्डा, जोधपुर के शासक मालदेव, उदयसिंह, सूरसिंह, गजसिंह, जसवन्तसिंह, अजीतसिंह, अभयसिंह, विजयसिंह, मानसिंह एवं तख्तसिंह के मानवाकार चित्र इस संग्रहालय की अमूल्य निधि हैं। इसी कक्ष में मारवाड़ के राजाओं की वंशावली, महाराजा गजसिंह (ई.1619-38) द्वारा अहमद नगर के युद्ध का ऐतिहासिक दृश्य, अप्पाजी सिंधिया की खुखरी द्वारा हत्या, महाराजा जसवन्त सिंह (ई.1638-78) की विधवा रानियों का अटक नदी पार करना और मुगल सेना द्वारा घेराव करना, श्रीनाथजी का पटचित्र एवं श्रीकृष्णलीला के दृश्यों के साथ-साथ जोधपुर शैली में निर्मित राग-रागिनियों के चित्र विशेष रूप से प्रदर्शित हैं। इसी कक्ष में मृत मगरमच्छ एवं जंगली भैंसे में मसाला भरकर प्रदर्शित किया गया है।



संग्रहालय के विविध कक्ष में क्ले से निर्मित मानव शरीर संरचना के मॉडल, सामाजिक जनजीवन को प्रदर्शित करने वाले मिट्टी के बर्तन एवं मिट्टी से निर्मित कलाकृतियां, ऊँट के चमड़े से निर्मित तेल रखने का विशाल पात्र, संगमरमर, लाल प्रस्तर, लकड़ी, सीप आदि से निर्मित कला सामग्री भी प्रदर्शित है। इस संग्रहालय में कालीबंगा, रंग-महल और भीनमाल की खुदाई में उपलब्ध कुछ सामग्री भी संग्रहित है।

मंडोर उद्यान परिसर में स्थित देवताओं की साल का निर्माण राजा अजीतसिंह और उसके पुत्र अभयसिंह के काल में करवाया गया था। बड़ी-बड़ी देव प्रतिमाओं को चट्टान पर उत्कीर्ण करने से पूर्व छोटे-छोटे प्रस्तर खंडों पर इनके नमूने बनाए गए थे। ये नमूने मंडोर के राजकीय संग्रहालय में रखे हैं।

❁❁❁

अध्याय - 45

मेहरानगढ़ दुर्ग संग्रहालय, जोधपुर

जोधपुर स्थित मेहरानगढ़ दुर्ग के भीतर अनेक महल हैं जिनमें से कुछ महलों में संग्रहालय स्थापित किया गया है। ई.1922 में स्थापित इस संग्रहालय में जोधपुर राज परिवार की पीढ़ियों से संचित विविध कलाकृतियां एवं ऐतिहासिक वस्तुएं प्रदर्शित की गई हैं। इस संग्रहालय में जोधपुर नरेशों का सिंहासन, विविध प्रकार के अस्त्र-शस्त्र, शाही-पोशाकें, झूले, हाथियों के हौदे, पालकियां, मारवाड़ शैली के चित्र, लोकवाद्य, पाग-पगड़ियां, साफे, पालने, तम्बू, माही मरातिब, हाथीदांत की कलाकृतियां आदि प्रदर्शित किए गए हैं।

अस्त्र-शस्त्र खण्ड

मेहरानगढ़ संग्रहालय के अस्त्र-शस्त्र खण्ड में जोधपुर राजवंश के शासकों द्वारा प्रयुक्त किए गए विभिन्न प्रकार के अस्त्र-शस्त्र रखे हुए हैं। इनमें कुछ ऐसी बन्दूकें हैं, जिन्हें दो-दो, चार-चार व्यक्ति एक साथ उठाकर रखते थे तथा एक अन्य व्यक्ति उसे दागता था। संग्रहालय में तेज धार वाली चमचमाती हुई कटारें भी प्रदर्शित की गई हैं। इनमें से कुछ बंदूकें और कटारें मारवाड़ के शासकों को मुगल शासकों से उपहार स्वरूप अथवा सम्मान स्वरूप प्राप्त हुई थीं। इनमें शहंशाह अकबर द्वारा मारवाड़ के शासक को भेंट की गई एक कलात्मक मुगल तलवार विशेष महत्व की है। माना जाता है कि यह तलवार तैमूर लंग की थी। इस तलवार पर अरबी लिपि के सुन्दर अक्षरों में कुरान की आयतें उकेरी हुई हैं। इस संग्रह की एक कटार पर रामराव शस्त्रोस्त्र अंकित है। राव रणमल की तलवार का भार तीन किलो आठ सौ ग्राम है। इस तलवार का निर्माण काल ई.1428 से 1438 के मध्य का माना जाता है।

लाल डेरा

दौलतखाना में महाराजा अभयसिंह (ई.1724-49) द्वारा प्रयुक्त 'लाल डेरा' नामक विशाल तम्बू है जो स्वर्णिम पीले वस्त्र पुष्पों की श्रेष्ठ कसीदाकारी से युक्त लाल मखमल से निर्मित है। इसे मुगल शैली का कपड़े का बना चलता-फिरता भव्य महल कहा जा सकता है। इस प्रकार के तम्बू मुगल शासक दिल्ली से बाहर प्रवास के दौरान प्रयुक्त करते थे। वे वर्ष के कई महीने ऐसे ही हवादार वस्त्र-महलों में रहकर समय बिताते थे। फराशखाना में ऐसे वस्त्र-महल डिजायन करके तैयार किए जाते थे। मौजूदा तम्बू दीवान-ए-हॉल के रूप में प्रयुक्त होता था। बादशाह खूबसूरत चांदनी से ढकी

जाजम पर गद्दी लगाकर बैठता था और अपना दरबार लगाता था। उस काल में केवल मुगल शहजादों को लाल तम्बुओं की सुविधा प्राप्त थी। हिन्दू राजाओं को सफेद तम्बू प्रयोग करने की अनुमति थी। 18वीं शताब्दी में महाराजा अभयसिंह ने लाल रंग का तम्बू बनवाया। जब ई.1734 में राजपूत राजाओं के हुरड़ा सम्मेलन में महाराजा ने इस तम्बू का उपयोग किया तो उसकी शिकायत मुगल बादशाह से की गई। इस पर महाराजा ने सफाई भिजवाई कि चूंकि उस सम्मेलन में मैं आपके प्रतिनिधि के रूप में उपस्थित था, इसलिए मैंने लाल रंग के डेरे का उपयोग किया।



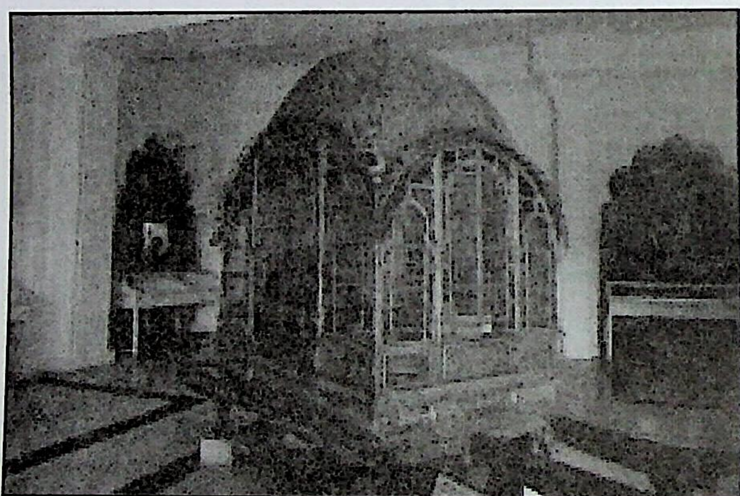
लाल डेरा लगभग तीन मीटर ऊंचा, सात मीटर चौड़ा और सात मीटर लम्बा है। भीतर तीन मीटर वर्ग के नाप का सिंहासन कक्ष है। सामने की कनात खाली और पीछे से बंद रहती है। डेरे का भीतरी भाग सुनहरी पीले फूलों से अलंकृत है, जिस पर पीले रेशम पर सुनहरी कसीदाकारी है। फूल पत्तियों की डिजायन अत्यंत कलात्मक है और हल्के आसमानी रेशम की संकीर्ण धारियों पर वैसी ही फूल-पत्तियों की कसीदाकारी है। दीवारों से मिलने वाली भीतरी छत के निचले कोने में सुनहरी धागों की सजावट है। सैंकड़ों वर्ष पुराना लालडेरा अपने मौलिक स्वरूप में है। जोधपुर राजवंश के वर्तमान उत्तराधिकारी गजसिंह के सुझाव पर तम्बू में रेशमी धागे से लिपटे बांस से बने खिड़की-दरवाजों की चिकें लगाई गई हैं। ईस्वी 1985 में न्यूयार्क में आयोजित भारत महोत्सव में इस तम्बू को प्रदर्शित किया गया था।

हाथियों का हौदा कक्ष

मेहरानगढ़ दुर्ग संग्रहालय में हाथियों का हौदा नामक एक कक्ष है। इसमें हाथी पर सवारी करने के हौदे रखे गए हैं, जिनमें सोने-चांदी का उपयोग हुआ है। चांदी से निर्मित

एक बहुत बड़ा हौदा मुगल शासक शाहजहाँ ने महाराजा जसवंतसिंह (प्रथम) को 18 दिसम्बर 1657 को उनके सम्मान में भेंट किया था। इस कक्ष में हाथी को नियंत्रण में रखे जाने वाले व्रम और भाले भी प्रदर्शित किए गए हैं। हाथी के पीठ पर रखे जाने वाले झूले, उनको बांधने के काम आने वाली लोहे की जंजीरें, राठौड़ों की नौ रियासतों के रंग बिरंगे झण्डे और रियासतों के नामपट्ट भी देखे जा सकते हैं।

पालकी कक्ष



संग्रहालय के पालकी कक्ष में विभिन्न प्रकार की पालकियाँ रखी गई हैं। इनमें 'महाडोल' नामक वह ऐतिहासिक पालकी भी है जिसे महाराजा अभयसिंह ई.1730 में गुजरात के शासक सरबुलंद खाँ को युद्ध में पराजित कर वहाँ से लाया था।

वस्त्र कक्ष

जानकी महल दर्शकों को राजा-रानियों के युग में ले जाता है। यहाँ दर्शक विभिन्न राजाओं, महाराजाओं, रानियों और महारानियों द्वारा पहने जाने वाले वस्त्रों से साक्षात्कार करता है। इस कक्ष में होली, दीपावली, गणगौर, राज्याभिषेक और अन्य विशेष अवसरों पर प्रयुक्त होने वाले सोने-चांदी की जरी से सुसज्जित वस्त्र रखे हैं।

पाग-पगड़ियां

मेहरानगढ़ दुर्ग संग्रहालय में राजस्थान के विभिन्न क्षेत्रों में अलग-अलग अवसरों पर धारण की जाने वाली पाग-पगड़ियां प्रदर्शित की गई हैं। मारवाड़ में निवास करने वाले विभिन्न समुदायों द्वारा उपयोग में ली जाने वाली पाग-पागड़ियों के साथ-साथ मेवाड़, मेवात, ढूंढार, हाड़ौती, वागड़, शेखावटी आदि क्षेत्रों में विभिन्न समुदायों द्वारा प्रयुक्त की जाने वाली पाग-पागड़ियों और सिंधी तथा विश्नोई समुदाय द्वारा पहनी जाने वाली टोपियों को भी यहाँ देखा जा सकता है।

ताले

मेहरानगढ़ दुर्ग संग्रहालय में, प्राचीनकाल में प्रयुक्त होने वाले विभिन्न प्रकार के ताले प्रदर्शित किए गए हैं। ऐसे ताले भी प्रदर्शित किए गए हैं, जिनकी कई-कई चाबियाँ हैं। आकार और वजन की दृष्टि से विभिन्न प्रकार के एवं देखने में विचित्र आकृति वाले मजबूत और ठोस ताले संग्रहित एवं प्रदर्शित किए गए हैं।

जोधपुर के राजाओं का सिंहासन

मेहरानगढ़ संग्रहालय में जोधपुर नरेशों का तीन शताब्दियों पुराना सोने का सिंहासन प्रदर्शित किया गया है।

माही मरातिब

दुर्ग में रखा माही मरातिब दर्शनीय वस्तुओं में से हैं। मगरमच्छ के मुंह, मछली की आकृति और चंद्रमा की कलंगी से युक्त यह मरातिब ई.1628 में शाहजहाँ ने जोधपुर नरेश गजसिंह को दिया था, जो पांच हजारी मनसबदारों को दिया जाता था।

मेहरानगढ़ संग्रहालय के भित्ति चित्र

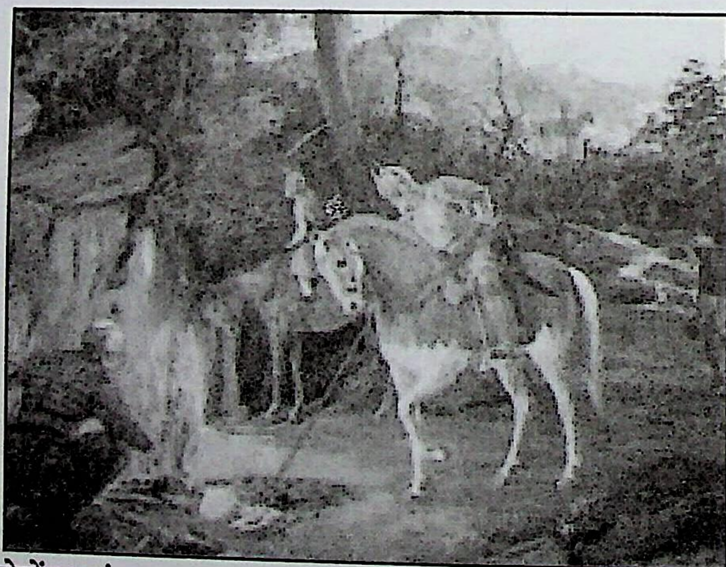
मारवाड़ चित्रशैली एवं भित्तिचित्रों की दृष्टि से मेहरानगढ़ दुर्ग संग्रहालय अत्यंत समृद्ध है। फूल महल, चोकेलाव तथा तखतनिवास के भित्तिचित्र प्रमुख हैं। इन चित्रों में पौराणिक एवं धार्मिक कथा प्रसंग, लोककथाओं, राजदरबार, शिकार, संगीत, बारहमासा, श्रृंगार, शिकार, होली, विवाह तथा राज्याभिषेक आदि प्रसंगों के चित्र प्रमुख रूप से दर्शाए गए हैं। 18वीं शताब्दी में महाराजा अभयसिंह (ई.1724-49) द्वारा निर्मित फूल महल अथवा दीवान-ए-खास की छत पर नक्काशी का बेहतरीन काम किया गया है।



यहाँ विभिन्न राग-रागिनियों और देवी-देवताओं के चित्र अंकित हैं। महल के खम्भों पर अंकित स्त्री-पुरुष के युग्म-चित्र वर्षों बाद भी अपने रंग-विधान और

कलाकारों के श्रम को प्रदर्शित करते हैं। तखत विलास महल महाराजा तखतसिंह (ई. 1843–73) के शयनागर के रूप में प्रयुक्त होता था। इस महल में लकड़ी का एक आकर्षक झूला रखा है। इस कक्ष की दीवारें महाराजा तखतसिंह की रुचि के अनुसार सजाई गई हैं तथा चित्रमय हैं। इसकी लकड़ी की छत पर विभिन्न मुद्राओं में स्त्री–पुरुषों के चित्र अंकित हैं। सैंकड़ों कलात्मक चित्रों से सुसज्जित इस कक्ष में कहीं बारात का चित्र है तो कहीं लोकवाद्यों का वादन करते हुए कलाकार हैं। इस कक्ष में प्रवेश करने वाले दर्शक मोहक चित्रकारी देखकर मंत्रमुग्ध हो जाते हैं।

खबका महल (ख्वाब का महल) में मारवाड़ के इतिहास को संजोए हुए एक बहुमूल्य तैलचित्र उपलब्ध है। यह चित्र भारत में जन्मे तथा पाश्चात्य संस्कारों में पले–बढ़े चित्रकार आर्किबाल्ड हैरमैन लैन मूलर (ए. एच. मूलर) ने बनाया था। यह चित्र वीर दुर्गादास राठौड़ द्वारा मुगलों से बचाए गए मारवाड़ के भावी शासक बालक अजीतसिंह का है। यह कलाकृति मूलर ने जोधपुर में रहकर तैयार की थी। भावपूर्ण आलेखन यथार्थ अंकन और आकर्षक रंग संयोजन के कारण मूलर की यह कलाकृति चित्रकला की अमूल्य थाती बन पड़ी है। उम्मेद विलास में मारवाड़ शैली के साथ–साथ बीकानेर, जैसलमेर, बूंदी, मेवाड़ और मुगल शैली के चित्र बने हुए हैं।

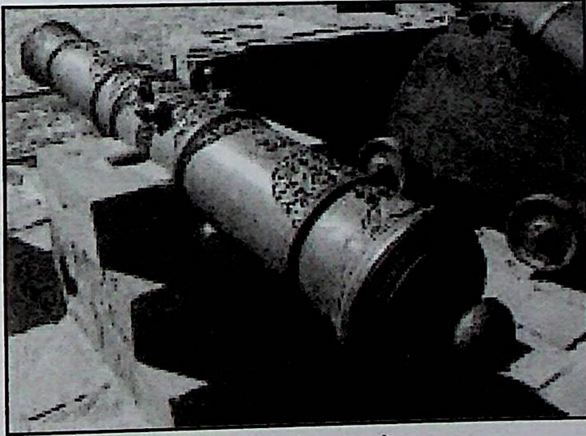


दुर्लभ तोपों का संग्रह

मेहरनागढ़ दुर्ग में अनेक ऐतिहासिक तोपें रखी हैं जिनमें किलकिला, शम्भूबाण, जमजमा, कड़क–बीजली, बगस–वाहन, बिच्छू–बाण, गजनीखाँ, नुसरत, गुब्बार, धूड़धाणी नामक तोपें प्रसिद्ध हैं। जोधपुर नरेश गजसिंह (ई.1619–38) ने एक बार जालोर पर चढ़ाई की। उसे जालोर के किले से गजनी खाँ नामक तोप प्राप्त हुई, जिसे वह जोधपुर ले आया। कड़क–बीजली नामक तोप राजा अजीतसिंह (ई.1708–24) के

समय घाणेराव से मंगवाई गई थी। इस तोप का भार 14 मन अर्थात् 560 किलो है। किलकिला तोप राजा अजीतसिंह ने बनवाई थी, जब वह अहमदाबाद का सूबेदार था। यह भी कहा जाता है कि यह तोप अजीतसिंह ने ई.1715 में विजयराज भण्डारी के माध्यम से अहमदाबाद से 1400 रुपये में क्रय की थी। कहा जाता है कि किलकिला तथा जमजमा तोपों का धमाका सुनकर गर्भवती महिलाओं के गर्भ गिर जाते थे।

'शंभू बाण' तोप राजा अभयसिंह (ई.1724-49) ने अहमदाबाद के सूबेदार सरबुलन्द खाँ को ई.1730 में परास्त कर प्राप्त की थी। यह भी कहा जाता है कि यह तोप अभयसिंह ने सूरत से खरीद कर जोधपुर मंगवाई। नुसरत तोप भी राजा अभयसिंह ने ई.1730 में अहमदाबाद के गवर्नर सर बुलन्द खाँ, सरकार खाँ तथा गजनी खाँ को परास्त कर बहुत से घोड़ों, पालकियों और तोपों के साथ छीनी थी। महाराजा भीमसिंह (ई. 1793-1803) के समय दुर्ग में नागपली, मागवा, व्याधी, मीरक चंग, मीर बख्श, रहस्य कला तथा गजक नामक प्रमुख तोपें मौजूद थीं।



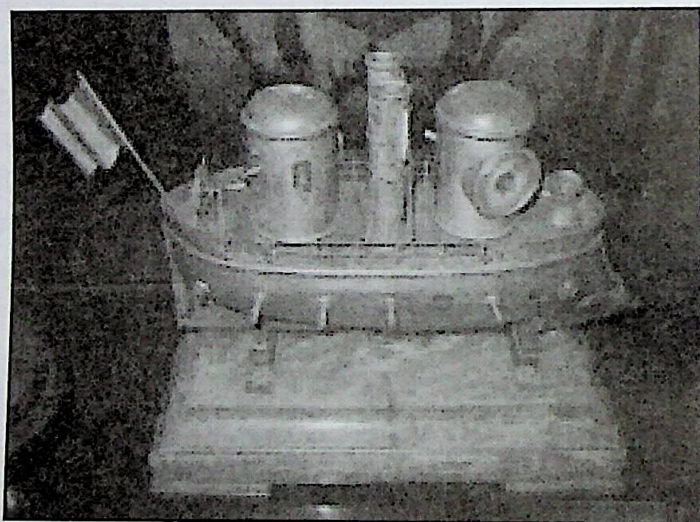
किलकिला तोप, मेहरानगढ़, जोधपुर

ई.1901 में राजा सरदारसिंह (ई.1859-1911) के समय जोधपुर का प्रधानमंत्री सर प्रतापसिंह चीन गया। वापसी में वह एक तोप खरीद कर लाया और किलेदार मानसिंह पंवार को किले में रखने के लिए दी। आज भी यह तोप जोधपुर दुर्ग में सुरक्षित है। दुर्ग की प्राचीर पर ब्रिटिश काल की तोपों का संग्रह किया गया है। एक तोप पर ब्रिटिश ताज बना हुआ है। यह कई नालों वाली मशीनगन जैसी तोप है, जिसकी प्रत्येक नाली पर तोपों के समान छिद्र हैं जिनके द्वारा बारूद में आग लगाई जाती थी। पंचधातु की एक तोप का मुंह मछली जैसा, पूंछ मगरमच्छ जैसी, पांव शेर के पंजों जैसे तथा गर्दन सिंह का आकार लिए हुए है। यह तोप दौलतखाना में रखी हुई है। यह तोप अन्तर्राष्ट्रीय प्रदर्शनियों में भेजी जाती है। गुब्बार तोप भी दौलत खाने में रखी हुई है। अधिकतर तोपें ट्राली अथवा पहियों पर रखी हुई हैं। यें तोपें चल तोपें कहलाती हैं। बिना पहियों वाली तोपें दुर्ग की प्राचीर आदि पर लगा दी जाती थीं और अचल तोपें कहलाती थीं।

❀❀❀

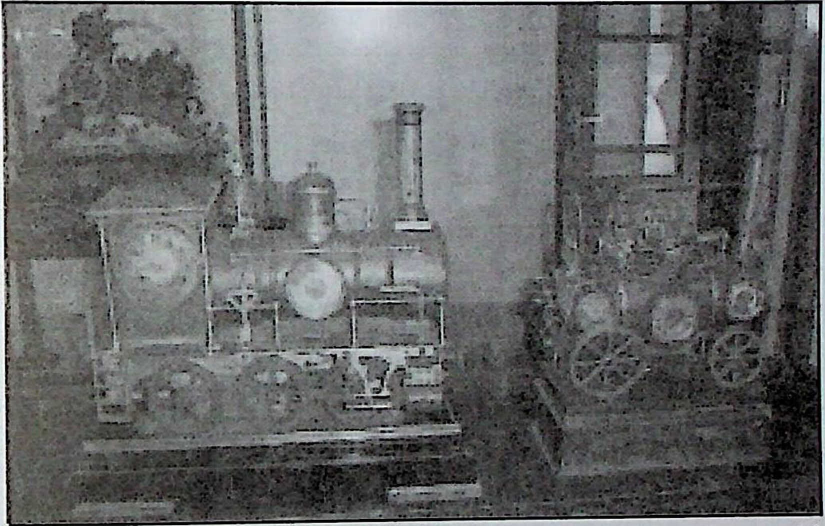
अध्याय - 46

छीतर पैलेस संग्रहालय, जोधपुर

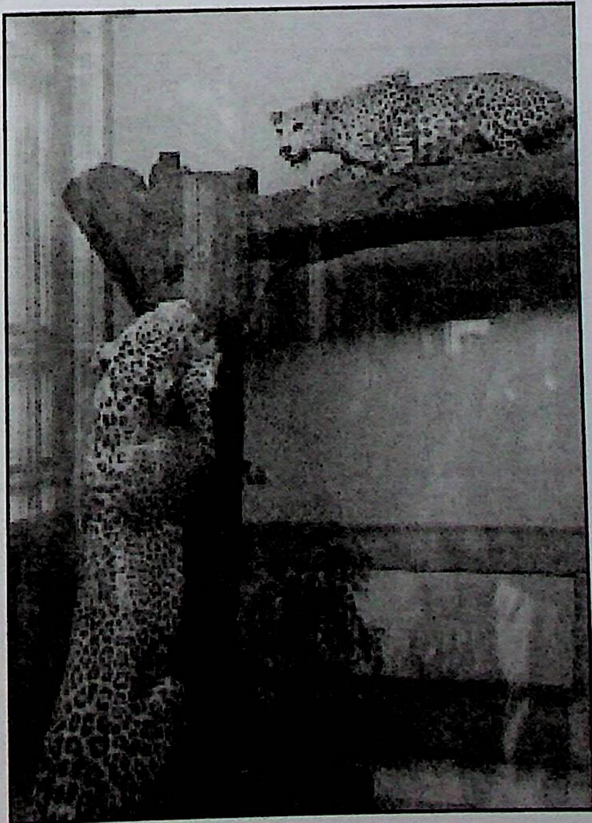


छीतर पैलेस के नाम से विख्यात इस भव्य राजप्रासाद का निर्माण महाराजा उम्मेदसिंह (ई.1918-47) ने 18 नवम्बर 1929 को अकाल राहत कार्य के रूप में आरंभ कराया। इसे उम्मेद भवन पैलेस भी कहते हैं। जोधपुर नगर के दक्षिण-पूर्व में छीतर की पहाड़ी पर बना यह महल 16 वर्षों में बनकर पूरा हुआ, जिस पर 1 करोड़ 21 लाख रुपया व्यय हुआ। यह जोधपुर रियासत का अन्तिम बड़ा निर्माण था। इसके पूरा होने के 5 वर्ष बाद देश को स्वतंत्रता मिल गई। यह भव्य महल जोधपुर राज्य के स्थापत्य का सर्वोत्कृष्ट नमूना है। इसके एक भाग में पांच सितारा होटल चलता है। एक भाग में पुराना राज परिवार रहता है एवं एक भाग में संग्रहालय स्थापित किया गया है। महल में स्थित स्विमिंग पूल, नृत्यघर तथा लॉन अपूर्व सौंदर्य समेटे हुए हैं। घड़ियों का एक संग्रहालय, थियेटर, भूतल अस्पताल तथा केन्द्रीय हॉल भी देखने योग्य हैं। सम्पूर्ण महल 26 एकड़ भूमि घेरे हुए है, जिसमें से 3.5 एकड़ पर महल तथा 15 एकड़ पर बगीचा फैला हुआ है।

छीतर पैलेस संग्रहालय मारवाड़ रियासत के इतिहास, साहित्य, कला और युद्ध-कौशल की झांकी प्रस्तुत करता है। इस संग्रहालय में जोधपुर राजपरिवार की बंदूकें तथा तलवारें प्रदर्शित की गई हैं। संग्रहालय में उम्मेद पैलेस भवन का भी एक मॉडल प्रदर्शित किया गया है। संग्रहालय के एक कक्ष में मारवाड़ के शासकों के तैलचित्र

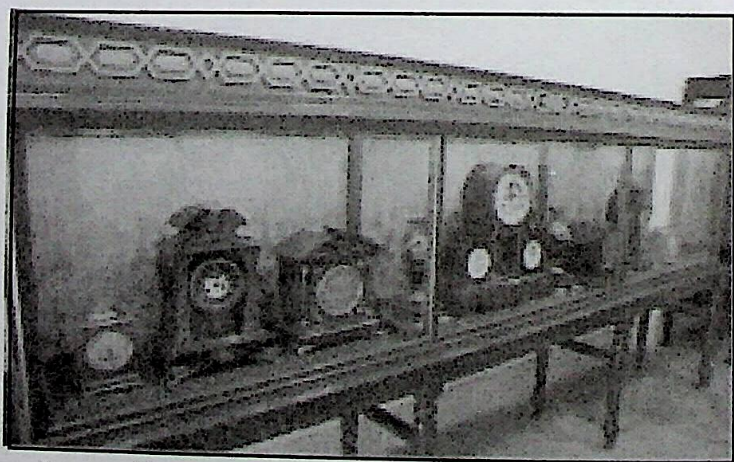


प्रदर्शित किए गए हैं। संग्रहालय के अन्य कक्ष में महाराजा उम्मेदसिंह एवं हनवन्तसिंह (ई.1947-49) के कार्यकाल में हवाई उड़ानों में प्रयुक्त होने वाले एयर क्राफ्ट्स के मॉडल रखे हैं। इनके पास ही महाराजा को फ्लाइंग दक्षता के सम्बन्ध में मिले ब्रिटिश



प्रमाण पत्र एवं महाराजा द्वारा फ्लाइट के दौरान प्रयुक्त कपड़े भी प्रदर्शित किए गए हैं। द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान पौलेण्ड का एक चित्रकार 'स्टेपन नॉर्बलिन' शरणार्थी के रूप में बम्बई आया। महाराजा उम्मेदसिंह ने उसे जोधपुर बुला लिया। उस चित्रकार ने कुछ पेंटिंग्स बनाईं एवं छीतर पैलेस की दीवारों पर भित्तिचित्र अंकित किए। स्टेपन नॉर्बलिन द्वारा बनाए गए एक चित्र में औरंगजेब के काल में हुए एक युद्ध का सजीव चित्रण किया गया है। एक चित्र महाराजा उम्मेदसिंह के विवाह के अवसर का है। इसमें महाराजा की जोधपुर से जैसलमेर गई बारात का ठीक वैसा ही चित्रण किया गया है, जैसी कि बारात दिखाई देती थी। जोधपुर राजपरिवार की निजी निधि के रूप में 44 चित्रों की एक जिल्द है, जिसमें जयपुर तथा जोधपुर के शासक एवं राजकुमार तथा मुगल शासकों के 300 वर्ष पुराने चित्र हैं। इस जिल्द को लंदन एवं वाशिंगटन में आयोजित अंतरराष्ट्रीय प्रदर्शनियों में भी भेजा गया था।

दरबार-ए-खास हॉल में एसत्र सोर्बलिन नामक चित्रकार द्वारा तैयार किए गए चित्रों की एक श्रृंखला प्रदर्शित की गई है। यह श्रृंखला इस संग्रहालय की अमूल्य निधि है। इस चित्र श्रृंखला में रामायण के पौराणिक काल के आधा दर्जन चित्र बने हुए हैं। राजा-रानियों, लोककथा नायक ढोला-मारू तथा देवी-देवताओं के अवतारों के चित्र भी प्रदर्शित किए गए हैं।



इस संग्रहालय में लगभग 100 विदेशी घड़ियों का अनूठा संग्रह है। इसमें लंदन, स्विट्जरलैण्ड, बैल्जियम, हॉलैण्ड, जर्मनी आदि देशों में बनी हुई आकर्षक घड़ियां रखी हुई हैं। इस संग्रह में मनुष्य के आकार के बराबर वाली घड़ियों से लेकर अंगूठी के आकार की घड़ियां प्रदर्शित की गई हैं। संग्रहालय की लॉबी में श्रृंगार, डिनर, लेखन, आदि के काम में आने वाली मेजें सजा कर रखी गई हैं, जो तत्कालीन काष्ठकला का अनुपम उदाहरण हैं। जंगली जानवरों की ट्राफियां, देश-विदेश की कांच की क्रॉकरी तथा चीन देश की महंगी एवं अनूठी क्रॉकरी भी प्रदर्शित की गई है। ❀❀❀

अध्याय – 47

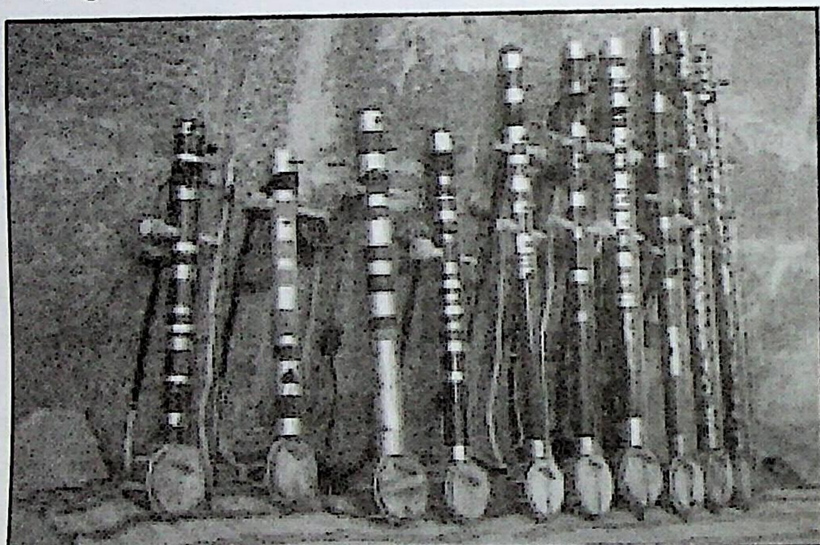
लोकवाद्य संग्रहालय, जोधपुर



राजस्थान संगीत नाटक अकादमी की स्थापना राजस्थान सरकार द्वारा 16 दिसम्बर 1957 को जोधपुर नगर में की गई। 12 जनवरी 1959 को इसे स्वायत्तशासी संस्था घोषित किया गया। इस अकादमी द्वारा राज्य में संगीत एवं नाटक की विविध विधाओं को बढ़ावा देना तथा इन विधाओं से जुड़े कलाकारों को संरक्षण देना है। यह लोककलाओं पर शोध कार्य को भी प्रोत्साहित करती है तथा कलाकारों के लिए विभिन्न कार्यशालाओं एवं विचार गोष्ठियों का आयोजन करवाने के साथ-साथ देश के विभिन्न राज्यों के कलाकारों के कार्यक्रम भी आयोजित करवाती है। साथ ही राजस्थान के कलाकारों को देश-विदेश में अपनी कला का प्रदर्शन करने के लिए प्रोत्साहन प्रदान करती है। अकादमी द्वारा लोक संगीत की पांच हजार घण्टे की रिकॉर्डिंग करवाकर संग्रहित की गई है। साथ ही प्रदर्शनकारी लोककलाओं पर डोक्यूमेंट्री बनवाकर सहेजी गई हैं।

राजस्थान संगीत नाटक अकादमी के जयनारायण व्यास स्मृति भवन में राजस्थान में प्रयुक्त होने वाले विभिन्न प्रकार के लोकवाद्यों का समृद्ध संग्रहालय स्थित है। इस संग्रहालय में रखे गए लोकवाद्यों का प्रथम प्रदर्शन जयपुर में आयोजित प्रथम बैले समारोह में बिड़ला सभागार जयपुर में किया गया था। अकादमी के संग्रहालय में चारों प्रकार के- अनवद्ध, तत्, घन एवं सुषिर वाद्यों का संग्रह किया गया है। अनवद्ध वाद्यों में (खाल मंढे हुए) खंजरी, डफ तथा चंग (लकड़ी या लोहे की चादर के घेरे से बने हुए वाद्यों में मादल, ढोल, डमरू (उपरी भाग खाल से मढ़ा हुआ एवं नीचे से कटोरीनुमा वाद्यों में नगाड़ा, दमामा, माटा आदि रखे गए हैं। तत्वाद्यों में सारंगी, जन्तर, रावणहत्था, कमायचा, खाज, तन्दूरा, इकतारा आदि संग्रहित हैं। घनवाद्यों में झांझ, मंजीरा, थाली, खड़ताल आदि संग्रहित हैं। सुषिरवाद्यों में बंसी, अलगोजा, पुंगी, शहनाई, सतारा, मशक

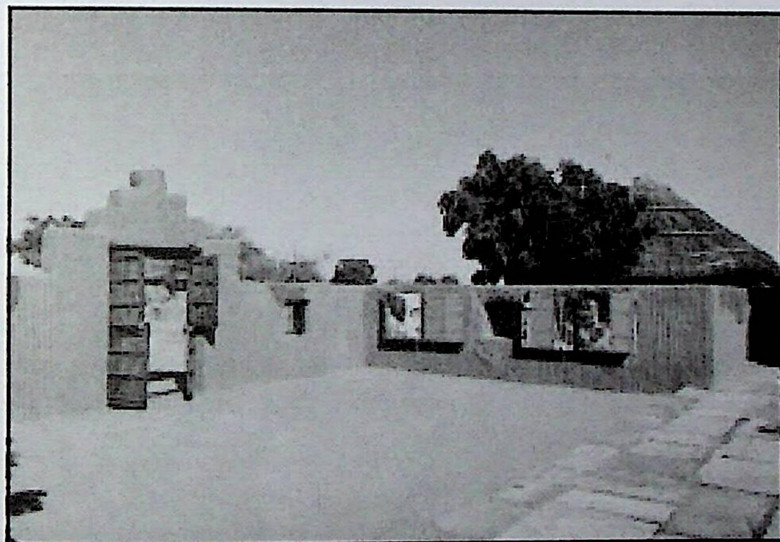
तथा नड़ प्रमुख हैं।



देवजी की पड़, पाबूजी की पड़, माताजी की पड़ आदि का भी प्रदर्शन किया गया है। पड़ एक कपड़े पर चित्रित गाथा होती है, जिसमें देवी-देवताओं तथा शूरवीरों का गुणगान किया जाता है। संग्रहालय में परम्परागत कठपुतलियों, लोकनृतकों के वस्त्राभूषणों, विभिन्न शैलियों के नाट्य-मंचनों के छायाचित्रों तथा पॉटरी आदि का प्रदर्शन भी किया गया है। अकादमी द्वारा लोककलाओं पर विभिन्न प्रकार के प्रकाशन भी करवाए गए हैं, जिनमें से कुछ प्रकाशन विक्रय हेतु भी उपलब्ध हैं।

अध्याय - 48

अरणा–झरणा मरुस्थल संग्रहालय, जोधपुर

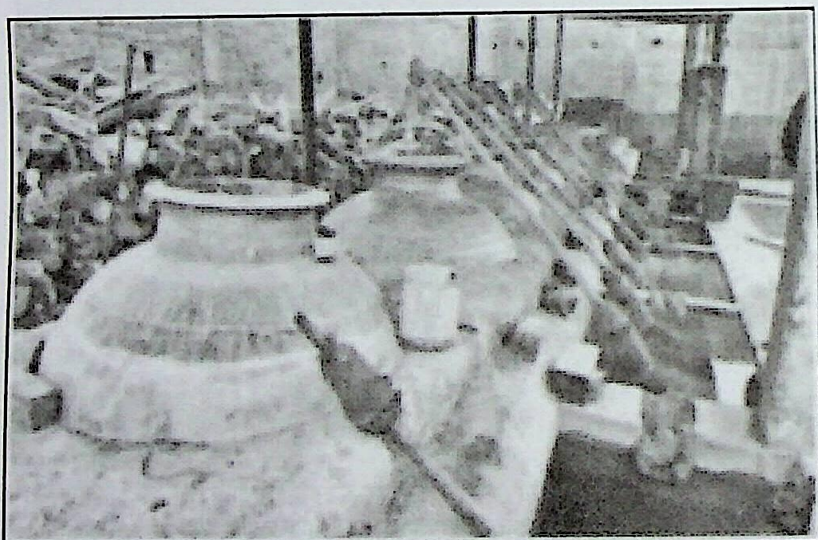


अरणा-झरणा संग्रहालय का बाहरी दृश्य

अरणा–झरणा मरुस्थल संग्रहालय जोधपुर की स्थापना पद्मभूषण कोमल कोठारी ने की थी, किंतु इस कार्य के बीच ही उनका निधन हो जाने के कारण उनके पुत्र कुलदीप कोठारी ने अरणा झरणा डेजर्ट म्यूजियम को अंतिम रूप दिया। इस म्यूजियम में राजस्थान के जनजीवन, पर्यावरण एवं प्रदर्शनकारी कलाओं की स्थायी एवं अस्थाई झांकियां संजोई गई हैं। लोकवाद्यों का संग्रह, कठपुतली प्रदर्शन एवं झाड़ुओं का संग्रह इस संग्रहालय की विशेषताएं हैं। यह म्यूजियम नगरीय जीवन में पल रहे बच्चों से लेकर भारत आने वाले दुनिया भर के पर्यटकों को मरुस्थलीय संस्कृति एवं जनजीवन की जीवंत झांकी के दर्शन करवाता है।

इस संग्रहालय को देखने से पहले कोमल कोठारी के बारे में जानना आवश्यक है, क्योंकि इस संग्रहालय में उनके जीवन भर की साधना का संग्रह किया गया है। कोमल कोठारी का जन्म ई.1929 में राजस्थान के कपासन गाँव में हुआ। उन्होंने संगीत वाद्यों, कठपुतलियों, आभूषणों, लोकनाट्यों, महाकाव्यों, लोक देवताओं आदि पर विस्तृत अनुसंधान किया। यह अनुसंधान विविध पत्र-पत्रिकाओं एवं पुस्तकों में हिन्दी एवं अंग्रेजी भाषा में उनके द्वारा लिखे गये लेखों के माध्यम से लोगों के सामने आया। कोमल

कोठारी भारत में प्रदर्शनकारी कलाओं के प्रलेखन के प्रमुख प्रणेताओं में से थे। उन्होंने राजस्थान के पारम्परिक संगीत को हजारों घण्टों की रिकॉर्डिंग के माध्यम से संरक्षित किया। उनके शोध की गहराई आने वाले सैंकड़ों साल तक राजस्थान की संगीत लहरियों को जीवित रखेगी। उनके द्वारा 400 प्रकार की सारंगियों की पहचान करके उनकी सूचनाएं अंकित की गईं। उन्होंने थार मरुस्थल में रहने वाले सैंकड़ों गुमनाम कलाकारों को राष्ट्रीय एवं अंतराष्ट्रीय स्तर पर पहचान दिलवाई।



राजस्थान में इत्र बनाने की परम्परागत विधि

वर्ष 1960 में उन्होंने जोधपुर, जैसलमेर तथा बाड़मेर आदि जिलों में गांव-गांव घूमकर लोक गायकों के गीत एवं संगीत को ध्वन्यांकित करना आरंभ किया। लंगा एवं मांगणियार गायक टेप रिकॉर्डर को संदेह की दृष्टि से देखते थे। एक बार जब वे अंतर खां मांगणियार का गीत टेप करने की तैयारी कर रहे थे तो अंतर खां अवसर पाते ही तेजी से भाग खड़ा हुआ। जब कोमल कोठारी ने पीछे भाग कर उसे पकड़ा और भागने का कारण पूछा तो अंतर खाँ ने कहा- 'इस मशीन में मेरी आवाज कैद हो जायेगी और मैं फिर कभी नहीं गा सकूंगा।' आरंभिक दिनों में वे लोक कलाकारों द्वारा लोक गीत रिकॉर्ड करवाने पर उन्हें चार आने प्रति गीत देते थे।

कोमल कोठारी ने कई वर्षों तक लोक संगीत रिकॉर्ड किया। उनके पास लोक गीतों एवं लोक संगीत की लगभग 8 से 10 हजार घण्टों की रिकॉर्डिंग इकट्ठी हो गई। इस रिकॉर्डिंग के दौरान उन्होंने यह अनुभव किया कि यदि प्रयास किया जाए तो इन लोक गायकों को विश्व भर में प्रसिद्धि दिलवाई जा सकती है। उनका यह प्रयास

जनजातीय समुदायों को पहचान दिलाने की दिशा में किया गया देश भर में सबसे पहला था। उनके मार्गदर्शन में कई शोधार्थियों ने शोध कार्य सम्पन्न कर पीएच.डी. की उपधि अर्जित की। कौन सा गीत किस अवसर पर गाया जाता है, उस अवसर के मांडणे एवं गीतों में क्या सामंजस्य है, लोक गीतों में हवा, पानी, बादल, वर्षा आदि की क्या जानकारियां संजोई गई हैं, आदि विविध विषयों पर उन्होंने पर्याप्त शोध किया। राजस्थान की मिट्टी, पशुधन, वनस्पति, ऋतुएं आदि की भी उन्हें गहरी जानकारी थी। खान पान सम्बन्धी सूचनाओं को वे बहुत महत्त्व देते थे। उन्होंने राजस्थान को बाजरे का क्षेत्र, ज्वार का क्षेत्र तथा मक्का का क्षेत्र नाम से तीन भागों में बांट रखा था। बाजरा क्षेत्र में भगवान राम की, ज्वार क्षेत्र में भगवान कृष्ण की तथा मक्का क्षेत्र में भगवान शिव की पूजा होने को भी उन्होंने रेखांकित किया।

ई.1965 में उन्होंने राजस्थानी लेखक विजयदान देथा के साथ मिलकर बोरूंदा में रूपायन संस्थान अध्ययन केन्द्र की स्थापना की। उन्होंने 15 अगस्त एवं 26 जनवरी पर दिल्ली में आयोजित होने वाले समारोहों में भाग लेने के लिए आंचलिक कलाकारों को अवसर दिलवाया। जब केन्द्रीय संगीत नाटक अकादमी ने विभिन्न आंचलिक भारतीय कलाओं को उजागर करने के लिए लोक उत्सव की श्रृंखला आरंभ की, तब कामेल कोठारी ने इसमें महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हुए लंगा, मांगणियार तथा कालबेलिया जातियों के कुशल लोक गायकों और तेरहताली नर्तकों को प्रथम बार राष्ट्रीय मंच पर प्रस्तुत किया तथा बातपोशी की कला को भी उजागर किया। लोक संगीत, लोक वाद्य यंत्र, कठपुतली कला, हाथ की कढ़ाई–छपाई, परम्परागत दागीनों की घड़ाई–जड़ाई, मरुस्थल के लोगों की जीवन शैली, मौखिक परम्पराएँ एवं मौखिक साहित्य का शोध, उनके कार्यक्षेत्र के प्रमुख विषय थे। बोरूंदा में रहते हुए उन्होंने 20 हजार कथाएं, 17 हजार गीत तथा 12 हजार लोकोक्तियां संग्रहित कीं। कालबेलियों की गायकी तथा उनके जीवन के विविध पक्षों को जानने के लिए उन्होंने एक कालबेलिए को तीन साल तक अपने साथ रखा।

राजस्थान के लोकवाद्यों में सिंधी सारंगी एवं कमायचा जैसे अद्‌भुत लोक वाद्य उपलब्ध हैं। जब इन्हें बजाने वाले कम हो गये तो बनाने वाले भी लुप्त होने लगे। मांगणियार कमायचा छोड़कर हारमोनियम बजाने लगे। कोमल कोठारी ने कमायचा बनाने वाले कारीगरों को ढूंढा तथा उनसे एक सौ कमायचे बनवाकर, नई उम्र के मांगणियार कलाकारों को कमायचा बजाने का प्रशिक्षण दिलवाया। लंगाओं के मुख्य वाद्य 'सिंधी सारंगी' को बनाने वाले तो लुप्तप्राय हो गये थे। कोमल कोठारी ने सिंधी सारंगी का भी उद्धार किया। अस्सी के दशक में उन्होंने फलौदी कस्बे में सिंधी सारंगी बनाने वाले एक व्यक्ति को खोज निकाला। उससे सिंधी सारंगियां बनवाकर लंगाओं में बंटवाईं। इस प्रकार उन्होंने कमायचा तथा सिंधी सारंगी को लुप्त होने से बचाया तथा उन्हें

फिर से लोकप्रिय बनाया।

पाबूजी की पड़ जैसी लोक वार्ताएं तथा रम्मत-ख्याल जैसे लोक नाट्य उनके कार्यक्षेत्र के मुख्य अंग थे। जनजातियों पर उनका अध्ययन विशद् था। भील, जोगी, कालबेलिया और गाडोलिया लुहार जैसे घुमंतू कबीलों के जीवन पर उन्होंने काफी कार्य किया। कोमल कोठारी ने औपनिवेशिक ब्रिटिश काल के बाद के युग में कलाकार-जजमान सम्बन्धों पर एक नई बहस आरंभ की। उन्होंने रेगिस्तान की परिस्थितियों को लोगों की सांस्कृतिक एवं आर्थिक गतिविधियों से जोड़ा। उन्होंने पुस्तकें नहीं लिखीं, किंतु वाचिक पद्धति से अपने ज्ञान को दूसरों के बीच खूब बांटा। कोमल कोठारी ने संगीत की विधिवत् शिक्षा नहीं पाई थी, किंतु कलाकारों की संगति, शास्त्रीय संगीत के गहन अध्ययन और उस पर मनन-मंथन से, उसे बहुत निकट से सुन और गुन कर, उन्होंने ऐसी अद्भुत श्रवण संवेदना विकसित कर ली थी कि उन्हें स्वर के सही-गलत की अचूक पहचान हो गई थी। इसी पहचान के बल पर वे लोक गायकों की परख करते थे। शास्त्रीय संगीत और लोकसंगीत पर उन्होंने अल्प मात्रा में लिखा भी है।

लोक संगीत के क्षेत्र में उनकी कार्य प्रणाली सबसे अलग थी। नार्वे की एक संगीत शिक्षिका विब्बे होमा के साथ मिलकर उन्होंने एक अद्भुत प्रयोग किया, जो दिखाता है कि लोक में परम्परा कैसे जीवित रहती है। उन्होंने पांच वर्ष के बच्चों का संगीत रिकॉर्ड किया। फिर उन्हीं बच्चों के बड़े होने तक लगातार आठ-दस वर्षो तक उन्हें रिकॉर्ड किया। यह क्रमिक रिकॉर्डिंग यह दिखाती है कि विरासत का संरक्षण और विकास पीढ़ी दर पीढ़ी कैसे होता है। वे शास्त्रीय पद्धति को विभेदकारी कहते थे। उनका कहना था- यद्यपि यह विभेद फार्म के स्तर पर है, किंतु यदि फार्म के स्तर पर विभेद है तो उसका कोई न कोई तात्विक आधार भी होगा ही। दूसरी ओर लोककलाओं में यह विभेदकारी तत्व नहीं है। राजस्थान की औरतें गाती हैं तो वही चार सुर हैं और बंगाल की औरतें गाती हैं तो भी वही चार सुर। इसी तरह लोकथाओं की संरचना और अभिप्रायों के सम्बन्ध में भी उनका मानना था कि लोकाख्यान के अंदर कोई भी विषय ऐसा नहीं है, जिसका स्वरूप अखिल भारतीय न हो या अखिल विश्व का न हो। चाहे वह संगीत हो, कथा हो, महाकाव्य हो या और कुछ। मैं यहाँ राजस्थान के एपिक को देखता हूँ, कर्नाटक, मणिपुर, बिहार-बंगाल के एपिक देखता हूँ तो मुझको अखिल भारतीय सांस्कृतिक एकता का एक बोध सा होता है, किंतु जब हम कला या संस्कृति के अन्य शास्त्रीय प्ररूपों की ओर देखते हैं तो हमें उनमें डिवीजन......... कई तरह की अलग उनकी अपनी विशिष्टताएँ और विभेद नजर आते हैं। अलग-अलग स्थानिकताओं, धर्मो, सम्प्रदायों से जुड़ी कला के जो क्लासिकल फार्म्स हैं, उनमें यह विभेद काफी दिखाई देता है।

इस संस्थान द्वारा राजस्थान की लोक कथाओं, लोक कलाओं एवं लोक संगीत का

बड़े स्तर पर प्रलेखीकरण किया गया। विजयदान देथा के साहित्यिक अवदान में 14 खण्डों में प्रकाशित 'बातां री फुलवारी' भी सम्मिलित है। इसमें राजस्थान के वाचिक साहित्य एवं लोककथाओं का संग्रह किया गया है। साथ ही 40 हजार लोक–कहावतों का कोश भी तैयार करके प्रकाशित करवाया गया है।

जीवन के अंतिम वर्षो में कोमल कोठारी को कैंसर हो गया था। उन दिनों में वे डेजर्ट म्यूजियम की स्थापना पर कार्य कर रहे थे। 20 अप्रेल 2004 को जोधपुर में उनका निधन हो गया। उसी वर्ष 2004 में उन्हें पद्मभूषण दिया गया। उनकी पत्नी श्रीमती इंदिरा कोठारी ने राष्ट्रपति डॉ. ए.पी.जे. अबुल कलाम के हाथों यह अलंकरण ग्रहण किया। ई.2012 को राजस्थान सरकार ने उन्हें राजस्थान रत्न पुरस्कार प्रदान किया। उनके पुत्र कुलदीप कोठारी ने अरणा झरणा डेजर्ट म्यूजियम को अंतिम रूप दिया। वर्ष 2008 में अरणा–झरणा संग्रहालय को यूनेस्को ने एथनोग्राफिक म्यूजियम की श्रेणी में सूचिबद्ध किया। इस संग्रहालय में लोक संगीत, लोकधुनों तथा लोककलाकारों के साक्षात्कारों की लगभग 25 हजार घण्टे की रिकॉर्डिंग उपलब्ध है, जिसका डिजिटलाइजेशन कर दिया गया है। चूंकि संग्रहालय शहर से दूर अरणा–झरणा क्षेत्र में स्थित है, इसलिए रिकॉर्डिंग्स को जोधपुर शहर के पावटा क्षेत्र में स्थित एक भवन में रखा गया है। बहुत सी सामग्री का प्रलेखीकरण करके उसे भी पावटा कार्यालय में रखा गया है। डेजर्ट म्यूजियम के मुख्य परिसर में कठपुतलियां, लोकवाद्य, रेगिस्तानी प्रदेश की विभिन्न वनस्पतियों से बनी हुई झाड़ुएं, राजस्थानी लोकरंगमंच की लोकप्रिय लोक कला की रंगीन कावड़, मरुस्थलीय पॉटरी आदि प्रदर्शित किए गए हैं। यह संग्रहालय सप्ताह में सातों दिन प्रातः 9 बजे से सायं 6 बजे तक खुलता है। इसके लिए देशी पर्यटक को 50 रुपए में तथा विदेशी पर्यटक को 150 रुपए में टिकट खरीदना होता है।



अध्याय - 49

राजकीय संग्रहालय, आबू पर्वत



बोधिसत्व, पीतल प्रतिमा, 20वीं सदी सिरोही

राजकीय संग्रहालय आबू पर्वत, आबू पर्वत पर बने राजभवन परिसर के मुख्य मार्ग पर स्थित है। इसकी नींव 18 अक्टूबर 1962 को रखी गई। इसका उद्घाटन राजस्थान के तत्कालीन राज्यपाल डॉ. सम्पूर्णानन्द ने किया था। इस संग्रहालय में सिरोही जिले से प्राप्त प्रस्तर एवं धातु प्रतिमाओं, ताम्रपत्रों तथा शिलालेखों के साथ-साथ जयपुर, जोधपुर, कोटा, उदयपुर और बून्दी से प्राप्त चित्र, पीतल की कलात्मक सामग्री, चीनी टाइल्स, धातु प्रतिमाएँ तथा हाथी दांत की कलाकृतियाँ संग्रहित की गई हैं। जयपुर के कारीगरों द्वारा निर्मित पीतल की कलात्मक ढालें, फूल-पत्तियां युक्त पैनल, महीन कला युक्त काष्ठ फलक, रंगीन फूल-पत्तियों से युक्त टाइल्स आदि प्रदर्शित की गई हैं।

संग्रहालय की प्रथम दीर्घा में आदिवासी जनजीवन की झांकी प्रस्तुत की गई है। यहाँ एक आदिवासी झौंपड़ी बनाई गई है जिसमें आदिवासी महिला के साथ घरेलू सामान, आटा चक्की, गेहूं इकट्ठा करने की कोठी, आंगन साफ करने का सूप आदि आकर्षक ढंग से प्रदर्शित किए गए हैं। इसके सामने आदिवासियों के आराध्य मामाजी के घोड़े रखे गए हैं। इस दीर्घा में आदिवासियों के अस्त्र-शस्त्र, धनुष-बाण, तलवार-फरसा आदि प्रदर्शित हैं। आदिवासियों के वाद्ययंत्र, नगारा, बांसुरी, पुंगी तथा आदिवासी स्त्रियों के आभूषण भी प्रदर्शित हैं। आदिवासी स्त्री-पुरुषों की वेषभूषा को दर्शाने वाले मानव-मॉडल भी प्रदर्शित किए गए हैं। द्वितीय दीर्घा में मध्यकालीन राजपूत शैली के विभिन्न चित्र प्रदर्शित हैं जिनमें कृष्णलीला के दृश्य, राग-रागिनी के चित्र, होली के दृश्य, शिव-पार्वती, बादशाह आलमगीर, अश्वारूढ़ महाराजा छत्रसिंह, अंगड़ाई लेते हुए नायिका, पूजन करने जाती हुई स्त्रियां, शिकार करते हुए राजा आदि के चित्र

सम्मिलित हैं। गोपियों के साथ नृत्यमुद्रा में राधा-कृष्ण का जयपुर शैली का 18वीं शताब्दी का चित्र, जयपुर शैली के चरवा चित्र तथा बसोली शैली का आलमगीर का चित्र यहाँ संग्रहित चित्रों में प्रमुख हैं। इस दीर्घा में जयपुर एवं बीकानेर शैली के पीतल के बर्तन, पौधे, लकड़ी पर खुदाई एवं कुराई का काम, ढाल, थाल तथा जैन धर्म की धातु प्रतिमाएँ रखी हुई हैं। वि.सं.1016 के दो ऐतिहासिक ताम्रपत्र और चार महत्वपूर्ण जैन प्रतिमाएँ रखी गई हैं। इनमें वि.सं. 1516 की द्विबाहु ध्यानस्थ जैन प्रतिमा, वि.सं. 1432 की लेखयुक्त पंच परमेश्वरीय जैन प्रतिमा, वि.सं. 1305 की लेख युक्त पार्श्वनाथ प्रतिमा तथा वि.सं. 1400 की चन्द्रमुखी प्रतिमा विशेष उल्लेखनीय हैं।

तृतीय दीर्घा में सिरोही जिले के चंद्रावती, वरमाण, देलवाड़ा तथा अचलगढ़ से प्राप्त प्राचीन पाषाण प्रतिमाएँ प्रदर्शित हैं। चंद्रावती से प्राप्त परमार कालीन प्रतिमाओं में गणेश, चंवरधारिणी, अग्नि, भैरव, पार्वती, लक्ष्मी, सूर्य आदि की प्रतिमाएँ उल्लेखनीय हैं। ये प्रतिमाएँ ईसा की 12वीं शताब्दी के आस-पास की हैं तथा इनकी संख्या 402 है। इन प्रस्तर प्रतिमाओं के साथ-साथ कलात्मक प्रस्तर भी प्रदर्शित किये गए हैं जिनमें उस काल की धार्मिक एवं सामाजिक गतिविधियों के साथ-साथ मनोविनोद, प्रणय, मिथुन और स्नेहाकर्षण के दृश्य अंकित हैं। शिव-पार्वती की आलिंगन मुद्रा की चतुर्बाहु मूर्ति विशेष उल्लेखनीय है। देवी पार्वती के हाथ में गोल दर्पण है जिसमें वह अपना रूप निहार रही हैं। शिव का वाहन नन्दी तथा दोनों ओर नृत्यलीन परिचारिकायें भी उत्कीर्ण हैं। एक नारी प्रतिमा सौम्य भाव से युक्त है। उसके कानों के वर्तुलाकार कुण्डल तथा तीखी नासिका सुन्दरता से अंकित किये गए हैं। उमा-महेश्वर, सूर्य, शिव, ब्रह्मा, नृसिंह, लक्ष्मीनारायण और किन्नर आदि की प्रतिमाएँ भग्न अवस्था में हैं जो मुस्लिम आक्रांताओं द्वारा बेरहमी से तोड़ी गई हैं।

चन्द्रावती से प्राप्त प्रतिमाओं में मिथुन, आलिंगन एवं प्रणय मूर्तियां बड़ी संख्या में हैं। अलस भाव से अंगड़ाई लेती हुई तथा उन्मुक्त भाव से विविध संचारी भावों का प्रदर्शन करती हुई नायिकाओं का अंकन बड़ी खूबसूरती से किया गया है। बारहवीं शताब्दी की कामिनी प्रतिमा में नायिका अंगड़ाई लेते हुए स्तन का स्पर्श कर रही है। इसके प्रत्येक अंग में उन्मुक्तता का भाव स्पष्ट दिखाई देता है। एक अन्य प्रतिमा में सोमपात्र लिए हुए नायिका उत्कीर्ण की गई है जिसके उन्नत उरोज, मद युक्त दृष्टिविलास, मनमोहक केश-विन्यास, कर्णवलय, तथा अंग-प्रत्यंग में सौन्दर्य का सागर लहरें मार रहा है। अंगड़ाई मुद्रा में स्थानक कामिनी अपने एक पैर में गेंद जैसी वस्तु को दबाये हुए है तथा दूसरे पैर को पहले पैर के घुटने पर रखे हुए है।

देलवाड़ा से प्राप्त गरुड़ारूढ़ भगवान विष्णु, शेषशायी विष्णु, वाराही देवी तथा संतों की प्रतिमाएँ सम्मिलित हैं। अचलगढ़ से प्राप्त चामुण्डा, सूर्य तथा नगरनायिका आदि की 8वीं से 14वीं शताब्दी तक की प्रतिमाएँ प्रदर्शित हैं। ये प्रतिमाएँ राजस्थान में

महाराजा मानसिंह – नाथ योगी के साथ, जोधपुर स्कूल पेंटिंग

मूर्तिकला के उत्तरोत्तर विकास को दर्शाती हैं। स्मृति स्तंभ के एक खण्ड में मिथुन आकृति तथा द्वितीय खण्ड में परमार राजा धारावर्ष का वि.सं. 1232 का 14 पंक्तियों का लेख उत्कीर्ण है।



अध्याय - 50

श्री बांगड़ राजकीय संग्रहालय, पाली



पाली जिला मुख्यालय पर स्थित श्री बांगड़ राजकीय संग्रहालय का शिलान्यास 26 अप्रैल 1982 को तथा उद्घाटन 19 जुलाई 1991 को सम्पन्न हुआ। इस संग्रहालय में पाली एवं उसके निकटवर्ती क्षेत्र में मानव सभ्यता के उषा काल से लेकर वर्तमान युग तक विकसित सभ्यता एवं संस्कृति के विविध सोपान देखे जा सकते हैं। संग्रहालय की पुरावस्तुएं एवं कला सामग्री एक बड़े कक्ष में प्रदर्शित की गई हैं।

पाषाणकालीन उपकरण

मानव सभ्यता के उषा काल में लूनी तथा उसकी सहायक नदियों के किनारे अस्तित्व में आईं पाषाणकालीन सभ्यताओं से प्राप्त मध्यपाषाण कालीन एवं नवपाषाण कालीन उपकरण पाली संग्रहालय में संग्रहित किए गए हैं जिनमें हैण्ड एक्स, स्क्रेपर, फ्लेक एवं कोर श्रेणी के उपकरण प्रमुख हैं।

मृदभाण्ड

पाली संग्रहालय में आसपास के क्षेत्रों से खुदाई में प्राप्त मृदभाण्डों के टुकड़े प्रदर्शित किए गए हैं। ये मृद्भाण्ड चाक पर बने हुए हैं। संग्रहालय में प्रदर्शित गाम बाड़ी से प्राप्त कुषाणकालीन विशाल मृणमय पात्र उल्लेखनीय है।

पाषाण प्रतिमाएँ

संग्रहालय में प्रदर्शित पाषाण प्रतिमाओं में हेमावास से प्राप्त 6ठी शताब्दी ईस्वी की विष्णु स्थानक प्रतिमा, 7वीं शती की विशालाकाय विष्णु प्रतिमा, नाडोल से प्राप्त 9वीं शताब्दी ईस्वी की नृत्य मुद्रारत नारी प्रतिमा, निमाज से प्राप्त 9वीं शताब्दी ईस्वी की द्वारपाल प्रतिमा, निमाज से प्राप्त 9वीं शताब्दी ईस्वी की चंवरधारणी प्रतिमा, नाडोल से प्राप्त 9वीं शताब्दी ईस्वी की नारी प्रतिमा, निमाज से प्राप्त 10वीं शती ईस्वी की नारी प्रतिमा, निमाज से प्राप्त 11-12वीं शताब्दी ईस्वी की अग्नि की प्रतिमा, सेवाड़ी से प्राप्त 11-12वीं शताब्दी की महिषासुर मर्दिनी प्रतिमा, नाडोल से प्राप्त 13-14वीं शताब्दी ईस्वी की मिट्टी से बनी महिषासुर मर्दिनी की प्रतिमा उल्लेखनीय हैं।

जैन प्रतिमाएँ

मध्यकाल में पाली में धातु प्रतिमा के ढलाई का काम बड़े स्तर पर होता था। पाली संग्रहालय में 8वीं शताब्दी ईस्वी से लेकर 13वीं शताब्दी ईस्वी की अवधि में बनी जैन तीर्थंकरों की धातु प्रतिमाएँ रखी गई हैं। ये प्रतिमाएँ पाली, नाडोल, भीनमाल, जालोर तथा बलवाना आदि स्थलों से प्राप्त हुई हैं। 8-9वीं शताब्दी ईस्वी की जीवंत स्वामी की कांस्य प्रतिमा दुर्लभ प्रतिमाओं में से एक है। भीनमाल से प्राप्त 9वीं शताब्दी की दिक्पाल प्रतिमा, पाली से प्राप्त 8-9वीं शताब्दी की जीवंत स्वामी प्रतिमा, नाडोल से प्राप्त जैन तीर्थंकर की 11-12वीं शताब्दी की प्रतिमा, निमाज से प्राप्त 11-12वीं शताब्दी ईस्वी की तीर्थंकर प्रतिमा, बाली से प्राप्त 11-12वीं शती के तोरण के टुकड़े, बाली से प्राप्त 11-12वीं शताब्दी की पार्श्वनाथ प्रतिमा, बलवाना से प्राप्त 17-18वीं शताब्दी ईस्वी का जैन तोरण उल्लेखनीय हैं।

सुगाली माता की प्रतिमा

संग्रहालय में रखी सुगाली माता (काली देवी) की प्रतिमा 1857 के भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के क्रांतिकारी सैनिकों की प्रेरणा स्त्रोत रही है। यह प्रतिमा आउवा के ठाकुर कुशालसिंह तथा उनके पूर्वजों की कुलदेवी है। ई.1857 के स्वातंत्र्य समर के दौरान अंग्रेज अधिकारी इस प्रतिमा को आउवा ठिकाणे से निकालकर आबू पर्वत पर स्थित अपने सैनिक गोदाम में ले गए।

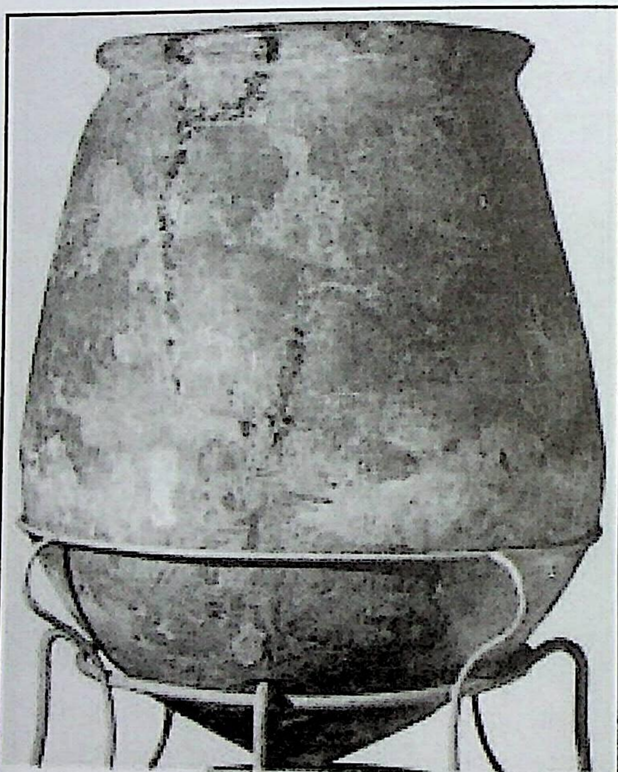
अंग्रेजों को भय था कि इस मूर्ति से जनता में विद्रोह की भावना जाग्रत होती है। 12 दिसम्बर 1909 को यह मूर्ति राजपूताना म्यूजियम अजमेर को दे दी गई। पाली में राजकीय संग्रहालय की स्थापना के बाद यह प्रतिमा अजमेर से पाली लाई गई। इस प्रतिमा के 10 सिर तथा 54 हाथ थे। इनमें से कुछ हाथ भंग हो गए हैं।



सुगाली माता, आउवा, जिला पाली

नाडोल से प्राप्त पुरातत्व सामग्री

ई.1990 में पाली जिले में स्थित प्राचीन ऐतिहासिक स्थल नाडोल में पुरातत्व विभाग द्वारा पुरा सामग्री का उत्खनन करवाया गया, जिसके बाद 10वीं–14वीं शताब्दी ईस्वी की चौहान युगीन पुरा सामग्री एवं साक्ष्य उपलब्ध हुए हैं। इस सामग्री को भी पाली संग्रहालय में रखा गया है।



धान रखने का मृदापात्र, सेवाड़ी-जिला पाली, दूसरी शती ईस्वी

शिलालेख

संग्रहालय भवन में छोटी-छोटी पीठकाओं पर क्षेत्रीय प्रतिमाओं एवं शिलालेखों का प्रदर्शन किया गया है। राठौड़ राजकुमार छांदा से सम्बन्धित एक शिलालेख कुटिल लिपि में अंकित है। इस पर वि.सं. 1053 (ई.996) का उल्लेख है। एक सती स्तम्भ पर वि. सं.1745 (ई.1688) का उल्लेख है। राव सीहा की बीठू से प्राप्त देवली पर सं.1330 (ई.1273) का उल्लेख है। बीठू की देवली का शिलालेख राठौड़ों के रेगिस्तान में आगमन की समय-सीमा को निर्धारित करने के लिए एकमात्र विश्वस्त स्रोत है।

ताम्रपत्र

पाली क्षेत्र से प्राप्त ताम्रपत्रों से बारहवीं-तेरहवीं शताब्दी ईस्वी में पाली क्षेत्र के सांस्कृतिक, धार्मिक एवं राजनीतिक इतिहास की जानकारी मिलती है। संग्रहालय में प्रदर्शित प्रमुख ताम्रपत्रों में बामनेरा का वि.सं.1220 (ई.1163) का ताम्रपत्र है, जिसमें कुमारसिंह के पुत्र अजयसिंह द्वारा कोरटा में सूर्यग्रहण के दिन ब्राह्मण नारायण को एक भूमि दान करने का उल्लेख है। बामनेरा से मिले इसी तिथि के एक अन्य ताम्रपत्र में नाडोल के चौहान शासक महाराजाधिराज केल्हण देव द्वारा ब्राह्मण नारायण को सरल,

सवृक्ष कूप का दान किए जाने का उल्लेख है। बामनेरा से ही प्राप्त एक संवत् विहीन ताम्रपत्र में कुमारसिंह के पुत्र अजयसिंह द्वारा देवोत्थान एकादशी के दिन ब्राह्मण नारायण को कूपदान किए जाने का उल्लेख है। वि.सं.1238 (ई.1181) के नाडोल से प्राप्त ताम्रपत्र में नाडोल के चौहान शासक केल्हण के पुत्र कुमार जैतसिंह द्वारा पार्श्वनाथ मंदिर में कल्याणक महोत्सव हेतु प्रतिवर्ष द्रम्मों का दान किए जाने का उल्लेख है।

सिक्के

पाली क्षेत्र से कई प्रकार के सिक्के प्राप्त हुए हैं। संग्रहालय में प्रदर्शित सिक्कों में 10 इंडो-ससैनियन सिक्के, 14 अल्लाउद्दीन खिलजी (ई.1296-1316) के सिक्के, 22 गयासुद्दीन तुगलक (ई.1320-25) के सिक्के, 1 फिरोजशाह तुगलक (ई. 1351-88) का सिक्का, 6 मुबारक शाह (ई.1421-34) के सिक्के तथा 2 शाहआलम (ई.1759-1806) के सिक्के सम्मिलित हैं। मारवाड़ नरेशों द्वारा स्वतंत्र रूप से सिक्कों का प्रचलन किया गया। उनकी एक टकसाल पाली में भी स्थित थी। रणकपुर (पाली) से दिल्ली के सुल्तानों के सिक्कों का एक दफीना उपलब्ध हुआ है।

लघुचित्र

पाली संग्रहालय के लघुचित्रों में राव सीहा (ई.1250-73), राव रिड़मल (ई. 1427-38), राव जोधा (ई.1453-89), राव माल देव (ई.1532-62), मोटा राजा उदयसिंह (ई.1583-95) विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। महाराजा गजसिंह (प्रथम) (ई.1619-38), महाराजा जसवंतसिंह (प्रथम) (ई.1638-78), वीर दुर्गादास राठौड़ (ई.1638-1718), महाराजा अजीतसिंह (ई.1707-24) और महाराजा अभयसिंह (ई. 1724-49) के चित्र दर्शनीय हैं। संग्रहालय में महाराजा रामसिंह (ई.1749-51), महाराजा बखतसिंह (ई.1751-1752), महाराजा विजयसिंह (ई.1752-93) और महाराजा मानसिंह (ई.1803-43) के लघुचित्र प्रदर्शित हैं। रियासती काल में बारहमासा, रागरागिनी, ढोलामारू, दरबारी दृश्य, मुगल शैली के चित्र एवं सामंतों आदि के चित्र बड़े स्तर पर बनते थे। कुछ चित्रों में केशव और मतिराम कवियों की रचनाओं को आधार बनाकर चित्रांकन किया गया है। इस शैली के चित्र भाटी किशनदास, भाटी शिवदास, भाटी देवदास आदि चित्रकारों ने बनाए हैं।

काष्ठकला

बगड़ी, सोजत एवं रायपुर आदि से प्राप्त अनेक काष्ठ कलाकृतियां भी संग्रहालय में प्रदर्शित की गई हैं।

अस्त्र शस्त्र

पाली संग्रहालय में मध्यकाल में मारवाड़ क्षेत्र में प्रचलित अस्त्र-शस्त्रों का संग्रह प्रदर्शित किया गया है। इनमें बन्दूक, देशी तमंचा, तबर, ढाल, तलवार आदि प्रमुख हैं।

जनजातीय सामग्री

पाली जिले की पहाड़ियों में आदिवासी संस्कृति का विकास हुआ। आज भी पाली जिले में हजारों आदिवासी परिवार रहते हैं। आदिवासियों के जनजीवन से सम्बन्धित कुछ सामग्री पाली संग्रहालय में प्रदर्शित की गई है। इनमें गरासिया जाति के लोकवाद्य यथा ढोल, मांदल, ढाक, मंजीरा, रुनझुनी, बांसली तथा गोरिया प्रमुख हैं। आदिवासियों के वस्त्र एवं आभूषणों को भी प्रदर्शित किया गया है। इनमें तोड़ाजोड़ी (पायजेब), करता (कड़ला), हथपान जोड़ी, रमझोल जोड़ी, कंठी, लंगर जोड़ी, कंदोरा, नथ, बटन, बोर तथा लसो, झोला जोड़ी, बली, बारली, गले की हंसली, हासली बियावली तथा पुरुष आभूषणों में बेड़ी, हाथ का कड़ा, जैला जोड़ी तथा लंगर उल्लेखनीय हैं। संग्रहालय में आदिवासियों के तीर-कमान भी संग्रहित हैं।

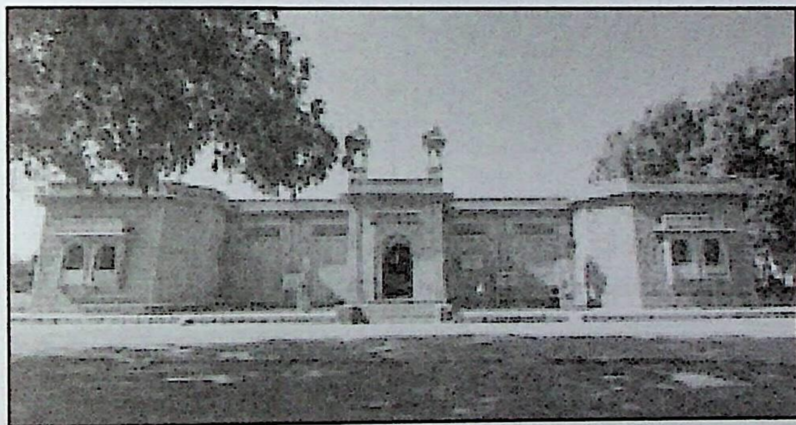
खनिज पदार्थ

पाली एवं उसके आसपास के क्षेत्र में कई प्रकार के खनिज प्रचुर मात्रा में मिलते हैं। पाली संग्रहालय में ऐसबेस्टस, बाराइट्स, कैल्साइट, जिप्सम, मारबल, क्वार्ट्ज, टेल्क, ब्लस्टोवाइट, टंगस्टन तथा पेल्यूराइट आदि खनिज प्रदर्शित किए गए हैं।



अध्याय - 51

राजकीय संग्रहालय, जैसलमेर



विश्व प्रसिद्व थार रेगिस्तान में 12वीं सदी में राव जैसल द्वारा बसाए गए जैसलमेर नगर में राजकीय संग्रहालय की आधारशिला 5 दिसम्बर 1979 को रखी गई और 14 फरवरी 1984 को विधिवत् उद्‌घाटन करवा कर जन-साधारण के लिए खोला गया। संग्रहालय में काष्ठ-जीवाश्म, पाषाणकालीन हथियार, शिलालेख, ताम्रपत्र, परिधान, जैसलमेर के पाषाण से निर्मित कलाकृतियां, सिक्के, हस्तशिल्प तथा इस क्षेत्र के स्मारकों, स्थलों और पर्यटन स्थलों की पुरासामग्री प्रदर्शित की गई है।

जीवाश्म

थार रेगिस्तान आज से लगभग 18 करोड़ वर्ष पहले हरा-भरा जंगल था। उससे पहले यहाँ द्रुमकुल्य नामक समुद्र लहराता था। जब यह समुद्र सूख गया तो उसके गर्भ में निवास करने वाले जीव-जन्तुओं एमोनाइट, सीप आदि जीवाश्म में बदल गए। इसी प्रकार समुद्र के किनारे खड़े जंगलों में खड़े पेड़ भी जीवाश्म में बदल गए। जैसलमेर के राजकीय संग्रहालय में इन जीव़ाश्मों का प्रदर्शन किया गया है। ये जीवाश्म लगभग 4.5 से लेकर 18 करोड़ वर्ष तक पुराने हैं। इन्हें प्रामाणिक जानकारी के साथ प्रदर्शित किया गया है।

पाषाणकालीन हथियार

इस क्षेत्र के आदि मानव द्वारा निर्मित 50,000 वर्ष प्राचीन पुरापाषाण और उत्तर पाषाण कालीन हथियार संग्रहालय में प्रदर्शित हैं, जो आदिमानव के विकास की कहानी कहते हैं। ये हथियार लूनी नदी घाटी में निवास करने वाले आदिमानव द्वारा प्रयुक्त किए

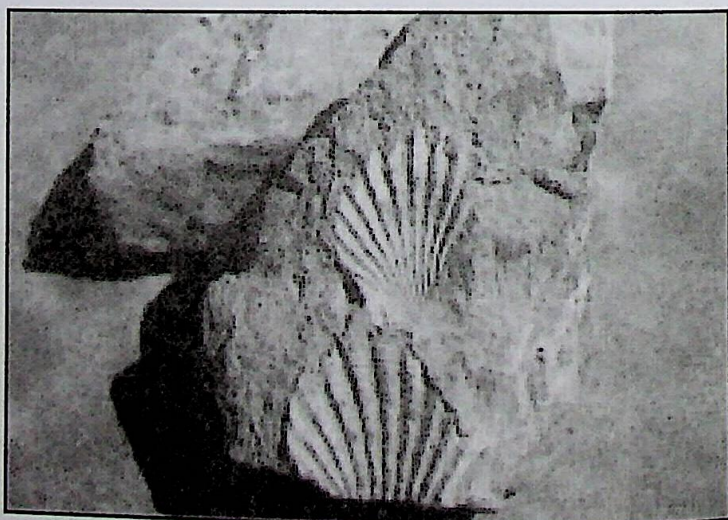
गए थे। यहाँ प्रयुक्त प्रस्तर उपकरणों एवं औजारों को तिलवाड़ा के उत्खनन से प्राप्त किया गया है।

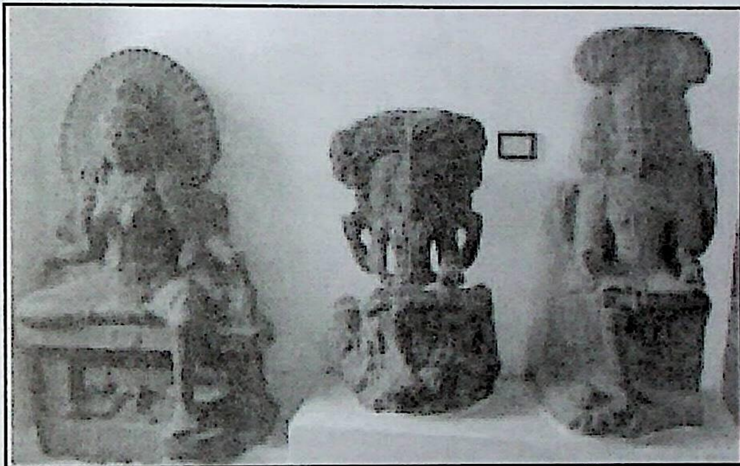


वस्त्राभूषणों से अलंकृत प्रस्तर प्रतिमा, जिला बाड़मेर, 12वीं शती ईस्वी

प्रतिमाएँ

संग्रहालय में लोद्रवा से प्राप्त 12वीं सदी की प्रतिमाएँ प्रदर्शित की गई हैं जिनमें अर्द्धनारीश्वर, सुर-सुंदरी, चंवरधारी विष्णु, प्रणयलीन प्रतिमा, कार्तिकेयी, स्थानक कुबेर आदि की मूर्तियां प्रमुख हैं। किराडू से प्राप्त पत्र लिखती तथा पैर से कांटा निकालती सुरसुन्दरी की प्रतिमाएँ प्रदर्शित की गई हैं। किराडू की मूर्तियों में समृद्ध कला-सौष्ठव स्पष्ट परिलक्षित होता है। सुर-सुन्दरियों की भाव-भंगिमाएं खजुराहो की याद दिलाती हैं मानो इन प्रतिमाओं में नारी देह का सम्पूर्ण सौन्दर्य साकार हो उठा हो। किराडू से प्राप्त विष्णु की त्रिभंग-मुद्रा की प्रतिमा उल्लेखनीय है। बूंदी से प्राप्त गणेश प्रतिमा एवं नवग्रह फलक प्रदर्शित किए गए हैं। खड़े गणेश की एक प्रतिमा उल्लेखनीय है।



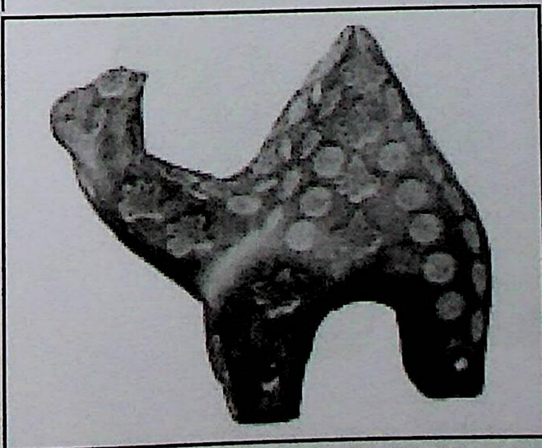


जैसलमेर से प्राप्त शिवपार्वती की प्रतिमा विशेष निधि के रूप में प्रदर्शित की गई है। धूलमनी (गंगानगर) से प्राप्त द्वितीय शताब्दी ईस्वी का कुषाण-कालीन मिट्टी का बना ऊँटनुमा अंलकृत खिलौना प्रदर्शित है।

पार्श्वनाथ जैन मंदिर के सूत्रधार द्वारा तैयार की गई महिषासुर मर्दिनी की प्रतिमा भी दर्शनीय है, जो जैसलमेर में संवत् 1475 में तैयार कराकर पूगल ले जाई गई थी।

शिलालेख एवं ताम्रलेख

बाड़मेर क्षेत्र के ग्राम मांगला का वि. संवत् 1239 का ताम्रपत्र इस क्षेत्र में परमार शासकों द्वारा मांगतेश्वरी देवी के मंदिर बावड़ी, कुओं के निर्माण की जानकारी देता है। ग्राम कुलधरा से वि.सं. 1795 के स्मृति लेख से ज्ञात होता है कि उस काल में माता-पिता के स्वर्गवास के पश्चात्, पुत्रों द्वारा इस प्रकार के स्मृति लेख लगाए जाने की परम्परा रही थी।



टैराकोटा ऊँट, बीकानेर, तीसरी शती ईस्वी



वृक्ष के नीचे खड़ी स्त्री, प्रस्तर प्रतिमा, 12वीं शताब्दी ईस्वी

सिक्के

जैसलमेर संग्रहालय में सिंध के अरब गर्वनरों के सिक्के, जैसलमेर राज्य के अखेशाही सिक्के, जोधपुर राज्य के सिक्के एवं पंचमार्क गधैया सिक्के प्रदर्शित किए गए हैं।

कलात्मक परिधान

इस क्षेत्र की कसीदाकारी विख्यात रही है। इस माध्यम से यहाँ के कलाकारों ने दैनिक उपयोग की वस्तुओं सहित वस्त्रों को लघु दर्पणों एवं सुई की कसीदाकारी से अलंकृत किया है। घोड़े और ऊँट की पोशाकों को भी कसीदाकारी से अलंकृत किया गया है। दैनिक उपयोग में लाये जाने वाले कसीदाकरी से अलंकृत वस्त्र भी प्रदर्शित किए गए हैं।

विविध

संग्रहालय में हस्तशिल्प से निर्मित झरोखा प्रदर्शित किया गया हैं। ऊँट के चमड़े पर सोने का काम, चित्रित खांडा, इडाणी, कठपुतलियां, मथनी, लघुचित्र, काष्ठकला के नमूने, जैसलमेर पत्थर के प्लेट, फूलदान, कमलदान, पेपरवेट, कप-प्लेट आदि प्रदर्शित हैं। विलुप्त होते राज्य पक्षी गोडवाण को स्टफ कराकर प्रदर्शित किया गया है। सौन्दर्य की प्रतिमूर्ति मूमल का चित्र भी महेन्द्र के साथ प्रदर्शित किया गया है।



अध्याय - 52

लोक–सांस्कृतिक संग्रहालय, जैसलमेर

जैसलमेर के गड़सीसर सरोवर पर स्थित लोक-सांस्कृतिक संग्रहालय देश-विदेश से आने वाले पर्यटकों के आकर्षण का मुख्य केन्द्र है, जिसमें मरू प्रदेश की विलुप्त होती संस्कृति को संजोया गया है। संग्रहालय में लोक जीवन से सम्बद्ध वस्तुओं, ऐतिहासिक दस्तावेजों, चित्रों, पट्टों, परवानों, सिक्कों, मिट्टी की कलाकृतियों, लोकवाद्यों, वस्त्रों, आभूषणों, राजा-महाराजाओं के चित्रों, जीवाश्मों, तालों, सुरमा-दानियों, बैलगाड़ियों, कठपुतलियों, ऊँटों एवं घोड़ों के शृंगार में काम आने वाली वस्तुओं, अमल छानने की चलनियों, हुक्कों, कावड़ों के साथ-साथ पितरों-भोमियों तथा लोक देवी-देवताओं की प्रतिमाओं का प्रदर्शन किया गया है।

इस संग्रहालय की स्थापना ई.1984 में स्थानीय शिक्षक नन्दकिशोर शर्मा ने की। उन्होंने गांव-गांव घूमकर प्रदर्शन योग्य वस्तुओं का संग्रह किया तथा सेवगों की बगीची में किराये के तीन कमरों में संग्राहालय स्थापित किया। वर्ष 1986 में शर्मा ने जैसलमेर के इतिहासकारों, कवियों, लेखकों तथा लोक-कलाकारों को मिला कर 'कवि तेज लोक कला विकास समिति' का गठन किया। वर्ष 1997 में इस संग्रहालय के लिए नवीन भवन बनाया गया, जिसका उद्घाटन 1 फरवरी 1997 को तत्कालीन उप राष्ट्रपति के. आर. नारायणन् द्वारा किया गया। प्रतिवर्ष 40 से 50 हजार देशी एवं विदेशी दर्शक इस संग्रहालय को देखने आते हैं।

संग्रहालय के प्रथम कक्ष में प्रदर्शित मिट्टी का झरोखानुमा महल दर्शकों के आकर्षण का मुख्य केन्द्र है। देवड़ा निवासी मगाराम देवपाल द्वारा बनाये गये इस काल्पनिक महल को मूमल की कथा से जोड़ा गया है। ग्रामीण महिलाएं भी मिट्टी की इस सुंदर कलाकृति को देखने आती हैं। दूसरे कक्ष में विविध वस्त्र, मोती-माणक का कार्य, विभिन्न जातियों की वेशभूषा, शृंगार-प्रसाधन सामग्री, पीतल-तांबे के बर्तन, दीपक, गणगौर-ईसर की प्रतिमाएं आदि प्रदर्शित की गई हैं। राजा रवि वर्मा के चित्र भी आकर्षण का मुख्य विषय हैं।

दूसरे कक्ष में प्राचीन जीवाश्म (वुड फॉसिल), ताम्रपत्र, अभिलेख तथा लगभग 100 पुराने चित्र प्रदर्शित हैं जिनमें महारावलों के चित्र सम्मिलित हैं। बैलगाड़ियां, चांदी की अम्बाड़ी, रॉयल एलबम, मेघाडम्बर, पुराने पत्र, 100 वर्ष पुराने कार्ड, प्राचीन सिक्के, हुंडियां, पट्टे, परवाने, हस्तलिखित पुस्तकें, हाथ के बने लघुचित्र, तख्तियां आदि

भी प्रमुख दर्शनीय सामग्री है। तीसरे कक्ष में कावड़, तोरण, मेहन्दी डिजाइन, वन्दनमाल, हटड़ियां तथा रेखाचित्र प्रदर्शित हैं। चौथे कक्ष में ऊँटों, अश्वों तथा गजों का श्रृंगार करने की सामग्री, पीतल एवं लोहे के ताले, अमल छानने की चलनियां, सुरमादानी, इण्डाणी, बैलगाड़ियां ढोला–मारू, मूमल–महेन्द्र की आकृतियां, सरोते, ऊँट के चमड़े के कुण्डिए, मोर, चौपड़, जैसलमेर के पत्थर से निर्मित तश्तरियां, पेपरवेट, लकड़ी के ठप्पे, पुस्तक रखने के स्टेण्ड, चाकू–छुरी रखने के स्टेण्ड, कपड़े की छपाई करने के विविध प्रकार के छापे, लकड़ी की पुरानी पेटियां, अनाज रखने की मिट्टी की कोठियां, कठपुतलियां, औरतों के चूड़े, लकड़ी की भाण तथा चूल्हा–चक्की आदि प्रदर्शित हैं।

पंचम् कक्ष में मरूस्थल के लोकवाद्य- कमायचा, सारंगी, रेवाज, श्रीमंडल, मोचरंग, रावण हत्था, खड़ताल, मुरली, अलगोजा, हारमोनियम, ढोलक आदि प्रदर्शित किए गए हैं। एक गैलरी में लोक देवी–देवताओं की स्मृतियां, जुझारों के स्मृति–स्तंभ तथा प्रतिमाओं आदि का संग्रह प्रदर्शित किया गया है। संग्रहालय में लोक संगीत की कई घण्टों की रिकार्डिंग, सैकड़ों पारदर्शियां तथा जैसलमेर में छपी पुस्तकों एवं अभिलेखों का संग्रह है। नंदकिशोर शर्मा के पिता सुगतमल से प्राप्त लोकनाट्यों की छवियों एवं हस्तलिखित पुस्तकों का एक संग्रह भी प्रदर्शित किया गया है।

हिन्दी के कवि अज्ञेय, गायिका लता मंगेशकर, मॉरीशस के प्रधानमंत्री अनिरुद्ध जगन्नाथ, राजस्थान के राज्यपाल बलिराम भगत, मुख्यमंत्री भैरोसिंह शेखावत, पर्यटन मंत्री नरेन्द्र कंवर, मुख्य सचिव मीठालाल मेहता, पूर्व जलसेनाध्यक्ष रामलाल आदि ने इस संग्रहालय की प्रशंसा की है। प्रधानमंत्री अटलबिहारी वाजपेयी ने संग्रहालय के सम्बन्ध में लिखा है–'एक व्यक्ति यदि धुन का पक्का है तो क्या नहीं कर सकता है, उसकी छोटी सी झलक श्री शर्मा का लोक–सांस्कृतिक संग्रहालय देखकर पाई जा सकती है।'



अध्याय - 53

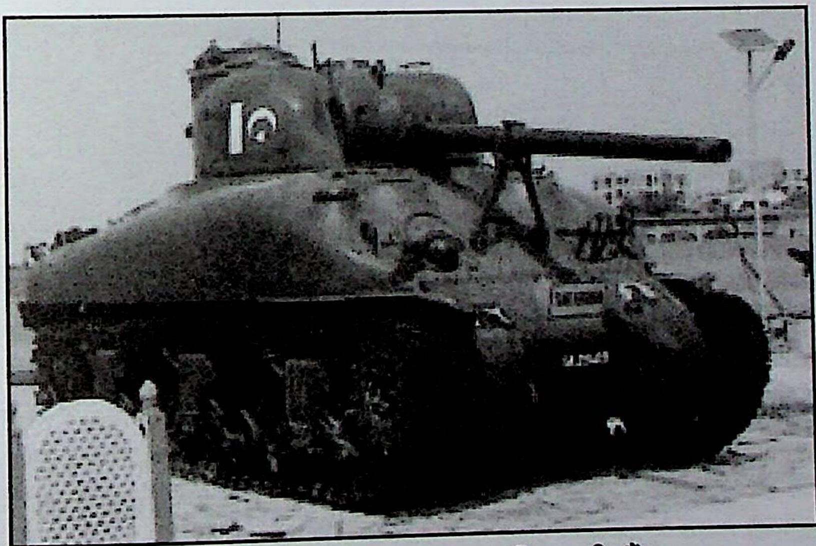
युद्ध संग्रहालय, जैसलमेर



जैसलमेर के सैन्य स्टेशन में जैसलमेर युद्ध संग्रहालय स्थापित किया गया है। इसका उद्‌घाटन दक्षिण कमान के जनरल ऑफिसर कमांडिंग लेफ्टिनेंट जनरल अशोकसिंह ने 24 अगस्त 2015 को, 1965 के भारत-पाकिस्तान युद्ध के पचास साल पूरे होने के अवसर पर किया। यह संग्रहालय जैसलमेर से 10 किलोमीटर दूर जैसलमेर-जोधपुर राजमार्ग पर स्थित है। युद्ध संग्रहालय के भीतर दो बड़े सूचना प्रदर्शन हॉल, एक ऑडियो-विजुअल रूम और सुव्यवस्थित दुकानें स्थापित की गई हैं। इस संग्रहालय में युद्ध के दौरान जब्त हथियारों, टैंकों एवं सैन्य वाहनों की एक बड़ी श्रृंखला प्रदर्शित की गई है। भारतीय वायुसेना द्वारा वर्ष 1971 के भारत-पाकिस्तान युद्ध के दौरान लोंगेवाला ऑपरेशन में प्रयुक्त हंटर विमान को भी प्रदर्शित किया गया है। इस संग्रहालय में प्रवेश निःशुल्क है। यहाँ एक एम्पीथियेटर सेक्शन डिफेंडेड पोस्ट का निर्माण किया गया है, जिसमें 1965 के युद्ध के दृश्य को दर्शाया जाता है। यह संग्रहालय 1965 की जंग के वीर योद्धाओं को भारतीय सेना की ओर से दी गई श्रद्धांजलि है।

24 अगस्त 2015 को लोंगेवाला में भी एक युद्ध स्मारक का उद्‌घाटन किया गया है। यह युद्ध स्मारक उस स्थान पर है, जहाँ 4 एवं 5 दिसम्बर 1971 को युद्ध लड़ा गया था। इस युद्ध स्मारक में एक ऑडियो विजुअल थियेटर का निर्माण किया गया है जिसमें लोंगेवाला के युद्ध को दर्शाया जाता है। यह स्मारक सातों दिन खुला रहता है, तथा इसमें प्रवेश निःशुल्क है। जैसलमेर तथा लोंगेवाला के युद्ध स्मारकों के बीच 2 घण्टे की दूरी है।

जैसलमेर युद्ध संग्रहालय, जैसलमेर आने वाले देशी-विदेशी पर्यटकों के लिए प्रमुख पर्यटन स्थल बन गया है। यहाँ प्रतिदिन 1500 से 2000 पर्यटक आते हैं। यही कारण है कि जैसलमेर के युद्ध संग्रहालय को देश के सर्वोच्च पसंद किए जाने वाले पांच म्यूजियम में शामिल किया गया है। विश्व प्रतिष्ठित अमरीकन ट्रेवल कंपनी ट्रिप एडवाईजर ने जैसलमेर युद्ध संग्रहालय को विश्व भर में पांचवा स्थान दिया है। इस सूची में लेह का 'हॉल ऑफ फेम' पहले स्थान पर है। उदयपुर की 'बागोर की हवेली' दूसरे स्थान पर, कलकता का 'विक्टोरिया मेमोरियल हॉल' तीसरे स्थान पर, हैदराबाद का 'सालार जंग म्यूजियम' चौथे स्थान पर एवं जैसलमेर का 'युद्ध संग्रहालय' पांचवे स्थान पर है।



1971 युद्ध में पकड़ा गया पाकिस्तानी टैंक

भारत की पश्चिमी सीमा पर स्थित भारतीय सेना के शौर्य को प्रदर्षित करता यह संग्रहालय वीर सैनिकों की शहादत का प्रतीक है। इस संग्रहालय को ट्रिप एडवाइजरी के गुणवत्ता मानदण्डों के अनुसार भारत के सर्वोच्च संग्रहालयों में सम्मिलित किया गया हैं। इस संग्रहालय को एशिया के सर्वाधिक पसंद किए जाने वाले 25 संग्रहालयों में भी स्थान मिला हैं। एशिया के सर्वोच्च 25 संग्रहालयों में पहला स्थान चीन के 'किन टेराकोटा वारियर्स' को दिया गया है, जबकि संसार में सर्वाधिक पसंद किए जाने वाले संग्रहालयों में न्यूयार्क सिटी के 'मेट्रोपोलिटन म्यूजियम ऑफ आर्ट' को दूसरा स्थान दिया गया है, उसके बाद शिकागो के 'स्टेट हेर्मिटेज एंड विंटर पैलेस' को तीसरा स्थान दिया गया है।



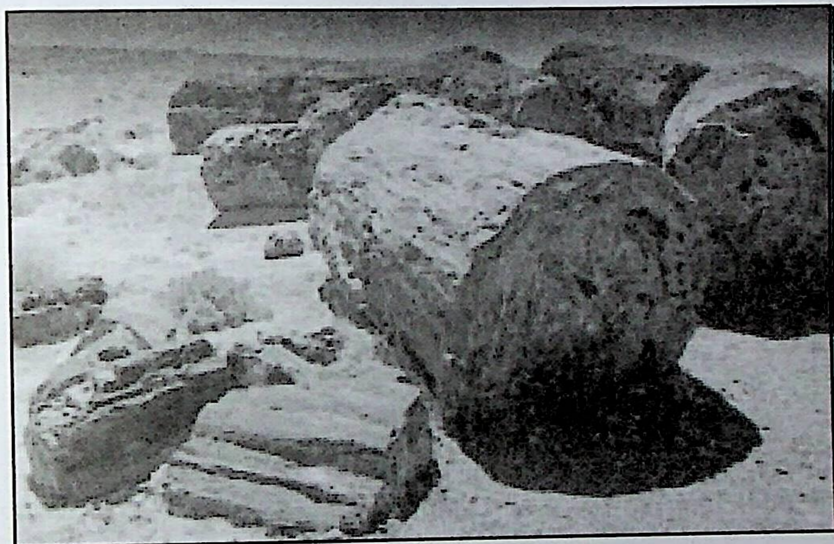
अध्याय - 54

नेशनल वुडन फॉसिल पार्क, जैसलमेर



लगभग 18 करोड़ वर्ष पूर्व, राजस्थान नम एवं गर्म जलवायु वाला स्थान था तथा घने जंगलों से परिपूर्ण था। यहाँ विशाल घने जंगल हुआ करते थे। लगभग 18 करोड़ वर्ष पूर्व के घने एवं भरे-पूरे जंगल पृथ्वी की आन्तरिक उथल-पुथल के कारण चट्टानी परतों के नीचे दब गए। जैसलमेर से 18 किलोमीटर दूर अव्वल गांव के निकट नेशनल वुडन फॉसिल पार्क स्थित है। वर्ष 1976 में 'आर्कोलोजिकल सर्वे आफ इंडिया' के वैज्ञानिकों ने एक सर्वेक्षण के दौरान 15 काष्ठ जीवाश्म के तनों को खोज निकाला। इन काष्ठ जीवाश्मों को संरक्षित कर वुडन फॉसिल पार्क के रूप में विकसित किया गया। वुडन फॉसिल पार्क में काष्ठ जीवाश्मों की लम्बाई एक मीटर से 10 मीटर तक है तथा चौड़ाई 30 सेन्टीमीटर से एक मीटर तक है। ये काष्ठ जीवाष्म लाठी शैल समूह (आयु लगभग 18 करोड़ वर्ष) के बलुआ शिलाओं से मेल खाते हैं, जो इस बात का प्रमाण है कि यह स्थान 18 करोड़ वर्ष पूर्व नम एवं गर्म जलवायु वाला था। इसी कारण यह स्थान जंगलों से भरा-पूरा था।

लाठी समूह की अवसादीकरण की क्रिया के फलस्वरूप वृक्षों के तनों की मुलायम छाल गल गई। कठोर तने वाला भाग अत्यधिक दबाव के कारण सिलिका आदि से मिलकर काष्ठ जीवाश्म की शिलाएं बन गया। इस प्रक्रिया के परिणामस्वरूप इन तनों की आन्तरिक संरचना में कोई विशेष अन्तर नहीं आया। ये वृक्षों के तने उसी रूप में दबे रह गए, जिन्हें काष्ठ जीवाश्मों के रूप में पहचाना जा सकता है। इन अवशेषों



की सुरक्षा के लिए उन्हें लोहे की जालियों से ढका गया है। जैसलमेर का यह नेशनल वुडन फॉसिल पार्क राष्ट्रीय पर्यटन मानचित्र पर आने के कारण पर्यटकों के आकर्षण का केन्द्र बना हुआ है। व्यावहारिक रूप में यह पार्क नहीं है, अपितु काष्ठ जीवाश्मों 'वुडन फॉसिल' का संग्रहालय है।



बीकानेर संभाग के संग्रहालय

अध्याय - 55

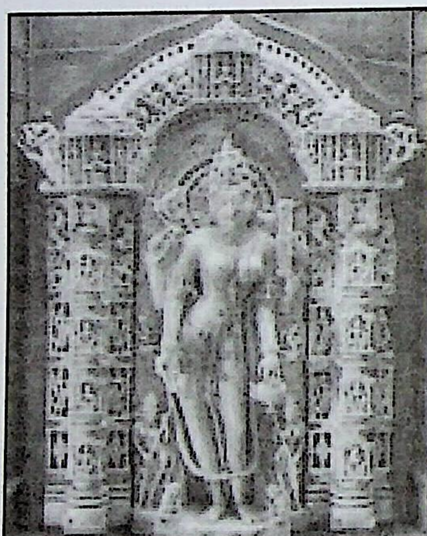
गोल्डन–गंगा राजकीय संग्रहालय, बीकानेर



बीकानेर के तीन प्रमुख संग्रहालयों- गंगा-गोल्डन जुबली संग्रहालय, जूनागढ़ के करणी संग्रहालय तथा श्री सार्दूल संग्रहालय में इतिहास एवं पुरातत्व से जुड़ी दुर्लभ सामग्री जुटाई गई है। पुरातत्व महत्व की वस्तुओं के संग्रहण की दृष्टि से बीकानेर के संग्रहालयों का राज्य में विशिष्ट स्थान है। गंगा-गोल्डन जुबली म्यूजियम का उद्घाटन 5 नवम्बर 1937 को भारत के तत्कालीन गवर्नर जनरल एवं वायसराय लॉर्ड लिनलिथगो द्वारा महाराजा गंगासिंह के राज्यारोहण के स्वर्ण जयन्ती वर्ष में किया गया। महाराजा की मृत्यु के लगभग 10 वर्ष बाद इस संग्रहालय के लिए जनसहयोग से एक वृत्ताकार भवन बनाया गया, जिसका उद्घाटन 4 सितम्बर 1954 को हुआ। इस संग्रहालय में महाराजा गंगासिंह (ई.1887-43) के जीवन से सम्बन्धी चित्र एवं सामग्री कला कक्ष, पट्ट-परिधान कक्ष, ऐतिहासिक कक्ष, शस्त्रागार, पुरातत्व कक्ष, चित्रशाला तथा लोककला दीर्घा आदि कक्षों में दुर्लभ कलाकृतियों का अमूल्य संग्रह है। इस संग्रहालय में 71 प्रस्तर प्रतिमाएँ, 10 शिलालेख, 192 लघुचित्र, 124 टैराकोटा सामग्री, 27 धातु सामग्री, 574 शस्त्र, 22,241 सिक्के तथा 1,108 स्थानीय कला नमूने एवं वस्त्र नमूने रखे गए हैं। संग्रहालय में कई तरह के मध्यकालीन एवं आधुनिक काल के शिल्प, चित्र, गलीचे (कालीन), पॉटरी, टेराकोटा की सामग्री, विभिन्न प्रकार के अस्त्र-शस्त्र सम्मिलित हैं।

गंगा दीर्घा

महाराजा गंगासिंह (ई.1887-1943) के शासनकाल में बीकानेर राज्य ने बहुत


जैन सरस्वती, पल्लू, 11वीं शती ईस्वी

उन्नति की। इस संग्रहालय की स्थापना भी उनके शासनकाल में हुई। इसे दृष्टिगत रखते हुए संग्रहालय की प्रथम दीर्घा महाराजा गंगासिंह को समर्पित की गई है। इस दीर्घा में महाराजा के जीवन से सम्बन्धित तैलचित्र, फोटोग्राफ, विश्वयुद्ध के समय कार्य में ली गई सामग्री, प्रमाण-पत्र एवं उनके द्वारा शिकार किए हुए चीते और शेर, महाराजा द्वारा प्रयुक्त सामग्री तथा अन्य वस्तुएं प्रदर्शित की गई हैं।

लोककला दीर्घा

लोककला दीर्घा में लकड़ी, लाख, ऊँट की खाल आदि से निर्मित कलात्मक सामग्री प्रदर्शित की गई है, जिस पर भव्य कलात्मक कार्य किया गया है। यहाँ प्रदर्शित शुतुरमुर्ग के अण्डों पर चित्रकारी की गई है। प्रस्तर पर नक्काशी का मनमोहक कार्ययुक्त झरोखा एवं स्तम्भ, मोर की लड़त, बीकानेर की मिट्टी से निर्मित कांच की सामग्री, इक्का, हुक्का पीते हुए पुरुष, नोहर से प्राप्त मृण्मय पात्र, प्राचीन वाद्ययंत्र, ढोलक, नगारा, झांझर, मोरचंग, पाबूजी का माटा आदि प्रदर्शित हैं। इससे बीकानेर रियासत के कलात्मक स्वरूप का परिचय प्राप्त होता है। पट्ट-परिधान दीर्घा में बीकानेर जेल में निर्मित उच्चकोटि के कलात्मक गलीचे और राजाओं की पोशाकें प्रदर्शित हैं। लोककला दीर्घा में जनजीवन को प्रदर्शित करने वाले मॉडल, चित्र, वस्त्र, पाबूजी की पड़ तथा अन्य कलात्मक सामग्री प्रदर्शित है।

चित्र दीर्घा

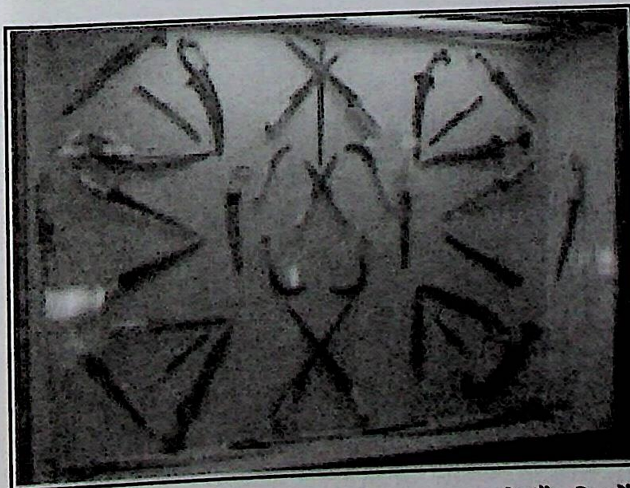
चित्रकला दीर्घा में राजस्थान की विभिन्न चित्रशैलियों के चित्र प्रदर्शित हैं। 18वीं शताब्दी में चित्रित बारहमासा का पूरा सैट महत्वपूर्ण है, जिन पर गोविन्द कवि के ब्रजभाषा के छंद भी अंकित हैं। विख्यात अंग्रेज चित्रकार ए. एच. मूलर ने बीकानेर नरेशों से जुड़ी हुई कुछ महत्वपूर्ण घटनाओं को चित्रित किया। इन ऐतिहासिक घटनाक्रमों के चित्र दीर्घा में प्रदर्शित किए गए हैं। बीकानेर के संस्थापक राव बीका (ई. 1472-1504) का जोधपुर से अपने पैतृक राज्यचिह्न लाने का चित्र, राव जैतसिंह का बाबर के पुत्र कामरान के साथ रात्रिकालीन युद्ध का चित्र तथा बीकानेर नरेश रायसिंह द्वारा गुजरात के गवर्नर मिर्जा मुहम्मद हुसैन के वध का चित्र इतिहास एवं कला की दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं। महाराणा प्रताप (ई.1572-97) ने अकबर से संधि करने के लिए अकबर को पत्र द्वारा संदेश भेजा था, किंतु अकबर के दरबारी एवं बीकानेर के राजकुमार



अमरसिंह द्वारा मुगलों से युद्ध, राजकीय संग्रहालय बीकानेर, पेंटिंग ई. 1940

पृथ्वीसिंह (पीथल) ने पत्र की विश्वसनीयता पर संदेह प्रकट कर महाराणा को पत्र लिखा। इस पत्र ने महाराणा के मन में नवीन साहस का संचार किया तथा इतिहास के पृष्ठों को बदल दिया। इस घटनाक्रम पर आधारित दो चित्र मूलर ने बनाए, जो दीर्घा में प्रदर्शित हैं। हिन्दू धर्म की रक्षार्थ महाराजा करणसिंह (1631-69) का शाही नावों को तोड़कर 'जय जंगलधर बादशाह' की उपाधि प्राप्त करने का दृश्य चित्र भी बहुत महत्वपूर्ण है।

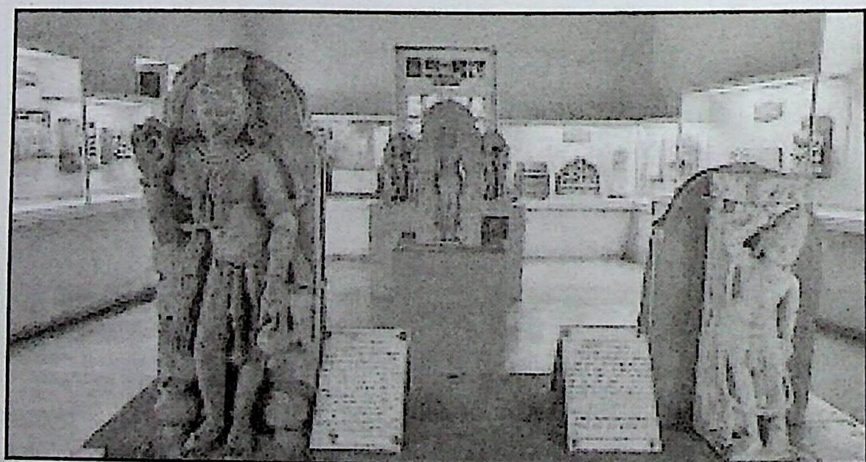
अस्त्र-शस्त्र दीर्घा



शास्त्रागार दीर्घा में प्राचीन शास्त्रास्त्रों का अद्‌भुत संग्रह किया गया है। तीर कमान, तुक्के, तलवारें, कटार, छुरी, बिछुवा, जांभिया, बुग्दा, गुप्ती, सांग, गुर्ज, गेड़िया, तबाल, फरसी, बंदूक, तोप आदि अपने क्रमिक विकास के परिचय के साथ उन वीरों का भी स्मरण कराते हैं, जिन्होंने इनका प्रयोग किया।

संग्रहालय में प्रदर्शित मैचलाक किस्म की बंदूकों के साथ-साथ अन्य श्रेणी की टोपीदार कारतूसी बंदूकें भी प्रदर्शित हैं। स्थानीय जनता में 'रामचंगी' के नाम से प्रसिद्ध बंदूक लगभग 8 फुट लम्बी है। प्रदर्शित तलवारों में विशेषकर फारसी, अरबी, गुजराती, धूप, खुरासानी, करणसाही, हकीमसाही, किर्च आदि हैं। कोफ्त तथा तहनिशा नाम की तलवारें भी दृष्टव्य हैं। महाराजा अनूपसिंह (ई.1669-98) द्वारा ई.1678 में आदूनी (दक्षिण भारत) की लूट में प्राप्त एक तलवार की मूंठ सर्प, मयूर, सिंह और हाथी आदि पशुओं की आकृति से बनी है। खांडा तलवार की ब्लेड पर हनुमान, भैरव, गणेश, दुर्गा आदि देवी-देवताओं की आकृतियां उत्कीर्ण हैं। कुछ तलवारों की ब्लेड पर शिकार आदि का अंकन किया गया है। धार्मिक कार्यों में प्रयोग ली जाने वाली तलवारें और राठौड़ कुशलसिंह की वि. सं. 1799 की लेखयुक्त तलवार महत्वपूर्ण है। कटार, पेशकब्ज, खंजर, कमान, जांभिया, छुरी, गदा, तबाल, फरसी, भाले, जगनोल हिरनसिंही आदि भी विशेष रूप से प्रदर्शित हैं। महाराणा गंगासिंह (ई.1888-1943) की सेवाओं के सम्मानार्थ भारतीय सेना के ब्रिटिश मुख्य सेनापति द्वारा प्रदत्त तोप भी शस्त्र दीर्घा की शोभा बढ़ा रही है।

प्रतिमा दीर्घा



प्रतिमा दीर्घा में हड़प्पा सभ्यता के काल से लेकर, मौर्यकाल, शुंगकाल एवं गुप्त काल के आरम्भिक काल की मृण्मय मूर्तियों का अमूल्य भण्डार उपलब्ध है। यह सामग्री भारत के प्राचीन इतिहास के निर्माण की दृष्टि से महत्वपूर्ण है। रंगमहल से प्राप्त एकमुखी शिवलिंग, उमा-माहेश्वर, दानलीला, चक्रपुरुष, अजैकपाद, गोवर्धनधारी कृष्ण, पीर सुल्तान की पेड़ी से अप्सरा, बड़ोपल से पुजारिन, प्रेमदृश्य, चिन्तामग्न स्त्री आदि मृण्मय मूर्तियां आरंभिक गुप्तकालीन सामाजिक एवं धार्मिक जानकारी देने के साथ-साथ इस क्षेत्र में मूर्तिकला के विकास की प्राचीनता पर प्रकाश डालती हैं।



मुण्डा से प्राप्त गुप्तकालीन मिट्टी का शेर

बीकानेर संग्रहालय में राजस्थान से प्राप्त कुषाण काल की कुछ मूर्तियाँ प्रदर्शित की गई हैं, जिनमें एक स्त्री का केवल उर्ध्व भाग ही मिला है, जिसके दाहिने हाथ में दर्पण है। जैन सरस्वती (ईसा की 10वीं शती), उमा माहेश्वर (ईसा की 13वीं शती), नर्तन–गायन मुद्रा में स्त्री–पुरुष प्रतिमाएँ (रतनगढ़ 12वीं शती) तथा लक्ष्मीनारायण (झज्जू 16वीं शती) उल्लेखनीय प्रस्तर प्रतिमाएं हैं।



शुंग–कुषाण कालीन टैराकोटा प्रतिमा, रैढ़, मुकुटधारी भूदेवी के एक हाथ में मछलियां हैं तथा दूसरा हाथ मानव के सिर पर है

रंगमहल, बड़ोपल, मुण्डा तथा पीर सुल्तान की थेड़ी से प्राप्त गुप्तकालीन फलक, इटालियन विद्वान डॉ. एल. पी. टैस्सीटेरी ने ढूंढे थे। मिट्टी से बनी सामग्री आग में अच्छी तरह पकाई गई है। इन फलकों पर गांधार एवं मथुरा की कला का सम्मिश्रण हुआ है। ये ईसा की चौथी शताब्दी अर्थात् गुप्तकाल में बनाए गए थे तथा स्थानीय ईंटों से निर्मित मंदिरों के बाह्य भागों पर जड़े गए थे।

रंगममहल से प्राप्त गोवर्धन फलक भारतीय शिल्प की अनुपम थाती है। यहाँ सरस्वती–दृषद्वती की संयुक्त धारा बहती थी। कृष्ण की क्रीड़ास्थली मथुरा से भी अब तक ऐसा गोवर्धनधारण फलक प्रकाश में नहीं आया है। इस फलक में कृष्ण को गांधार कला में बनाया गया है तथा कृष्ण को मूंछों सहित दर्शाया गया है।

रंगमहल से प्राप्त मिट्टी के बने इस फलक पर कृष्ण के गले में ग्रैवेयक मथुरा–कला की द्योतक है और हृष्ट–पुष्ट कृष्ण की युवक के रूप में प्रस्तुति की गई है। इसी प्रकार बाललीला विषयक फलक लकुटधारी कृष्ण में भगवान एक गोपी से अठखेली करते हुए दर्शाए गए हैं। गोपी के सिर पर दूध की मटकी रखी है। गोपी की वेशभूषा 'रोमन' प्रतीत होती है। उसके सिर पर ओढ़नी एवं अधोवस्त्र के रूप में स्कर्ट (घाघरी) आकर्षक ढंग से प्रदर्शित की गई है। बीकानेर संग्रहालय के अन्य समकालीन मृण्मय फलक और भी रोचक हैं।



उमा–महेश्वर- टैराकोटा, रंगमहल, गुप्तकाल, चौथी शती ईस्वी, पार्वती ने गांधार शैली का लहंगा पहना है, शिव के हाथों में सूर्य-चंद्र हैं

शिव–पार्वती संदर्भ में शिव को त्रिमुखी दर्शाकर हाथों में सूर्य एवं चन्द्र को प्रदर्शित करना अध्यात्म की दृष्टि से महत्वपूर्ण है और कृष्णकालीन मथुरा कला के प्रभाव का परिचायक है। यहाँ योगी शिव की अर्द्धांगिनी पार्वती ने गांधार शैली का लहंगा पहन रखा है जिसका प्रचलन आज भी राजस्थान में सर्वत्र दिखाई देता है। रंगमहल के अन्य अद्वितीय फलकों में 'स्वतंत्र चक्र पुरुष' एवं 'एकमुख शिवलिंग उल्लेखनीय हैं। इसके अतिरिक्त 'अजैकपाद अभिप्राय' विषयक फलक तो भारतीय शिल्प में अन्यत्र उपलब्ध ही नहीं है। यहाँ स्थानीक अजमुखी देव को एकपाद और वह भी हाथी के पैर वाला दर्शाया गया है। वैदिक साहित्य में रुद्रों के विवरण में ऐसा ही उल्लेख किया गया है। बीकानेर संग्रहालय के ये गुप्तकालीन मृण्मय फलक भारतीय शिल्प की

अनुपम निधि हैं।

अमरसर ग्राम से प्राप्त धातु प्रतिमाओं से ज्ञात होता है कि मध्यकाल में बीकानेर क्षेत्र धातु–मूर्ति निर्माण कला में भी समृद्ध था। ये मूर्तियां 9वीं से 11वीं शताब्दी ईस्वी की हैं तथा इनमें से कुछ मूर्तियों पर कुटिल लिपि में लेख उत्कीर्ण हैं। नागौर जिले के गौराऊ नामक ग्राम से चौहान कालीन जैन धातु प्रतिमाएँ प्राप्त हुई हैं, वे भी इसी संग्रहालय में रखी गई हैं। बीकानेर क्षेत्र के पल्लू नामक स्थान से प्राप्त प्रसिद्ध जैन सरस्वती की दो संगमरमर प्रतिमाएं मूर्तिकला की सर्वोत्तम कृतियाँ हैं।



अजैकपाद (एक पैर का बकरा)- टैराकोटा, रंगमहल, गुप्तकाल, चौथी शताब्दी ईस्वी

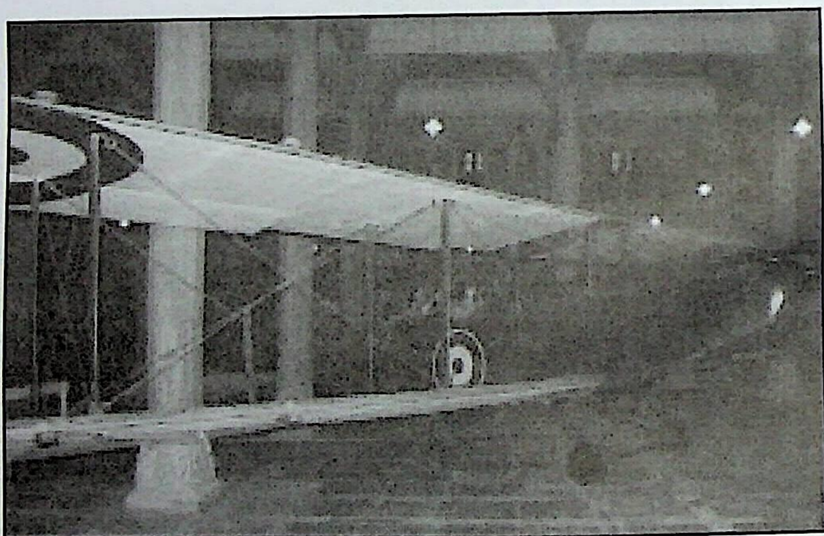
इनमें से एक प्रतिमा बीकानेर के इस संग्रहालय में तथा दूसरी प्रतिमा राष्ट्रीय संग्रहालय दिल्ली में रखी गई है, जो कुछ वर्ष पूर्व लंदन में एक प्रदर्शनी में भी भेजी गई थी।

बीकानेर राज्य के कालीबंगा, पीलीबंगा, दुलमाणी, भद्रकाली, भंवर, बड़ोपल, मानक और रंगमहल से प्राप्त प्रागैतिहासिक काल के विभिन्न प्रकार के आभूषण जैसे कंगन, अंगूठी, कान के गहने, मनके आदि मिट्टी और चर्ट के बने खेलने के पासे, मिट्टी के पशु–पक्षी और मानवाकृतियां एवं सादे तथा चित्रित मृण्मय पात्र आदि भी इस दीर्घा में प्रदर्शित हैं। शुक्रवार को संग्रहालय बंद रहता है।



अध्याय - 56

करणी संग्रहालय, बीकानेर



करणी संग्रहालय बीकानेर के ऐतिहासिक जूनागढ़ किले के गंगानिवास महल में स्थित है। बीकानेर के शासकों के जीवनवृत्त से जुड़ी घटनाओं, राठौड़ राजवंश के राज्यचिह्न तथा प्राचीन अस्त्र-शस्त्रों के संग्रह की दृष्टि से करणी म्यूजियम का महत्वपूर्ण स्थान है। इस संग्रहालय में महाराजा गंगासिंह (ई.1887-1943) द्वारा देश-विदेश से लाई गई अनुपम वस्तुओं का संग्रह है। संग्रहालय में कन्नौज नरेश जयचंद द्वारा ई.1212 में बनवाए गए चंदन की लकड़ी का एक सिंहासन प्रदर्शित किया गया है। इस सिंहासन को राव बीका ई.1489 में जोधपुर से बीकानेर लाया था। चंदन के इस ऐतिहासिक सिंहासन के साथ ही राव बीका तथा उसके बाद के बीकानेर नरेशों के लिए दरबार में लगाई जाने वाली चांदनी भी प्रदर्शित की गई है। इस चांदनी में बीकानेर के राज्य चिह्न के साथ ही राव बीका एवं उसके बाद के 22 महाराजाओं के शासन को सोने एवं चांदी के बारीक कसीदे से दर्शाया गया है। संग्रहालय में राव बीका द्वारा बीकानेर की स्थापना के समय लायी गई छोटी-छोटी वस्तुएं भी प्रदर्शित हैं।

करणी म्यूजियम में संग्रहित अस्त्र-शस्त्रों में विभिन्न प्रकार की तलवारें, छुरियां, बिछुआ, गुर्ज, गेड़िया, तबल, फरसी, ढाल, जिरह बख्तर आदि उल्लेखनीय हैं। महाराजा अनूपसिंह (ई.1669-98) एवं गंगासिंह (ई.1887-1943) की विभिन्न प्रकार की लेखयुक्त बंदूकें, महाराजा अनूपसिंह द्वारा युद्ध के समय पहना जाने वाला कवच,

जिरहबख्तर, टोप, युद्ध में काम आने वाली ढालें, कटारें, हिरणसिंघा अंकुश, बुम्दा एवं कुल्हाड़िया भी संग्रहालय में प्रदर्शित किए गए हैं। युद्ध के समय बजाए जाने वाले ढोल एवं नगाड़े भी रखे हुए हैं। महाराजा गंगासिंह के समय बीकानेर के सैनिकों द्वारा प्रथम एवं द्वितीय विश्वयुद्धों में प्रयुक्त बंदूकों एवं मशीनगनों को भी संजोकर रखा गया है। म्यूजियम का एक कक्ष महाराजा सार्दुलसिंह स्मृति कक्ष के रूप में रखा गया है, जिसमें चित्रों के माध्यम से सार्दुलसिंह के जीवन की झांकियां दर्शाई गई हैं। इस कक्ष में युद्ध के समय के विभिन्न चित्र प्रदर्शित किए गए हैं। महाराजा गंगासिंह एवं सार्दुलसिंह (ई. 1943-49) द्वारा शिकार में मारे गए कुछ जानवरों को भी मसाला भर कर रखा गया है। शिकार के समय के उनके चित्र भी संग्रहालय की अमूल्य निधि हैं।

संग्रहालय में प्रथम विश्व युद्ध के समय ब्रिटिश सरकार द्वारा बीकानेर महाराजा को प्रदत्त हवाई जहाज, दर्शकों को अचंभित करता है। विश्व में इस तरह के बहुत कम हवाई जहाज बचे हैं। ये सभी हवाई जहाज अब संसार में विभिन्न स्थानों पर प्रदर्शनीय वस्तु के रूप में प्रयुक्त होते हैं। करणी म्यूजियम की बहुमूल्य वस्तुओं में महाराजा गंगासिंह द्वारा ई.1914 में बेल्जियम से लाया गया दर्पण उल्लेखनीय है। इंग्लैण्ड से लाई गई विभिन्न वस्तुएं भी रखी हुई हैं। महाराजा गंगासिंह के जीवन सम्बन्धी विभिन्न वस्तुओं का संग्रह भी करणी म्यूजियम में अलग से किया हुआ है। इन वस्तुओं में जोधपुर के नरसिंह लाल द्वारा महाराजा गंगासिंह के जन्मदिन पर भेजा गया शुभकामना संदेश उल्लेखनीय है। इस कक्ष में गंगासिंह द्वारा बनवाए गए लालगढ़ पैलेस का लकड़ी का मॉडल, पिस्तौल एवं अन्य छोटे हथियारों के लिए बनवाए गए विभिन्न प्रकार के आकर्षक एवं कलात्मक बक्से, डायनिंग टेबल, हाथघड़ी, पढने का लैम्प, सिगरेट केस विभिन्न प्रकार के मेडल्स, मेज, कुर्सी, चश्मा, गिलास, कप-प्लेट, कैमरा, सेना की वर्दी, भारतीय एवं पाश्चात्य कलाकारों द्वारा वाटर कलर से बनाए गए बीकानेर के पर्यटन स्थलों तथा प्राकृतिक दृश्यों के चित्र और बीकानेर लघु चित्रशैली के आकर्षक चित्र भी प्रदर्शित हैं।



अध्याय - 57

सार्दुल संग्रहालय, बीकानेर



सार्दुल संग्रहालय बीकानेर के लालगढ़ पैलेस के एक भाग में स्थित है। इस संग्रहालय में प्राचीन अस्त्र-शस्त्र, राजसी पोशाकें तथा देशी-विदेशी सिक्कों के साथ-साथ कला, संस्कृति और इतिहास से सम्बन्धित विभिन्न प्राचीन एवं दुर्लभ वस्तुओं का संग्रह है।

बीकानेर नरेश सार्दुलसिंह के जीवनकाल में लालगढ़ पैलेस का एक हिस्सा सार्दुल-महल कहलाता था। बाद में उसी हिस्से में सार्दुल संग्रहालय बना दिया गया। लालगढ़ पैलेस के ऊपरी हिस्से में बने इस संग्रहालय की सीढियां चढ़ते ही एक के बाद एक क्रम से लगाए गए छायाचित्र दिखाई देते हैं। सीढ़ियों के ठीक ऊपर कैमरे से खींचा गया बीकानेर नरेश सरदारसिंह का छायाचित्र लगा हुआ है। कहा जाता है कि राजस्थान में कैमरे से लिया गया यह पहला चित्र है।

सार्दुल म्यूजियम में प्रवेश करते ही एक तरफ बीकानेर के सभी महाराजाओं के शासनकाल, महाराजा का उसके पूर्ववर्ती महाराजा से सम्बन्ध, राज्यारोहण की तिथि आदि की विस्तृत सूची लगी हुई है। दूसरी तरफ बीकानेर नरेशों की मिनिएचर पेन्टिंग्स भी लगी हुई हैं। बीकानेर रियासत के जनजीवन, दर्शनीय स्थल, सेठ-सेठानियों, कलाकारों आदि के चित्र भी प्रदर्शित हैं। संग्रहालय में बीकानेर स्टेट के सिक्कों के

साथ-साथ महाराजा करणीसिंह द्वारा एकत्र किए गए विदेशी सिक्कों का भी अनुपम संग्रह प्रदर्शित है। इनमें बर्मा, फ्रांस, बैल्जियम, कनाडा, टर्की, जापान, चीन, इटली आदि देशों की मुद्राएं सम्मिलित हैं। बीकानेर स्टेट के राजस्व एवं जुडीशियल स्टाम्प, स्टेट के नियम कानूनों की प्रतियां, बीकानेर स्टेट द्वारा दूसरे स्टेटों को लिखे गए महत्वपूर्ण पत्र एवं चित्र भी संग्रहालय में अलग से सुरक्षित रखे हुए हैं। बीकानेर महाराजा तथा उनके दरबारियों के बैठने के क्रम एवं व्यवस्था को दर्शाने वाले दुर्लभ रेखाचित्र भी संग्रहालय की अमूल्य निधि हैं।

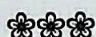
संग्रहालय में, बीकानेर की जेलों के कैदियों द्वारा निर्मित सुन्दर गलीचे भी प्रदर्शित किए गए हैं। गलीचों में धागों से सुन्दर एवं कलात्मक चित्र बुने गए हैं। राजस्व वसूल करने के लिए ऊँट पर रखकर ले जाया जाने वाला एक क्विंटल वजनी पीतल का टोकणा भी प्रदर्शित किया गया है। एक कक्ष में पुरानी फिल्मों का संग्रहालय अलग से बना हुआ है, जिसमें तत्कालीन महाराजाओं द्वारा उस समय देखी जाने वाली फिल्मों को सुरक्षित रखा हुआ है। इसी कक्ष में 35 एम.एम. का साउन्ड फिल्म प्रोजेक्टर भी रखा हुआ है। ई.1921 में न्यूयार्क, अमेरिका में बने इस फिल्म प्रोजेक्टर का उपयोग तत्कालीन शासकों द्वारा अपने निजी उपयोग के लिए किया जाता था। कक्ष से लगती हुई गैलरी में दुल्हन को ले जाने हेतु प्रयुक्त होने वाली खूबसूरत डोली बीकानेर का स्टेट कोच प्रदर्शित है। स्टेट कोच के घोड़े को बांधी जाने वाली लगाम, गद्दी, कोचवान की पोशाक तथा लैस आदि भी प्रदर्शित की गई है।

संग्रहालय में सुप्रसिद्ध चित्रकार ए. एच. मूलर तथा महाराजा करणीसिंह द्वारा बनाए गए चित्र एवं महाराजा करणीसिंह द्वारा उपयोग में लिए जाने वाले वाटर कलर, ब्रश, कैमरे से लिए गए बीकानेर के दर्शनीय स्थलों के चित्र, गोल्फ स्टिक, मेजर जनरल की वर्दी, कैमरे, पुस्तकें, पत्र-पत्रिकाएं तथा करणीसिंह एवं उसकी बहन द्वारा बाल्यकाल में उपयोग में लिए गए खिलौने भी इस कक्ष में संजोकर रखे हुए हैं।

महाराजा गंगासिंह (ई.1887-1943) एवं महाराजा सार्दुलसिंह (ई.1943-49) द्वारा शिकार में मारे गए विभिन्न जानवरों के चित्र भी प्रदर्शित किए गए हैं। शेर, बाघ आदि जंगली जानवरों के निर्जीव शरीरों में मसाले भरकर उन्हें शोकेस में सुरक्षित रखा गया है। इस कक्ष की उल्लेखनीय वस्तुओं में विभिन्न प्रकार के हवाई जहाजों के मॉडल, महाराजाओं द्वारा प्रयुक्त टेलीफोन, रिकॉर्ड प्लेयर तथा रेलवे स्टेशन का मॉडल आदि रखे गए हैं।

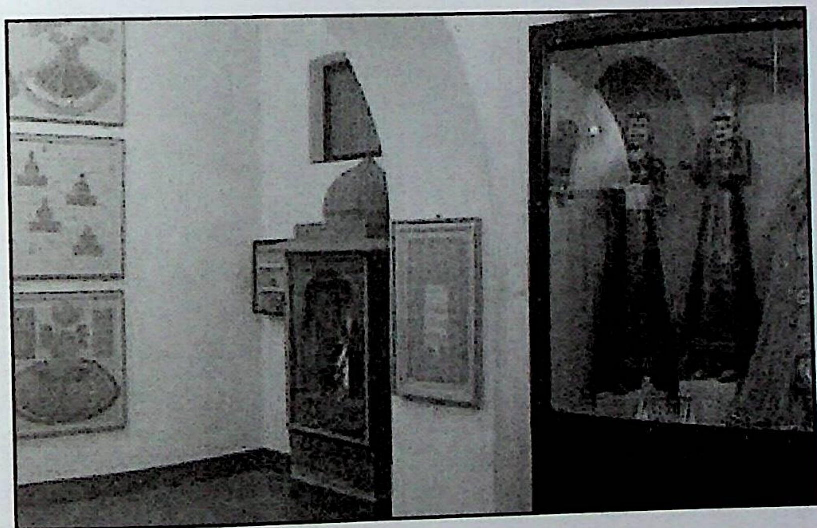
सार्दुल म्यूजियम में बनी 'प्रिंसेज गैलरी' में बीकानेर के राजकुमारों एवं राजकुमारियों के चित्रों के साथ ही अन्य रियासतों के राजकुमारों एवं राजकुमारियों के हस्ताक्षर सहित चित्र प्रदर्शित हैं। महाराजा गंगासिंह के यूरोपियन मित्रों के साथ चित्र, महाराजा की चांदी की कुर्सी, स्टेट में आने वाले मेहमानों के लिए रेलवे स्टेशन पर लगने

वाली चांदनी और जाजम, हिन्दी, संस्कृत एवं राजस्थानी की दुर्लभ पुस्तकों का संग्रह भी है। संग्रहालय में अनूप संस्कृत पुस्तकालय के एक भाग के रूप में महाराजा अनूपसिंह (ई.1669–98) द्वारा दक्षिण से लायी गई दुर्लभ संस्कृत पुस्तकों को संजोकर रखा हुआ है। संग्रहालय में संस्कृत के 6 हजार 682 ग्रंथ, राजस्थानी की हस्तलिखित 359 पांडुलिपियां एवं हिन्दी की 554 पांडुलिपियां संग्रहित हैं। इस लाइब्रेरी में हिन्दी एवं अंग्रेजी की लगभग 12 हजार पुस्तकों का अद्भुत संग्रह उपलब्ध है।

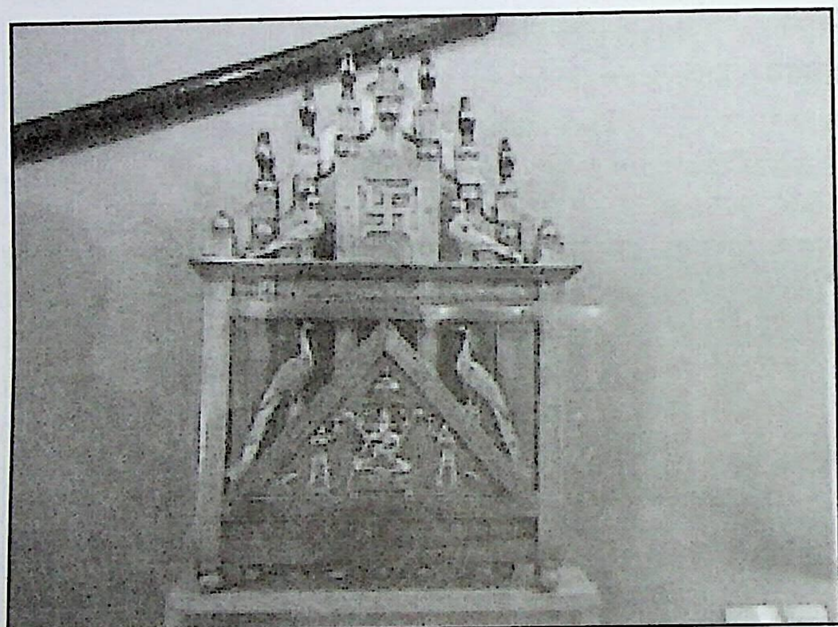


अध्याय - 58

प्राचीना, बीकानेर



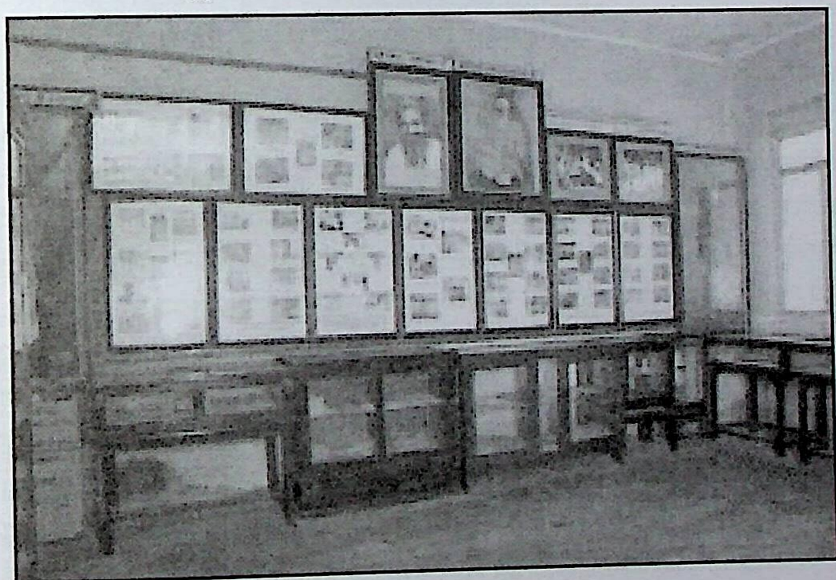
'प्राचीना' संग्रहालय बीकानेर की स्थापना बीकानेर की राजकुमारी ने सिद्धि कुमारी ने ई.2000 में जूनागढ़ परिसर में की। इस संग्रहालय की स्थापना बीकानेर की कलाओं के इतिहास को संजोने एवं दर्शकों तक पहुंचाने के उद्देश्य से की गई। कला और शिल्प में रुचि रखने वालों के लिए यह संग्रहालय बहुत महत्वपूर्ण है। विभिन्न स्थलों से आने वाले कलाकार यहाँ आकर अपनी कला और कौशल का प्रदर्शन करते हैं। प्राचीना संग्रहालय में ऐसी कई वस्तुएं हैं, जो इस देश की प्राचीन परंपराओं की याद दिलाती हैं। प्राचीन संग्रहालय में प्रदर्शित वस्तुओं में शाही दौर में पहने जाने वाले परिधान सबसे लोकप्रिय हैं। संग्रहालय की अन्य कीमती संपत्ति में कई सजावटी सामान और यूरोपीय स्टाइल के कट ग्लास, वाइन ग्लास, क्रॉकरी और कटलरी हैं। लकड़ी से बना कुछ फर्नीचर भी प्रदर्शित किया गया है। इस फर्नीचर में लकड़ी पर बहुत बारीक डिजाइन की नक्काशी की गई है। दर्शकों को भारत की हस्तकलाओं का परिचय देने वाले कुछ कंबल और कालीन भी प्रदर्शित किए गए हैं। इस संग्रहालय में प्रदर्शित कुछ चित्र भी विशेष आकर्षणों में से हैं।



❀❀❀

अध्याय - 59

सर छोटूराम स्मारक संग्रहालय, संगरिया



सर छोटूराम स्मारक संग्रहालय हनुमानगढ़ जिले के संगरिया नामक कस्बे में स्थित है। इसकी स्थापना स्वामी केशवानन्द द्वारा की गई थी। वे बचपन में घर छोड़कर साधु बन गए थे। ई.1932 में वे संगरिया आए तथा विद्यार्थियों के लिए काम करने लगे। ई. 1938 में स्वामीजी को कहीं से पत्थर की कुछ मूर्तियां मिलीं। उन्हें मूर्तियों के महत्व की जानकारी नहीं थी। फिर भी उन्होंने उन मूर्तियों को अपने विद्यालय के छात्रावास में रखवा दिया। छात्र उन प्रतिमाओं के साथ छेड़छाड़ करने लगे तो स्वामीजी ने उन्हें एक कमरे में रखवा दिया। उन मूर्तियों को देखने के लिए लोग उस कमरे में जाने लगे। इसी से स्वामीजी को प्रेरणा मिली और उन्होंने एक संग्रहालय की स्थापना का काम आरम्भ किया। स्वामीजी जहाँ भी जाते, मूर्तियाँ, चित्र, सिक्के, वस्त्र और कलात्मक सामग्री एकत्रित कर लेते। कुछ ही वर्षों में संग्रहालय बनाने योग्य विपुल सामग्री एकत्रित हो गई।

संग्रहालय की सामग्री जुटाने के लिए स्वामीजी ने एशिया के कई देशों का भ्रमण किया। बीकानेर, अलवर एवं भरतपुर के महाराजाओं, कलाप्रेमियों, प्रशंसकों एवं जनसाधारण ने अपने निजी संग्रह से उन्हें अनेक दुर्लभ वस्तुएं एवं कलाकृतियां भेंट कीं। स्वामीजी ने विशाल विद्यालय भवन की दूसरी मंजिल पर संग्रहालय के लिए कई कमरों

और दीर्घाओं का निर्माण करवाया। संग्रहालय के ऊपर की मंजिल पर पुस्तकालय भी स्थापित किया गया। कुछ समय बाद संग्रहालय के लिए स्कूल भवन से पृथक् नया भवन बनाया गया। यह भवन एक पार्क के बीच स्थित है। मुख्य द्वार के निकट महारानी लक्ष्मीबाई की विशाल प्रतिमा है। इसके निकट स्वामी केशवानन्द का स्मृति मंदिर स्थापित है। स्वतंत्रता से पूर्व के संयुक्त पंजाब के किसान नेता सर छोटूराम के संगरिया आगमन के उपलक्ष्य में इस संग्रहालय का नामकरण 'सर छोटूराम स्मारक संग्रहालय' संगरिया कर दिया गया।

इस संग्रहालय में 4 विशाल दीर्घाओं एवं 6 बड़े कमरों में इतिहास, पुरातत्व, मूर्तिकला, चित्रकला, हस्तकला एवं लोक संस्कृति से सम्बन्धित बहुमूल्य सामग्री प्रदर्शित की गई है। संग्रहालय में विदेशों से सम्बन्धित सामग्री भी है। संग्रहालय में भारतीय ग्रामीण जनजीवन में प्रयुक्त होने वाली वस्तुओं से लेकर राजमहलों में प्रयुक्त होने वाली सामग्री भी प्रदर्शित की गई है। हजारों साल पहले की सभ्यताओं के अवशेष, मूर्तियां, सिक्के, बर्तन, प्राचीन एवं आधुनिक चित्र भी संग्रहित किए गए हैं। स्वतंत्रता सेनानी स्वामी केशवानंद के हृदय में शहीदों के लिए विशेष स्थान था। उन्होंने स्वतंत्रता के लिए संघर्ष में अपना सर्वस्व न्यौछावर करने वाले वीरों के चित्र संग्रहित करवाये और उन्हें संग्रहालय में एक विशाल कक्ष में प्रदर्शित करवाया। इसे शहीद कक्ष कहा जाता है। संग्रहालय की सामग्री को कला दीर्घा, लघुकला दीर्घा, पशुजीवन शास्त्र कक्ष, बुद्ध कक्ष, सामुद्रिक सामग्री कक्ष, संस्कृति कक्ष, शस्त्र दीर्घा, पुरातत्व कक्ष एवं स्वामी केशवानंद स्मृति कक्ष में प्रदर्शित किया गया है।

संग्रहालय में विभिन्न काल खण्डों की मिट्टी, धातु, पत्थर एवं काष्ठ की प्राचीन मूर्तियां, पुराने सिक्के, शिलालेख, ताम्रपत्र, शस्त्र, वस्त्र, दुर्लभ ताम्रचित्र तथा अन्य ऐतिहासिक सामग्री प्रदर्शित है। संग्रहालय में गुप्तकालीन, पूर्व मध्यकालीन एवं उत्तर मध्य कालीन युग की प्रस्तर कला के अनेक उत्कृष्ट नमूने एकत्रित किए गए हैं। गुप्तकालीन प्रतिमाओं में गज, भगवान बुद्ध की चरण-चौकी, ऋषिमूर्ति, देवमूर्ति तथा विष्णुमूर्ति प्रमुख हैं। ई.600 से ई.900 तक के समय की प्रतिमाओं में एक स्त्री-मूर्ति भी है। यह सारनाथ से प्राप्त किसी देवी अथवा राजमहर्षि की मूर्ति का मस्तक भाग है। देवी के सिर पर एक बड़ा मुकुट है, जिससे अनुमान लगाया जाता है कि यह देवी पार्वती की प्रतिमा का मस्तक भाग है। संग्रहालय में एक भैरव मूर्ति भी है। राजस्थान से प्राप्त इस प्रतिमा के सिर पर जटा-मुकुट पर चन्द्र स्पष्ट दिखाई देता है। ई.1000 से 1200 के काल की दो दर्जन से अधिक प्रस्तर मूर्तियां भी रखी हैं, इनमें हनुमानगढ़ जिले के पल्लू से प्राप्त जैन प्रतिमा के खण्ड शामिल हैं। भगवान शिव की एक मूर्ति में भगवान सहज मुद्रा में खड़े हैं। उनके गले में माला एवं हाथ में त्रिशूल है। यहाँ बहुत सी धातु मूर्तियां भी हैं। एक मूर्ति जैन तीर्थंकर शांतिनाथ की है।

धातुकक्ष में प्रतिमाओं के साथ-साथ 18वीं सदी का पीतल का एक विशाल कमण्डल दर्शनीय है। इतने विशालाकाय धातुपात्र विश्व में अन्यत्र कम ही देखने को मिलते हैं। इस कमण्डल पर भगवान विष्णु के विभिन्न अवतारों और महाभारत की घटनाओं के चित्र उत्कीर्ण हैं। चौबीस अवतारों के कमण्डल के नाम से प्रसिद्ध इस कलाकृति को देखने के लिए लोग दूर-दूर से संगरिया आते हैं। इस कमण्डल की ऊंचाई 5 फुट है। धातुकक्ष में 17वीं शताब्दी ईस्वी की नटराज की एक कांस्य प्रतिमा है। एक अन्य प्रतिमा बंगाल में प्राप्त 17वीं शताब्दी की वेणुगोपाल की है। नेपाल से प्राप्त अनेक प्रतिमाओं में से अवलोकितेश्वर की 17वीं शताब्दी की प्रतिमा तथा 18वीं शताब्दी की बुद्ध की प्रतिमा उल्लेखनीय हैं।

संग्रहालय के ताम्रकक्ष में विशिष्ट कलानिधि संग्रहित है। विशाल ताम्रपट्टों पर मुगल बादशाहों ने अपनी बेगमों के चित्र उभार कर बनवाए हैं। चित्रों की शैली ईरानी और भारतीय है। इनमें सबसे पुराना चित्र सुल्तान उमर शेख मिर्जा का है, जो तैमूर के वंश में चौथा बादशाह था तथा बाबर का पिता था। एक अन्य उल्लेखनीय ताम्रचित्र मुगल बादशाह शाहजहाँ और कदीसा बेगम का है। चित्र में शाहजहाँ अपनी बेगम के हाथ में फल लिए बेगम के कंधे पर हाथ रखे खड़ा है और बेगम तनिक तिरछी खड़ी है। अन्य दुर्लभ ताम्रचित्रों में बेगम के अख्तर जमानी, ईरान के बादशाह वीर रुस्तम, जहांगीर एवं नूरजहाँ तथा जहांदार शाह आदि के चित्र उल्लेखनीय हैं। हाथी दांत के भारतीय शिल्प की वस्तुएं, बीदर के धातुपत्र, चंदन काष्ठ एवं सींग पर कारीगरी तथा जयपुर की मीनाकारी के अनेक नमूने दर्शकों को अपनी ओर आकर्षित करते हैं।

संग्रहालय में शस्त्रों के लिए अगल कक्ष बना है। इसमें हिन्दू, सिक्ख एवं मुस्लिम हथियारों का अनूठा संकलन है। विभिन्न प्रकार की तलवारें, खंजर, कटारें, कृपाण, खाण्डे, तेगे, बरछे एवं चक्री आदि अनेक शस्त्र हैं। स्वामी केशवानंद बीकानेर, अलवर, जोधपुर आदि रियासतों से पुराने शस्त्र एकत्रित करके लाए थे। संग्रहालय के चित्र कक्ष में प्राचीन सुंदर चित्रों की भरमार है। यहाँ मुगल कलम, राजस्थानी चित्रशैली, पहाड़ी कलम, उड़ीसा की लोककला, सिक्ख तथा पिरंगी कलम सहित लगभग 230 चित्र प्रदर्शित हैं। इनमें 17वीं शती का जहांगीर का चित्र, इसी शताब्दी का शाहजहाँ का चित्र, 18वीं शताब्दी का बीकानेर नरेश अनूपसिंह (ई.1669-98) के दरबार का चित्र सम्मिलित हैं।

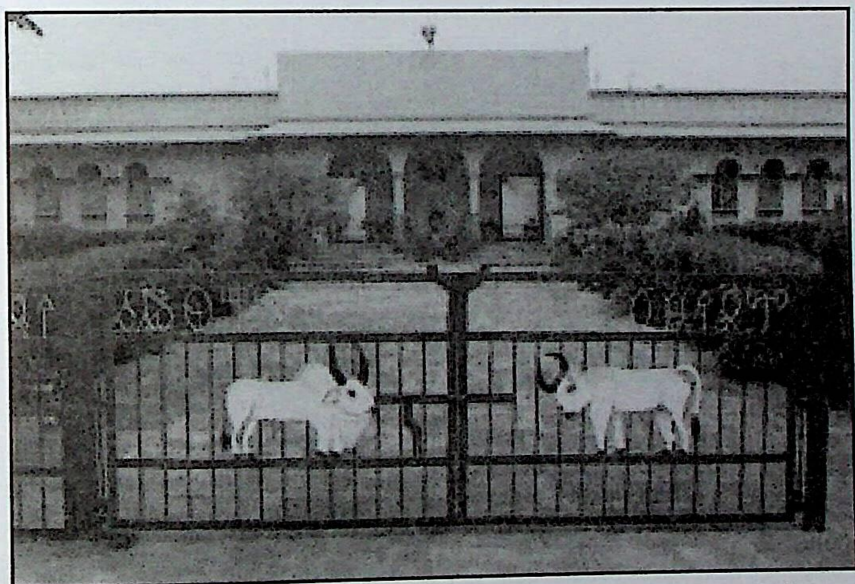
संग्रहालय में राजघाट (वाराणसी) और पल्लू (राजस्थान) से प्राप्त पुरातात्विक सामग्री भी रखी गई है। अफ्रीकी हाथी का दिखाने का बड़ा दांत और खाने का दांत (दाढ़) भी रखे हैं। पशु-अस्थियों से बनी कलाकृतियां भी रखी गई हैं। महाराजा रणजीतसिंह (ई.17792-1801) के दरबार का चित्र और चैम्बर ऑफ प्रिंसेज की 14 फरवरी 1921 की कैमरा फोटो दर्शनीय है।

इस संग्रहालय एवं पुस्तकालय को देश भर के विद्वानों और जनसाधारण के साथ-साथ, देश के कई प्रधानमंत्रियों यथा- जवाहरलाल नेहरू, लालबहादुर शास्त्री, इंदिरा गांधी, चरणसिंह सहित जगजीवनराम, विनोबा भावे, आचार्य तुलसी, चौधरी देवीलाल एवं इतिहासविद् वासुदेवशरण अग्रवाल, पुरुषोत्तमदास टंडन आदि अनेक विद्वान देख चुके हैं। संग्रहालय देखने के बाद पं. जवाहरलाल नेहरू ने अपने उद्‌बोधन में कहा था- 'स्वामी केशवानंद के निमंत्रण पर मैं संगरिया आया। शहरों में बड़े-बड़े कॉलेज, विश्वविद्यालय, संग्रहालय आदि हैं परंतु गांवों में ऐसा कुछ नहीं, इसलिए इस स्थान को देखने का इच्छुक था कि यहाँ क्या-कुछ है! जो कुछ मैंने देखा, बड़े ध्यान से देखा और पूर्णतया संतोषजनक पाया। मैं स्वामीजी को इस बात की बधाई देता हूँ कि इतने अच्छे काम आपके संगरिया में हैं और मैं आशा करता हूँ कि आप इस काम को बहुत अच्छी तरह बढ़ाएंगे।' संग्रहालय में एक रंगशाला भी बनाई गई है, जिसका उद्‌घाटन 1 अप्रेल 1959 को जवाहरलाल नेहरू ने किया था।

स्वामी केशवानंद के देहावसान के बाद उनकी स्मृति को अक्षुण्ण बनाए रखने के लिए संग्रहालय में स्वामी केशवानंद स्मृति कक्ष बनाया गया। यह कक्ष स्वामी केशवानंद द्वारा शिक्षा, समाज एवं कला के उन्नयन के लिए किए गए चालीस वर्ष के घोर परिश्रम का जीवंत दस्तावेज है। सर छोटूराम स्मारक संग्रहालय के निकट स्वामी केशवानंद स्मृति मंदिर है जो अष्टभुजाकार बना हुआ है। इसमें स्वामीजी की विशाल प्रस्तर प्रतिमा के साथ-साथ उनकी पूरी जीवनी विशाल चित्रों में अंकित है।

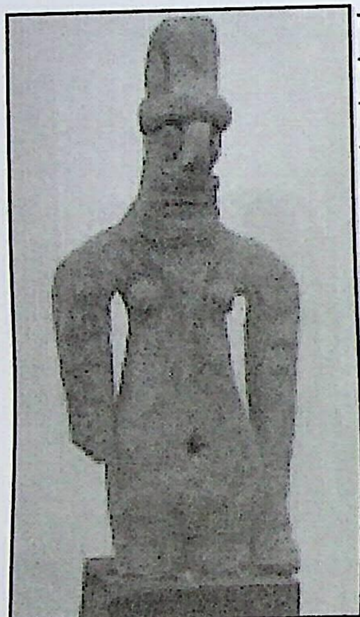
अध्याय - 60

पुरातत्व संग्रहालय, कालीबंगा



कालीबंगा का पुरातत्व संग्रहालय हनुमानगढ़ जिले के कालीबंगा कस्बे से बाहर उन थेड़ों के निकट स्थित है जहाँ से कालीबंगा की सभ्यता प्राप्त की गई थी। इसकी स्थापना भारतीय पुरातात्विक सर्वेक्षण द्वारा ई.1983 में की गई थी। सिंधु घाटी सभ्यता के हड़प्पाकालीन 30-35 थेड़, जिनमें कालीबंगा का थेड़ सबसे ऊँचा है, की खुदाई साठ के दशक में की गयी। हनुमानगढ़-सूरतगढ़ मार्ग पर स्थित पीलीबंगा से लगभग 5 किलोमीटर दूर स्थित कालीबंगा में पूर्व हड़प्पाकालीन एवं हड़प्पा कालीन सभ्यता के अवशेष प्राप्त हुए हैं। खुदाई के दौरान मिली काली चूड़ियों के टुकड़ों के कारण इस स्थान को कालीबंगा कहा जाता है। इस स्थान का पता पुरातत्व विभाग के निदेशक अमलानंद घोष ने ई.1952 में लगाया था। ई.1961-62 में बी. के. थापर, जे. वी. जोशी तथा बी. बी. लाल के निर्देशन में इस स्थल की खुदाई की गयी।

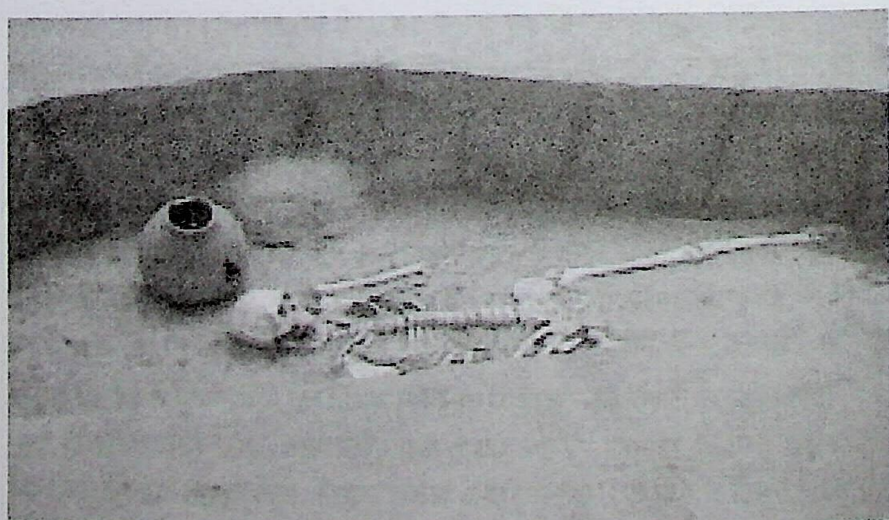
कालीबंगा के टीलों की खुदाई में दो भिन्न कालों की सभ्यता प्राप्त हुई है। पहला भाग 2400 ई.पू. से 2250 ई.पू. तक का है तथा दूसरा भाग 2200 ई.पू. से 1700 ई.पू. तक का है। यहाँ से एक दुर्ग, जुते हुए खेत, सड़कें, बस्ती, गोल कुओं, नालियों, घरों एवं धनी लोगों के आवासों के अवशेष प्राप्त हुए हैं। घरों में चूल्हों के अवशेष भी मिले हैं। कालीबंगा के लोग मिट्टी की कच्ची या पक्की ईंटों का चबूतरा बनाकर घर बनाते थे,



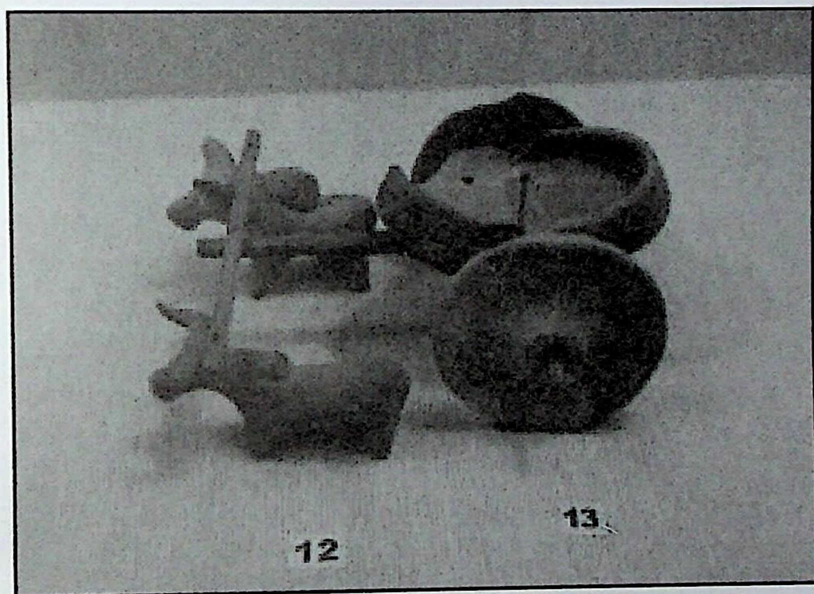
बरतनों में खाना खाने की मिट्टी की थालियां, कूण्डे, नीचे से पतले एवं ऊपर से प्यालेनुमा गिलास, लाल बर्तनों पर कलापूर्ण काले रंग की चित्रकारी, देवी की छोटी-छोटी मृदा-प्रतिमाएँ, बैल, बैलगाड़ी, गोलियां, शंख की चूड़ियां, चकमक पत्थर की छुरियां, शतरंज की गोटी तथा एक गोल, नरम पत्थर की मुद्रा आदि मिले। बर्तनों पर मछली, बत्तख, कछुआ तथा हरिण की आकृतियां बनी हैं।

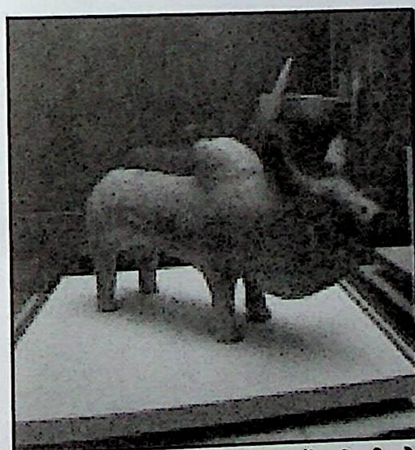
यहाँ से मिली मुहरों पर सैंधव लिपि उत्कीर्ण है, जिसे पढ़ा नहीं जा सका है। यह लिपि दाहिने से बाएं लिखी हुई है। यहाँ से मिट्टी, तांबे एवं कांच से बनी हुई सामग्री भी प्राप्त हुई है। छेद किये हुए किवाड़ एवं मुद्रा पर व्याघ्र का अंकन केवल इसी स्थल पर मिले हैं।

खुदाई में प्राप्त कुछ सामग्री इस संग्रहालय में प्रदर्शित की गई है तथा बहुत सी सामग्री राष्ट्रीय संग्रहालयों सहित अन्य संग्रहालयों को भेज दी गई है। इस संग्रहालय में तीन दीर्घाएं हैं जिनमें से पहली दीर्घा में हड़प्पा काल से पूर्व की सभ्यता में मिली वस्तुएँ संग्रहित हैं और दूसरी एवं तीसरी दीर्घा में हड़प्पा काल की सभ्यता की खुदाई में मिली वस्तुए हैं।



कालीबंगा सभ्यता से प्राप्त 5000 वर्ष पुराना नर कंकाल एवं जलपात्र





दीर्घाओं में प्रदर्शित वस्तुओं में कालीबंगा के क से ड. तक के हड़प्पा-पूर्व स्तर की हड़प्पा मुद्राएं, चूड़ियां, टेराकोटा की वस्तुएं, टेराकोटा की मूर्तियां, ईंटें, चक्की, पत्थर की गेंदें तथा प्रसिद्ध छः भवनों वाली पात्र-निर्माणशाला शामिल हैं। खुदाई के विभिन्न स्तरों के खुली संरचनाओं के चित्र भी दर्शाए गए हैं।

प्रथम शो केस में मृदभाण्ड, जालीदार गिलास, लोटे कूंडे, स्टोरेज जार, चषक तथा लाल-गुलाबी बर्तन रखे गए हैं। मिट्टी के बर्तनों के साथ, विभिन्न प्रकार के जार, ताम्बे के शस्त्र, कुल्हाड़ी, छैनी, नोक वाला बरछा और भाला भी प्रदर्शित किए गए हैं। दूसरे शो केस में टेराकोटा, पशु आकृतियां, मनुष्य आकृतियां, आग में पके हुए मिट्टी के खिलौने प्रदर्शित किए गए हैं। तीसरे शो केस में मुहरें, मुद्रा, मुहरबंदी आदि प्रदर्शित की गई हैं। चौथे शो केस में विभिन्न प्रकार के मनके प्रदर्शित किए गए हैं। ये मनके पत्थर, कांच, हड्डी, हाथीदांत, धातु तथा अर्धमूल्यवान पत्थरों से निर्मित हैं। कालीबंगा के लोगों का कलात्मक रुझान इन मनकों से समझा जा सकता है। चूड़ियां, सीप एवं हड्डियों से निर्मित अंगूठी, माला और स्वर्ण आभूषण भी प्रदर्शित किए गए हैं।



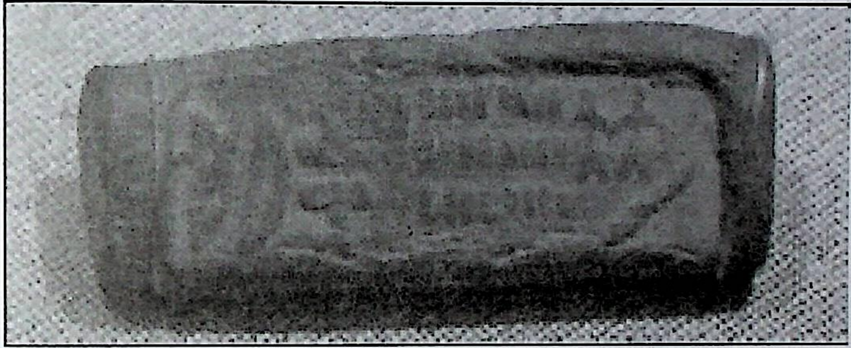
कालीबंगा के थेड़ से प्राप्त चूड़ियां

पांचवे शो केस में हड़प्पा से पहले की सभ्यता की पॉटरी प्रदर्शित की गई है। साथ ही सात प्रकार के कपड़े के नमूने रखे गए हैं। इन वस्तुओं के अध्ययन से अनुमान होता है कि ईसा के जन्म से साढ़े तीन हजार साल पहले भी भारत से कपड़ा, श्रृंगार-प्रसाधन, मनके, सोने-चांदी के आभूषण विदेशों को निर्यात किए जाते होंगे। छठे शोकेस में पत्थर से निर्मित सामग्री रखी गई है। पत्थर के विभिन्न प्रकार के बर्तनों पर कई तरह की आकृतियां उत्कीर्ण हैं। सातवें शो केस में उत्खनन से प्राप्त कच्ची ईंट, पक्की ईंट एवं टायल्स (केलू) प्रदर्शित किए गए हैं। आठवें शो केस में खेलों से सम्बन्धित सामग्री रखी है। इसमें शतरंज की गोटियां, पत्थरों से निर्मित खिलौने के आकार के प्यादे आदि सम्मिलित हैं। नौवें शो केस में बांट-बंटकरी प्रदर्शित है।

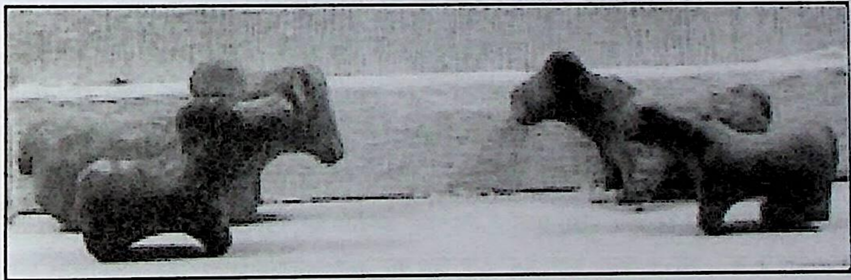
संग्रहालय में कुछ चित्र भी प्रदर्शित किए गए हैं, जिनमें कालीबंगा के उत्खनन के विभिन्न चरणों को दर्शाया गया है। यह संग्रहालय सप्ताह में छः दिन प्रातः 9.00 बजे से सायं 5.00 बजे तक खुला रहता है। शुक्रवार के दिन अवकाश रहता है।



कालीबंगा से प्राप्त मृद्भाण्ड



कालीबंगा से प्राप्त आयताकार मोहर





अध्याय - 61

नाहटा कला संग्रहालय, सरदार शहर

यह संग्रहालय चूरू जिले के सरदारशहर के विख्यात नाहटा परिवार का निजी संग्रहालय है। सरदार शहर के मध्य में घण्टाघर के निकट नाहटा हवेली स्थित है। इसी हवेली के एक कक्ष में यह छोटा सा संग्रहालय बना हुआ है। इस संग्रहालय में लगभग एक हजार कलाकृतियां एवं ऐतिहासिक सामग्री संजोई गई है। संग्रहालय का लगभग दो-तिहाई हिस्सा मालचन्द जांगिड़ और उसके परिवार के सदस्यों द्वारा बनाई गई कलाकृतियों तथा हाथीदांत की कलाकृतियों से समृद्ध है। चूरू शहर का मालचंद जांगिड़ का परिवार चंदन की लकड़ी और हाथीदांत पर बारीक काम के लिए विश्वविख्यात है। इस परिवार में स्वर्गीय मालचंद जांगिड़ ने लगभग एक सौ वर्ष पूर्व, चन्दन की लकड़ी पर नक्काशी का कार्य आरम्भ किया था। उसकी प्रथम कलाकृति चंदन की लकड़ी से बना हुआ एक कलात्मक बादाम था, जो आज भी सरदार शहर के संग्रहालय की शोभा बढ़ा रहा है। इस परिवार की कलाकृतियों की उत्कृष्टता का अनुमान इस बात से लगाया जा सकता है कि स्वर्गीय मालचंद जांगिड़ के बेटे और पोते को राष्ट्रपति द्वारा पुरस्कृत किया गया।

काष्ठकला की सूक्ष्म कृतियों में भारत का एक मानचित्र भी है, जिसमें देश के दर्शनीय स्थलों को दर्शाया गया है। लकड़ी की घड़ी में ताजमहल, करणी माता का मंदिर, लकड़ी से ही निर्मित तरबूज की फांक में पूर्व राष्ट्रपति डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन की सवारी, लकड़ी से बने विशालकाय कद्दू में महाराणा प्रताप और चित्तौड़ का विजय स्तम्भ, तलवार, आभूषण आदि नाना प्रकार की कलाकृतियां इस संग्रहालय में रखी हुई हैं। ऊँट पर सवार राजस्थानी दम्पत्ति, तलवार में शिवाजी, महाराणा प्रताप, पृथ्वीराज चौहान, राजस्थानी शाक सब्जी और भोजन, हवेलियों की बनावट, राजस्थान की संगीत परम्परा, ऊँट पर बीकानेर नरेश गंगासिंह की सवारी का दृश्य आदि अनेक कलाकृतियों को संजोया गया है।

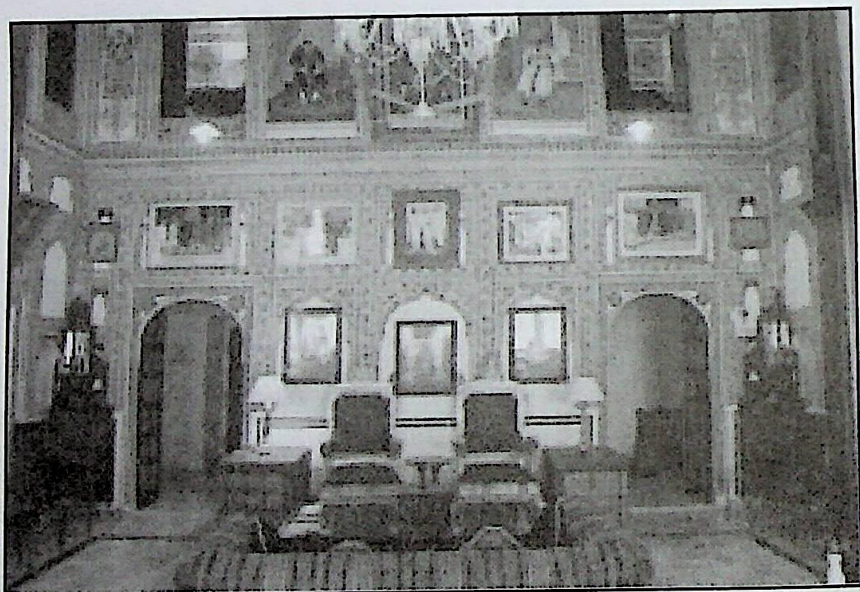
इसी कक्ष में बीकानेर के शासकों- गंगासिंह, सार्दूलसिंह और करणीसिंह के मुंह बोलते चित्र हैं। स्वर्गीय शुभकरण नाहटा एवं उनके परिजनों की तस्वीरें भी लगी हुई हैं। रानी विक्टोरिया, गांधीजी, नेहरू आदि के आकर्षक चित्र लगे हुए हैं। शारीरिक आकृति को नाना रूपों में दिखाने वाले बेल्जियम के शीशे, विदेश से लाए गए ताम्बे के कलश, चीन की कलात्मक पॉटरी, राजप्रासादों से लाई गई प्राचीन कुर्सियां, अखरोट की लकड़ी

से बनी कलात्मक गोल मेज भी संग्रहालय की शोभा बढ़ा रही हैं। शेर की एक मुखाकृति भी दर्शकों को अपनी ओर आकर्षित करती है। इस शेर का शिकार महाराजा गंगासिंह ने किया था। जैन संस्कृति एवं जैन तीर्थंकरों की झांकी भी चित्रों एवं अष्टधातु की प्रतिमाओं के माध्यम से प्रदर्शित की गई है।



अध्याय - 62

भित्तिचित्रों को ओपन आर्ट गैलरी शेखावाटी की हवेलियाँ



मण्डावा हवेली के चित्र

आम्बेर के कच्छवाहा राजकुमार शेखा (ई.1433-88) ने आम्बेर राज्य के उत्तर में काफी बड़ा रेगिस्तानी क्षेत्र अपने अधीन किया, जो शीघ्र ही उसके बेटों-पोतों ने छोटे-छोटे ठिकानों में बांट लिया। यह क्षेत्र राव शेखा के नाम पर शेखावाटी कहलाया। इन ठिकानों में बहुत से व्यापारी आकर बस गए, क्योंकि यह क्षेत्र सिल्क रूट पर स्थित था, जिससे होकर पश्चिमी देशों के बहुत से व्यापारी अपना माल लेकर भारत आते थे और भारत से नया माल खरीदकर पश्चिमी देशों के लिए विभिन्न बंदरगाहों तक ले जाते थे। शेखवाटी के सेठ इस विदेशी माल को खरीदते थे तथा उसे देश के अन्य भागों में ले जाकर बेच देते थे। इस काल में जिस प्रकार राजपूत शासक एवं ठाकुर, गढ़ अथवा दुर्ग में निवास करते थे, उसी प्रकार राजस्थान का समृद्ध श्रेष्ठि वर्ग हवेलियों में निवास करता था। ये हवेलियाँ विशाल महलों के समान होती थीं, जिनमें विलासिता के समस्त सुख-साधन उपलब्ध रहते थे। इन हवेलियों में महंगी चित्रकारी करवाई जाती थी तथा उन्हें विभिन्न प्रकार की मूर्तियों, झरोखों, कलात्मक स्थापत्य एवं गलीचों आदि से

सजाया जाता था। दीवारों, छतों एवं किवाड़ों पर सोने की कलम का काम करवाया जाता था तथा छतों और दीवारों पर सोने की मीनाकारी करवाई जाती थी।

ई.1818 में जब राजपूत रियासतें ईस्ट इण्डिया कम्पनी के साथ अधीनस्थ संधियां करने पर विवश हुईं तो ईस्ट इण्डिया कम्पनी ने पारम्परिक सिल्क रूट को बर्बाद कर दिया, क्योंकि अब कम्पनी अपने माल के अतिरिक्त और किसी व्यापारी को भारत में व्यापार नहीं करने देना चाहती थी। इसलिए शेखावाटी के सेठ अपने पारम्परिक व्यापार से हाथ धो बैठे। ई.1820 के निकट शेखावाटी के व्यापारी, अपनी हवेलियों को छोड़कर कलकत्ता, मद्रास तथा बम्बई आदि बंदरगाहों के आसपास जाकर बसने लगे, ताकि यूरोप से आने वाले ईस्ट इण्डिया कम्पनी के व्यापारिक जहाजों से सौदा खरीद कर उसे देश के अन्य हिस्सों में ले जाकर बेच सकें तथा अपना माल यूरोपीय सौदागरों को बेच सकें। इन व्यापारियों ने अपनी हवेलियों को अपने पैतृक गांवों में बने रहने दिया। अब वे शादी-विवाह, धार्मिक आयोजन एवं पारिवारिक उत्सवों में भाग लेने के लिए अपनी हवेलियों में लौट कर आते थे।

एक लोकगीत के अनुसार शेखावाटी में कभी 22 कोट्याधिपति सेठ रहते थे, जो भारत के सर्वाधिक धनी परिवार थे। इनमें अग्रवाल, मित्तल, गोयनका, सिंघानिया, खेतान, मोदी, कोठारी, मोरारका, झुंझुनवाला, पोद्दार, रुइया, बिड़ला, डालमिया, लोहिया, जालान, ओसवाल आदि प्रमुख थे। इन सेठों के अपने परिवारों के साथ कलकत्ता, बम्बई एवं मद्रास आदि स्थानों को चले जाने के कारण वर्ष के अधिकांश दिनों में ये हवेलियाँ सूनी दिखाई देने लगीं। जब इन सेठों की नई पीढ़ियां तैयार हुईं तो ये हवेलियाँ पूरी तरह से उपेक्षित होने लगीं।

शेखावाटी क्षेत्र 13,784 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में विस्तृत है, जिसमें सेठों की पुरानी हवेलियाँ आज भी दिखाई देती हैं। यद्यपि अब बहुत सी हवेलियाँ गिर गई हैं या गिरने की अवस्था तक पहुंच गई हैं तथापि बहुत सी हवेलियाँ अब भी अच्छी दशा में हैं, जिन्हें देखने के लिए विश्व भर से पर्यटक आते हैं। यही कारण है कि शेखवाटी को आज विश्व की विशालतम ओपन एयर आर्ट गैलेरी कहा जाता है।

देश की आजादी के बाद इन सेठों की नई पीढ़ियों ने इन हवेलियों को बेचना आरम्भ किया। दिल्ली से निकट होने के कारण इस क्षेत्र में पर्यटन की संभावनाएं मौजूद थीं, इसलिए बहुत सी हवेलियों में होटल खुल गए। बगड़ नामक कस्बे में सेठ पीरामल चतुर्भुज माखनिया की हवेली ई.1928 में बनी थी। सेठ पीरामल इस हवेली को छोड़कर बम्बई चला गया। दिल्ली के निकट स्थित होने के कारण शेखावाटी में सबसे पहले इसी हवेली में होटल खुला। इस हवेली की दीवारों पर उड़ती हुई परियों, देवताओं एवं देवी-देवताओं के फ्रेस्को (भित्तिचित्र) बने हुए हैं। इन भित्तिचित्रों पर अंग्रेजी चित्रकला एवं संस्कृति का प्रभाव दिखाई देता है, क्योंकि अनेक अंग्रेज परिवार ई.1803 से जयपुर

में रह रहे थे। डूंडलोद ठिकाने के बैठकखाने में डूंडलोद ठाकुर के मन-पसंद घोड़ों के चित्र बने हुए हैं।

शेखावाटी की हवेलियों के भित्तिचित्रों का निर्माण अनेक प्रकार की तकनीकों, अनेक प्रकार के रंगों, अनेक प्रकार के भावों एवं अनेक प्रकार के विषयों आदि को लेकर हुआ है। कहीं-कहीं ये पेंटिंग्स वृहद कैनवास के साथ उकेरी गई हैं तो कहीं-कहीं ये अत्यंत सूक्ष्म चित्रों एवं बेलबूटों के साथ उपस्थित हैं। इनमें जनजीवन की झांकियों से लेकर धार्मिक प्रसंग, रागमालाएं, बारहमासा, लोक विश्वास, ऐतिहासिक घटनाएं, ऐतिहासिक व्यक्तित्व, पुष्प एवं लताएं तथा प्रेमाख्यान चित्रित किए गए हैं। छतों पर रसमण्डल अर्थात् वृत्ताकार नृत्य करती हुई नृत्यांगनाएं, कृष्ण एवं गोपियों का महारास आदि का चित्रण किया गया है। प्रेमाख्यानों में ढोला-मारू का आख्यान सर्वाधिक चित्रित हुआ है। कुछ स्थानों पर बींजा-सोरठ, सस्सी-पन्नू, लैला-मजनूं एवं हीर-रांझा के प्रेमाख्यान भी चित्रित किए गए हैं।

शेखावाटी की हवेलियों के भित्तिचित्रों में प्राय: प्राकृतिक रंगों का ही प्रयोग हुआ है। सफेद रंग दर्शाने के लिए हल्का पीला रंग प्रयुक्त किया जाता था जो आम की पत्तियों पर गौमूत्र छिड़ककर बनाया जाता था। सिंदूर, सोने एवं चांदी से बने रंग केवल पूजाघरों एवं शयनागारों में प्रयुक्त होते थे। ई.1860 से लेकर ई.1914 की अवधि में बने चित्रों में जर्मनी में बने कृत्रिम रंगों का भी बहुतायत से प्रयोग हुआ है। ई.1914 में प्रथम विश्व युद्ध आरम्भ हो जाने से जर्मनी से रंग का आना बंद हो गया। इसलिए विश्वयुद्ध काल के चित्रों में ये रंग अनुपस्थित हैं।

सेठ अर्जुनदास गोयनका हवेली संग्रहालय की स्थापना डूंडलोद कस्बे में ई.1875 में बनी गोयनकाओं की हवेली में की गई है। यह 19वीं शताब्दी में सेठों की जीवनशैली



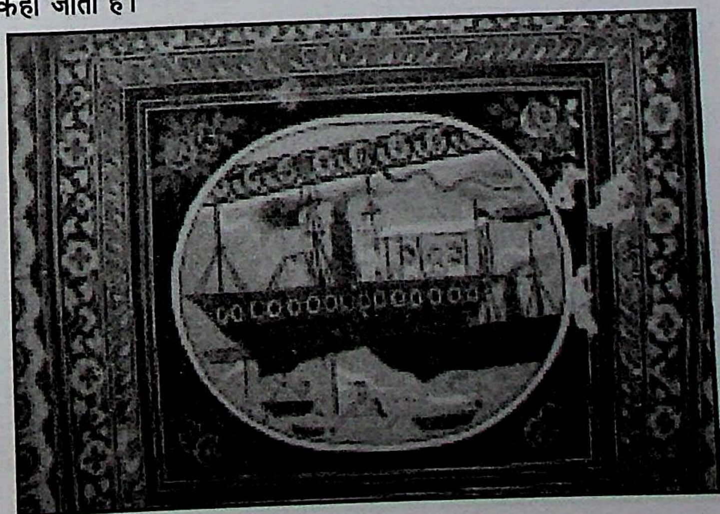
सेठ अर्जुनदास गोयनका हवेली संग्रहालय, डूंडलोद

को दर्शाने वाली प्रमुख हवेलियों में से एक है। इसमें पुरानी शैली के 20 कक्ष बने हुए हैं। इसका अलंकृत दुर्गनुमा द्वार, आगंतुक को सीधे ही मर्दाना कक्ष में ले जाता है। बाहरी लोगों के लिए यहीं तक आने की अनुमति होती थी। इस कक्ष में एक गद्दे पर चार मनुष्याकार प्रतिमाएँ प्रदर्शित की गई हैं, जिनमें से एक व्यापारी है तथा तीन ग्रहक हैं। इस बरामदे से बाहर की तरफ पंखा हिलाने वाला दिखाई दे रहे है, जो छत में लटके बड़े कपड़े के पंखे को हिलाकर हवा कर रहा है। यह व्यक्ति प्रायः गूंगा और बहरा होता था, ताकि व्यापार की गोपनीयता बनाए रखी जा सके।

इस हवेली के जनाना भाग में उस काल की स्त्रियों की दिनचर्या एवं जीवन शैली का दृश्य बनाया गया है। औरतों को चक्की, बड़े आकार के बर्तन, चकला-बेलन, मिट्टी के घड़े, पनियारा आदि का प्रयोग करते हुए दिखाया गया है।

नवलगढ़ स्थित मोरारका हवेली को 18वीं शताब्दी के उत्तरार्ध में सेठ जयराम दास मोरारका ने बनवाया था। यह लम्बे काल तक अनुपयोगी अवस्था में पड़ी रही। वर्ष 2014 में डॉ. हॉचलैण्ड के निर्देशन में इस हवेली का पुनरुद्धार करवाया गया। इस हवेली के फर्श एवं दीवारों का जीर्णोद्धार कार्य परम्परागत निर्माण सामग्री से करवाया गया, जिससे ये अपने मूल स्वरूप में दिखाई दें। इस हवेली में 700 भित्तिचित्र एवं 160 कलात्मक दरवाजों का पुनरुद्धार किया गया। नवलगढ़ में ही उत्तरा हवेली का भी जीर्णोद्धार करवाया गया। उत्तरा हवेली ई.1890 में सेठ केसरदेव मोरारका ने बनवाई थी।

सेठ आनंदी लाल पोद्दार ने ई.1902 में पोद्दार हवेली का निर्माण करवाया। इसे सेठ आनंदी लाल के पौत्र कांतिकुमार पोद्दार ने संग्रहालय तथा कला एवं सांस्कृतिक केन्द्र में बदल दिया गया है। हवेली में 11,200 वर्ग मीटर में बने 750 भित्तिचित्रों का जीर्णोद्धार करवाया गया। इसे सेठ आनंदीलाल के पुत्र रामनाथ पोद्दार के नाम पर रामनाथ पोद्दार संग्रहालय कहा जाता है।

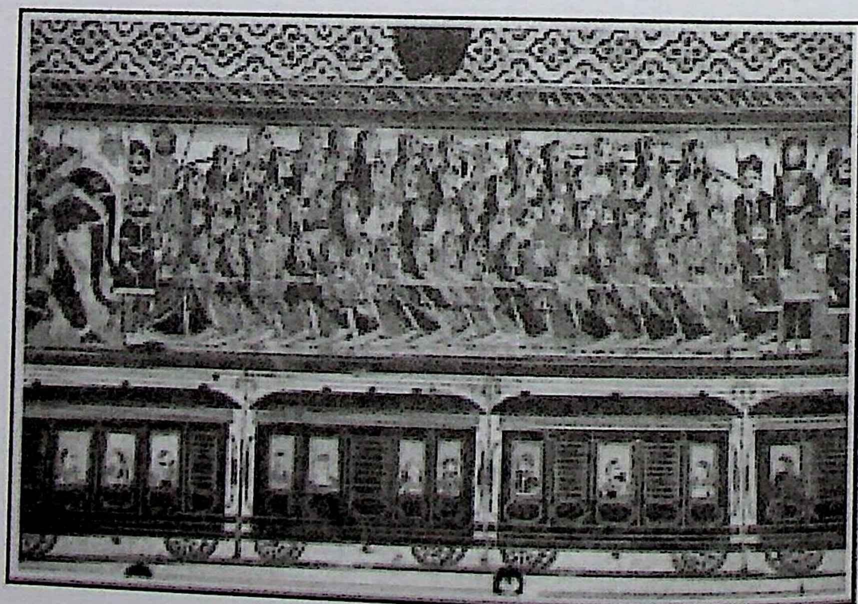


हवेली भित्तिचित्र, नवलगढ़

इस हवेली में राजस्थानी जनजीवन की कई गैलरिज बनाई गई हैं, जिनमें पारम्परिक वाद्य यंत्र, त्यौहार मनाने की विधियां, विभिन्न प्रकार के आभूषण, लघुचित्र, हस्तकलाएं, दुर्ग, महल, वधू, वेशभूषाएं, पत्थर की कलाएं, लकड़ी एवं संगमरमर की कलाकृतियां, पगड़ियां आदि भी प्रदर्शित की गई हैं।

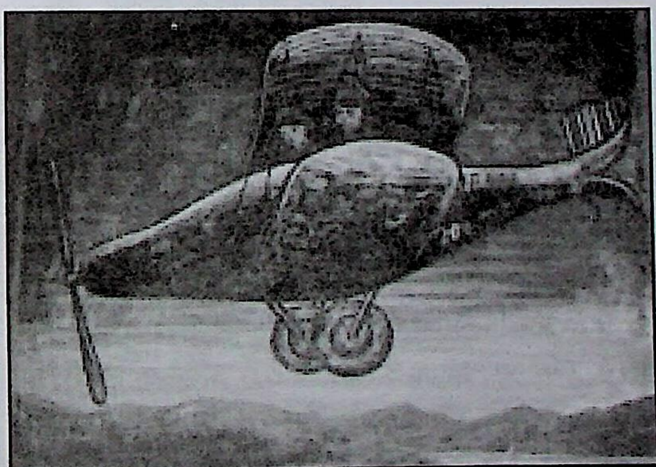
रामगढ़ सेठों का नामक कस्बे में बनी हवेलियों में शेखावाटी क्षेत्र के सर्वाधिक भित्तिचित्र बने हुए हैं। वर्तमान समय में इस कस्बे को पेंटेड टाउन (चित्रित कस्बा) के नाम से ख्याति प्राप्त हो रही है। खण्डेलवाल परिवार ने एक शताब्दी पुरानी खेमका हवेली का जीर्णोद्धार करवाकर उसे रामगढ़ फ्रेस्को होटल में बदल दिया है। पोद्दारों से विवाद हो जाने के कारण सवलाका सेठों ने रामगढ़ कस्बे के द्वार के बाहर सवालका हवेली बनाई, जो इस कस्बे की सबसे बड़ी हवेली है। इसकी छतों में फारस एवं बेल्जियम के कांच का प्रयोग करके धार्मिक प्रसंगों के चित्र बनाए गए हैं।

ई.1850 के आसपास शेखावाटी की हवेलियों के भित्तिचित्रों में अंग्रेजी सेनाओं के सैनिकों एवं उनके द्वारा प्रयुक्त होने वाली मशीनों का चित्रण होने लगा। कुछ चित्रों में उनके द्वारा प्रयुक्त पैडल स्टीमर्स तथा कोर्गो बोट्स भी दिखाए गए हैं। ई.1872 में बने एक भित्तिचित्र में रेलवे का लोकोमोटिव रेल इंजन बनाया गया है। कुछ चित्रों में रेल के डिब्बों में स्त्री-पुरुषों के प्रेम-प्रसंगों को भी चित्रित किया गया है। 19वीं शताब्दी के अंतिम वर्षों में बने कुछ चित्रों में हाथी एवं ऊँटों के साथ साइकिल, कार, उड़ने वाले गुब्बारे, वायुयान आदि बने हुए हैं। उस काल में हवाई जहाजों को राजस्थान में चीलगाड़ी कहा जाता था। इसी काल में कुछ चित्रों में यूरोपीय औरतें ग्रामोफोन पर गीत सुनती हुई दिखाई गई हैं।

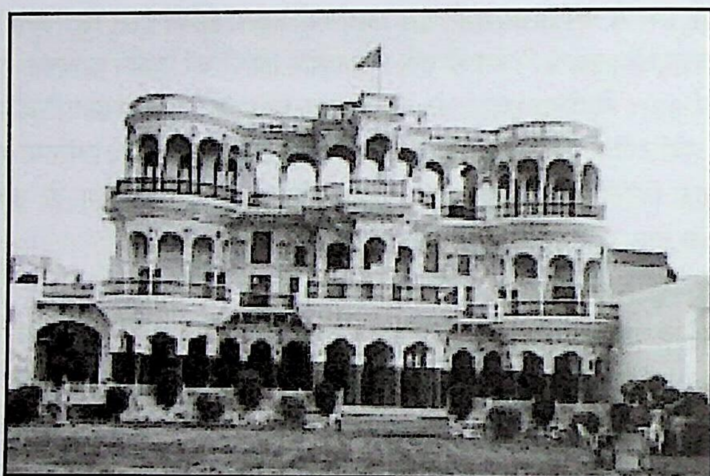


महनसर में बने नारायण निवास का निर्माण ई.1768 में हुआ था। अब यहाँ एक होटल चलता है। इसके निकट ही एक भवन सोने-चांदी की दुकान कहलाता है। इसका निर्माण ई.1846 में पोद्दार हवेली के अंतर्गत हुआ था। यह हवेली शेखवाटी की सर्वश्रेष्ठ चित्रित हवेलियों में से एक है। इसकी दीवारों पर सोने एवं चांदी की पत्तियां सजाई गई हैं। इसके भित्तिचित्रों में रामकथा, कृष्णलीला एवं भगवान विष्णु के अवतारों से सम्बन्धित दृश्य चित्रित किए गए हैं।

दिल्ली-बीकानेर मार्ग पर स्थित मण्डावा में 175 हवेलियाँ हैं। इनमें गुलाब राय लाडिया हवेली तथा मुरमुरिया हवेली में पूर्व एवं पश्चिम की भित्तिचित्र कलाओं का सुंदर संगम हुआ है। ई.1755 में मण्डावा ठाकुर ने अपने रावले के जनाना कक्षों में सुंदर भित्तिचित्र बनवाए। रावले के दीवानखाने (अतिथि बैठक कक्ष) में फैमिली-पोर्ट्रेट लगे हुए हैं।



ई. 1998 में फ्रैंच कलाकार नादिन ले प्रिंस ने नंदलाल देवड़ा की हवेली खरीदी। यह हवेली ई.1802 में बनी थी। नादिन ने स्थानीय कलाकारों की सहायता से इस हवेली के भित्तिचित्रों का जीर्णोद्धार एवं पुनरुत्थान किया और इस हवेली में एक सांस्कृतिक केन्द्र खोल दिया, जिसमें उसकी कलाकृतियों के साथ-साथ फ्रेंच कलाकारों, भारतीय कलकारों एवं आदिवासी कलाकारों के चित्रों का प्रदर्शन किया गया है। इसी हवेली से लगभग 200 गज की दूरी पर सराफ हवेली है। इसमें भी बेल्जियन कांच की सजावट वाली मौलिक चित्रकारी है। ई.1925 में बनी ज्वाला प्रसाद भरतिया हवेली में अचम्भित कर देने वाले भित्तिचित्र बने हुए हैं। इस हवेली में लगे लकड़ी के दरवाजों पर कलात्मक खुदाई की गई है। अलसीसर में अनेक मंदिर, कुएं, छतरियां, धर्मशालाएं, हवेलियाँ आदि स्थित हैं जिनमें दुर्लभ भित्तिचित्र देखे जा सकते हैं। इनमें ई.1595 में इन्द्रचंद केजड़ीवाल की बनाई हुई इन्द्रविलास हवेली में 100 कमरे हैं। अलसीसर में ही 170 वर्ष पुरानी सेठ कस्तूरीमल द्वारा बनवाई गई हवेली है, जिसे झुनझुनवाला की हवेली कहते हैं। इसके दो कमरों में अद्भुत भित्तिचित्र बने हुए हैं।



मालजी का कमरा, महनसर, चूरू

चूरू जिले के महनसर कस्बे में स्थित मालजी का कमरे में बने भित्तिचित्र भी एक मध्यकालीन सम्पन्न चित्रशाला का प्रतिनिधित्व करते हैं। इस कमरे में बनी महफिल में पौराणिक आख्यानों, अवतारों, देवी-देवताओं, मध्यकालीन राजसी वैभव, राजदरबार, शिकार, चौपड़, हाथी, घोड़े, रथ, बारात आदि के दृश्य चित्रित हैं। लक्ष्मी, गणेश एवं हनुमानजी के चित्रों के साथ-साथ सिपाही, बंदर एवं नारी मूर्तियां बनी हुई हैं। मुख्य भवन की दूसरी मंजिल के कक्ष में लगभग ढाई फुट ऊंची पट्टी भित्तिचित्रों की बनाई गई है। चारों ओर किनारी बनाकर बीच में मुख्यचित्र बनाए गए हैं, जिनमें जल-रंगों एवं तैल-रंगों का प्रयोग हुआ है। इन चित्रों में जीवन के विविध पक्षों यथा श्रृंगार, साहित्य, दर्शन आदि को प्रस्तुत करते हुए विभिन्न जीव-जन्तु, पशु-पक्षी, वनस्पति, नदी, नाले आदि चित्रित किए गए हैं। भवन की दीवारों पर ऐतिहासिक महापुरुषों, उनकी वीरगाथाओं, देवी-देवताओं की लीलाओं तथा पौराणिक आख्यानों के चित्र बने हुए हैं।

ये चित्र विभिन्न शैलियों में बने हुए हैं जिनमें मुगल चित्रशैली, राजपूत चित्रशैली, पहाड़ी चित्रशैली, नाथद्वारा चित्रशैली, अंग्रेजी प्रभावयुक्त चित्रशैली एवं लोकचित्रण कला प्रमुख हैं। रियासती काल में सेठों द्वारा इस प्रकार के कमरे लोकानुरंजन के उद्देश्य से बनाए जाते थे। इनमें तोलाराम का कमरा तथा मालजी का कमरा अधिक प्रसिद्ध हुए। हवेली और कमरे में यह अंतर होता था कि जहाँ हवेली निजी उपयोग के लिए होती थी, वहीं कमरा सार्वजनिक उपयोग के लिए होता था।

इस प्रकार इस क्षेत्र की हवेलियों में भित्तिचित्रों का एक दुर्लभ खजाना है जो विश्व में अन्य किसी भी देश में उपलब्ध नहीं है। इन्हें विश्व धरोहर घोषित किया जाना चाहिए तथा विश्व भर के कलाप्रेमियों, शोधकर्ताओं एवं पर्यटकों के लिए इस क्षेत्र में भ्रमण एवं निवास हेतु विश्वस्तरीय सुविधाएं उपलब्ध कराई जानी चाहिए।

भरतपुर संभाग के संग्रहालय

अध्याय - 63

राजकीय संग्रहालय, भरतपुर

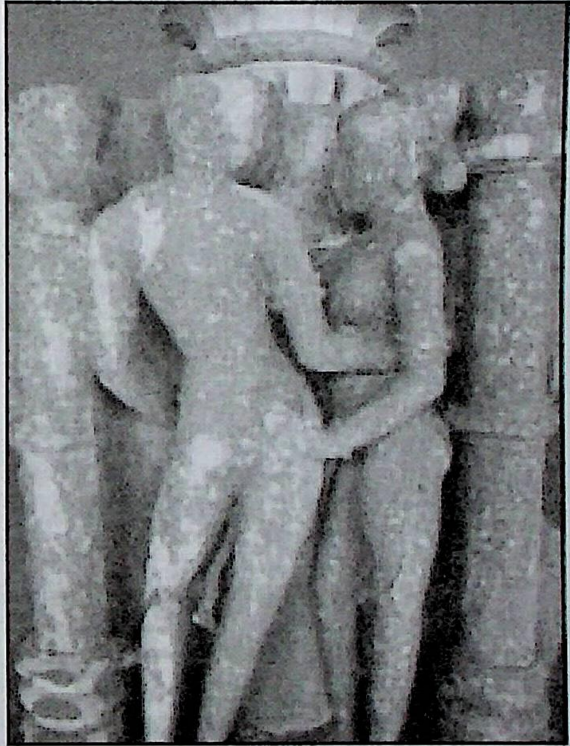
भरतपुर राजकीय संग्रहालय, भरतपुर के लोहागढ़ दुर्ग परिसर के भीतर स्थित है। इस संग्रहालय में अद्वितीय और पुरातन कलाकृतियाँ तथा दुर्लभ पुरातात्विक सामग्री प्रदर्शित की गई है। ई.1939 में भरतपुर नरेश सवाई कर्नल बृजेन्द्रसिंह द्वारा भरतपुर राज्य में अनेक स्थानों पर असुरक्षित अवस्था में बिखरी पड़ी पत्थर की प्रतिमाओं और कलापूर्ण वास्तुखंडों को संग्रहित करवाकर स्थानीय सार्वजनिक पुस्तकालय के एक कक्ष में प्रदर्शित करवाया गया। ई.1944 में इसे नये भवन में स्थानांतरित किया गया और इसे स्वतंत्र संग्रहालय में बदल दिया गया।

वर्तमान संग्रहालय भवन, रियासती काल में भरतपुर रियासत का प्रशासनिक कार्यालय था और इसे 'कचहरी कला' (दरबार हॉल) के नाम से जाना जाता था। इस तीन मंजिला भवन का निर्माण महाराजा बलवंत सिंह (ई.1825-53) ने करवाया था। इसकी प्रथम मंजिल पर स्थित कमरा खास और सिलहखाना को भी संग्रहालय में सम्मिलित कर लिया गया। इस संग्रहालय को चार प्रमुख खण्डों में बाँटा गया है- पुरातत्व खण्ड, बच्चों की गैलरी, शस्त्रागार, कला खण्ड और शिल्प एवं उद्योग।

इस संग्रहालय में प्राचीन मूर्तियों, चित्रों, सिक्कों, शिलालेखों, प्राणी नमूनों का अच्छ संग्रह किया गया है। वर्तमान में भरतपुर संग्रहालय में 581 प्रस्तर प्रतिमाएँ, 10 शिलालेख, 120 टैराकोटा सामग्री, 13 धातु सामग्री, 670 सिक्के, 1966 अस्त्र-शस्त्र, 196 लघुचित्र एवं 861 स्थानीय हस्तकला एवं उद्योग के नमूने संग्रहित हैं।

पुरातत्व खण्ड

संग्रहालय का पुरातत्व खण्ड सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। इसमें द्वितीय शताब्दी ईसा पूर्व से लेकर, शुंग काल, कुषाण काल, गुप्त काल, मध्यकाल एवं 19वीं शताब्दी ईस्वी तक की विभिन्न प्रस्तर प्रतिमाएँ एवं कलापूर्ण वास्तुखंड प्रदर्शित किए गए हैं। पहली शताब्दी की मूर्तियाँ इस संग्रहालय का प्रमुख आकर्षण है। इस संग्रहालय में नोह, अघापुर, गांवड़ी, वीरावई, नौगया खेड़ा, मैलाह, जाघिना, एकता, तुइया सोगर एवं सोगारा आदि गांवों एवं बयाना, कामां, कुम्हेर, वैर, भुसावर, रूपाबास आदि कस्बों से प्राप्त पुरातात्विक सामग्री प्रदर्शित की गई हैं। इनमें एकमुखी शिवलिंग, बोधिसत्व फलक, बुद्ध का शीश, महिषासुर मर्दिनी, कार्तिकेय की कुषाण कालीन मूर्तियाँ उल्लेखनीय हैं। भरतपुर संग्रहालय में यक्ष एवं यक्षी प्रतिमाओं का अच्छा संग्रह है। यही



मूर्तियां आगे चलकर गुप्तकाल में विष्णु एवं विष्णु अवतारों की तथा उसके बाद के काल में जैन एवं बौद्ध प्रतिमाओं का आदर्श बनीं।

वीरावई तथा नोह आदि स्थलों से प्राप्त प्रथम शताब्दी ई.पू. की यक्ष प्रतिमाएँ, नागराज (कुषाण काल) प्रतिमा, सप्तमातृका, दिक्पाल आदि की प्रतिमाएँ विशेष उल्लेखनीय हैं।

इस संग्रहालय में रखी मृण्मूर्तियां (टैराकोटा) इस क्षेत्र की लोकसंस्कृति का परिचय देती हैं। विभिन्न पुरातत्व स्थलों से प्राप्त बैल, कुत्ता, हाथी आदि पशुओं एवं स्त्री-पुरुषों की मृण्मूर्तियां आकार में छोटी हैं जबकि संग्रहालय में प्रदर्शित पत्थर की मूर्तियां आकार में पर्याप्त बड़ी हैं। टैराकोटा (मृणमूर्तियां) की बनी प्रतिमाएँ सामान्यतः लाल एवं सलेटी रंग की हैं, किंतु कुछ प्रतिमाओं पर काली पॉलिश की गई है। प्रतिमाओं के धड़ प्रायः नग्न हैं, किंतु उन पर मिट्टी के मणियों से मालाएं आदि बना दी गई हैं। कानों में बड़े कुण्डल हैं तथा गले में बड़े मणियों की मालाएं बनाई गई हैं। ये प्रतिमाएँ या तो पूजा के काम आती रही होंगी अथवा इन्हें बालकों के लिए खिलौनों के रूप में बनाया गया होगा। शुंग काल की प्रतिमाओं में देवी का एक धड़ तथा गणेश प्रतिमा के अवशेष भी प्राप्त हुए हैं। कुषाण काल की बहुत से पशुओं की मृण्मूर्तियां मिली हैं। इनमें 12 इंच गुणा 3 इंच का एक हाथी भी है, जिसकी पीठ पर सवार सहित हौदा बना हुआ है।

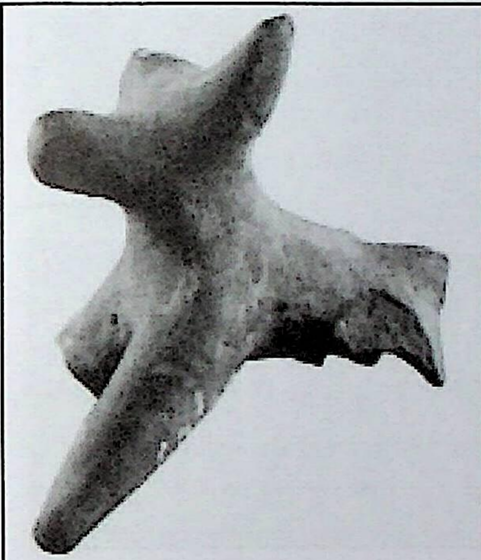
जैन प्रतिमा दीर्घा में भरतपुर क्षेत्र के विभिन्न स्थलों से प्राप्त 8वीं शती ईस्वी से 18वीं शताब्दी ईस्वी तक की जैन प्रतिमाएँ प्रदर्शित हैं, जो इस क्षेत्र में प्राचीनकाल से लेकर आधुनिक काल तक जैन धर्म के प्रसार की परिचायक हैं। इस दीर्घा में प्रदर्शित शासनदेव की स्वतंत्र आकर्षक प्रतिमा अतुलनीय है। नेमिनाथ, शांतिनाथ तथा चतुर्मुखी आदिनाथ आदि तीर्थंकर प्रतिमाएँ भी बहुत महत्वपूर्ण हैं।

नोह से प्राप्त मूर्तियां



नोह से प्राप्त सामग्री गंगा घाटी की प्राचीनतम सभ्यताओं– हस्तिनापुर एवं वैशाली आदि की समकालीन है। नोह एक समृद्ध नगर था जो तीसरी शताब्दी ईस्वी में नष्ट हो गया। नोह से पांच सभ्यताओं के अवशेष स्तर मिले हैं। सबसे नीचे की सभ्यता ईसा से 1100 वर्ष पहले अस्तित्व में थी। इस स्तर से प्राप्त चित्रित सलेटी रंग के पक्षी की मृण्मूर्ति पुरातत्व जगत की महत्वपूर्ण उपलब्धि है। यह मृण्मूर्ति लगभग ई.पू.1100 की मानी जाती है। इसी स्तर से लाल मृद्भाण्ड तथा सरल प्रकार के लाल–काले मृद्भाण्ड प्राप्त हुए हैं। इन बर्तनों की बनावट आहार सभ्यता से भिन्न प्रकार की है। नोह से ग्रेवेयर (धूसर मृद्भाण्ड) वाली सभ्यता के अवशेष भी प्राप्त हुए हैं। उसके ऊपर के स्तर में पेंटेड ग्रेवेयर एवं पॉलिशयुक्त काले क्लेवेयर प्राप्त हुए हैं। ऐसे ही बर्तन हस्तिनापुर से भी प्राप्त किए गए थे। पॉलिशयुक्त एवं चित्रित मृद्भाण्ड समृद्ध लोगों द्वारा प्रयुक्त होते थे। कुछ मृद्भाण्डों पर पक्षियों की आकृतियां बनी हुई हैं। ऐसे बर्तन हस्तिनापुर एवं वैशाली से भी मिले हैं।

नोह से मिली सभ्यता के ऊपरी स्तर से तीरों की नोक, भवनों के अवशेष मिले हैं, जबकि सबसे ऊपर के स्तर से पक्की ईंटों से घिरे हुए एक नगर के अवशेष मिले हैं, जिसमें पक्के घर बने हुए थे। यह नगर प्रथम शताब्दी ईस्वी पूर्व में अस्तित्व में आया तथा तीसरी शताब्दी ईस्वी में नष्ट हो गया। यहाँ से धातु गलाने की भट्टियां, बड़ी मात्रा में धातु अपशिष्ट (मैटल वेस्ट) भी प्राप्त हुआ है। आठ पैरों एवं चार भुजाओं वाली एक भट्टी एवं पकी हुई ईंटें भी प्राप्त हुई हैं। यह सामग्री एक समृद्ध सभ्यता की ओर संकेत करती है, जो ईसा से 1200 वर्ष पहले विकसित हुई थी। यहाँ से ढक्कनदार बर्तन भी मिले हैं। इनके ढक्कनों पर स्वास्तिक एवं त्रिरत्न के चिह्न बने हुए हैं। स्त्री–पुरुष मृण्प्रतिमाओं में आभूषणों की भरमार है। पशु आकृतियों वाले खिलौने कई प्रकार के हैं, जिनमें हाथी, घोड़े, गाड़ियां आदि हैं। मथुरा के शासकों के ताम्बे के सिक्के, कांच एवं मिट्टी की चूड़ियों के टुकड़े, मौर्य काल की मिट्टी की मुहरें भी मिली हैं। शुंग काल का एक मिट्टी का कुत्ता आग में पकाकर मजूबत बनाया गया है। कुषाण काल की पॉटरी पर ब्राह्मी लिपि जैसी लिखावट मिली है। नोह से कम से कम 14 मूर्तियां मिली हैं, जो भिन्न

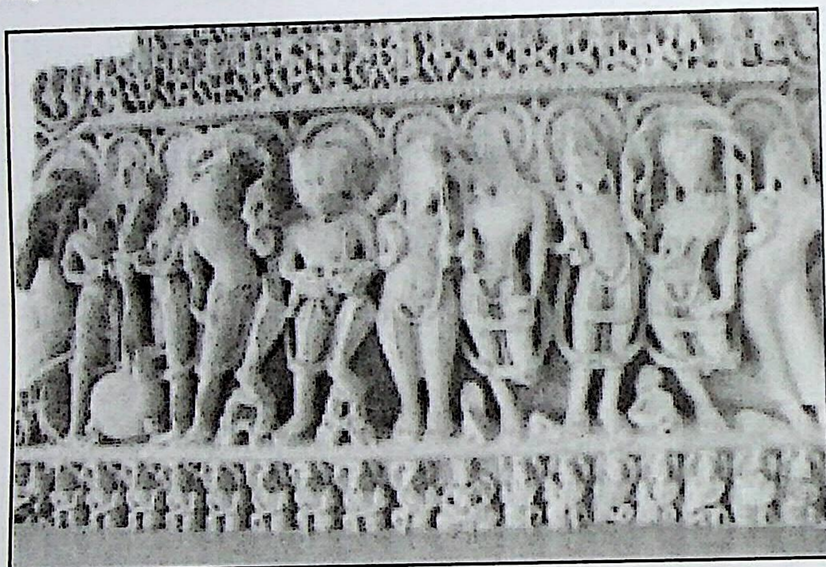

मिट्टी का कुत्ता, नोह, पहली शताब्दी ईस्वी

काल के सभ्यताओं से सम्बद्ध हैं। नोह से प्राप्त शुंग काल की एक विशाल यक्ष प्रतिमा की आज भी पूजा की जाती है। इसे जाख बाबा कहते हैं। इसका पेट घड़े के आकार वाला है, शरीर पर भारी आभूषण हैं तथा मुंह पर घनी मूंछें हैं। यह आठ फुट आठ इंच ऊंची प्रतिमा है।

नोह से ही उत्तर मौर्य काल की लाल पत्थर की यक्षिणी प्रतिमा मिली है। बोधिसत्वों की चार मूर्तियां आरम्भिक शुंग काल की हैं। चारों बोधिसत्व एक पंक्ति में खड़े हैं तथा उन्होंने बाएं हाथ में जल-पात्र धारण कर रखा है और दाहिना हाथ अभयमुद्रा में उठा रखा है। इनके माथे पर एक जैसी पगड़ी तथा आभूषण हैं तथा गले में अंग्रेजी अक्षर 'वी' की आकृति वाली माला है। यह प्रतिमा सफेद धब्बों वाले लाल सैण्डस्टोन पत्थर से बनी हुई है, जो कि रूपाबास में मिलता है। गुप्त काल की एक ग्रे सैण्डस्टोन की महिला की आवक्ष मूर्ति मिली है। स्तनों के बड़े आकार के कारण इसे पूर्ववर्ती प्रतिमाओं से सहज ही अलग पहचाना जा सकता है। इसी काल का एक पुरुष धड़ भी मिला है। देवी लक्ष्मी की प्रतिमा, विष्णु की मस्तक रहित प्रतिमा, भगवान शिव का आवक्ष विग्रह जिसे सिर के जटाजूट एवं माथे की तीसरी आंख से पहचाना जा सकता है, भी प्राप्त हुई हैं। इन्हें आभूषणों एवं पगड़ियों के आधार पर पीछे के युगों से सहज ही अलग किया जा सकता है। नोह से एक मुखी शिवलिंग से लेकर चारमुखी शिवलिंग प्राप्त हुए हैं। शिव के ये चार मुख ब्रह्मा, विष्णु, सूर्य एवं शक्ति के प्रतीक हैं।

अघापुर से प्राप्त मूर्तियां

अघापुर से बड़ी संख्या में परिष्कृत मूर्तियां मिली हैं। यहाँ से प्राप्त कूण्डिका यक्ष भी घड़े के पेट वाला है। इसने अपने सिर पर एक कूण्डी धर रखी है। इसने चूड़ियां पहन रखी हैं तथा कानों में कुण्डल हैं। यहाँ से पत्थरों पर बनी हुई पशु-मूर्तियां भी प्राप्त हुई हैं। दो शेरों के जुड़े हुए मुंह वाली आवक्ष प्रतिमा प्राप्त हुई है। इसमें शेर का मुंह खुला हुआ है, उसकी गर्दन पर भारी बाल हैं। शेर की आंखें, नाक कान, होठ, दांत, गाल, सीना आदि काफी पुष्ट बनाए गए हैं। भरतपुर तहसील के वीरवाई गांव से यक्ष की उसी काल की एक और प्रतिमा मिली है। यक्ष को उस काल में 'वीर' कहा जाता था। अतः



अनुमान किया जा सकता है कि गांव का नाम वीरवाई इसी यक्ष मूर्ति के कारण पड़ा होगा। इसके गले में भी नोह से प्राप्त यक्ष प्रतिमा जैसा 'वी' आकृति का हार है। सोगारा गांव से भी यक्ष की ऐसी ही प्रतिमा मिली है, जो कि शुंग काल की है। इस मूर्ति के सिर पर पगड़ी है तथा यक्ष को भारवाहक के रूप में प्रस्तुत किया गया है।

शुंग काल की ये मूर्तियां, भरतपुर-मथुरा-नोह क्षेत्र में उस काल की धार्मिक मान्यताओं पर प्रकाश डालती हैं, जिसके अनुसार गांव-गांव में यक्ष की पूजा होती थी। वस्तुतः इस काल तक गुप्त काल भविष्य के गर्भ में था, अतः माना जाना चाहिए कि गुप्त काल की मूर्ति कला शुंग काल की मूर्ति कला का ही गौरवमयी विकास था। गुप्त काल में यक्ष का स्थान भगवान विष्णु तथा उनके अवतारों ने ले लिया।

मैलाह से प्राप्त मूर्तियां

मैलाह से प्राप्त प्रतिमाओं के आधार पर कहा जा सकता है कि गुप्तकाल एवं मध्यपूर्व काल में यह स्थल शैव एवं वैष्णव सम्प्रदायों के प्रमुख केन्द्रों में से था। यहाँ इस काल में शिव एवं विष्णु के कम से कम तीन मंदिर स्थित थे। यहाँ से प्राप्त अवशेषों में आठवीं एवं दसवीं शताब्दी की प्रतिमाएँ मिली हैं। विष्णु के अवतारों में राम, नृसिंह तथा वाराह और दिक्पालों में अग्नि तथा वरुण की मूर्तियां मिली हैं। अन्य प्रतिमाओं में रेवान्ता, मातृका ऐन्द्री, परिचारिकाएं, चंवरधारिणी, द्वारपाल, शिव-मस्तक, नंदी नृत्यलीन शिव, मंदिरों की शिखर रचनाओं के अंश, देवी यमुना एवं देवी गंगा की मूर्तियां एवं अंकन मिले हैं। ब्रह्मा, ब्रह्माणी, कुबेर, स्त्री द्वारपाल एवं नृत्यरत पुरुष प्रतिमाएँ भी मिली हैं।

जघीना से प्राप्त मूर्तियां

भरतपुर तहसील का गांव जघीना गुप्तोत्तर काल में जैन धर्म की श्वेताम्बर शाखा

का केन्द्र था। यहाँ भगवान पार्श्वनाथ का श्वेताम्बर शाखा का जैन मंदिर था। संभवतः इसी मंदिर की विशाल पार्श्वनाथ प्रतिमा भग्नावस्था में मिली है। इस प्रतिमा के पीछे सर्प छाया करता हुआ दिखाया गया था। यहाँ से अन्य जैन प्रतिमाएँ भी मिली हैं। कायोत्सर्ग भाव में खड़ी सर्वतोभद्र की एक प्रतिमा तथा आदिनाथ की प्रतिमाएँ भी मिली हैं। आदिनाथ की प्रतिमा पांचवीं–छठी शताब्दी ईस्वी की हैं। इससे स्पष्ट है कि गुप्तकाल में भरतपुर के आसपास जैनों की बड़ी बस्ती थी।

एकता से प्राप्त प्रतिमाएँ

भरतपुर जिले में स्थित एकता गांव वैष्णव धर्म का छोटा केन्द्र था। भरतपुर संग्रहालय में एकता से प्राप्त प्रतिमाएँ रखी हैं। इनमें से विष्णु की एक प्रतिमा 3 फुट 2 इंच की है तथा दसवीं शताब्दी ईस्वी की है। विष्णु के आयुधपुरुष स्वरूप की एक प्रतिमा की पीठिका (पैडस्टल) मिली है।

भरतपुर नगर से प्राप्त प्रतिमाएँ

भरतपुर नगर से गुप्तकाल एवं उसके बाद के समय की प्रतिमाएँ प्राप्त की गई हैं। इनमें एकमुखी शिवलिंग तथा लाल पत्थर की कीचक रचना गुप्तकाल के हैं। स्थानक मुद्रा में भगवान सूर्यदेव की प्रतिमा भी महत्वपूर्ण है। सूर्यदेव के दोनों हाथों में पूर्ण खिला हुआ कमल है। यह लाल सैण्डस्टोन से निर्मित पौने तीन फुट ऊंची प्रतिमा है। इसी युग की भैरव प्रतिमा एवं नाग दम्पत्ति की युगल प्रतिमा भी प्राप्त हुई है। यह समस्त सामग्री गुप्त काल में निर्मित किसी एक मंदिर में प्रयुक्त हुई होगी। भरतपुर नगर से सोलहवीं से उन्नीसवीं शताब्दी की अनेक प्रतिमाएँ प्राप्त हुई हैं। इनमें सबसे पुरानी प्रतिमा एक जैन तीर्थंकर की है। इसकी पीठिका पर ई.1584 का एक लेख उत्कीर्ण है, प्रतिमा खण्डित अवस्था में है। 16वीं शताब्दी में भरतपुर क्षेत्र में पौराणिक धर्म की उपस्थिति को दर्शाने वाली सूर्य एवं विष्णु की विशाल प्रतिमाएँ भी भरतपुर नगर से प्राप्त की गई हैं।

कामां से प्राप्त प्रतिमाएँ

भरतपुर जिले का कामां नामक प्राचीन नगर महाभारत के काल से भी पहले अस्तित्व में था। तब इसे कदम्बवन, काम्यकवन और कामवन कहा जाता था। उस काल में इसका धार्मिक महत्व वृंदावन तथा महावन के समकक्ष था। गुप्तकाल में कामां में भगवान शिव का विशाल मंदिर स्थित था। इसके भग्नावशेषों को अब चौरासी खंभा मंदिर कहते हैं। इस मंदिर की मूर्तियां अजमेर एवं मथुरा सहित भारत के कई संग्रहालयों में ले जाई गई हैं। इस मंदिर से प्राप्त शिलालेखों में गुर्जर–प्रतिहार शासकों की वंशावली उत्कीर्ण है। मंदिर की बनावट, प्रतिमाओं की बनावट तथा शिलालेखों के अक्षरों की बनावट से इस मंदिर का निर्माण आठवीं शताब्दी ईस्वी में होना प्रतीत होता है। मंदिर का शिल्प बहुत समृद्ध है। घटपल्लवों की ऐसी सजावट अन्य मंदिरों में दुर्लभ है। मंदिर के एक शिलालेख के अनुसार यह मंदिर सूरसेन वंश के राजा दुर्गगान की रानी वच्छलिका



शिव-पार्वती, कामां

द्वारा भगवान विष्णु को समर्पित किया गया था। इस मंदिर से दो शिवलिंग मिले थे जो अब अजमेर संग्रहालय में हैं।

लघु चित्र खंड

संग्रहालय भवन की प्रथम मंजिल पर स्थित लघुचित्र खण्ड में मुगल शैली के 17वीं शताब्दी के चित्र एवं राजस्थान की जयपुर, जोधपुर, कोटा, किशनगढ़, नाथद्वारा, बूँदी और भरतपुर शैलियों के चित्र प्रदर्शित हैं। अभ्रक की पत्तियों, पीपल के पत्तों तथा पुराने लिथो पेपर की पट्टियों पर बने चित्र, इस संग्रहालय की अनूठी कलाकृतियां हैं। ई.1610 ई. में लिखित 'सहज सनेही', महाराजा बलवन्तसिंह के समय में ई.1851 में लिखित 'पुत्रोत्सव' आदि हस्तलिखित ग्रन्थ और मुद्रित सूक्ष्माक्षरी कुरान भी दर्शनीय है। इस गैलरी में भरतपुर नरेशों के अनेक चित्र प्रदर्शित किए गए हैं।

विविध खंड

देशी-विदेशी एवं स्थानीय हस्तकला की वस्तुएं तथा विभिन्न प्रकार की बहुमूल्य कलाकृतियाँ, विविध खण्ड में देखी जा सकती हैं। यहाँ रियासतकालीन 500 से अधिक कलाकृतियां हैं। इनमें मिट्टी, चीनी तथा काँच से निर्मित विभिन्न बर्तन, फूलदान, हाथीदाँत और चन्दन की लकड़ी से बने इत्रदान, शृंगारदान पीतल के कलापूर्ण कलश, थाल, पशु-पक्षियों के नमूने आदि प्रदर्शित हैं। विभिन्न प्रकार की घड़ियां तथा राजाओं द्वारा प्रयुक्त कटलरी का विशाल संग्रह भी रखा गया है। संग्रहालय के द्वार के पास एक विशाल कड़ाही रखी गई है, जिसमें एक साथ कई हजार लोगों के लिए भोजन तैयार किया जा सकता था। एक विशाल चंवर भी देखा जा सकता है। इसी दीर्घा में वनमानुष, मगरमच्छ, शेर का बच्चा तथा भालू आदि वन्यपशुओं को केमिकल ट्रीटमेंट करके तथा उन्हें स्टफ करके शोकेसों में रखा गया है, जो कि बच्चों को आकर्षित करते हैं।

अस्त्र-शस्त्र खंड

संग्रहालय की पहली मंजिल पर बने अस्त्र-शस्त्र खण्ड में भरतपुर राज्य के शासकों एवं सैनिकों द्वारा विभिन्न युद्धों में प्रयुक्त कई प्रकार के हथियार प्रदर्शित किए

गए हैं। यहाँ छोटे आकार की पिस्तौल से लेकर तोप जैसे बड़े हथियार भी प्रदर्शित किए गए हैं। इनमें कई प्रकार की तलवारें, ढालें, छुरे, बन्दूकें, रिवॉल्वर, भाले, तोप आदि सम्मिलित हैं। कुछ तलवारों की मूठ पर सोना एवं चांदी का कलात्मक कार्य किया गया है। इस कला को कोफ्तकारी, निशान, तहनिशान आदि कहा जाता था। रामचंगी बंदूकें तथा विभिन्न प्रकार की ढालें भी विशेष आकर्षण का विषय हैं। अठारहवीं शताब्दी की बंदूकें एवं तोपें भी दर्शक को अपनी ओर आकर्षित करती हैं।

अन्य

संग्रहालय परिसर में भूतल पर स्थित 'हमाम' इस परिसर का बहुत बड़ा आकर्षण है। यह महाराजा जवाहरसिंह (ई.1763-68) द्वारा बनवाया गया था। मुगल शैली के इस स्नानगृह में कई कक्ष बने हुए हैं। इसकी दीवारों के आरायश प्लास्टर पर फ्रेस्को पद्धति से बने भित्तिचित्र आज भी चित्ताकर्षक हैं। स्नानघर में प्रकाश तथा वायु के आगमन के लिए वातायानों की व्यवस्था की गई है। स्नानघर में ठंडे और गर्म पानी का प्रबंध किया गया था। ठण्डे पानी के लिए भूमिगत पाइप बनाए गए थे और गर्म पानी के लिए हौद के नीचे भट्टियां लगाई गई थीं। राजा और रानियों के कपड़े बदलने के लिए अलग-अलग कक्ष बनाए गए हैं। संग्रहालय की छत पर छप्पन खम्भों की बारादरी बनी हुई है।

प्रत्येक शुक्रवार को संग्रहालय का साप्ताहिक अवकाश रहता है।



अध्याय - 64

राजकीय संग्रहालय, डीग



डीग संग्रहालय, भरतपुर नरेशों एवं राज-परिवार के सदस्यों द्वारा उपयोग में लाई गई वस्तुओं तथा फर्नीचर इत्यादि के संग्रह से बना है। इस संग्रह में 547 वस्तुएं प्रदर्शित की गई हैं, जिनमें से सर्वोत्तम वस्तुएं गोपाल भवन और किशन भवन में रखी गई हैं। गोपाल भवन, डीग महल परिसर के अन्दर निर्मित इमारतों में सबसे बड़ी और सर्वाधिक प्रभावशाली इमारत है, जिसमें संग्रहालय का प्रमुख भाग स्थित है। महाराजा सूरजमल ने ई.1756-63 के दौरान किशन भवन और गोपाल भवन का निर्माण करवाया था। दीर्घाओं में प्रदर्शित वस्तुओं में मुख्य कक्ष, मानसिंह कक्ष, अंग्रेजी और भारतीय भोजन कक्ष, महाराजा का शयन कक्ष, एडीसी कक्ष, बिलियर्ड कक्ष, महाराजा का कमरा, गोपाल भवन में रानी का निवास तथा जनाना निवास स्थान शामिल हैं। चन्दन की लकड़ी से निर्मित भगवान वेणुगोपाल की एक मनोहारी प्रतिमा दर्शकों को सबसे पहले दिखाई पड़ती है। अन्य वस्तुओं में हाथी के पैरों की आकृति में बने सिगरेट-केस और इत्र-केस, पुराने फर्नीचर, फारसी कालीन और बर्तन शामिल हैं।



अध्याय - 65

राजीव गांधी क्षेत्रीय प्राकृतिक विज्ञान संग्रहालय

राजीव गांधी क्षेत्रीय प्राकृतिक विज्ञान संग्रहालय, राष्ट्रीय प्राकृतिक विज्ञान संग्रहालय नई दिल्ली का आंचलिक केन्द्र है और भारत सरकार के वन, पर्यावरण एवं जलवायु परिवर्तन मंत्रालय के अधीन आता है। प्राकृतिक इतिहास को संजोकर रखने वाला यह संग्रहालय, देश में अपनी तरह का पांचवा संग्रहालय है। अन्य संग्रहालय दिल्ली, भोपाल, भुवनेश्वर और मैसूर में हैं। प्राकृतिक इतिहास राजीव गांधी क्षेत्रीय प्राकृतिक विज्ञान संग्रहालय का उद्घाटन 1 मार्च 2014 को रामसिंहपुरा (जिला सवाईमाधोपुर) में किया गया। इस संग्रहालय को तैयार करने में लगभग साढ़े वर्ष का समय लगा। संग्रहालय का भवन, स्थापत्य कला का अद्‌भुत उदाहरण है।यह संग्रहालय विद्यार्थियों एवं जिज्ञासुओं के लिए ज्ञान का खजाना एवं आकर्षण का प्रमुख केन्द्र है। इस संग्रहालय में प्रकृति की प्रमुख विरासतों को संजोकर रखा गया है। इस संग्रहालय में विभिन्न जीव-जंतुओं की तस्वीरें, सुंदर मूर्तियां और प्रकृति के विभिन्न रंगों को समेटने वाली पेंटिग्स की अद्‌भुत प्रदर्शनी देखने योग्य है। 7.2 एकड़ में फैले इस संग्रहालय में जैव विविधता को बेहतर ढंग से समझने के लिए कई वस्तुएं हैं। यह संग्रहालय शैक्षिक महत्व के साथ-साथ पेड़-पौधों और पशु-पक्षियों के बीच के सम्बन्धों को सरल ढंग से दिखाता है। इस संग्रहालय में एक लघु पुस्तकालय भी है, जिसमें जीव-जंतुओं और पेड़-पौधों पर आधारित 10 हजार से अधिक पुस्तकें हैं।

राजीव गांधी क्षेत्रीय प्राकृतिक विज्ञान संग्रहालय में प्रदर्शित पश्चिमी घाट की जैव विविधता, राष्ट्रीय पार्क के जीव-जंतु, भारत की जन जातियां, जीव-जंतु की दीर्घाएं ज्ञान का अनुपम भंडार हैं। संग्रहालय में दिन में दो बार, वन्य जीवों पर बनी फिल्मों का प्रदर्शन किया जाता है। राजीव गांधी म्यूजियम में जैव विविधता के दर्शन के साथ अन्य कई सुविधाएं हैं। यहाँ का पुस्तकालय, ईको थिएटर, सभागार एवं पेटिंग्स देखने योग्य हैं। संस्थान द्वारा जिला एवं राज्य स्तर की विज्ञान प्रतियोगिताओं का आयोजन करवाया जाता है। पर्यावरण के प्रति जागरूकता उत्पन्न करने के लिए समय-समय पर प्रदर्शनियों का भी आयोजन करवाया जाता है।



अध्याय - 66

राजस्थान के विज्ञान केन्द्र एवं संग्रहालय

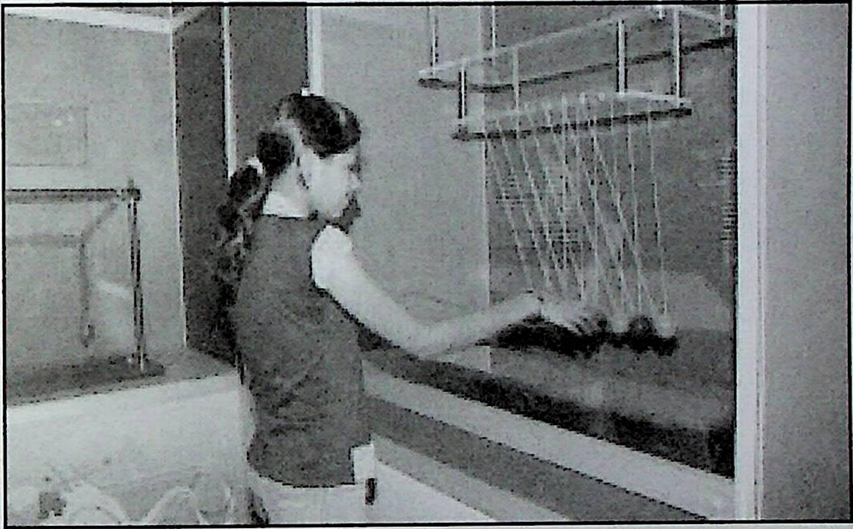
भारत सरकार के संस्कृति मंत्रालय के अधीन कार्यरत राष्ट्रीय विज्ञान संग्रहालय परिषद द्वारा देश में क्षेत्रीय विज्ञान केन्द्र, उपविज्ञान केन्द्र, साइंस पार्क आदि स्थापित किए गए हैं, जो व्यवहार रूप में विज्ञान के सिद्धांतों एवं उपलब्धियों पर आधारित संग्रहालय ही हैं। ये संग्रहालय जनसामान्य तथा विज्ञान के विद्यार्थियों का मनोरंजन करने के साथ-साथ उन्हें विज्ञान के सिद्धांतों, नियमों एवं उपलब्धियों आदि की जानकारी देते हैं तथा जन-साधारण को विज्ञान के निकट लाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

क्षेत्रीय विज्ञान केन्द्र, जयपुर



क्षेत्रीय विज्ञान केन्द्र, जयपुर को राष्ट्रीय विज्ञान संग्रहालय परिषद द्वारा स्थापित किया गया है। राजस्थान सरकार के विज्ञान और प्रौद्योगिकी विभाग द्वारा इस संस्था को सक्रिय सहयोग दिया जाता है। यह केन्द्र, इंटरेक्टिव विज्ञान प्रदर्शनियों और अनौपचारिक विज्ञान शिक्षा कार्यक्रमों के माध्यम से क्षेत्र के लोगों की आवश्यकताएं पूरी करता है। लगभग 4000 वर्ग मीटर क्षेत्र में निर्मित विज्ञान केन्द्र में तीन प्रदर्शनी दीर्घाएं, एक अस्थायी प्रदर्शनी हॉल, एक गुंबद तारामंडल, विज्ञान प्रदर्शन क्षेत्र, वातानुकूलित सभागार, थ्री-डी थिएटर, एक पुस्तकालय, सम्मेलन कक्ष और सार्वजनिक सुविधाएं

उपलब्ध हैं।

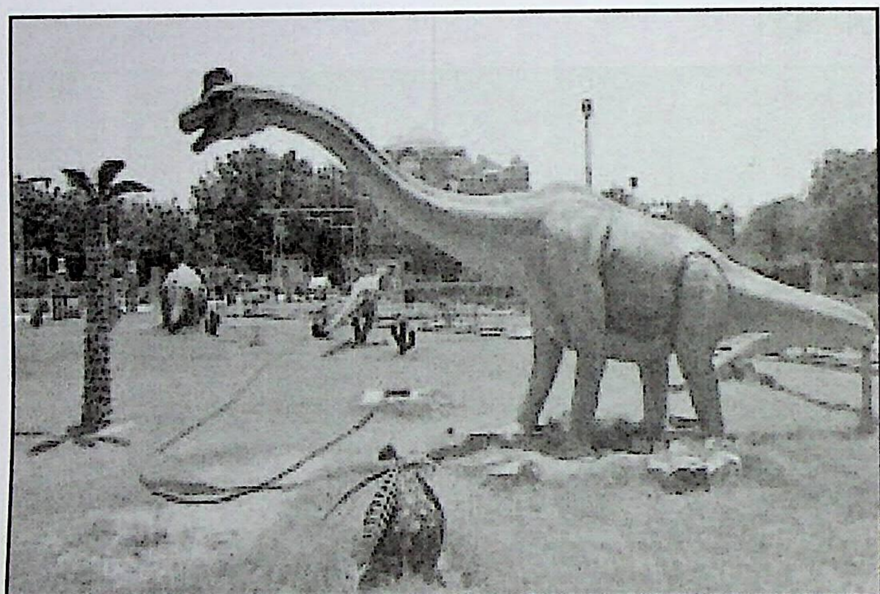


खगोल विज्ञान फ्रंटियर्स गैलरी में दर्शाया गया है कि ब्रह्माण्ड की मानवीय समझ समय के साथ बदल गई है, क्योंकि ब्रह्माण्ड की बेहतर समझ के लिए मानव जाति ने विज्ञान और प्रौद्योगिकी के विभिन्न सिद्धांतों को समझना और उनका उपयोग करना जारी रखा है। इस गैलरी से पता चलता है कि भारत, खगोल विज्ञान के क्षेत्र में विश्व में अग्रणी भूमिका रखता है। खगोल विज्ञान गैलरी में आगंतुकों को सबसे अधिक दिलचस्प सवालों का सामना करना पड़ता है। इंटरेक्टिव प्रदर्शन, कलाकृतियों, मल्टीमीडिया और अन्य दृश्य-प्रदर्शन के माध्यम से ब्रह्माण्ड के प्रति समझ विकसित करने के लिए अनूठा वातावरण तैयार किया गया है।

राजस्थान के अन्य उप-क्षेत्रीय विज्ञान केन्द्र

विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग ने जोधपुर, झालावाड़, नवलगढ़, कोटा, उदयपुर में उपक्षेत्रीय विज्ञान केन्द्र स्थापित किए हैं। उप-क्षेत्रीय विज्ञान केन्द्र, जोधपुर का उद्घाटन 17 अगस्त 2013 को राजस्थान के मुख्यमंत्री अशोक गहलोत एवं भारत सरकार की संस्कृति मंत्री चंद्रेश कुमारी कटोच द्वारा किया गया। इस केन्द्र की अवधारणा, डिज़ाइन एवं विकास राष्ट्रीय विज्ञान संग्रहालय परिषद द्वारा किया गया है एवं इसे संचालन के लिए राजस्थान सरकार को समर्पित किया गया है। इस केन्द्र में 'जल : जीवन का अमृत', 'भारत की विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी की विरासत', 'मनोरंजक विज्ञान' नामक दीर्घाएँ एवं एक विज्ञान पार्क बनाया गया है।

झालावाड़ नगर से संलग्न झालरापाटन नामक प्राचीन नगर में पुलिस लाइन रोड पर होर्टिकल्चर कॉलेज के सामने विज्ञान पार्क स्थापित किया गया है। इस विज्ञान पार्क में



बच्चों के लिए आईटी गैलेरी का निर्माण किया गया है, जिसके माध्यम से बच्चों को कम्प्यूटर की शुरुआत से लेकर आज तक की यात्रा का ज्ञान उपलब्ध कराया जाता है। बच्चों के लिए थ्री-डी गेम्स भी उपलब्ध कराए गए हैं।



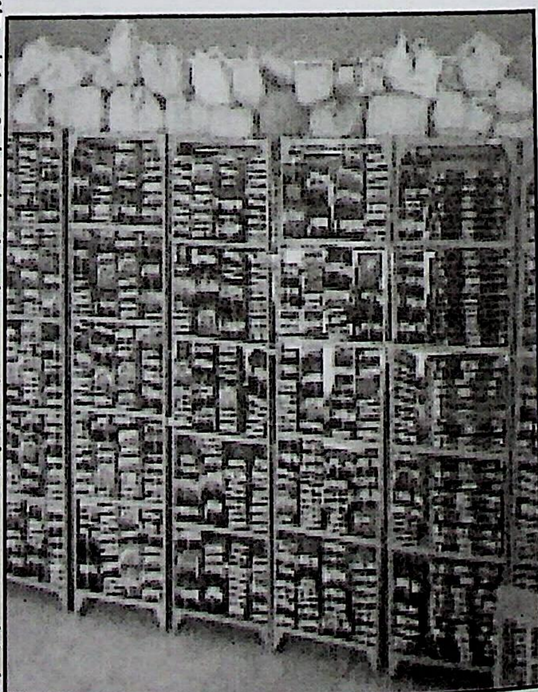
राजस्थान के अभिलेखागार

अध्याय - 1

अभिलेख एवं अभिलेखागार

सामान्यत: किसी विशेष प्रयोजन से लिखे गए लेख को अभिलेख कहा जाता है। यह सामान्य व्यावहारिक लेखों से भिन्न होता है। अभिलेख सामान्यत: शिलाखण्ड, पहाड़, गुफा की दीवार, प्रस्तर खण्ड, धातु की पट्टियों, लकड़ी एवं मिट्टी की तख्तियों, बर्तनों, महलों एवं मंदिरों की दीवारों, कागज, कपड़े, ताड़पत्र, भोजपत्र अथवा किसी अन्य धरातल पर लिखे जाते हैं। किसी अभिलेख का मूल्यांकन उसमें लिखी गई सूचना एवं उस सूचना के केन्द्रीय पात्र से किया जाता है।

भारत में लेखन कला का विकास होने से बहुत पहले ही विपुल साहित्य का निर्माण होने लगा था, जिसे कण्ठस्थ करके पीढ़ी दर पीढ़ी स्थानांतरित किया जाता था। उसके बाद ताड़पत्रों एवं भोजपत्रों पर लेखन किया जाने लगा। कपड़ों पर भी ग्रंथ लिखे गए तथा पत्थर शिलाओं पर उत्कीर्ण किए गए। कागज का विकास होने के पश्चात् अधिकांश लेखन कागज पर किया जाने लगा। प्राचीन काल के साहित्य में से अब बहुत कम ही उपलब्ध है किंतु जो कुछ उपलब्ध है, उसे सहेजना भी अत्यंत दुष्कर कार्य है। इस साहित्य से विभिन्न कालखण्डों में भारतीय समाज और संस्कृति पर विपुल प्रकाश पड़ता है। ब्राह्मण, बौद्ध और जैन धर्म के आध्यात्मिक साहित्य के साथ-साथ साहित्यिक एवं ऐतिहासिक ग्रन्थों की भी रचना की गई, जिनसे तत्कालीन समाज की गतिविधियों का ज्ञान होता है। विभिन्न पुराण कथाओं के माध्यम से सामाजिक और धार्मिक क्रियाएं अभिव्यक्त की गईं तथा परम्पराओं को सुरक्षित रखा गया।



अभिलेखों के प्रकार

प्राचीन काल से लेकर आधुनिक काल तक उपलब्ध

अभिलेखों का वर्गीकरण निम्नलिखित प्रकार से किया जा सकता है- (1.) धार्मिक और कर्मकांडीय, (2.) आभिचारिक (जादू टोना से सम्बद्ध), (3.) उपदेशात्मक अथवा नैतिक, (4.) समर्पण तथा चढ़ावा सम्बन्धी, (5.) दान सम्बन्धी, (6.) प्रशासकीय, (7.) प्रशस्तिपरक, (8.) स्मारक, (9.) साहित्यिक, (10.) व्यापारिक तथा व्यावहारिक।

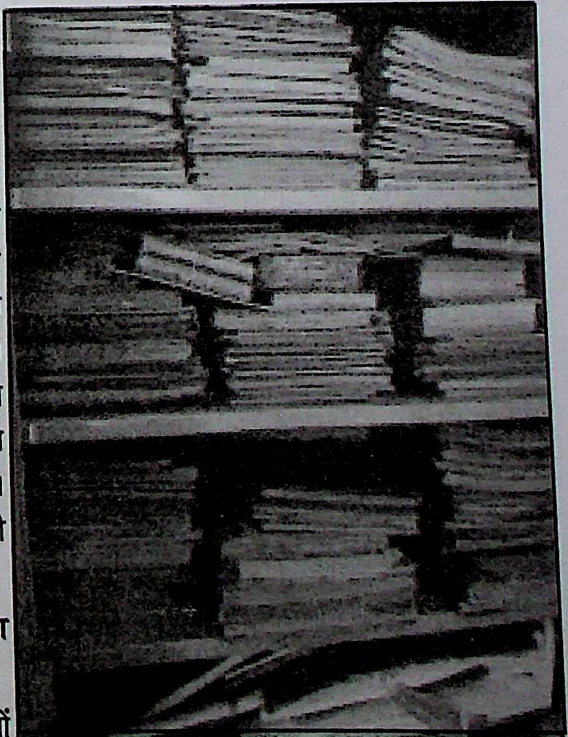
धार्मिक और कर्मकाण्डीय अभिलेख

सम्पूर्ण भारत वर्ष में प्राचीन काल से ही धार्मिक एवं कर्मकाण्डीय अभिलेखीय सामग्री प्राप्त होती है। सबसे प्राचीन सामग्री पंचमहायज्ञों से सम्बन्धित है। भारतीय वैदिक संस्कृति में जिन पंचमहायज्ञों को उल्लेख हुआ है, वे इस प्रकार हैं- (1.) ब्रह्म यज्ञ, (2.) देव यज्ञ, (3.) अतिथि यज्ञ, (4.) पितृ यज्ञ (5.) बलिवैश्वदेव यज्ञ।

आभिचारक अभिलेख

सिंधु नदी घाटी के हड़प्पा, मोहनजोदड़ो और कालीबंगा आदि नगरों से प्राप्त बहुत सी तख्तियों पर आभिचारिक यंत्र मिले हैं। संभवतः इन यंत्रों में विभिन्न पशुओं द्वारा प्रतिनिहित देवताओं की स्तुतियाँ हैं। ये अभिलेख प्रायः कवचों पर मिलते हैं। सुमेर, मिश्र, यूनान आदि में भी आभिचारिक अभिलेख पाए जाते हैं।

उपदेशात्मक अभिलेख



प्राचीन भारत में धार्मिक प्रयोजनों की तरह नैतिक एवं उपदेशात्मक अभिलेख भी लिखे जाते थे। अशोक के धर्मलेखों में उपदेशात्मक अंश अत्यधिक मात्रा में है। बेसनगर (विदिशा) के छोटे गरुड़ध्वज अभिलेख में भी उपदेश हैं- तीन अमृत पद हैं। यदि इनका सुंदर अनुष्ठान हो तो ये स्वर्ग को प्राप्त कराते हैं। ये हैं- दम, त्याग और अप्रमाद। चीन और यूनान में भी उपदेशात्मक अभिलेख मिले हैं।

समर्पण अथवा चढ़ावा अभिलेख

धार्मिक स्थापत्यों, विधियों

और अन्य प्रकार की संपत्ति का किसी देवी-देवता अथवा धार्मिक संस्थान को स्थाई रूप से समर्पण अंकित करने के लिए इस प्रकार के अभिलेख प्रस्तुत किए जाते थे।

दान सम्बन्धी अभिलेख

प्राचीन धार्मिक और नैतिक जीवन में दान का बहुत ऊँचा स्थान था। प्रत्येक देश और धर्म में दान को संस्था का रूप प्राप्त था। स्थायी दान को अंकित करने के लिए पहले शिलाओं का और फिर ताम्रपत्रों का प्रयोग हुआ।

प्रशासकीय अभिलेख

प्रशासकीय अभिलेखों में विधि (कानून), नियम, राजाज्ञा, जयपत्र, राजाओं और राजपुरुषों के पत्र, राजकीय लेखा-जोखा, कोष के प्रकार और विवरण, सामंतों से प्राप्त कर एवं उपहार, राजकीय सम्मान और शिष्टाचार, ऐतिहासिक घटनाओं का उल्लेख, आदि सम्मिलित हैं। प्रस्तर-स्तम्भों पर लिखी हुई बाबुली सम्राट् हम्मुराबी की विधिसंहिता प्रसिद्ध है। अशोक के धर्मलेखों में उसके शासन से सम्बन्धित आज्ञाएं भरी पड़ी हैं। राजस्थान के राजाओं ने भी प्रशासकीय आज्ञाओं के लिए विभिन्न प्रकार के साधनों का उपयोग किया। कन्या वध निषेध, चुंगी में छूट आदि के सार्वजनिक लेख भी प्राप्त होते हैं।

प्रशस्ति अभिलेख

भारतीय राजाओं द्वारा अपनी विजयों, कीर्ति गाथाओं एवं प्रशस्तियों का वर्णन शिलाखंडों और प्रस्तर स्तम्भों पर उत्कीर्ण करवाने की प्रथा प्रचलित थी। राजाओं की दिग्विजयों के वर्णन बड़ी संख्या में पाए गए हैं। गुप्तों, गुहिलों, चौहानों, परिहारों, चौलुक्यों, परमारों एवं राठौड़ों आदि की प्रशस्तियां पत्थरों, मंदिरों की दीवारों एवं पहाड़ों में अंकित मिलती हैं।

स्मारक अभिलेख

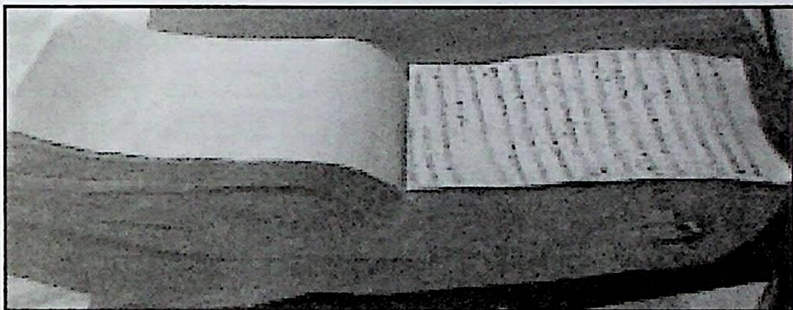
अभिलेखों का मुख्य कार्य अंकन को स्थायी बनाना था। अतः घटनाओं, व्यक्तियों तथा कृतियों के स्मारक रूप में अगणित अभिलेख पाए गए हैं।

साहित्यिक अभिलेख

प्राप्त अभिलेखों में सर्वमान्य धार्मिक ग्रंथों अथवा उनके अवतरण और कभी-कभी समूचे नवीन, काव्य, नाटक आदि ग्रंथ अभिलिखित पाए गए हैं।

व्यापारिक तथा व्यावहारिक अभिलेख

भारत, पश्चिमी एशिया, मिस्र, क्रीट, यूनान आदि प्राचीन देशों में व्यापारियों की मुद्राओं पर और उनके लेखे-जोखे से सम्बन्धित अभिलेख पाए गए हैं। प्राचीन भारत के निगमों और श्रेणियों की मुद्राएँ अभिलेखांकित होती थीं और वे व्यापारिक एवं



व्यावहारिक कार्यों के लिए स्थाई प्रवृत्ति की कठोर सामग्री का उपयोग करती थीं। कभी-कभी तो अन्य प्रकार के अभिलेखों में भी व्यापारिक विज्ञापन पाया जाता है। कुमारगुप्त तथा बन्धुवर्मन कालीन मालव संवत् 529 के अभिलेख में वहाँ के तंतुवायों (जुलाहों) के कपड़ों का विज्ञापन इस प्रकार दिया हुआ है- 'तारुण्य और सौंदर्य से युक्त, सुवर्णहार, तांबूल, पुष्प आदि से सुशोभित स्त्री तब तक अपने प्रियतम से मिलने नहीं जाती, जब तक कि वह दशपुर के बने पट्टमय (रेशम) वस्त्रों के जोड़े को नहीं धारण करती। इस प्रकार स्पर्श करने में कोमल, विभिन्न रंगों से चित्रित, नयनाभिराम रेशमी वस्त्रों से संपूर्ण पृथ्वी तल अलंकृत है।'



अध्याय - 2

राजस्थान के अभिलेखागारों की आधारभूत सामग्री

भारत में शिलालेखों एवं ताम्रपत्रों का संग्रहण प्रायः संग्रहालयों में किया गया है जबकि ताड़पत्रों, कपड़ों एवं कागज आदि पर लिखित लेखों, पाण्डुलिपियों, बहियों, राजाज्ञाओं, चित्रपोथियों एवं चित्रों आदि का संग्रहण अभिलेखागारों में किया गया है। राजस्थान के ग्रंथ संग्रहालयों एवं अभिलेखागारों में इस प्रकार की अभिलेखीय सामग्री विपुल मात्रा में उपलब्ध है।

प्राचीन धार्मिक ग्रंथों का योगदान

भारतीय ऋषियों एवं चिंतकों ने वैदिक युग से लेकर मध्य काल तक संस्कृत भाषा में अनेक धार्मिक एवं आध्यात्मिक साहित्य का सृजन किया, जिनसे धर्म, दर्शन, संस्कृति, समाज एवं इतिहास पर समुचित प्रकाश पड़ता है। ये साहित्य हैं- ब्राह्मण साहित्य, जैन साहित्य एवं बौद्ध साहित्य। ब्राह्मण साहित्य में वेद, वेदांग, महाकाव्य, पुराण, स्मृतियां एवं भाष्य, निबन्ध साहित्य एवं कौटिल्य का अर्थशास्त्र, कुमारसंभव, मृच्छकटिकम्, मुद्राराक्षस, कथासरित्सागर, मणिमेखलै, हर्षचरित एवं राजतरंगिणी आदि प्रमुख हैं। बौद्ध साहित्य में त्रिपिटक, महावंश, दीपवंश, मंजुश्रीमूलकल्प तथा जैन साहित्य में परिशिष्टपर्वन, भद्रबाहुचरित, प्रबन्ध चिन्तामणि, कीर्ति कौमुदी तथा काव्य मीमांसा इत्यादि साहित्यिक एवं धार्मिक ग्रंथों से सांस्कृतिक जीवन व्यंजित होता है। जैन ग्रंथ परिशिष्टपर्वन हमें बताता है कि प्रथम नन्द सम्राट नाई जाति के पुरुष एवं एक महिला दरबारी से उत्पन्न हुआ।

विदेशी विवरणों का योगदान

विदेशी लेखकों और यात्रियों के विवरणों में भी भारतीय समाज और संस्कृति पर प्रचुरता से प्रकाश डाला गया, जिनमें से अब कुछ ग्रंथ ही उपलब्ध होते हैं तथा कुछ ग्रंथों का उल्लेख अन्य ग्रंथों में मिलता है। इन ग्रंथों की पाण्डुलिपियां भी ग्रंथ संग्रहालयों में उपलब्ध होती हैं।

जैन ग्रंथ संग्रहालयों का योगदान

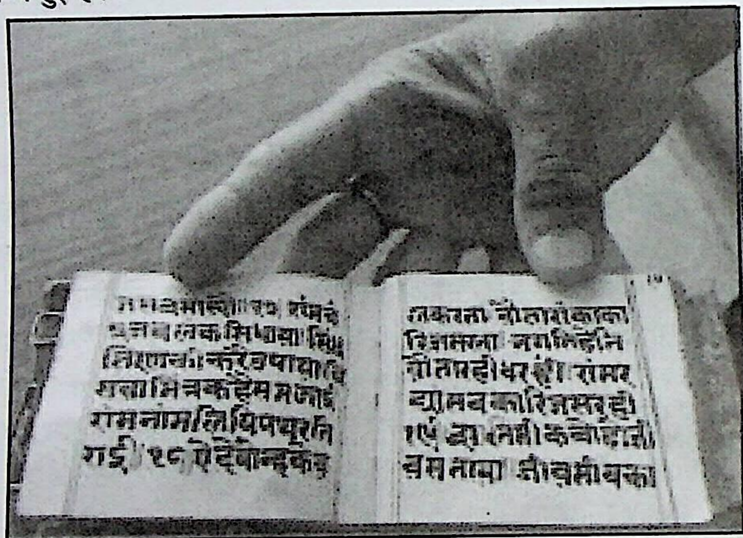
जैन आचार्यों, मुनियों एवं साधुओं ने राजस्थान के प्रसिद्ध कस्बों यथा नागौर, पाली, घाणेराव, जालोर, जैसलमेर, बीकानेर, अजमेर, बूंदी एवं जयपुर आदि बड़े नगरों से लेकर

छोटे-छोटे गांवों में बहुत बड़ी संख्या में जैन ग्रंथ संग्रह स्थापित किए, जिनमें प्राचीन काल से लेकर मध्यकाल एवं आधुनिक काल तक के जैन ग्रंथ, चित्रित पोथियां, चित्र, ताड़पत्र एवं ग्रंथ प्राप्त होते हैं। जैन ग्रंथ संग्रहालयों में सैंकड़ों साल तक जीवन के विविध ा विषयों पर लिखे गए ग्रंथों की प्रतिलिपियां करने, उन्हें चित्रित करने एवं भण्डारण करने का कार्य बड़े स्तर पर किया गया। एक अनुमान के अनुसार इन संग्रहालयों में डेढ़ लाख से अधिक ग्रंथ उपलब्ध हैं। जयपुर नगर में 25 जैन ग्रंथ संग्रहालय हैं जिनमें संस्कृत, हिन्दी, डिंगल, पिंगल, अपभ्रंश, प्राकृत एवं पाली भाषा की हजारों पाण्डुलिपियां उपलब्ध हैं। आठवीं शती ईस्वी में जैन मुनि उद्योतन सूरि ने जालोर में कुवलयमाला की रचना की। वर्तमान में सबसे प्राचीन पाण्डुलिपि ताड़पत्र पर अंकित है, जिसकी रचना ई.1060 में हुई। यह ग्रंथ जैसलमेर के वृहद् ज्ञान भण्डार में रखा हुआ है। कागज पर अंकित सबसे प्राचीन पाण्डुलिपि ई.1272 की है, जो तेरापंथियों के श्री दिगम्बर जैन मंदिर जयपुर में सुरक्षित है। इस पाण्डुलिपि में दिल्ली को मोजिनीपुर तथा वहाँ के बादशाह का नाम गयासुद्दीन तुगलक लिखा गया है। जैन ग्रंथ संग्रहालयों में सामान्यत: 11वीं शती ईस्वी से लेकर 19वीं शती ईस्वी तक लिखे गए धर्म, दर्शन, अध यात्म, ज्योतिष, गणित, आयुर्वेद, संगीत, पुराण, कथा, काव्य, चरित आदि विविध विषयों के ग्रंथों का विशाल संग्रह है।

ताड़पत्र पाण्डुलिपियों की दृष्टि से जैसलमेर का वृहद् ज्ञान भण्डार विशेष रूप से उल्लेखनीय है तथा कागज पाण्डुलिपियों की दृष्टि से नागौर, बीकानेर, जयपुर एवं अजमेर के शास्त्र भण्डार अधिक महत्वपूर्ण हैं। नागौर के भट्टारकीय शास्त्र भण्डार में लगभग 12,000 हस्तलिखित ग्रंथ एवं 2,000 गुटकों का संग्रह है। गुटकों में संग्रहित ग्रंथों की संख्या लगभग 10,000 है।

जयपुर के जैन ग्रंथ संग्रहालयों में आमेर शास्त्र भण्डार, बड़ा दिगम्बर जैन मंदिर, तेरापंथियों का शास्त्र भण्डार, पाटोदियों के मंदिरों का शास्त्र भण्डार आदि उल्लेखनीय हैं। इन भण्डारों में अपभ्रंश एवं हिन्दी ग्रंथों की पाण्डुलिपियों का अच्छा संग्रह है। इन शास्त्र भण्डारों में जैन साधुओं के साथ-साथ अन्य धर्मों के विद्वानों द्वारा लिखित ग्रंथ भी उपलब्ध हैं। इनमें संस्कृत के उद्‌भट विद्वान मम्मट द्वारा रचित काव्य प्रकाश, राजशेखर कृत काव्यमीमांसा, कुत्तक कवि कृत वक्रोक्ति जीवित, आचार्य धर्मकीर्ति विरचित न्यायविन्दु, श्रीधर भट्ट कृत न्यायकैदली आदि अत्यंत महत्वपूर्ण हैं। नाटक साहित्य में विशाखदत्त का मुद्राराक्षस, भट्ट नारायण कृत वेणीसंहार, मुरारी कृत अनघराघव नाटक, कृष्ण मिश्र का प्रबोध चन्द्रोदय नाटक, सुबन्धु कृत वासवदत्ता नाटक एवं अन्य कृतियां उपलब्ध हैं। हिन्दी की प्राचीनतम कृतियों में से एक 'जिणदत्त चरित' की एक प्रति भी जयपुर के जैन भण्डारों में प्राप्त हुई है। इस काव्य का रचना काल वि.सं. 1254 (ई. 1197) का है। बारहवीं शताब्दी की हिन्दी भाषा की यह पहली कृति प्राप्त हुई है,

जिसमें रचना काल का उल्लेख किया गया है। इन भण्डारों में 14वीं एवं 15 शताब्दी के बहुत से ग्रंथ उपलब्ध हैं। पृथ्वीराज रासो, कृष्ण रुक्मणि वेली, मधुमालती कथा, सिंहासन बत्तीसी, रसिकप्रिया एवं बिहारी सतसई की भी प्राचीनतम प्रतियां इन भण्डारों से उपलब्ध हुई हैं।



इन भण्डारों में 11वीं से लेकर 19वीं शताब्दी की बहुत सी प्रशस्तियां उपलब्ध हुई हैं, जो राजस्थान के तत्कालीन इतिहास का प्रामाणिक इतिहास लिखने में सहायक हैं। इनमें से कुछ प्रशस्तियां स्वयं लेखक द्वारा लिखी गई हैं तथा कुछ प्रतियां लिपिकारों द्वारा लिपिबद्ध की गई हैं। इन प्रशस्तियों में ग्रंथ लिखवाने वाले श्रावकों के साथ-साथ उनकी गुरु परम्परा, तत्कालीन शासक, सम्राट, नगर का भी उल्लेख किया गया है। इन प्रशस्तियों को अजमेर, जैसलमेर, नागौर, आमेर, बूंदी, तक्षकगढ़ (टोडारायसिंह), चम्पावती (चाकसू), डूंगरपुर, सागवाड़ा, चित्तौड़, उदयपुर, आमेर, बूंदी, बीकानेर के जैन ग्रंथ संग्रहालयों में प्रमुखता से देखा जा सकता है। इन प्रशस्तियों में नगरों एवं कस्बों के प्राचीन नाम एवं शासकों के नाम तत्कालीन इतिहास को प्रामाणिकता प्रदान कर सकते हैं।

14वीं-15वीं शताब्दी ईस्वी में लेखक प्रशस्तियों के साथ-साथ ग्रंथ प्रशस्तियां लिखने का भी प्रचलन था। जैन ग्रंथ संग्रहालयों में कई महत्वपूर्ण ग्रंथ प्रशस्तियां उपलब्ध हैं। ग्रंथ प्रशस्तियों में लेखक द्वारा अपने समय के इतिहास के साथ-साथ नगर का वर्णन एवं लेखक के बारे में महत्वपूर्ण तथ्य आदि लिखता था। अपभ्रंश, हिन्दी, राजस्थानी आदि भाषाओं के अनेक ग्रंथों में ग्रंथ प्रशस्तियां लिखी हुई हैं। 17वीं शती में हिन्दी भाषा के एक कवि ने अपनी पुस्तक यशोधरा चौपाई में लिखी गई ग्रंथ प्रशस्ति में बूंदी नगर एवं बूंदी के शासक का वर्णन किया है। 17वीं सदी में बनारसीदास हिन्दी के बड़े कवि

हुए। उन्होंने आध्यात्मिक रचनाएं लिखी हैं। वे हिन्दी भाषा के पहले कवि थे जिन्होंने 'अर्द्धकथाकरक' शीर्षक से अपना आत्मचरित भी लिखा। जब ई.1605 में अकबर की मृत्यु हुई तो उन्होंने अपने एक ग्रंथ में अकबर की मृत्यु का काव्यात्मक उल्लेख किया है-

संवत् सौलह सै वासठ आयो कातिक पास नठा।
छत्रपति अकबर साहि जलाल नगर आगरे कीनो काल।

18वीं शती के कवि दिलाराम ने अपने ग्रंथ दिलाराम विलास में बूंदी नगर का वर्णन किया है। ई.1768 में कवि श्रुतसागर ने भरतपुर नगर एवं उसके संस्थापक महाराजा सूरजमल का वर्णन किया है। 18वीं-19वीं शती में रचित अनेक ग्रंथों में जयपुर नगर का काव्य वर्णन मिलता है। बुद्धिविलास में जयपुर नगर की स्थापना का अद्भुत दृश्य उपस्थित किया गया है। जैन विद्वान बख्तरास ने संवत् 1827 (ई.1770) में इस ग्रंथ की रचना की।

राजस्थान के जैन ग्रंथ संग्रहालयों से राजपूताना की अनेक रियासतों के शासकों के वंशक्रम, वंशवृक्ष एवं विस्तृत वर्णन वाली पट्टावलियों की प्राप्ति हुई है। इनसे दिल्ली के शासकों की भी विश्वसनीय जानकारी मिलती है। कुछ बादशाहों के राज्यकाल के घड़ी एवं पल तक की जानकारी दी गई है। जयपुर के एक शास्त्र भण्डार से एक पट्टावली प्राप्त हुई है, जिसमें जयपुर राजवंश का विस्तृत विवरण लिखा गया है। जयपुर के दिगम्बर जैन तेरापंथी मंदिर के शास्त्र भण्डार में संस्कृत भाषा में राजवंश नामक एक कृति उपलब्ध हुई है, जिसमें दिल्ली के शासकों का पाण्डवों से लेकर औरंगजेब तक का कार्यकाल दिया गया है। हिन्दी में लिखित 'पातिसाहि का ब्यौरा' नामक कृति में चौहान नरेश पृथ्वीराज के समय का वर्णन किया गया है। जैसलमेर के शास्त्र भण्डार में ई.1156 में लिखित 'उपदेश पद प्रकरण' की पाण्डुलिपि मिली है। इस ग्रंथ की प्रशस्ति में अजमेर नगर एवं उसके शासक 'विजयदेव विग्रहराज' का उल्लेख किया गया है।

पोथी चित्रों का योगदान

राजस्थान के प्राच्य संग्रहों एवं पोथीखानों में चित्रित पोथियां प्राप्त हुई हैं। इनमें बहुत से जैन ग्रंथागार भी सम्मिलित हैं। भारत में कागज बारहवीं शताब्दी ईस्वी से काम में लाया गया। उससे पहले की पोथियां भोजपत्रों एवं ताड़पत्रों पर लिखी गई हैं। इनके पृष्ठों को सुंदर बनाने के लिए इन पर बॉर्डर, बेलबूटे एवं पुष्प आदि बनाए जाते थे। पड़ या पिछ्वाई कला में पड़, पद सहित या पद रहित दोनों ही रूपों में प्राप्त होती है। जैन ग्रंथों में पोथी चित्रण का कार्य गुरोसा, यतियों एवं साधुओं की देख-रेख में मथेन जाति के कलाकारों द्वारा किया जाता था। महत्वपूर्ण चित्रित जैन ग्रंथों में वि.सं.1845 का कल्पसूत्र सर्वप्रमुख है, जिसे हरिदास ने लिपिबद्ध किया। इसका लेखन तपागच्छाचार्य सोमसुंदर सूरि के आदेश से किया गया। इस कल्पसूत्र में महावीर स्वामी तथा उनके

समवसरण का चित्रण है। वि.सं. 1563 का कल्पसूत्र सावचूरि नामक ग्रंथ भीनमाल में चित्रित हुआ। वि.सं.1576 का कल्पान्तर्णच्य टीका ग्रंथ में द्विभुजा देवी का चित्र है। जैन चित्रांकन शैली के खरड़ानुमा विज्ञप्ति पत्र भी प्राच्य संग्रहालयों में मिलते हैं। बीकानेर शैली में धन्ना शानिभद्र चउपई के अंतर्गत चित्रांकन मिलता है।

सचित्र पोथियों में एक ओर लेखन तथा दूसरी ओर चित्रण किया जाता था। ग्रंथ के मध्यभाग में एवं यत्र-तत्र भी चित्रण किया जाता था। पोथी के मध्य में लेखन एवं पृष्ठ के पार्श्व में चित्रण अथवा ग्रंथों के पृष्ठों के नीचे विषय सम्बन्धी चित्रांकन एवं ऊपरी भाग पर पद तथा छंद लिखे जाते थे। पोथी चित्रण की परम्परा में अनेक लघुचित्र भी संग्रहित हैं जिनमें काव्यात्मक गुणों के आधार पर एवं कल्पना से शीर्षक दिए गए हैं। काव्य के महत्वपूर्ण अंशों, बारहमासा, ऋतु वर्णन, राग-रागिनी आदि पर आधारित लघुचित्रों में काव्य एवं चित्रकला दोनों ही उपस्थित हैं। चित्रकारों ने काव्य को आधार बनाकर भी चित्रण किया है। उनमें कला-प्रदर्शन एवं यश प्राप्ति का भाव निहित है।

अनेक चित्र धार्मिक अनुष्ठानों, कथा-वार्ताओं, अवतारों, राम-कृष्ण लीलाओं, बारहमासा, राग-रागिनियों, षडऋतु वर्णन आदि से सम्बन्धित हैं। ई.1812 में मारवाड़ चित्रशैली में चित्रित 'गणपतिमंत्र' नामक ग्रंथ में भगवान गणेश के प्रत्येक अंग एवं भुजाओं आदि में मंत्र लिखे हुए हैं। ऐसी ही एक पोथी में कुक्कुट वाहिनी देवी का दुर्लभ चित्र है। 18वीं सदी के पुष्पांजली नामक ग्रंथ में भगवती का चित्र बना हुआ है। एक ग्रंथ में अष्टपद भैरव, हनुमान एवं नृसिंह देव आदि विविध स्वरूपों का सामूहिक चित्रण किया गया है। मणिभद्र क्षेत्रपाल नामक ग्रंथ में भैरव रूप ग्राम रक्षक क्षेत्रपाल के शरीर के सभी अंगों पर मंत्र लिखे हुए हैं। अनेक पोथियों के प्रारम्भ में जयपुर शैली में चित्रित रिद्धि-सिद्धि गणेश के सुंदर चित्र मिलते हैं। जोधपुर प्राच्य विद्या संस्थान में शकुनावली नामक ग्रंथ में गणेशजी का सुंदर चित्र बना हुआ है तथा राजस्थान की मिश्रित लघुचित्र शैली में वीणा एवं पुस्तक धारिणी सरस्वती का चित्र बना हुआ है।

गीतगोविंद नामक ग्रंथ में मेवाड़ शैली में श्रीराधा, श्रीकृष्ण एवं गोपियों के विभिन्न प्रसंगों के चित्र हैं, जिनमें विरहाकुल राधा, राधाजी को मनाते हुए श्रीकृष्ण, श्रीकृष्ण पर पिचकारियों से रंग डालती हुई गोपियां आदि सम्मिलित हैं। रामकथा एवं श्रीकृष्ण कथा पर आधारित चित्र भी अनेक पोथियों में चित्रित हैं। इनमें सीता जन्म, सीता हरण, जटायू के प्राण त्याग, शूर्पनखा का नासिका विच्छेदन एवं लंकापुरी के चित्र प्रमुख हैं। पहाड़ी शैली में सीता का अग्निप्रवेश चित्र, भक्तराज ध्रुव का वैकुण्ठ गमन हेतु विमान आरोहण आदि प्रसंग चित्रित हैं। नृसिंह कवच ग्रंथ में भगवान नृसिंह का तथा मदनशतक ग्रंथ में चण्डीदेवी का सुंदर चित्र बने हुए हैं। तंजौर शैली में चित्रित श्रीमद्भागवत में श्रीकृष्ण के मुख में विश्व दर्शन, श्रीकृष्ण द्वारा युद्ध क्षेत्र में अर्जुन को उपदेश आदि चित्र बने हैं। मध्यकालीन रचनाओं में नीति एवं भक्ति से सम्बन्धित अनेक

चित्रित पोथियां मिलती हैं। नासिकेतपाख्यान भाषा ग्रंथ में तपस्यालीन ऋषि उद्धालक तथा पुरुष वेश में गरुड़ का चित्रांकन है।

कथा-वार्ता विषयक ग्रंथों में ढोलामारु री वात, फूलमती री वात, चंदन मलयागिरि री वार्ता, माधवानल कामकंदला आदि का सुंदर चित्रांकन मिलता है। राजस्थान के बहुत से ग्रंथों में सौराष्ट्री एवं गुजराती शैली के चित्रांकन भी मिलते हैं। धार्मिक विषयों में रामतिलक के दृश्य, दादू दयाल के जीवन प्रसंग, डांडिया नृत्य, महारासलीला, यशोदा द्वारा भगवान श्रीकृष्ण का लालन-पालन, महादेवी सारणी आदि चित्र मिलते हैं। इस प्रकार राजस्थान की चित्रित पोथियां मध्यकालीन रियासती काल की चित्रकला की अनुपम धरोहर हैं जिनसे राजस्थान के प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान भरे पड़े हैं। राजस्थान के प्रसिद्ध चित्र संग्राहलयों में पोथीखाना जयपुर, महाराजा मानसिंह पुस्तक प्रकाश जोधपुर, सरस्वती भण्डार उदयपुर, चित्रशाला बूंदी, माधोसिंह संग्रहालय कोटा तथा अलवर संग्रहालय अलवर प्रमुख हैं।

चिकित्सा ग्रंथों का योगदान

प्राच्य ग्रंथ भण्डारों में भारतीय प्राचीन चिकित्सा पद्धति आयुर्वेद के सम्बन्ध में हजारों ग्रंथ भरे हुए हैं।

पशु-चिकित्सा ग्रंथों का योगदान

प्राच्य ग्रंथ भण्डारों में मनुष्यों की व्याधियों के उपचार के साथ-साथ पशुओं की व्याधियों के उपचार के ग्रंथ भी बड़ी संख्या में हैं। भारतीय राजाओं की सैन्य शक्ति हाथी एवं घोड़ों की सेनाओं पर अवलम्बित थी। रथों में भी घोड़े जुतते थे। इस कारण हाथी एवं घोड़ों के उपचार सम्बन्धी हजारों ग्रंथ लिखे गए। उपचारों की इन पद्धतियों को गजायुर्वेद एवं अश्वायुर्वेद कहा जाता था। अश्व शालिहोत्र के सैंकड़ों ग्रंथ मिलते हैं जिसमें घोड़ों की जाति, वर्ण, शुभ-अशुभ, घोड़े की बनावट, प्रकार, आयु, चिकित्सा, आदि के सम्बन्ध में जानकारियां उपलब्ध हैं। 19वीं सदी के मेवाड़ चित्रशैली के सचित्र ग्रंथ शालिहोत्र में घोड़ों के लक्षण एवं औषधि उपचार के उल्लेख मिलते हैं। घोड़े के मस्से, गलसुंडा तथा घाव का उपचार, घोड़े का मोदा फूटने पर उपचार, जहरबाज घोड़े का उपचार आदि विषयक ग्रंथ भी मिलते हैं। पालकाप्य ऋषि रचित गजायुर्वेद ग्रंथ में हाथियों की विभिन्न प्रजातियों का वर्णन किया गया है। यह 18वीं सदी में लिखा गया राजस्थानी, मेवाड़ी एवं संस्कृत भाषा का चित्रित ग्रंथ है, जिसमें 139 चित्र हैं। बहुत से ग्रंथ पशुओं पर ऋतुओं पर पड़ने वाले प्रभाव एवं उनके उपचार के बारे में विस्तार से लिखा गया है। कुछ ग्रंथ पशुओं के रख-रखाव पर भी आधारित हैं। हाथी के रसपान की विधि, हाथी के दांतों का उपचार, हाथी की आंखों में काजल लगाने की विधि आदि विषयक ग्रंथ भी मिलते हैं।

डिंगल एवं पिंगल साहित्य का योगदान

राजस्थान में चारणों, भाटों, रावों, जैन मुनियों तथा अन्य लेखकों द्वारा डिंगल एवं पिंगल भाषा में प्रचुर साहित्य की रचना की गई। इस साहित्य को चारण साहित्य, संत साहित्य, जैन साहित्य एवं लोक साहित्य में विभक्त किया जा सकता है। राजस्थानी भाषा का पद्य साहित्य रासो, महाकाव्य, दूहा, सोरठा, कवित्त, झूलणा, झमाल, गीत, कुण्डलियां, छंद, छप्पय, प्रबंध, गुटके, बेलि आदि में विस्तृत है। राजस्थानी गद्य को वात, वचनिका, ख्यात, दवावैत, वंशावली, पट्टावली, पीढ़ियावली, दफ्तर, विगत, हकीकत, वार्ता, नीसाणी, कुर्सीनामा आदि के रूप में लिखा जाता था। प्राचीन काल एवं मध्यकाल में लिखा गया यह प्रचुर साहित्य विभिन्न स्थानों से एकत्रित करके प्राच्य विद्या संस्थानों में रखा गया है। इन पोथियों के संग्रहण के लिए ई.1955 में राजस्थान राज्य प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान की स्थापना की गई। इसका मुख्यालय जोधपुर में है। ई. 1961-62 में राजस्थान के विस्तृत क्षेत्र में विकीर्ण सामग्री के संरक्षण के लिए बीकानेर, कोटा, अलवर, उदयपुर, चित्तौड़ में उपशाखाओं की स्थापना की गयी। टोंक में अरबी और फारसी ग्रंथों के संरक्षण के लिए कार्यालय स्थापित हुआ, जो अब स्वतंत्र संस्थान के रूप में कार्यरत है।

रियासती दस्तावेजों का योगदान

राजस्थान में ब्रिटिश शासन काल में अस्तित्व में रहीं 19 बड़ी रियासतों एवं विभिन्न ठिकाणों में कई प्रकार की बहियां, रुक्के, परवाने, ताम्रपत्र, पत्र व्यवहार, ऋणपत्र, पट्टे आदि उपलब्ध हैं। सभी रियासतों एवं ठिकाणों में प्रशासनिक कार्यों की बहियां यथा कोठार की बहियां, कमठे की बहियां, पट्टों की बहियां, हिसाब की बहियां, ताम्रपत्रों के नकलों की बहियां बड़ी संख्या में राज्य में उपलब्ध हुई हैं। इन्हें सम्बन्धित रजवाड़ों एवं ठिकाणों द्वारा स्थापित संग्रहालयों, पोथीखानों, राजस्थान राज्य अभिलेखागार बीकानेर एवं अन्य संग्रहालयों आदि में रखा गया है। बीकानेर अभिलेखागार के प्राविधिक खण्ड में 21 राज्यों के अभिलेख 7 संचय शालाओं में सुरक्षित किए गए हैं। जयपुर राज्य के अभिलेख ई.1622 से 1743 तक उर्दू एवं फारसी में तथा ई.1830 से 1949 तक के अंग्रेजी भाषा में उपलब्ध हैं। जोधपुर राज्य के अभिलेख ई.1643 से 1956 तक के मारवाड़ी भाषा में तथा ई.1890 से 1952 तक अंग्रेजी भाषा में उपलब्ध हैं। कोटा राज्य के अभिलेख ई.1635 से 1892 तक हाड़ौती भाषा में उपलब्ध हैं। उदयपुर राज्य के अभिलेख ई.1884 से 1949 तक मेवाड़ी भाषा में तथा ई.1862 से 1947 तक अंग्रेजी भाषा में उपलब्ध हैं। बीकानेर राज्य के अभिलेख ई.1625 से 1956 तक की अवधि के हैं। ये मारवाड़ी, उर्दू, अंग्रेजी और हिंदी में उपलब्ध हैं। अलवर, किशनगढ़, बूंदी, सिरोही, भरतपुर, झालावाड़, कुशलगढ़ तथा करौली आदि रजवाड़ों के 19वीं एवं 20वीं शताब्दी के अभिलेख सुरक्षित हैं।

अंग्रेजी शासन के दौरान अजमेर के एजेण्ट टू दी गर्वनर जनरल, कमिश्नर एवं चीफ कमिश्नर कार्यालयों के अभिलेख ई.1818 से लेकर 1956 तक की अवधि के हैं। स्वतंत्रता आंदोलन के समय प्रजातांत्रिक मांगों को लेकर बनी प्रजा परिषदों एवं प्रजामंडलों के अभिलेख और ई.1909 से लेकर बाद के समय की समाचार पत्रों की 3000 से अधिक कतरनें भी रखी हुई हैं। मौखिक इतिहास खंड में स्वतंत्रता सेनानियों से लिए गए 216 साक्षात्कार उन्हीं की आवाज में ध्वन्यांकित कर रखे गए हैं। पुस्तकालय खंड में भूतपूर्व रियासतों के गजट, बजट, प्रशासनिक प्रतिवेदन, जनगणना एवं अन्य महत्त्वपूर्ण संदर्भ पुस्तकें उपलब्ध हैं। एक अनुमान के अनुसार बीकानेर के अभिलेखागार में रखे गए दस्तावेजों को यदि धरती पर लम्बाई में फैलाया जाए तो उनकी लम्बाई पाँच लाख फुट होगी।

राज्य अभिलेखागार की उदयपुर शाखा की बख्शीशाला में ताम्रपत्रों की बही उपलब्ध है। इस बही में ई.1838 में 1,294 ताम्रपत्रों के नवीनीकरण करने का उल्लेख है। इन 1,294 ताम्रपत्रों में से 1,138 ताम्रपत्रों को गोरधनजी ने तथा 156 ताम्रपत्रों को रतना ने खोदा था। ये ताम्रपत्र महाराणा लाखा (ई.1382-1421) के काल से आरंभ होकर महाराणा भीमसिंह (ई.1778-1828) तक के हैं। अभिलेखागार की कोटा शाखा सूरजपोल स्थित झाला हाउस में है। इसके तीन मंजिले भवन में कोटा रियासत का 300 वर्ष पुराना अभिलेख विद्यमान है। यह अभिलेख राजस्थान की सबसे कठिन मानी जाने वाली हाड़ौती भाषा में लिखा हुआ है। राज्य में राष्ट्रीय पाण्डुलिपि मिशन के अंतर्गत प्राचीन एवं दुर्लभ ग्रंथों की खोज का काम चला, जिसके तहत राज्य में कई लाख प्राचीन ग्रंथ खोजे गए। ये ग्रंथ विभिन्न अभिलेखागारों में रखे गए हैं।

आधुनिक इतिहास से सम्बन्धित दस्तावेजों का संग्रह-प्रदर्शन

राजस्थान में ई.1737 से ई.1818 तक का कालखण्ड मराठों एवं पिण्डारियों द्वारा उत्पन्न की गई अराजकता से पीड़ित रहा। ई.1818-58 तक ईस्ट इण्डिया कम्पनी ने देशी रियासतों को अधीनस्थ संधियों के द्वारा अपने नियंत्रण में रखा। ई.1858 से ई. 1947 तक राजपूताना रियासतें ब्रिटिश क्राउन की परमोच्चता के अधीन रहीं। ई.1920 के आसपास राजपूताना रियासतों में उत्तरदायी सरकारों के गठन हेतु प्रजामण्डल आंदोलन आरम्भ हुए तथा ई.1947 में देश के स्वतंत्र होने के साथ ही राजस्थान के निर्माण की प्रक्रिया चली जो ई.1956 में जाकर पूरी हुई। इस सम्पूर्ण कालखण्ड के इतिहास से सम्बद्ध अभिलेखों, मेमोयर्स, शिलालेख, पत्र, स्मारक, चित्र तथा शोधपत्रों का विभिन्न संग्रहालयों में संग्रहण किया गया है। भारत के स्वातंत्र्य संग्राम में चलाए गए आन्दोलनों, सत्याग्रहों एवं अन्य घटनाओं पर इतिहासकारों द्वारा निरंतर शोध कार्य किए जा रहे हैं, इनसे सम्बद्ध समाचार-पत्र, पत्रिकाएं, परिपत्र, राजकीय ओदश, चित्र आदि भी विभिन्न संग्रहालयों में संग्रहित एवं प्रदर्शित किए गए हैं।

❀❀❀

अध्याय – 3

राजस्थान के मध्यकालीन अभिलेखों का परिचय

मध्यकालीन इतिहास में राजस्थान के शासकों, जमींदारों, कारिंदों एवं महत्वपूर्ण व्यक्तियों द्वारा कई प्रकार के अभिलेखों का निष्पादन एवं संधारण किया जाता था। इनके सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त किए बिना अभिलेखागारों की सामग्री का अवलोकन एवं अध्ययन अत्यंत कठिन होता है। बहुत से दस्तावेजों का बहुउद्देश्यी उपयोग होने के कारण प्रायः इन्हें समझने एवं एक दूसरे से अलग करके पहचानने में कठिनाई होती है। इन अभिलेखों का संक्षिप्त परिचय इस प्रकार से है–

अडसट्टा : आय–व्यय का सार–संग्रह। इसमें जमींदारों, सामंतों एवं राजाओं के कारिंदे राजस्व प्राप्ति एवं व्यय का विवरण लिखते थे।

अहवाल : किसी व्यक्ति की परिस्थितियों, कार्यों तथा घटनाओं के विवरण पर विज्ञापना या लेख–अर्जीदावा, किसी अभियोग की यांचा या निवेदन, किसी वाद में प्रथम व्यपदेशन।

अर्जदास्त : लिखित प्रार्थना या अर्भ्यथना–लेख।

अर्जी : निवेदन, प्रतिवेदन।

अवारिजा : दैनिक वृत्त पुस्तिका।

उदक पत्र : धार्मिक अनुदान विषयक अभिलेखा।

उरका : रुक्का।

कब्ज या कबज : रसीद, स्वीकार पत्र, पटवारी द्वारा कृषक को हासल की या करों की किश्तों की प्राप्ति की रसीद।

कबूलियात : लिखित समझौता जिसमें राजस्व लेने का अधिकार रखने वाला व्यक्ति, करदाता को कर राशि के निर्धारण की सूचना लिखता था।

कबूलियतनामा : स्वीकृति, लिखित समझौता, प्रतयभ्युपगम, पट्टे का प्रारूप।

करार : लिखित समझौता (एग्रीमेंट)।

करारनामा : लिखित नियमपत्र या व्यावहारिक समझौता।

कर्जखत : ऋणबंध पत्र या चुकारे का वचन।

कर्द : भूमि को कृषि योग्य बनाने में प्राप्त आय और व्यय का लेखा।

कागजात चेहरानवीसी : पहचान के उद्देश्य से लिखा गया अभिलेख। इसमें घोड़ों एवं मनुष्यों के शरीर के पहचान चिह्नों को लिखा जाता था।

कागदां री बही : इन बहियों में व्यापारिक मार्ग, परिवहन के साधन, परिवहन शुल्क, कर, हुंडियों, नियम पत्रों, स्थानीय और अन्तरप्रान्तीय व्यापार, व्यापारिक मार्गों की सुरक्षा, मुद्रा और व्यापारियों को शासकों द्वारा दी गई छूट आदि का विवरण।

कैफियत : कार्यालय द्वारा जारी टिप्पणी अथवा काश्तकार एवं मुद्दई आदि द्वारा प्रस्तुत स्पष्टीकरण।

कौलनामा : दो पक्षों के बीच किसी लेन-देन के सम्बन्ध में किया गया वचन पत्र, समझौता पत्र, संधि पत्र या घोषणा युक्त अभिलेख।

कुर्की परवाना : राज्य का ऋण न चुकाने पर या राज्य के विरुद्ध अपराध करने पर सम्पत्ति अधिग्रहण का न्यायिक आदेश पत्र।

खरीता : राज्य के शीर्ष अधिकारी द्वारा दूसरे उच्चाधिकारी को लिखा गया विशेष पत्र। ईस्ट इण्डिया कम्पनी द्वारा किसी राज्य के नए राजा को राज्य का शासक स्वीकार करने के लिए जो पत्र भेजा जाता था, उसे खरीता कहते थे।

खसरा : पटवारी द्वारा तैयार की जाने वाली अभिलेख पंजिका जिसमें कृषक का नाम, कृषि भूमि का क्षेत्रफल, भूमि की किस्म, उत्पादित फसल, राज्य का भाग, कृषक का भाग आदि का विवरण लिखा जाता था।

खासरुक्का : शासक द्वारा अपने जागीरदारों अथवा राज्याधिकारियों को लिखा गया विशेष संदेश पत्र।

खेत-खत : कृषि भूमि या अंश प्रतिभूतियों से रहित भू-सम्पत्तियों के विक्रय या रेहन रखने से सम्बन्धित अभिलेख।

खूंट-खत : वह अभिलेख जिसके माध्यम से गांव, जागीर या ठिकाने में राजस्व संग्रहण के अधिकार किसी व्यक्ति को दिए जाते थे।

खतूत महाराजगान : महाराजाओं द्वारा परस्पर लिखे गए पत्र।

खतूत अहलकारान : राज्याधिकारियों द्वारा परस्पर लिखे गए पत्र।

ख्यात : लिखित इतिहास।

चकनामा : भूमिदान का आज्ञा पत्र।

चालान : सामान के साथ व्यक्ति विशेष को कोष के साथ भेजा गया

अभिलेख, बीजक, प्रमाणपत्र, प्रवेश पत्र।

चिट्ठी : स्फुट स्खलित पत्र।

चिहरा : व्याख्यात्मक संपीड़ित पत्र।

जमा खर्च बही : विभिन्न शीर्षकों में राज्य का खर्च संधारण करने वाली पुस्तिका।

टीप : हस्तलिखित संस्मरण या लेख्य, विशिष्ट प्रतिज्ञापत्र, बंध पत्र, या राज्य सरकार को धन अग्रसित करने वाले साहूकार को राजस्व विषयक अनुदान या उपकल्पन।

डौल जमाबंदी : वह अभिलेख जिसमें भूमि के मापन आदि के साथ अनुमानित राशि कर निर्धारण एवं भू-राजस्व का निर्धारण दर्शाया गया होता था।

ता अहद : समझौता, प्रतिबंध।

तखमीना : राजस्व, फसलों का उत्पादन आदि की विवरणी (स्टेटमेंट)।

तक्सीम : परगने के राजस्व का सार रूप लेखा जिसमें समस्त क्षेत्र के विवरण, हांकी गई भूमि, पड़त भूमि, उदक भूमि तथा वसूल किया गया राजस्व आदि का विवरण होता था।

तमस्सुक : प्रतिज्ञापत्र, इकरारनामा, हस्तलेख्य, लिखित अंगीकार, अभ्युपगम लेख या व्यवहार पत्र। इसे तम्मूसाक, तमसुक, तम्मूसुक तथा तोमसूक भी कहते थे।

तनदफ्तर : सरकार, जागीरदार, किसी भी सरकारी संस्था अथवा किसी भी व्यक्ति का व्यक्तिगत कार्यालय या पत्रावली, जिसमें व्यक्तियों को दिए गए राजस्व विषयक निर्देश पंजीकृत किए जाते थे।

तन्ख्वाह : धनादेश या धन विषयक लेख्य, विनिमय पत्र, शासकीय अधिकारी द्वारा किसी भी विशेष प्रखंड (प्रदेश) पर पारिश्रमिक, वेतन, सेवा प्रतिदान या पूर्व सेवार्थ वृत्ति के भागधेय पर निर्देश (पेमेंट ऑर्डर)।

तौजी : राजस्व परिगृहीता के लेखा को प्रदर्शित करने वाला राजस्व लेखा, राज्यों की पंजिका।

तहरीर : लिखित वक्तव्य।

तुमार : नाम सूची, पत्रावली, पंजिका, लेखा।

तुमार-ए-हाजिरी : उपस्थिति पंजिका।

दस्तक, दस्तग : राजस्व के नियमों का उल्लंघन करने वाले व्यक्ति के विरुद्ध जारी राशि जमा कराने का चेतावनी पत्र।

दस्तूर कौमवार : जातियों का वर्गीकृत विवरण रखने वाली पुस्तिका।

नवाजिशनामा : कृपा पत्र, इसमें किसी व्यक्ति को सरकार की तरफ से किसी वस्तु, अधिकार, राशि या वचन देने की सूचना होती थी।

निरख बाजार : सरकार द्वारा प्रतिदिन प्रसारित की जाने वाली वस्तुओं के बाजार भाव की सूची। इसे व्यापारियों के संघ द्वारा तैयार किया जाता था एवं जागीरदार द्वारा मोहर लगाकर प्रमाणित किया जाता था।

नकल : दस्तावेज की प्रतिलिपि।

निरख जमाबंदी : यह निरख बाजार का उप अभिलेख होता था, जिसमें विभिन्न फसलों की ग्रामवार प्रचलित दरें लिखी जाती थीं।

निशान : राजपरिवार के सदस्य द्वारा राजा के अतिरिक्त किसी भी व्यक्ति को लिखा गया पत्र निशान कहलाता था।

न्यौता : राजपरिवार में विवाह संस्कार, उपनयन, भोज आदि में सम्मिलित होने हेतु भेजा जाने वाला निमंत्रण। जब जागीरदार, सामंत आदि के यहाँ विवाह होता था, तो वह राजा को द्रव्य या भेंट देता था, उसे भी न्यौता कहते थे।

नुश्खा : लेखन का प्रारूप या नमूने की प्रति।

पंजा : विशेष राजाज्ञाओं पर राजा या युवराज द्वारा अपने हाथ का पंजा हल्दी, कुमकुम या केशर में डुबोकर अंकित किया जाता था।

पारचाखबर : समाचार पत्र या गुप्त संदेश पर टिप्पणी या सूचना।

परवाना : सरकार द्वारा राज्याधिकारियों के नाम जारी नियुक्ति पत्र, ऋणमुक्ति पत्र, वेतन सूचना, जागीर देने या जब्त करने की सूचना, अनुमति पत्र, अधिकार पत्र, निर्देश पत्र आदि। इन पर राजमुद्रा अंकित होती थी।

परवाना करार : परवाने का प्रारूप।

परवानगी : अनुमति, मुक्ति पत्र, अनुज्ञा पत्र या आदेश।

परवाना कुरकी : सरकार द्वारा जागीर, भूमि या चल-अचल सम्पत्ति अधिग्रहण या जब्त किए जाने का आदेश।

पत्र (कागद) : आदेश पत्र।

पट्टा : निश्चित अवधि हेतु जागीर या भूमि का स्वामित्व प्रदान किए जाने का अभिलेख, जिसे जागीरदार या राजा मुद्रांकित करता था।

प्रेमपत्री : स्त्री-पुरुषों द्वारा अपने प्रेमी या प्रेयसी को भेजा गया पत्र। यह प्राय: रंगीन कागज पर होता था, जिस पर सुगंध भी लगाई जाती

थी।

फड़द : सूचीपत्र।

फरमान : सम्राट द्वारा कनिष्ठ शासक के नाम प्रसारित आज्ञापत्र, शासन पत्र, राजकीय विशेषाधिकार पत्र।

फारिग खत : निस्तारण या ऋण परिशोध विषयक लेखपत्र।

फारिग खत्ती या फरक्ती : लिखित प्रतिग्रह पत्र-लेख या ऋण परिशोधन पत्र।

फरोख्त खत : विक्रय पत्र।

बही : लेखा पुस्तिका, दैनिक लेखावृत्त, गणन पुस्तिका। बहियों का उपयोग परवाना, हासिल, पट्टा, हुण्डियों के विवरण तथा गांवों की जकात आदि के विवरण का अंकन करने के लिए भी किया जाता था।

बेनामा : बेचान सम्बन्धी अभिलेख।

बे-पट्टा : क्रय के द्वारा प्राप्त विशेष अवधि तक का पट्टा या उपपट्टा।

बरात : राजकीय राजस्व विषयक आदेश (लाइसेंस), अभिलेख पत्र, अनुज्ञा अधिकार पत्र, आज्ञा शासन पत्र।

ब्याव री बही : किसी विवाह के लिए क्रय की गई वस्तुओं की प्रविष्टि पुस्तिका या बहियां। इनमें नेगाचार, रीति-रिवाज आदि की भी सूचना रहती थी।

महजरनामा : राज्याधिकारियों के समूह द्वारा सर्वोच्च अधिकारी अथवा शासक के सम्मुख प्रस्तुत सामूहिक प्रतिवेदन अथवा जनसाधारण द्वारा उच्च राज्याधिकारी या राजा के समक्ष प्रस्तुत सामूहिक ज्ञापन।

मापा राहदारी कागजात : भू-राजस्व एवं कर आदि के आकलन हेतु भूमि के माप और दूरस्थ व्यापार हेतु मार्ग कर का निर्धारण पत्र।

मिजालिक : मूल रूप से मिजालिक आय-व्यय पत्रक था, किंतु बाद में इसका उपयोग जागीरों के नाम, जागीरदारों की वृत्ति, अनुदान की राशि, घोड़ों की संख्या, सिपाहियों की संख्या, सरकारी ऋणों का विवरण, सेवा की शर्तें आदि विभिन्न सूचनाओं को अंकित करने वाली पंजिका के रूप में होने लगा। ये पंजिकाएं शासन के उच्चतम स्तर से लेकर निम्नतम स्तर पर प्रयुक्त होती थीं। इन्हें आधुनिक स्टॉक रजिस्टर, सर्विस रूल्स तथा सर्कुलर संधारण पंजिका कह सकते हैं।

मिजालिक बारदार और उजरदार : इन पंजिकाओं में परिवहन एवं डाक विषयक

वस्तुओं के प्रेषण, आयात-निर्यात, गुप्तचर सूचनाएं, आपराधिक जांच, जागीर व्यवस्था आदि का विवरण होता था।

मिजालिक पुण्य : इस पंजिका में दान-पुण्य विषयक अनुदान का विवरण लिखा जाता था।

मिजालिक मेहमानी : इस पंजिका में अतिथियों के आगमन, स्वागत, निवास व्यवस्था आदि का विवरण लिखा जाता था।

मिजालिक इक्तयादी ओर बेहाई : ऊँटों, घोड़ों आदि पशुओं की खरीद और लेखन सामग्री का स्टॉक रजिस्टर।

मिजालिक पेशकश और मिजालिक इनाम : इस पंजिका में उपहारों के लेन-देन का विवरण होता था।

मुचलका : लिखित प्रतिज्ञा लेख। यह सरकारी कर की निर्धारण दरों को स्वीकार करते हुए भूस्वामियों या कृषकों की ओर से प्रतिभूत्यात्मक संहतियों पर लागू होता था। इसे संरक्षा या क्षति-निस्तारक प्रतिज्ञा पत्र भी कहा जा सकता है।

मुख्तयारनामा : प्रतिनिधि या प्रतिहस्त की नियुक्ति या परकार्यसाधक का अधिकार।

मुख्तयारनामा खाश : परकार्य साधकत्व के साधारण अधिकार का लेख।

मुवाजना (कलां और खुर्द) : यह गांवों के सुदीर्घकालीन इतिहास से युक्त भूमि का विस्तृत अभिलेख होता था। इसमें गांव की भूमि की श्रेणी का विस्तार से वर्णन होता था जिसमें जोती हुई और पड़त भूमि, जंगल, ताल-तलैया, नदी-नाले, मगरा या पहाड़ी भूमि क्षेत्र भी लिखा जाता था। मुख्य गांव को कलां और उससे निःसृत उपगांव को खुर्द कहा जाता था। गावों के विवरण को बण्डल के रूप में रखा जाता था। इन दस्तावेजों में किसानों की स्थिति, बेगार प्रथा, जागीरदारों के विरुद्ध विभिन्न प्रकार की शिकायतें, अत्याचारों का विवरण, विभिन्न जातियों के भू-अधिकार एवं दायित्व आदि का विवरण भी गांव के इतिहास के रूप में उपलब्ध होता था।

याददास्त : भावी संदर्भ हेतु किसी सूचना से युक्त स्मरणपत्र।

राजीनामा : किसी सम्पत्ति के अधिकार या स्वामित्व या उपयोग हेतु निष्पादित किया गया लिखित समझौता (एग्रीमेंट)।

रिसाला : दीवान के द्वारा प्रेषित पत्र।

रेख की बही : शासन द्वारा दृश्य शैली में संधारित की जाने वाली पंजिका। इसमें

भू-राजस्व, लाग-बाब, विभिन्न प्रकार के कर आदि का विवरण होता था।

रोजगार : मुकदमे की कार्यवाही का लेख।

रोजनामा या रोजनामचा : प्रत्येक गांव या जागीर की आय-व्यय, भू-राजस्व, पेशकश, राहदारी, चोबी आदि विषयों की दैनिक डायरी। इन्हें पोतेदार तैयार करते थे और ये कई प्रकार की होती थीं।

रोजनामा दफ्तर बही : वेतनाध्यक्ष के कार्यालय का दैनिक लेखा।

रोजनामा कोतवाली चौंतरा : प्रतिदिन प्राप्त किए जाने वाले करों एवं चुंगी आदि से सम्बन्धित पंजिका।

रोजनामा पोद्दार : दैनिक मुद्रा विषयक लेखा (कैश बुक)।

रोजनामा खजाना : कोषागार का दैनिक लेखा (कैश बैलेंस बुक)।

रोजनामा स्याह : खतौनी का अंकन किए जाने वाली पंजिका। इसमें समस्त व्यय सामूहिक रूप से चढ़ाए जाते थे। उनकी प्रविष्टियों को जमा-खर्च कहते थे। इस पंजिका को तोजी और तकसीम भी कहते थे।

रुक्कात : स्मरण अंकन, पत्र संग्रह या पत्र पंजिका।

रुक्का : किसी भी व्यक्ति द्वारा राजा या बादशाह को पत्र लिखने हेतु प्रयुक्त पत्र फलक को रुक्का कहते थे। राजपूत रियासतों में इसे उरका भी कहा जाता था। वजीर को रुक्का नहीं लिखा जाता था, उसे तल्खीस लिखा जाता था।

लगन पत्रिका : वधू पक्ष की ओर से वर पक्ष को विवाह के निर्धारित पुरोगम की सूचना देने वाला और वर पक्ष की ओर से उक्त विषय स्वीकृति पत्र।

लेखा बही : इन बहियों में प्रसिद्ध व्यापारिक हुण्डियों से सम्बन्धित सूचनाएं निहित होती थीं।

लिखतम : लिखित रूप में समझौता, किसी भी पंजिका की प्रविष्टि।

वसीयतनामा : इच्छा पत्र। सम्पत्ति या अधिकार उपभोग के स्थानांतरण के सम्बन्ध में घोषणा।

वात : सभी प्रकार की कहानियां।

वाकया : घटनाओं के समाचार, विवरण।

विगत : विस्तार युक्त विवरण।

वकील रिपोर्ट : राज्य के वकीलों द्वारा भेजे गए समाचार या सूचनापत्र।

वाजिब-उल अर्ज : कनिष्ठ अधिकारी द्वारा वरिष्ठ अधिकारी के पास आदेश प्राप्ति हेतु भेजी गई टिप्पणी।

शासन (सासन) : पुण्यार्थ प्रदान की जाने वाली भूमि का राज्यादेश।

सनद : पदवी, उपाधि अथवा राजस्व संग्रहण अधिकार दायक पत्र, विशेषाधिकार पत्र।

सनद परवाना बही : इस पंजिका में शिल्पियों को किए जाने वाले पारिश्रमिक भुगतान, व्यापारिक मार्ग कर, मुद्रा, हुण्डी, मेलों की व्यवस्था, डाक व्यवस्था, परिवहन व्यवस्था आदि का विवरण लिखा जाता था।

सावा बही : यह नगरवार तैयार की जाती थी। इसमें व्यापारिक मार्ग, कर, मुद्रा, हुण्डी, धनागारिता और मार्ग सुरक्षा का विवरण लिखा जाता था।

सवानीह निगार : सफायत खजाना का समाचार पत्र।

सियाह-ए-अहकाम : लिखित रूप में शाही आदेश।

सियाह-ए-हुजूर : गणनपुस्तिका, कलम-पंजिका।

सियाह-ए-सवानेह : संदेशहर या आख्यायक की सूचना पत्रिका।

सियाह-ए-वाकया : घटनाओं की पुस्तिका।

सियाह-ए-चौकी : बाह्य स्थानों से सम्बन्धित दैनिक डायरी।

सियाह-ए-तशीहा : श्रमिक नामावली।

सियाह-ए-अहिवाल : मृतकों की सम्पत्ति का विवरण।

स्याह खुफिया : इस पंजिका में गुप्तचरों द्वारा परगनों के सम्बन्ध में वे गुप्त सूचनाएं अंकित की जाती थीं जो आमिलों (परगना अधिकारियों) के उपयोग की होती थीं। इनमें व्यापारियों एवं जागीरदारों के आचरण के सम्बन्ध में गुप्त सूचनाएं, अकाल के समय दी गई राज्य-सहायता, दीवानी तथा फौजदारी मुकदमों में दिए गए निर्णय, सुरक्षा, तस्करी, चोरी आदि की सूचनाएं अंकित की जाती थीं।

सम्मति पत्र : धार्मिक मामलों में विद्वानों द्वारा प्रेषित सम्मतियाँ।

स्याह : पंजिका या रजिस्टर।

स्याह दफ्तर बख्शी : बख्शी के कार्यालय की पंजिका।

स्याह हकीकत : वास्तविक तथ्यों, स्पष्टीकरणों, व्याख्याओं आदि की पंजिका।

❀❀❀

अध्याय - 4

राजस्थान राज्य अभिलेखागार, बीकानेर

राजस्थान के इतिहास की लिखित सामग्री को सुरक्षित रखने के उद्देश्य से राजस्थान में ई.1955 में राजस्थान राज्य अभिलेखागार की स्थापना की गयी। यह भारत का एक प्रतिष्ठिन संस्थान है। इस अभिलेखागार का मुख्यालय बीकानेर में है तथा इसकी शाखाएं जयपुर, जोधपुर, उदयपुर, कोटा, अजमेर, अलवर एवं भरतपुर में हैं। बीकानेर अभिलेखागार 5400 वर्ग गज क्षेत्र में बने एक भवन में स्थित है। लगभग 30 फुट ऊंचे अभिलेख संग्रहण कक्ष में लगे ऊंचे और भारी भरकम रैक किसी आश्चर्य से कम नहीं हैं। ई.1955 से पहले यह बीकानेर राज्य का अभिलेखागार था।

इन अभिलेखागारों में ऐतिहासिक, प्रशासनिक, सामाजिक, धार्मिक एवं आर्थिक दृष्टि से उपयोगी एवं दुर्लभ सामग्री संग्रहित है। इस सामग्री में मुगलकाल और मध्यकाल के अभिलेख, फरमान, निशान, मंसूर, पट्टा, परवाना, रुक्का, बहियां, अर्जियां, खरीता, पानड़ी, तोजी दो वरकी, अर्जदास्त, ताम्रपत्र, रजत पत्र, सियाह हजूर, अखबार, वकील रपट, दरबारी पत्र, चौपनिया एवं पंचांग आदि उपलब्ध हैं। यह सामग्री उर्दू, फारसी, अंग्रेजी, हिंदी, संस्कृत, डिंगल, पिंगल, ढूंढाड़ी, मारवाड़ी, मेवाड़ी, गुजराती, मराठी एवं हाड़ौती आदि भाषाओं में लिखी हुई है। एक अनुमान के अनुसार बीकानेर के अभिलेखागार में रखे गए दस्तावेजों को यदि धरती पर लम्बाई में फैलाया जाए तो उनकी लम्बाई पाँच लाख फुट होगी।

ऐतिहासिक महत्व

इस विपुल सामग्री से राजपूत रियासतों के मुगल शसकों से, ईस्ट इण्डिया कम्पनी से, ब्रिटिश क्राउन से एवं भारत की विभिन्न रियासतों से परस्पर सम्बन्धों का पता चलता है। साथ ही रियासती काल की भू-राजस्व व्यवस्था, अर्थव्यवस्था, सामाजिक व्यवस्था, राजनीतिक घटनाएं, प्रशासनिक व्यवस्था, न्यायिक व्यवस्था, प्रजामण्डल आंदोलन, स्वाधीनता संग्राम, राजाओं एवं महत्वपूर्ण व्यक्तियों के रियासतों के भीतर एवं रियासतों से बाहर के दौरों आदि की जानकारी होती है।

रियासती अभिलेखों की भाषा

बीकानेर अभिलेखागार के प्राविधिक खण्ड में 21 राज्यों के अभिलेख 7 संचय शालाओं में सुरक्षित किये गए हैं। जयपुर राज्य के अभिलेख ई.1622 से 1743 तक उर्दू एवं फारसी में तथा ई.1830 से 1949 तक के अंग्रेजी भाषा में उपलब्ध हैं। जोधपुर राज्य

के अभिलेख ई.1643 से 1956 तक के मारवाड़ी भाषा में तथा ई.1890 से 1952 तक अंग्रेजी भाषा में उपलब्ध हैं। कोटा राज्य के अभिलेख ई.1635 से 1892 तक हाड़ौती भाषा में उपलब्ध हैं। उदयपुर राज्य के अभिलेख ई.1884 से 1949 तक मेवाड़ी भाषा में तथा ई.1862 से 1947 तक अंग्रेजी भाषा में उपलब्ध हैं। बीकानेर राज्य के अभिलेख ई. 1625 से 1956 तक की अवधि के हैं। ये मारवाड़ी, उर्दू, अंग्रेजी और हिंदी में उपलब्ध हैं। इनके अतिरिक्त अलवर, किशनगढ़, बूंदी, सिरोही, भरतपुर, झालावाड़, कुशलगढ़ तथा करौली आदि रजवाड़ों के 19वीं एवं 20वीं शताब्दी के अभिलेख सुरक्षित हैं।

अभिलेखों की संरक्षण पद्धतियां

मुगल शासकों ने 'तोजी' के माध्यम से रिकॉर्ड को सुरक्षित रखा, उसी पद्धति का अनुसरण भारत की रियासतों ने किया। बहियां रखने की परम्परा उसी से प्रेरित थी। मुगल काल में केन्द्रीय शासकों से सम्पर्क के लिए फारसी भाषा का प्रयोग किया जाता था और स्वदेशी राजपूत राजाओं के परस्पर व्यवहार में उर्दू भाषा व्यवहृत होती थी। अंग्रेजों के पदार्पण तक अभिलेखों को बहियों में दर्ज किया जाता था। अंग्रेजों ने फ्लेट फाइलिंग पद्धति विकसित की। उनके आने के बाद टाइपिंग मशीन का प्रचलन भी आरम्भ हुआ।

युद्धों के कारण अभिलेखों की उपेक्षा

राज्य अभिलेखागार में 17वीं शताब्दी के बाद के अभिलेख ही उपलब्ध हैं। उससे पूर्व के अभिलेख, रियासतों द्वारा की गई उपेक्षा एवं दीर्घकालीन युद्धों के चलते नष्ट हो जाने के कारण उपलब्ध नहीं हो पाए।

छत्रपति शिवाजी से सम्बन्धित अभिलेख

प्राचीन महत्व के अभिलेखों में राजस्थान राज्य अभिलेखागार में छत्रपति महाराज शिवाजी के सम्बन्ध में अनेक अभिलेख उपलब्ध हैं। शिवाजी और उनके पुत्र संभाजी की शारीरिक पहचान के मूल दस्तावेज भी संग्रहित हैं।

1857 की सैन्य क्रांति से सम्बन्धित अभिलेख

1857 की सैन्य क्रांति के सम्बन्ध में भी विपुल एवं महत्वपूर्ण अभिलेख संग्रहित हैं, जो 1857 के आंदोलन के समय अंग्रेजों के विचार, देशी शासकों का रवैया एवं स्वतंत्रता सेनानियों की मानसिकता को दर्शाते हैं।

बीकानेर रियासत का अंग्रेजों से पत्र-व्यवहार

महाराजा गंगासिंह और महाराजा सार्दुलसिंह के अंग्रेजों के सम्बन्ध में दर्शाने वाले अभिलेख भी सुरक्षित हैं।

कमिश्नर एवं चीफ कमिश्नर कार्यालयों के अभिलेख

अंग्रेजी शासन के दौरान अजमेर के कमिश्नर एवं चीफ कमिश्नर कार्यालयों के

अभिलेख ई.1818 से लेकर 1956 तक की अवधि के हैं।

जागीरी संग्रह

राजस्थान राज्य अभिलेखागार बीकानेर में जागीर आयुक्त कार्यालय जयपुर का समस्त अभिलेख हस्तांतरित कर लिया गया है। इसके साथ-साथ अनेक जागीरदारों के संग्रहों का अणुचित्रण (माइक्रो फिल्म निर्माण) कर लिया गया है। इनमें भादरा का कुमेरसिंह संग्रह, हरासर का जीवराज संग्रह, ठाकुर आनंदसिंह संग्रह, जोरावरसिंह संग्रह, बिसाऊ ठिकाना संग्रह, डिग्गी ठिकाना संग्रह, नवलगढ़ ठिकाना संग्रह आदि प्रमुख हैं।

प्रजामण्डल अभिलेख

स्वतंत्रता आंदोलन के समय प्रजातांत्रिक मांगों को लेकर बनी प्रजा परिषदों एवं प्रजामंडलों के अभिलेख भी इस अभिलेखागार में उपलब्ध हैं। इन अभिलेखों में राजपूताना रियासतों में उत्तरदायी शासन की स्थापना की मांग को लेकर हुए आंदोलनों का इतिहास दर्ज है। इनमें अलवर राज्य प्रजा मण्डल, मेवाड़ राज्य प्रजा मण्डल, करौली राज्य प्रजामण्डल, जयपुर राज्य प्रजा मण्डल, जोधपुर राज्य प्रजा मण्डल, झालावाड़ राज्य प्रजा मण्डल, डूंगरपुर राज्य प्रजा मण्डल, बांसवाड़ा राज्य प्रजा मण्डल, प्रतापगढ़ राज्य प्रजा मण्डल, बीकानेर राज्य प्रजा मण्डल, भरतपुर राज्य प्रजा मण्डल, धौलपुर राज्य प्रजा मण्डल, सिरोही राज्य प्रजा मण्डल, बूंदी राज्य प्रजा मण्डल, किशनगढ़ राज्य प्रजा मण्डल के अभिलेख सम्मिलित हैं।

निजी एवं पारिवारिक संग्रहों के अभिलेख

राज्य के बहुत से निजी संग्रहकर्ताओं अथवा उनके परिवारों ने अपने निजी संग्रह अभिलेख भी राजस्थान राज्य अभिलेखागार को समर्पित कर दिए हैं। इनमें बीकानेर से प्राप्त भैया संग्रह[1], शिवकिशन व्यास संग्रह, राव गोपालसिंह वैद संग्रह, गंगादास कौशिक संग्रह, वैद्य मेघाराम शर्मा संग्रह, कुमारसिंह संग्रह, हुकुम लाल संग्रह आदि सम्मिलित हैं। भंवरलाल चेला लालचंद संग्रह तथा हंसराज बस्तीचंद चौधरी संग्रह जालोर से प्राप्त हुए हैं। जालोर से ही प्राप्त उदयचंद मेहता संग्रह, जोधपुर शाखा में रखा हुआ है। हरदयाल चंद माथुर संग्रह नागौर से प्राप्त हुआ है। गजेन्द्रसिंह चंदेला संग्रह हिमाचल प्रदेश के बिलासपुर राज्य से सम्बन्धित है। छगनराज टिकमणी संग्रह नागौर परगने से सम्बन्धित है। लोकमणि संग्रह नागौर परगने के परिवार से सम्बन्धित है। विजयसिंह पथिक संग्रह अजमेर से प्राप्त हुआ है। छगनराज चौपासनी वाला संग्रह तथा रामदत्त थानवी संग्रह जोधपुर से प्राप्त हुए हैं। मोहता सालमसिंह संग्रह जैसलमेर से प्राप्त हुआ है (यह जोधपुर शाखा में रखा हुआ है।) मेहता संग्रामसिंह संग्रह उदयपुर से प्राप्त हुआ है। वाल्टर नोबल स्कूल संग्रह बीकानेर राज्य के जागीरदारों की शिक्षा के विकास

---

1. इसे जैपाल भैय्या संग्रह भी कहते हैं।

के अध्ययन के लिए महत्वपूर्ण है।

अभिलेखागार के विभाग

अभिलेखागार की गतिविधियों को सुचारू रूपेण संचालित करने के उद्देश्य से 10 विभाग स्थापित किए गए हैं।

(1.) अभिलेख अवाप्ति विभाग : अभिलेखागार का यह विभाग विभिन्न रियासतों से प्राप्त अभिलेखों को वैज्ञानिक ढंग से सुरक्षित रखने का कार्य करता है। विभिन्न स्थलों से प्राप्त रिकॉर्ड को यह विभाग एक व्यवस्था प्रदान करता है। सूचीकरण तथा वर्गीकरण कार्य भी इसी विभाग के जिम्मे हैं। अन्य विभागों से अभिलेख अवाप्त करने का कार्य भी इसी विभाग के माध्यम से होता है। इसे प्राविधिक खण्ड भी कहते हैं।

(2.) मरम्मत एवं परिरक्षण विभाग : यह विभाग जीर्ण-शीर्ण रिकॉर्ड की मरम्मत करता है। अभिलेख परिरक्षण की सभी वैज्ञानिक पद्धतियाँ काम में जी जाती हैं। बहुपठनीय अभिलेखों का लेमीनेशन किया जाता है। दुर्लभ किंतु जीर्ण अभिलेखों के संरक्षण के लिए इस खण्ड में प्रयोगशाला बनी हुई है।

(3.) अणु चित्रण एवं डिजिटलीकरण विभाग : माइक्रो फिल्म पद्धति से भी रिकॉर्ड को सुरक्षित रखा जाता है। अर्थात् बहुमूल्य रिकॉर्ड का अणुचित्रण किया जाता है। अभिलेखागार के अभिलेखों की माइक्रो फिल्म बनाई जा रही हैं। इससे दस्तावेज अगले 500 साल तक सुरक्षित रहेंगे। अब तक लगभग 50 लाख दस्तावेजों का डिजिटलीकरण हो चुका है।

(4.) अभिलेख प्रकाशन विभाग : अभिलेखागार द्वारा समय-समय पर महत्वपूर्ण प्रकाशन किए जाते हैं। 'राजस्थान थ्रू दी एजेज' के तीन खण्डों के माध्यम से राजस्थान का विश्वसनीय इतिहास प्रकाशित करवाया गया है। बहुत से फारसी फरमान, निशान एवं मंसूर आदि का भी हिन्दी में अनुवाद एवं प्रकाशन करवाया गया है। 'फारसी फरमानों के प्रकाश में मुगल कालीन भारत एवं राजपूत शासक' तथा 'राजस्थान स्वाधीनता संग्राम के साक्षी' आदि ग्रंथों का भी प्रकाशन करवाया गया है। महत्वपूर्ण अभिलेखों की 26 सूचियों का प्रकाशन किया गया है। इससे शोधकर्ताओं को कार्य करने में सुविधा हो गई है। ख्यात देस दर्पण, बिजौलिया किसान आंदोलन आदि कई महत्वपूर्ण प्रकाशन किए गए हैं।

(5.) सर्वेक्षण-निरीक्षण विभाग : सर्वेक्षण विभाग पुरालेखीय महत्व के अभिलेखों के सर्वेक्षण का कार्य करता है। निजी संस्थाओं, परिवारों तथा व्यक्तियों के पास ऐसे अभिलेखों का पता लगाया जाता है। विभाग उक्त अभिलेखों को मूल रूप में प्राप्त करने का प्रयास करता है। अन्यथा उसकी माइक्रो फिल्म बना लेता है।

(6.) मौखिक इतिहास विभाग : अभिलेखागार के मौखिक इतिहास खंड (रिकॉर्डिंग रूम) में 246 स्वाधीनता सेनानियों, किसान आंदोलनों के नेताओं एवं प्रजामण्डल के नेताओं के संस्मरण उन्हीं की आवाज में ध्वन्यांकित कर रखे गए हैं, जिन्हें शोधार्थी एवं अन्य विजिटर्स सुन सकते हैं।

(7.) प्रशिक्षण विभाग : इस विभाग द्वारा राज्य सरकार के विभिन्न विभागों के कर्मचारियों को अभिलेख का राष्ट्रीय महत्व बताने के लिए प्रशिक्षण दिया जाता है, ताकि वे अपने कार्यालयों में अभिलेख संधारण के काम को सावधानी से करें।

(8.) प्रचार-प्रसार खण्ड : जनसाधारण में अभिलेखीय जागृति उत्पन्न करने के लिए अभिलेख सप्ताह, संगोष्ठियों, सेमिनारों, शिविरों आदि का आयोजन किया जाता है तथा अभिलेख सम्पदा के सम्बन्ध में जानकारी रखने वाले प्रबुद्ध विद्वानों के उद्‌बोधन आयोजित किए जाते हैं।

(9.) शोध एवं संदर्भ सेवा : राजस्थान और भारतीय इतिहास पर काम करने वाले लगभग 500 देशी-विदेशी शोधार्थियों और विद्वानों का इस अभिलेखागार में प्रतिवर्ष आगमन होता है। इस अभिलेखागार में संयोजित सामग्री इतिहास लेखन के मूल स्रोत के रूप में शोधार्थियों के लिए अत्यंत उपयोगी है। विदेशी छात्र प्रायः राजपूत रियासतों में मध्यकाल में महलों एवं जनसाधारण के आवासों में की जाने वाली चित्रकारी, माण्डने, भित्तिचित्र एवं रियासत काल में होने वाले आय-व्यय आदि विषयों पर शोधकार्य करते हैं।

(10.) पुस्तकालय सेवा : अभिलेखागार के पुस्तकालय में भूतपूर्व रियासतों के गजट, बजट, प्रशासनिक प्रतिवेदन, जनगणना रिपोर्ट्स एवं अन्य महत्त्वपूर्ण संदर्भ पुस्तकें उपलब्ध हैं। इस पुस्तकालय में 50 हजार से अधिक पुस्तकें हैं, जिन्हें 51 विषयों में व्यवस्थित किया गया है। देश की प्रतिष्ठित शोध पत्रिकाएं भी उपलब्ध हैं। इस पुस्तकालय में कुछ ऐसी दुर्लभ पुस्तकें भी उपलब्ध हैं, जो देश के किसी अन्य पुस्तकालय में नहीं हैं। अति प्राचीन पद्धति से छपी पुस्तकें भी देखी जा सकती हैं।

समाचार पत्रों की कतरनें

ई.1909 से लेकर स्वतंत्रता काल तक के समाचार पत्रों की 3000 से अधिक कतरनें भी इस अभिलेखागार में सुरक्षित हैं।

राष्ट्रीय पाण्डुलिपि मिशन

राज्य में राष्ट्रीय पाण्डुलिपि मिशन के अंतर्गत प्राचीन एवं दुर्लभ ग्रंथों की खोज का काम चल रहा है। इसके तहत राज्य अभिलेखागार ने कई लाख प्राचीन ग्रंथ खोजकर सुरक्षित किए हैं।

ऑनलाइन अभिलेख

इस अभिलेखागार के लगभग एक करोड़ अभिलेख ऑनलाइन उपलब्ध कराए गए हैं। अभिलेखागार में लगभग तीन करोड़ दस्तावेज ऑनलाइन किए जाने की योजना है।

जयपुर राज्य के अभिलेख

राजस्थान राज्य अभिलेखागार में आमेर (जयपुर) रियासत के अभिलेख क्रमबद्ध रूप से उपलब्ध हैं। ये अभिलेख मुख्यत: फारसी एवं ढूंढाड़ी (राजस्थानी) भाषा में उपलब्ध हैं। इन दस्तावेजों में लिपि दोष के कारण वर्तनी की अशुद्धियां प्रमुख रूप से उपलब्ध हैं। इनमें विराम, अर्द्धविराम, अनुस्वार एवं अर्द्धानुस्वार के अनुशासन का कड़ाई से पालन नहीं किया गया है। बहुत से दस्तावेजों में, सम्बन्धों में विभिन्नता का प्रदर्शन करने के लिए एक लम्बी रेखा खींच दी जाती थी अथवा दो खड़े विराम लगा दिए जाते थे। जयपुर रियासत के शासकीय पत्रों के आरम्भ में राज्य परिवार के इष्टदेव का नाम अंकित है। तत्पश्चात् मोहर, माला, फूल-पत्तियां तथा सही आदि के विशेष चिह्न बनाए गए हैं। इसके बाद मूल पाठ में प्रेषित का नाम, शहर, गांव तथा मुख्य विषय लिखा हुआ है। तत्पश्चात् आज्ञावाहक, प्रधान या प्रेषिक, अधिकारी की मोहर होती है। साधारण पत्र काली स्याही से लिखे गए हैं। रानियों के पत्र, विवाह तथा अन्य सामाजिक-पारिवारिक समाराहों के अभिलेख रंग-बिरंगी फूल-पत्तियों से अंकित हैं। इन पत्रों में हस्तनिर्मित सांगानेरी कागज प्रयुक्त हुआ है।

जयपुर राज्य के अभिलेखों में फरमान, निशान, सनद, अखबारात, वकील रिपोर्ट, महाराजगान, खतूत महाराजगान, खतूत अहलकारान, मुत्तफरक अहलकारान खरीता, फर्द, अल्खाब वाकिया, तोजी दस्तूर, पाना माहवरी, किकिरी खाना अभिलेख, महकमा बुतायत, कोषगढ़, तोषाखाना जीनखाना, रतनगढ़ कोठियार हजूरी, खजाना, फीलखाना, बरात, सिलहखाना, खुशबूखाना, ओखदखाना, गअखाना, तम्बोलकखाना, रसोईखाना, पात्तखाना, रोशनबकी, फराशखाना, खयालकखाना, शतूरखाना, सीवानगढ़, घोड़ा निकास, दाग घोड़ा, मेवाखाना, षापाखाना, मशालखाना, इमारतखाना, अड़सट्टा, असबल खर्च, सीगाजात, कौन्सिल फाइल आदि के अभिलेख सम्मिलित हैं।

कुछ दस्तावेज अग्निगृह, फौज किलेजात, जग्गरखाना, बर्फखाना, पालकीखाना, नगाड़खाना, पोथीखाना, अवधगृह रथखाना, शिकारखाना, नुस्खा उदक, चिट्ठीयात, पुंजा, जागीर, खरड़ा जमा खर्च, दरबार मुल्ला, अर्जियां, ड्यौढ़ी बाजार आदि से सम्बन्धित हैं। जयपुर राज्य के अभिलेखों से ज्ञात होता है कि रियासती शासन में विभागों की संख्या घटती-बढ़ती रहती थी। राजस्थान राज्य अभिलेखागार बीकानेर में जयपुर वकील कोर्ट्स भाग एक तथा भाग दो एवं वकील रिपोर्ट फारसी भाषा तथा राजस्थानी भाषा में प्रकाशित हुई है, जो जयपुर रियासत के अभिलेखों पर अच्छा प्रकाश डालती है।

जयपुर अभिलेखागार में रखे तोजी बण्डल एवं सजिल्द पुस्तकों के रूप में उपलब्ध दस्तूर कौमवार वि.सं.1700 से 2000 तक की दुर्लभ सामग्री है। तोजी बण्डल 42 हैं जिनकी नकल करके 34 पुस्तकें बनाई गई हैं। इस सामग्री से प्रत्येक जाति के बारे में विपुल जानकारी प्राप्त होती है। इन दस्तावेजों से राज्य के उत्सवों, रीति-रिवाजों, देशी रियासतों एवं अंग्रेजी सरकार से जयपुर राज्य के सम्बन्धों और विभिन्न नरेशों की जयपुर यात्राओं की जानकारी भी प्राप्त होती है। गुरु, संत, फकीर, ठाकुरद्वारों आदि की भी जानकारी मिलती है। जयपुर राज्य अभिलेखागार में विज्ञान एवं तकनीकी अभिलेख श्रृंखलाएं भी काफी महत्वपूर्ण हैं। कारखाने जात की उपश्रृंखलाएं, राज-परिवार के सदस्यों के दैनिक एवं विशेष अवसरों पर उपयोग में आने वाली विविध प्रकार की सामग्री की व्यवस्था, उत्पादन एवं निर्माण आदि कार्यों के दैनिक जमाखर्च का हिसाब अंकित है।

इमारतखाना अभिलेख श्रृंखला में 18वीं सदी के वास्तु विज्ञान की जानकारी के साथ, जलगढ़, सुदर्शन महल, बादल महल, चांदपोल बाजार, माणक चौक तथा हकीमजी की हवेली आदि बनवाने में प्रयुक्त सामग्री का विवरण प्राप्त होता है।

जयपुर राज्य की गौखाना (सं.1771-1898), शुतरखाना (सं.1815-1898), एवं फीलखाना (सं.1791-1898) अभिलेख श्रृंखलाओं में गाय, ऊँट तथा हाथियों की पौष्टिक खुराक की जानकारी दी गई है। पशुओं के बीमार पड़ने तथा चोटग्रस्त होने पर दी जाने वाली दवाओं तथा लगाए जाने वाले लेपों की भी जानकारी दी गई है। रोजनामा रंगखाना में कपड़े तथा भवनों को रंगने, सूरतखाना में कागज पर चित्र बनाने तथा ख्यालनामा में (सं.1850-55) से जयपुर में की जाने वाली आतिशबाजी की जानकारी दी गई है। जयपुर राज्य की रसोई खास (सं.1794-1883) अभिलेख श्रृंखला से राज्यपरिवार के सदस्यों के लिए बनने वाले व्यंजनों एवं भोजन की जानकारी मिलती है। सींवनघर अभिलेख श्रृंखला (सं.1796-1800) से विविध प्रकार के कपड़ों को सीने एवं सजाने की जानकारी मिलती है।

जागीर आयुक्त के पट्टाभिलेख भी अभिलेखागार की मूल्यवान धरोहर है। ईस्वी 1954 में राजस्थान से जागीरदारी प्रथा का उन्मूलन किया गया तथा जागीरों के पट्टे राजस्थान सरकार के जागीर आयुक्त द्वारा अधिग्रहित कर लिए गए। सरकार ने जागीरदारों को मुआवजा देकर ये पट्टे खरीदे। ई.1977-79 में राजस्थान राज्य अभिलेखागार ने इन पट्टों को अधिग्रहित कर लिया। ये पट्टाभिलेख ई.1852-1958 तक की अवधि के हैं। 5000 रुपयों से अधिक वार्षिक आय वाली जागीरों की संख्या 410 थी। इन 410 जागीरों की कुल पट्टाबहियों, रजिस्टरों एवं पट्टामिसलों की संख्या 1562 है। इन सबसे पुराना अभिलेख पाली जिले में तब स्थित जागीर बेड़काला का पट्टा है, जो ई.1852 (सं.1909) का है। सबसे बाद का अभिलेख भी पाली जिले में तब स्थित

जागीर रास का पट्टा है। यह ई.1958 का है।

जयपुर शाखा के अभिलेख

राजस्थान राज्य अभिलेखागार के जिला आर्काइव्ज ऑफिस जयपुर में ई.1900 से 1948 तक के अभिलेख हैं जो अंग्रेजी, हिन्दी, उर्दू एवं राजस्थान में रखे हुए हैं।

जोधपुर शाखा के अभिलेख

जोधपुर जिला कार्यालय में ई.1744 से 1969 तक के राजस्व अभिलेख सुरक्षित हैं। शायद ही कोई व्यक्ति इस अभिलेख को देखने वर्ष भर में यहाँ आता है।

उदयपुर शाखा के अभिलेख

उदयपुर क्षेत्र के 19वीं शताब्दी से पहले के विपुल अभिलेख बच नहीं पाए। जो बचे, उन्हें ही राज्य अभिलेखागार की उदयपुर शाखा में रखा गया है। इस शाखा की बख्शीशाला में ताम्रपत्रों की बही दर्शनीय है। इस बही में ई.1838 में 1,294 ताम्रपत्रों के नवीनीकरण करने का उल्लेख है। इन 1,294 ताम्रपत्रों में से 1,138 ताम्रपत्रों को गोरधनजी ने तथा 156 ताम्रपत्रों को रतना ने खोदा था। ये ताम्रपत्र महाराणा लाखा (ई. 1382-1421) के काल से लेकर महाराणा भीमसिंह (ई.1778-1828) तक के हैं।

कोटा शाखा के अभिलेख

अभिलेखागार की कोटा शाखा सूरज पोल स्थिल झाला हाउस में है। इसके तीन मंजिले भवन में कोटा रियासत का ई.1675 से 1948 तक का अभिलेख विद्यमान है। ये अभिलेख हाड़ौती, अंग्रेजी एवं उर्दू भाषा में हैं।

अजमेर शाखा के अभिलेख

अजमेर शाखा में ई.1860 से 1967 तक की अवधि के अभिलेख रखे हुए हैं। इन अभिलेखों की भाषा मुख्यत: अंग्रेजी, उर्दू तथा हिन्दी है।

अलवर शाखा के अभिलेख

डिस्ट्रिक्ट आर्काइव्ज ऑफिस अलवर में ई.1872 से 1965 तक के अभिलेख सुरक्षित हैं। ये मुख्यत: अंग्रेजी एवं राजस्थानी में हैं।

भरतपुर शाखा के अभिलेख

भरतपुर शाखा में ई.1870 से 1952 तक के अभिलेख हैं जो मुख्यत: उर्दू एवं हिन्दी में हैं।



अध्याय - 5

प्राचीन पाण्डुलिपियों का संग्रहालय राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान

राजस्थान की 19 रियासतों एवं विभिन्न ठिकाणों में संस्कृत, प्राकृत, डिंगल, पिंगल, अपभ्रंश, राजस्थानी तथा हिन्दी आदि भाषाओं में साहित्यकारों द्वारा साहित्य, ज्योतिष, आयुर्वेद एवं इतिहास सम्बन्धी विविध रचनाएं लिखी गईं एवं चित्रों का निर्माण किया गया। जयपुर, जोधपुर, उदयपुर, बीकानेर, कोटा, झालावाड़ आदि रियासतों द्वारा पोथीखानों एवं सूरतखानों की स्थापना की गई जिनमें इनके लेखन, चित्रांकन एवं प्रतिलिपिकरण का कार्य होता था। मेवाड़ नरेश महाराणा कुम्भा (ई.1433-68), बीकानेर नरेश महाराजा अनूपसिंह (ई.1669-98) तथा जोधपुर नरेश महाराजा मानसिंह (ई.1803-43) आदि राजाओं ने अपनी रियासतों में पुस्तकालयों की स्थापना करके पाण्डुलिपियों एवं चित्रों को संरक्षित किया। उदयपुर का सरस्वती भण्डार पुस्तकालय भी इस दिशा में महत्वपूर्ण कार्य कर रहा था। अलवर तथा कोटा भी इस दिशा में पीछे नहीं थे। फिर भी लाखों पाण्डुलिपियां एवं चित्रमालाएं पूरे प्रदेश में बिखरी पड़ी थीं। इन्हें सहेजने का कार्य आवश्यक था। अनेक जैन पोथी भण्डारों एवं निजी संग्रहालयों में भी हजारों पाण्डुलिपियां उपलब्ध थीं, जो राजस्थान के राजनीतिक, साहित्यिक एवं सांस्कृतिक इतिहास के निर्माण में विश्वसनीय स्त्रोत बन सकती थीं।

ई.1950 में इस बिखरी हुई हस्तलिखित सामग्री के एकत्रीकरण एवं प्रकाशन के लिए राजस्थान सरकार ने जयपुर में संस्कृत मण्डलान्तर्गत पुरातत्व मन्दिर की स्थापना की और तत्कालीन पुरातत्वाचार्य मुनि श्री जिनविजय को इसके संचालन का दायित्व दिया। मुनि जिनविजय के निर्देशन में अल्पावधि में हजारों की संख्या में ग्रन्थ संग्रहण, सम्पादन, सूचीकरण एवं प्रकाशन का कार्य हुआ। ई.1954 में राज्य सरकार ने संस्कृत मण्डल को भंग करके जनवरी 1956 में इसका पुनर्गठन किया तथा प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान अभिधान से एक नवीन स्थाई विभाग की स्थापना की। ई.1958 में इसका मुख्यालय जयपुर से जोधपुर स्थानान्तरित किया गया। इस संस्था के लिए निम्नलिखित उद्देश्य निर्धारित किये गए-

(1.) राजस्थान के भीतर एवं राजस्थान से बाहर उपलब्ध संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश, हिन्दी, राजस्थानी एवं अन्य भाषाओं के प्राचीन ग्रन्थों की खोज करना तथा उन्हें

प्रकाश में लाना।

(2.) प्राचीन हस्तलिखित ग्रन्थों के संग्रह तथा संरक्षण की व्यवस्था करना एवं उपयोगी ग्रन्थों का सम्पादन एवं प्रकाशन करवाना।

(3.) भारतीय भाषाओं एवं मुख्यत: संस्कृत एवं प्राचीन राजस्थानी के अध्ययन, अन्वेषण तथा संशोधन हेतु देश-विदेश में मुद्रित विविध विषयक अलभ्य एवं दुर्लभ सभी प्रकार के ग्रन्थों का संग्रहण करके सन्दर्भ पुस्तकालय स्थापित करना।

(4.) संग्रहित सामग्री से शोधकर्ताओं एवं विद्वानों को उनके अध्ययन एवं शोध में सहायता प्रदान करना।

(5.) राजस्थान के लोक-जीवन पर प्रकाश डालने वाले विविध विषयक लोकगीत, भक्ति-साहित्य आदि से सम्बन्धित सभी प्रकार की सामग्री का शोध, संग्रह, संरक्षण एवं प्रकाशन की व्यवस्था करना।

अधीनस्थ शाखाएं

प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान का मुख्यालय जोधपुर में तथा इसके अधीनस्थ छह शाखाएं जयपुर, अलवर, भरतपुर, कोटा, उदयपुर एवं बीकानेर में स्थापित की गईं। जोधपुर स्थित मुख्यालय में शैक्षणिक, तकनीकी, प्रशासनिक एवं अन्य विविध गतिविधियों के संचालन हेतु 10 अनुभाग कार्यरत हैं- (1.) पाण्डुलिपि संग्रह, (2.) विभागीय प्रकाशन, (3.) सन्दर्भ पुस्तकालय, (4.) प्राच्य कला वीथि, (5.) अणुचित्रण एवं ग्रन्थ डिजिटाईजेशन, (6.) ग्रन्थ-संरक्षण प्रकोष्ठ, (7.) स्टोर एवं बिक्री, (8.) बाइण्डिंग, (9.) स्थापना शाखा, (10.) लेखा शाखा।

पाण्डुलिपि संग्रह अनुभाग

प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान की सर्वप्रमुख प्रवृत्ति हस्तलिखित ग्रन्थ संग्रह ही है। इसलिए यह अपने स्थापनाकाल से हस्तलिखित ग्रन्थों की खोज एवं संग्रह में संलग्न है। प्रतिष्ठान की स्थापना के बाद राज्य सरकार ने राज्य के समस्त राजकीय पुस्तकालयों में विद्यमान हस्तलिखित ग्रन्थों को प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान जोधपुर में स्थानान्तरित कर दिया। इस समय जोधपुर मुख्यालय में लगभग 42 हजार हस्तलिखित ग्रन्थ हैं। ये हस्तलिखित ग्रन्थ, ताड़पत्र, भोजपत्र, चर्मपत्र, काष्ठफलक, कपड़ा एवं कागज पर विद्यमान हैं। भोजपत्रीय दुर्गा सप्तशती (17वीं शताब्दी) एक महत्वपूर्ण रचना है। ताड़पत्रों पर भागवतादि कई ग्रन्थ, चर्मपत्री आर्य महाविद्या 15वीं शताब्दी का एक बौद्ध धार्मिक ग्रन्थ है, जिसका लेखन स्वर्णाक्षर में किया गया है। कागदीय आधार पर प्राचीनतम ध्वन्यावलोकलोचन वि.सं. 1204 में प्रतिलिपित होने से अत्यंत महत्वपूर्ण है। काव्यशास्त्र विषयक इस ग्रन्थ के प्रणेता आनन्दवर्धन हैं जिसकी लोचन-टीका अभिनव गुप्त ने की। प्रतिष्ठान में सैंकड़ों चित्रित-ग्रन्थ उपलब्ध हैं, जिनमें राजपूत, कांगड़ा,

जम्मू-कश्मीर, पश्चिमी भारतीय शैली एवं राजस्थान की विभिन्न चित्र शैलियों का स्वरूप उपलब्ध हैं। पश्चिमी भारतीय शैली के अनेक विशिष्ठ कल्पसूत्र इस संग्रह की एक विशिष्ठ उपलब्धि हैं। बीकानेर शाखा में भी जैन चित्रित ग्रन्थों का विशाल संग्रह है। उदयपुर शाखा में भी मेवाड़ लघुचित्र शैली पर आधारित कई चित्रित पाण्डुलिपियां हैं, जिनमें विश्वविख्यात आर्षरामायण एवं गीतगोविन्द की सचित्र प्रतियां सम्मिलित हैं।

विभागीय प्रकाशन

महत्वपूर्ण ग्रन्थों का सम्पादन एवं प्रकाशन इस विभाग की विशिष्ठ प्रवृत्ति है। मुनि जिन विजय ने अप्रकाशित अथवा अल्पज्ञात ग्रन्थों के साधु-सम्पादनार्थ 'राजस्थान पुरातन ग्रन्थमाला' का प्रारम्भ किया। पुरातन ग्रन्थमाला का क्षेत्र अत्यन्त व्यापक है और इसमें प्राय: सभी विषयों से सम्बन्धित सामग्री है। प्रतिष्ठान द्वारा मुद्रित प्रकाशनों में वैदिक ऋषियों पर महर्षिकुलवैभवम्, वैदिक व्याकरण एवं स्वरों पर विशिष्ठ ग्रन्थ पथ्यास्वस्ति, तंत्र मंत्र एवं आगम साहित्य पर आगमरहस्य, सिंहसिद्धान्तसिन्धु, भुवनेश्वरी महास्तोत्र आदि विशिष्ट हैं। बाल चिकित्सा के क्षेत्र में बालतंत्र, जयपुर की वेधशाला एवं खगोलशास्त्र पर यंत्रराजरचना, साहित्यशास्त्र एवं काव्य के क्षेत्र में काव्यप्रकाश की संकेत टीका, चक्रपाणिविजय महाकाव्य, हम्मीर महाकाव्य आदि कई महत्वपूर्ण ग्रन्थ हैं। ई.1996 में शत्रुशल्यचरित महाकाव्य का प्रकाशन किया गया, जो उस समय तक अज्ञात एवं अप्रकाशित था। मध्यकालीन मारवाड़ के आर्थिक एवं सामाजिक इतिहास के अध्ययन की प्रचुर सामग्री प्रकाशित की गई है। 'मुहता नैणसी री ख्यात' राजस्थानी के ऐतिहासिक गद्य का प्रथम उदाहरण माना जाता है। 'मारवाड़ रा परगना री विगत' 'मध्यकालीन अर्थव्यवस्था के अध्ययन के लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण है। मारवाड़ के ख्यात साहित्य में नैणसी री ख्यात के अलावा महाराजा मानसिंह री ख्यात, महाराजा विजयसिंह री ख्यात, बांकीदास री ख्यात आदि कई महत्वपूर्ण ख्यातें इस विभाग से प्रकाशित हुई हैं। प्रतिष्ठान की इस ग्रन्थमाला के अधीन 213 ग्रन्थों का प्रकाशन किया गया है। यह कार्य निरंतर जारी है। त्रैमासिक शोध पत्रिका में भी काफी ज्ञानवर्धक सामग्री प्रकाशित की गई है। डॉ. फतेहसिंह ने अपने निदेशकीय काल में सिन्धुघाटी लिपि का 'ब्राह्मण एवं उपनिषद् साहित्य' के आधार पर पढ़ने का प्रयास किया। आधुनिक विश्व को इस सांकेतिक लिपि का वैदिक दृष्टि से परिचय कराने का श्रेय इसी विभाग को है।

16वीं शताब्दी के विख्यात वांगेयकार पुण्डरीक विट्ठल के सद्राग चन्द्रोदय, नर्तन निर्णय, रागमाला, रागमंजरी आदि 6 ग्रन्थों का मूलपाठ विस्तृत भूमिका के साथ प्रकाशित किया गया है, जो संगीत एवं कला के क्षेत्र की महान् उपलब्धि है। चौहान शासकों पर विभाग द्वारा वर्ष 1997 में 'हमीर महाकाव्य' का हिन्दी अनुवाद प्रकाशित करवाया गया। खेम कवि रचित 'हमीरायण' तथा 'शत्रुशल्यचरित' का प्रकाशन भी उल्लेखनीय योगदान कहे जा सकते हैं, क्योंकि 'शत्रुशल्यचरित' में बूंदी के चौहान

शासक राव रतन एवं शत्रुशल्य द्वारा बुरहानपुर, बलोचपुर एवं दौलताबाद आदि स्थानों पर लड़े गए युद्धों का वर्णन है। मेवाड़ के अप्रकाशित ऐतिहासिक काव्य 'राजरत्नाकर' भी प्रकाशित करवाया गया है। इस ग्रन्थ में महाराणा राजसिंह (ई.1652-80) के काल की अनेक घटनाओं एवं राजसमुद्र झील के निर्माण का ऐतिहासिक वर्णन उपलब्ध है।

17वीं शताब्दी के शेखावटी के नवाब जान न्यामत खां, हिन्दी एवं ब्रज के उत्कृष्ट कवि थे। उन्होंने 78 रचनाएं लिखीं। ई.2003 में इस कवि की तीन रचनाएं कथा रूपमंजरी, कथा कामरानी एवं कथा तमीम अंसारी हिन्दी अनुवाद एवं आलोचनात्मक अध्ययन के साथ प्रतिष्ठान पत्रिका विशेषांक में प्रकाशित की गईं। हिन्दी साहित्य के इस उपेक्षित कवि की एक रचना क्याम खां रासा वर्ष 1954 में इसी विभाग द्वारा प्रकाशित करवाई गई थी। ई.2004 में जान ग्रन्थावली प्रेमाख्यान के अन्तर्गत कथा कनकावती, कथा कौतूहली एवं कथा मधुकर मालती का प्रकाशन हिन्दी अनुवाद सहित करवाया गया। ई.2005 में कथा सीलवंती, कथा अरदेसर पातिसाह, बलूकिया विरही, लैला मजनूं, कथा कंवलावती, पुहपवरिखा, कथा संतवती तथा कथा कामलता जान ग्रन्थावली भाग-4 प्रकाशित हुए। ई.2010 में आयुर्वेद पर एक विशेषांक प्रकाशित करवाया गया।

सन्दर्भ पुस्तकालय

शोधार्थियों को शोध कार्य एवं अध्ययन हेतु हस्तलिखित एवं मुद्रित ग्रन्थ उपलब्ध हो सकें, इसके लिए इतिहास और भाषा विषयक सन्दर्भ पुस्तकालय स्थापित किया गया है। विभिन्न विषयों की शोध पत्रिकाएं तथा अनेक दुर्लभ पुस्तकें इस पुस्तकालय में उपलब्ध कराई गई हैं। वर्तमान में यहाँ लगभग 29 हजार मुद्रित पुस्तकें संग्रहित हैं।

ग्रन्थ सर्वेक्षण योजना

राष्ट्रीय पाण्डुलिपि मिशन नई दिल्ली के आर्थिक सहयोग से विभाग में ई.2003 से ग्रन्थ सर्वेक्षण योजना संचालित की जा रही है। इस योजना के अन्तर्गत जोधपुर, बीकानेर, डीडवाना, उदयपुर, कानोड़, राजसमन्द, कुम्भलगढ़, शिवगंज, चित्तौड़गढ़, शाहपुरा, भीलवाड़ा, कपासन, कोटा, बूंदी, बारां, करवड़, सवाईमाधोपुर, करौली, अजमेर, जयपुर, सीकर, फतेहपुर, अलवर, तिजारा, कुम्हेर, भरतपुर, डीग, कामां, चूरू, धौलपुर, हिण्डौन, सिरोही, साबला, आऊआ, शेषपुर आदि स्थानों के हस्तलिखित ग्रन्थ भण्डारों में एक लाख नवीन ग्रन्थों का पता लगाया गया। राज्य के अन्य स्थानों पर भी सर्वेक्षण कर नवीन ग्रन्थों का पता लगाया जा रहा है।

संगोष्ठियों, व्याख्यानमालाओं तथा चित्रित-ग्रन्थ प्रदर्शनियों का आयोजन

प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान द्वारा शैक्षिक महत्व के विषयों पर राष्ट्रीय संगोष्ठियों एवं चित्रित ग्रन्थों की प्रदर्शनी का आयोजन किया जाता है। विभाग द्वारा पण्डित मधुसूदन

ओझा की सारस्वत साधना, राजस्थान का संत साहित्य, राजस्थान का नाथ साहित्य, राजस्थान का ऐतिहासिक संस्कृत साहित्य, राजस्थान के ऐतिहासिक भाषा काव्य तथा राजस्थान का ऐतिहासिक गद्य साहित्य पर राष्ट्रीय संगोष्ठियों का आयोजन कर उनकी कार्यवाहियों को पुस्तकाकार प्रकाशित किया गया है। राष्ट्रीय पाण्डुलिपि मिशन नई दिल्ली के सौजन्य से वर्ष 2003 से वर्ष 2012 तक जोधपुर, उदयपुर, अलवर, बीकानेर, भरतपुर, जयपुर, कामां, चितौड़गढ़ एवं कोटा में लघुचित्रित ग्रन्थों की प्रदर्शनी का आयोजन किया गया। जनवरी 2012 में पाण्डुलिपि पठन एवं परिरक्षण पर दस दिवसीय कार्यशाला आयोजित कर शोधार्थियों को ग्रन्थ सामग्री से अवगत करया गया।

ग्रन्थ-संरक्षण प्रकोष्ठ

प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान द्वारा जीर्ण-शीर्ण हस्तलिखित ग्रन्थों का वैज्ञानिक दृष्टि से जीर्णोद्धार एवं संरक्षण करने के लिए कन्जर्वेशन लेबोरेट्री बनाई गई है। हस्तलिखित ग्रन्थों का वैज्ञानिक विधि से संग्रहण कर पुरा धरोहर को संरक्षित करना प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान की मुख्य गतिविधि है। इस हेतु संरक्षण प्रयोगशाला के माध्यम से जीर्ण-शीर्ण पत्रों की मरम्मत तथा डीएसिडिफिकेशन आदि माध्यमों से ग्रन्थ उपचारित किये जाते हैं। वर्ष 2003 से राष्ट्रीय पाण्डुलिपि मिशन की योजना में निरोधात्मक एवं क्रियात्मक संरक्षण के अन्तर्गत जीर्ण पत्रों का उपचार किया जा रहा है। ग्रन्थों के सरंक्षण की प्राचीन एवं अभिनव विधियों पर राष्ट्रीय कार्यशाला आयोजित करवाई गई, जिसमें प्रतिभागियों को ग्रन्थ संरक्षण की नवीन विधियों की सैद्धान्तिक एवं प्रायोगिक जानकारी दी गई। हस्तलिखित ग्रन्थों को लाल बस्तों से आवेष्टित किया गया है।

डिजिटाईजेशन

हस्तलिखित ग्रन्थों एवं सन्दर्भित पुस्तकों के डिजिटल फोटो देने की सुविधा उपलब्ध करवाई गई है। जुलाई 2008 में विभाग के हस्तलिखित ग्रन्थों के डिजिटाईजेशन की योजना में 68 लाख रुपए की लागत से एवं राष्ट्रीय पाण्डुलिपि मिशन, नई दिल्ली के सौजन्य से कार्य प्रारम्भ किया गया। जिसके अन्तर्गत निदेशालय जोधपुर के लगभग 45000 ग्रन्थों के 37 लाख पत्रों का डिजिटाईजेशन कार्य किया जा चुका है। ग्रन्थों के डिजिटाईज्ड होने के बाद शोध अध्येताओं को कम्प्यूटर पर ग्रन्थों के पठन की सुविधाएं उपलब्ध करवाई जा रही है।

जयपुर शाखा

प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान के जोधपुर मुख्यालय की स्थापना से पहले, जयपुर में ही इस संस्थान का मुख्य कार्यालय कार्यरत था। पं. पुरोहित हरिनारायण विद्याभूषण ने इस संस्था को 829 हस्तलिखित ग्रन्थ भेंट किये। स्थानीय पब्लिक लाइब्रेरी, पं. लक्ष्मीनारायण दाधीच आदि अनेक विद्वानों ने भी ग्रंथ भेंट करके इस संग्रह को आगे बढ़ाया। वर्तमान में

इस संग्रह में 13 हजार 47 हस्तलिखित ग्रन्थ हैं तथा यह संग्रह, सन्त साहित्य की दृष्टि से समृद्ध है।

अलवर शाखा

प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान की अलवर शाखा के इस संग्रह का मूल नाम पुस्तकशाला था जो महाराजा विनयसिंह (1815-1857 ई.) द्वारा 1040 हस्त लिखित ग्रन्थों के संग्रह के साथ आरम्भ की गई थी। अलवर शाखा धर्मशास्त्र एवं वेदान्त-साहित्य की दृष्टि से महत्वपूर्ण है। तर्कशास्त्र, मंत्रशास्त्र, ज्योतिष एवं साहित्य ग्रंथ उपलब्ध हैं। वैदिक शांखायन एवं आश्वलायन संहिता इस संग्रह के गौरव ग्रन्थ हैं। इस संग्रह में वर्तमान में 7 हजार 559 हस्तलिखित ग्रन्थों का संग्रह है।

उदयपुर शाखा

यह संग्रहालय मेवाड़ रियासत के अंतर्गत सज्जन वाणी-विलास के नाम से संचालित होता था। इस संग्रहालय के विकास में चित्तौड़गढ़ के महाराणा कुम्भा (ई. 1433-68), महाराणा जगतसिंह (ई.1628-52), महाराणा स्वरूपसिंह (ई. 1842-61) तथा महाराणा सज्जनसिंह (ई.1874-84) का बड़ा योगदान है। ई. 1950-51 में विक्टोरिया हॉल पुस्तकालय की उपलब्ध सामग्री को भी इसमें सम्मिलित कर इसे सरस्वती भवन पुस्तकालय नाम दिया गया। ई.1961 में इस पुस्तकालय की हस्तलिखित सामग्री से राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, उदयपुर शाखा की स्थापना की गई। इस शाखा कार्यालय के संस्कृत, प्राकृत एवं हिन्दी राजस्थानी के सभी सूची पत्र प्रकाशित किये जा चुके हैं। उदयपुर शाखा में 6 हजार 910 ग्रन्थों का संग्रह है।

चितौड़गढ़ ग्रन्थ संग्रह

मुनि जिनविजय के प्रयत्नों से इस शाखा की स्थापना ई. 1962-63 में हुई। इस शाखा के समस्त हस्तलिखित ग्रन्थ दान में प्राप्त हैं। समग्र ग्रन्थों की कुल संख्या 5 हजार 456 है। साथ ही 1 हजार 886 मुद्रित पुस्तकें एवं 425 पत्र-पत्रिकाएं उपलब्ध हैं। चितौड़गढ़ शाखा के ग्रन्थ भी उदयपुर प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान ले जाए गए हैं।

बीकानेर शाखा

बीकानेर शाखा में संग्रह किए गए समस्त ग्रंथ भेंट से प्राप्त हैं। इस संग्रह में 29 हजार 429 हस्तलिखित ग्रन्थों एवं संस्कृतियों का संग्रह है। पश्चिमी भारतीय शैली में चित्रित जैन कल्पसूत्र एवं जैन लघु चित्रशैली के कई महत्वपूर्ण ग्रन्थ इस शाखा में उपलब्ध हैं।

कोटा शाखा

राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान की कोटा शाखा को सरस्वती भण्डार के नाम से जाना जाता था। कोटा महाराव दुर्जनशाल (ई.1723-56) संस्कृत भाषा के प्रकाण्ड

पण्डित थे। उन्होंने वल्लभ सम्प्रदाय के अनेक ग्रन्थों की रचनाएं करवाई। महाराव उम्मेदसिंह (ई.1771-1819) के काल में भी सरस्वती भण्डार को काफी प्रोत्साहन मिला। प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान की शाखा स्थापना के समय सरस्वती भण्डार के 6 हजार हस्तलिखित ग्रन्थों में से 4 हजार 834 ग्रन्थ स्थानान्तरित कर दिये गये। शेष आज भी माधोसिंह म्यूजियम एवं कोटा म्यूजियम में उपलब्ध हैं। वर्तमान में कोटा शाखा में 9 हजार 966 ग्रन्थ उपलब्ध हैं।

भरतपुर शाखा

राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान की भरतपुर शाखा में भरतपुर, कामां, डीग, करौली एवं अन्य स्थानों के विभिन्न ग्रंथ-संग्रहकर्ताओं एवं विद्वानों से भेंट में प्राप्त किए गए हैं। इस शाखा की स्थापना ई.1985 में की गई। वर्तमान में यहाँ 10 हजार से अधिक ग्रन्थों का संग्रह है। इस संग्रह के हिन्दी-राजस्थानी तथा संस्कत-प्राकृत ग्रन्थों के तीन सूचीपत्र प्रकाशित किए गए हैं। ब्रज साहित्य का संग्रह प्रचुर मात्रा में उपलब्ध है।

मुख्यालय आर्ट गैलेरी

जोधपुर आने वाले देशी-विदेशी पर्यटकों को अमूल्य साहित्यिक धरोहर से परिचित कराने के उद्देश्य से प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान जोधपुर में अभिनव आर्ट गैलेरी स्थापित की गई है। इसमें प्रदर्शित निम्नलिखित सामग्री विशेष रूप से उल्लेखनीय है-

(1.) पाल, राजपूत, कांगड़ा, पश्चिमी भारतीय, जम्मू कश्मीर, दक्षिण भारतीय तथा राजपूताना के शासकों के संरक्षण में पल्लवित लघुचित्र शैलियों के ग्रन्थ।

(2.) पन्चपाठ, द्विपाठ एवं त्रिपाठ (ग्रन्थ लेख शैली के निदर्शन) के हस्तलिखित ग्रन्थ।

(3.) विश्व विख्यात आर्ष रामायण एवं गीतगोविन्द सचित्र।

(4.) वि.सं.1485 का कागदीय आधार पर सोमसुन्दर सूरि के आदेश से प्रतिलिपित स्वर्णमसि का चित्रित कल्पसूत्र।

(5.) पाल शैली का उत्कृष्ट निदर्शन चर्मपत्रीय आर्य महाविद्या।

(6.) सूक्ष्माक्षरीय भागवत गीता आदि कई ग्रन्थ, जिन्हें लेंस की सहायता से ही पढ़ा जा सकता है।

(7.) अगणित भुजाओं में सहस्त्रों मंत्र-यंत्रों से सुसज्जित देवी चण्डिका का वृहद् चित्र।

(8.) ब्रह्माण्ड वर्णन का वृहदाकार पट चित्र।

(9.) दुर्लभ जैन क्षमापना पत्र (विज्ञप्ति पत्र) एवं सचित्र 314 फुट लम्बी जन्म-पत्रियां।

(10.) विद्या, यश, अर्थ एवं आरोग्य प्रदान करने वाले सर्वतोभद्र, मणिभद्र, सूर्यप्रताप,

गायत्री कामधेनु, गोपाल पूजन, कर्पूरचक्रादि एवं पीरनामा आदि हिन्दू एवं परशियन यन्त्र।

(11.) विशाल रंगीन पैनल्स में विभिन्न ग्रन्थों के आधार, प्रकार, विभिन्न लिपियां एवम् चित्र शैलियों के निदर्शन एवं विभागीय प्रकाशन।

राजस्थान के प्राचीन साहित्य, इतिहास, चित्रकला, आयुर्वेद, शिल्पशास्त्र, धर्म, दर्शन, रियासती रीति-रिवाज आदि के प्राचीन ग्रंथों एवं पाण्डुलिपियों के अवलोकन एवं अध्ययन के लिए राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान विश्व भर में बेजोड़ है।



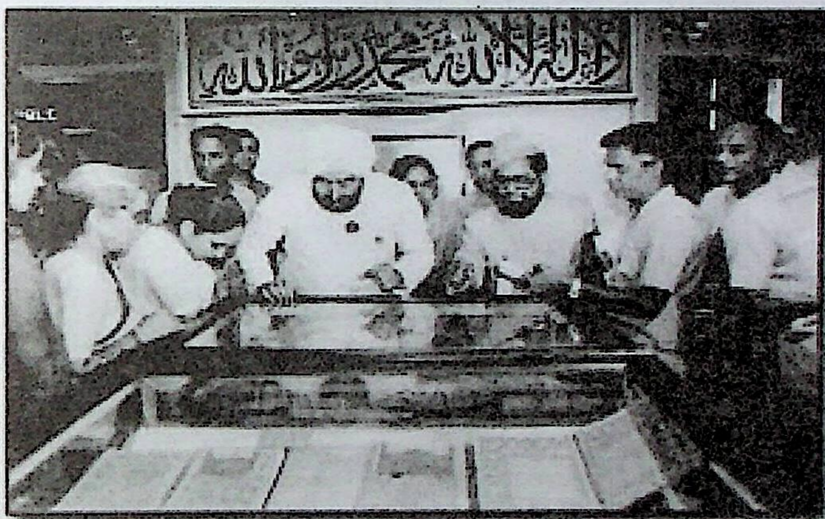
अध्याय - 6

मौलाना अबुल आजाद
अरबी–फारसी शोध संस्थान, टोंक



टोंक रियासत के तीसरे नवाब मोहम्मद अली खाँ ने अपने महल में बड़ी संख्या में हस्तलिखित पोथियां संग्रहित कीं। अंग्रेज सरकार ने इस नवाब को रियासत से निष्कासित करके बनारस भेज दिया था, किंतु बाद के नवाबों के समय भी पाण्डुलिपियों का यह संग्रह बना रहा। जब राजपूताना रियासतों का विलय राजस्थान में हुआ, तब हस्तलिखित पोथियों का यह मूल्यवान संग्रह जिला सईदिया पुस्तकालय को स्थानांतरित किया गया। ई.1961 में इसे राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान की टोंक शाखा के रूप में स्थापित किया गया। राज्य भर में फैले राजकीय पुस्तकालयों और संग्रहालयों में बड़ी संख्या में उपलब्ध अरबी–फारसी के हज़ारों ग्रन्थों को इस संस्थान में हस्तान्तरित कर दिया गया। इन संग्रहों को अलवर संग्रह, भरतपुर संग्रह, जयपुर संग्रह, उदयपुर संग्रह और झालावाड़ संग्रह के नाम से संरक्षित किया गया।

ई.1978 में राज्य सरकार द्वारा इस संग्रह के लिए 'अरबी–फारसी रिसर्च सेन्टर' के नाम से अलग निदेशालय बनाया गया। साहिबज़ादा शौकत अली खाँ को इसका प्रथम निदेशक नियुक्त किया गया। राजस्थान सरकार ने इस संस्थान के लिए नवीन भवन का निर्माण क़रवाया, ताकि इस दुर्लभ साहित्य को आधुनिक संसाधनों के साथ सुरक्षित रखा जा सके। ई.1989 में मौलाना अबुल कलाम आज़ाद शताब्दी समारोह के दौरान राज्य सरकार ने इस संस्थान का नाम बदलकर 'मौलाना अबुल कलाम आज़ाद अरबी–फारसी



शोध संस्थान' कर दिया।

वर्तमान में यह संस्थान, टोंक जिला मुख्यालय पर स्थित है तथा सरकार द्वारा स्थापित अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त संस्थान है। यह संस्थान 1,26,000 वर्गफुट क्षेत्रफल में स्थित है। 7,173 वर्ग फुट क्षेत्र में मुख्य भवन एवं 6,315 वर्ग फुट क्षेत्र में स्कॉलर्स गेस्ट हाउस बना हुआ है जिसमें 8 कमरों के साथ डाइनिंग हॉल, विजीटिंग हॉल आदि की व्यवस्था है। संस्थान में संधारित साहित्य में 8,053 दुर्लभ हस्तलिंखित ग्रन्थ, 27,785 मुद्रित पुस्तकें, 10,239 क़दीम रसाइल, 674 फ़रामीन एवं भूतपूर्व रियासत टोंक के महकमा शरीअत के 65,000 फैसलों की पत्रवलियों के साथ-साथ हज़ारों अनमोल अभिलेख, प्रमाण-पत्र तुग़रे और वसलियां उपलब्ध हैं। यह साहित्यिक धरोहर पांचवी सदी हिजरी से वर्तमान समय के लेखन, प्रकाशन और उनके अनुवादों पर आधारित है। इनमें क़ुरआन, क़रिअत, फ़िक़ह, तसव्वुफ़, फ़लसफ़ा, मन्तिक़, सीरत, तारीख़, तिब, नुजूम और अदब आदि विषयों के साथ-साथ बुज़ुर्गाने दीन के मलफ़ूज़ात शामिल हैं।

यह संस्थान अपने दुर्लभ एवं अद्‌भुत साहित्य के लिए विश्व प्रसिद्ध है। यहाँ हिस्टोरियोग्राफी, ओरियन्टोलॉजी एवं इस्लामिक स्टडीज पर अमूल्य एवं दुर्लभ सामग्री संग्रहित है। इसके अतिरिक्त विभिन्न विषयों जैसे सूफिज्म, उर्दू, अरबी एवं फारसी साहित्य, केटेलाग्स, यूनानी चिकित्सा, स्वानेह हयात (आत्मकथा), मध्यकालीन इतिहास, स्वतन्त्रता संग्राम सम्बन्धी साहित्य, ख़त्ताती, रीमिया, कीमिया, सीमिया, दर्शनशास्त्र, तर्कशास्त्र, विधिशास्त्र, मन्तिक़, विज्ञान एवं शिकार आदि विषयों पर विपुल साहित्य उपलब्ध है।

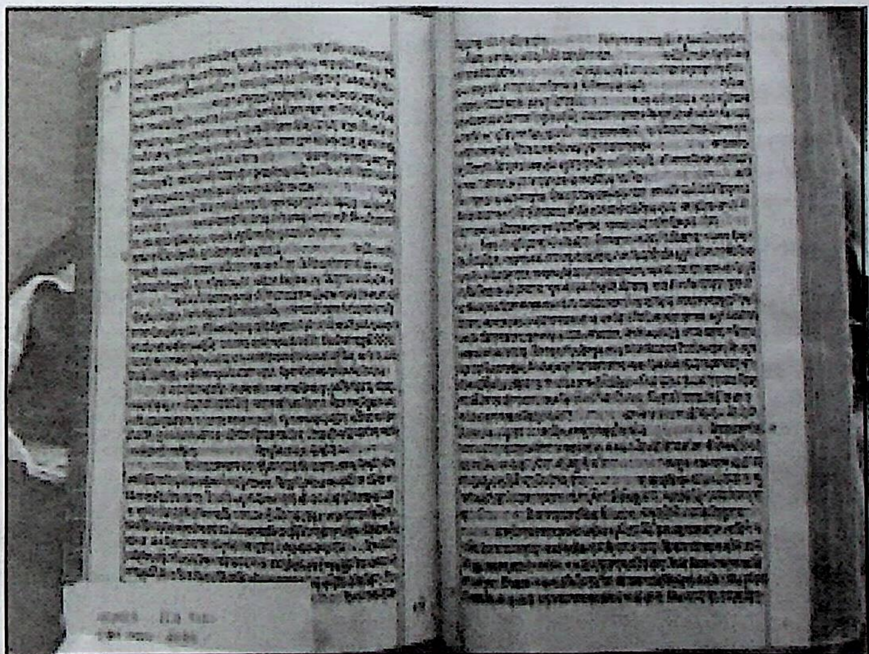


इस संस्थान को समृद्ध बनाने के लिए राज्य सरकार ने प्रदेश भर में निजी स्वामित्व में रखे विपुल साहित्य को धन देकर खरीदा। बहुत से विद्वानों ने इस संस्थान को हस्तलिखित पोथयां एवं मुद्रित साहित्य भेंट में भी दिया, जिन्हें उन्हीं के नाम से अलग संग्रह के रूप में संरक्षित किया गया है। इसमें शाग़िल कलक्शन जयपुर, जौहर कलक्शन टोंक, पंडित राम निवास नदीम कलक्शन टोंक, मौलाना उबेद अरब कलक्शन भोपाल, चांद बिहारी लाल सबा कलक्शन जयपुर, मौलवी हकीम मौहम्मद अहमद कलक्शन टोंक एवं कैप्टिन साहिबज़ादा एम. शमशेर ख़ान शाहीन कलक्शन आदि प्रमुख हैं।



अध्याय - 7

प्रताप शोध प्रतिष्ठान एवं भूपाल नोबल्स संग्रहालय, उदयपुर



भूपाल नोबेल महाविद्यालय उदयपुर परिसर में स्थित प्रताप शोध प्रतिष्ठान में रियासती काल का महत्वपूर्ण अभिलेख संरक्षित है। यह अभिलेख मुख्यत: मेवाड़ रियासत के विभिन्न ठिकानों से सम्बन्धित है। प्रताप शोध प्रतिष्ठान की स्थापना ई.1967 में हुई थी। इसकी स्थापना का उद्देश्य इतिहास, साहित्य, संस्कृति एवं कला आदि विषयों में शोध कार्य हेतु मूल अभिलेख उपलब्ध करवाना है। विगत 50 वर्षों में यह संस्थान अनुसन्धान सामग्री उपलब्ध करवाने वाले महत्वपूर्ण केन्द्र के रूप में देश भर में ख्याति प्राप्त कर चुका है। प्रतिष्ठान द्वारा कई हजार अभिलेखीय बहियों, पट्टों परवानों, दस्तावेजों एवं प्राचीन ग्रन्थों का संग्रह किया गया है। उच्च अनुसन्धान कार्य में रुचि रखने वाले 3500 से अधिक शोधार्थियों द्वारा इस केन्द्र में संग्रहित सामग्री पर शोध कार्य किया जा चुका है। प्रताप-शोध प्रतिष्ठान द्वारा मज्झमिका नामक शोध पत्रिका का प्रकाशन भी किया जाता है। यह पत्रिका ई.1967 में स्थापित की गई थी। इसके 50 अंकों का

प्रकाशन किया जा चुका है। संस्थान द्वारा अनेक ऐतिहासिक ग्रंथों एवं शोध ग्रंथों का प्रकाशन भी किया गया है।

भूपाल नोबल्स संग्रहालय

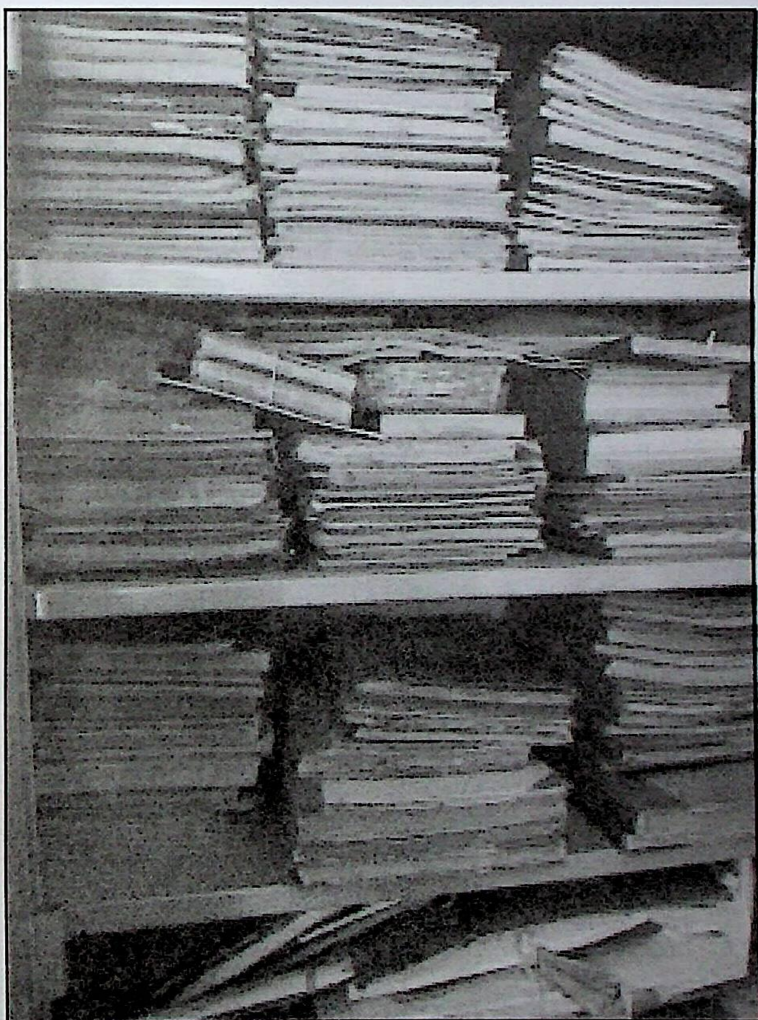
भारतीय कला और संस्कृति को सरंक्षण देने के उद्देश्य से प्रताप शोध प्रतिष्ठान द्वारा भूपाल नोबल्स संग्रहालय की स्थापना की गई है। संग्रहालय में आधारभूत सामग्री प्राप्त करने हेतु प्रदेश की पूर्व रियासतों, पूर्व ठिकानों, प्रतिष्ठित घरानों, देवमन्दिरों, जैन उपासरों एवं आदिवासी अचंलों में बिखरी ऐतिहासिक सामग्री जुटाई गई है। संग्रहालय में सैकड़ों मध्यकालीन एवं आधुनिक काल के चित्रों तथा विविध कला-सामग्री का संग्रहण एवं प्रदर्शन किया गया है। इनमें हिन्दू नरेशों, विख्यात योद्धाओं, प्रमुख स्वतन्त्रता सेनानियों, साहित्यकारों, संतों सामाजिक रीति-रिवाजों एवं परम्पराओं आदि के 300 से अधिक तैलचित्र सम्मिलित हैं। राजस्थान के ऐतिहासिक स्थलों एवं विख्यात युद्ध-दृश्यों के बड़े आकार के कई चित्र प्रदर्शित किए गए हैं। भक्त शिरोमणि मीरांबाई का ऐतिहासिक तैलचित्र और महाराणा भूपालसिंह (ई॰1930-56) की पाषण प्रतिमाएँ भी प्रदर्शित हैं। ऐतिहासिक पोशाकों एवं विभिन्न प्रकार के अस्त्र-शस्त्रों के साथ-साथ विभिन्न प्रकार के उपकरणों, मूर्तियों, शिलालेखों, ताम्रपत्रों तथा ताड़पत्रों का भी संग्रह किया गया है।

ग्रन्थालय

प्रतिष्ठान द्वारा अंचल का सर्वेक्षण कर इतिहास, साहित्य, संस्कृति, ज्योतिष, आयुर्वेद, गणित, भूगोल एवं अर्थशास्त्र आदि विषयों के ग्रन्थों की खोजकर उनको समूल्य अथवा भेंट में प्राप्त किया गया है। केन्द्र में प्राप्त पाण्डुलिपियों एवं ग्रंथों को उचित रख-रखाव एवं मरम्मत के पश्चात्, अनुसंधान हेतु शोधार्थियों को उपलब्ध कराया जाता है। केन्द्र में 16वीं से 20वीं शताब्दी की अनेक दुर्लभ पाण्डुलिपियाँ सुरक्षित हैं। बनेड़ा से पं॰ रविशंकर देराश्री संग्रह की पाण्डुलिपियों का भी केन्द्र के ग्रंथालय में संग्रहण, परिरक्षण एवं सूचीकरण किया गया है।

पुस्तकालय

प्रताप शोध प्रतिष्ठान के सन्दर्भ पुस्तकालय का नाम राजस्थान के प्रथम अंग्रेज इतिहासकार कर्नल जेम्स टॉड के नाम पर 'टॉड पुस्तकालय' रखा गया है। इसमें इतिहास, साहित्य, कला, संस्कृत, हिन्दी अंग्रेजी एवं राजस्थानी भाषा की लगभग 10 हजार पुस्तकों का दुर्लभ संग्रह है। ब्रिटिशकाल में प्रकाशित सचित्र बड़ी पुस्तकों का दुर्लभ संग्रह भी उपलब्ध है। विगत 100 वर्षो में विभिन्न संस्थाओं द्वारा प्रकाशित विभिन्न शोध पत्रिकाओं के सम्पूर्ण अंक भी सुरक्षित हैं। शोधार्थियों की सहायता के लिए इन पत्रिकाओं में प्रकाशित आलेखों की सूची तैयार की गई है। पुस्तकालय की सामग्री में अधिकांश सामग्री सौ से एक सौ पचास वर्ष पुरानी है। ओझा संग्रह में पं॰

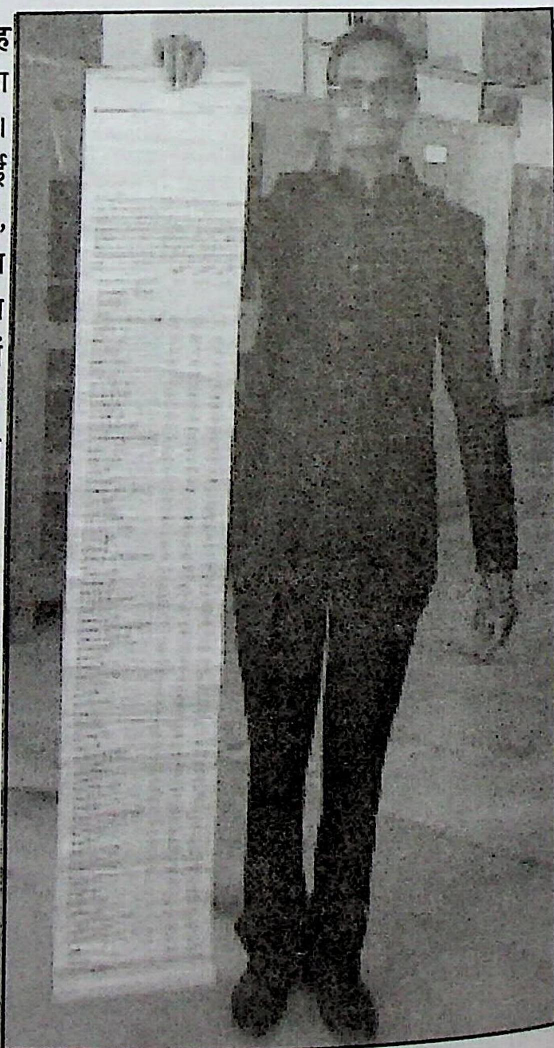


गौरीशंकर हीराचन्द ओझा के निजी संग्रह की लगभग तीन हजार दुर्लभ पुस्तकें तथा प्रो. धर्मपाल शर्मा के निजी संग्रह से प्राप्त इतिहास एवं साहित्य की लगभग दो सौ दुर्लभ पुस्तकें संग्रहित की गई हैं। केन्द्र में आने वाले शोधार्थियों को अध्ययन, जलपान, आवास एवं टेलीफोन आदि की सुविधाएं निःशुल्क उपलब्ध कराई जाती हैं। उन्हें शोध सामग्री की छाया प्रतियां, कम्प्यूटर सुविधा, माईक्रो फिल्म-रीडर तथा, फोटोग्राफर सुविधा भी उपलब्ध कराई जाती है। साथ ही शोधार्थियों को पत्राचार के माध्यम से भी शोध सामग्री भेजी जाती है।

पुरालेखागार

राजस्थानी की पूर्व रियासतों की अधिकांश अभिलेखीय सामग्री राष्ट्रीय, राज्य एवं निजी अभिलेखागारों में सुरक्षित है परन्तु इन राज्यों के अधीनस्थ सामन्तों, ठिकानों, श्रेष्ठि

परिवारों, प्रतिष्ठित घरानों, व्यवसायियों तथा तीर्थस्थलों की अभिलेखीय सामग्री के संरक्षण की दिशा में बहुत कम काम हुआ है। प्रताप शोध प्रतिष्ठान ने राजस्थान एवं इसके पड़ौसी राज्यों के ठिकानों, घरानों एवं संस्थाओं से संपर्क कर महत्वपूर्ण अभिलेखीय सामग्री प्राप्त की है। इस अभिलेख को वैज्ञानिक विधि से श्रेणीबद्ध करके शोधार्थियों के लिए उपयोगी बनाया गया है। पुरालेखीय सामग्री में विभिन्न पक्षों के तत्कालीन राजनैतिक सम्बन्धों तथा आर्थिक, सामाजिक, न्यायिक, प्रशासनिक एवं सांस्कृतिक क्रिया-कलापों का प्रामाणिक दिग्दर्शन होता है। इन अभिलेखों से शासक, ठिकानेदार, प्रशासनिक कर्मचारी, आम जनता के सम्बन्धों एवं रीति-नीति की जानकारी मिलती है। प्रत्येक ठिकाने, घराने संस्थान से प्राप्त अभिलेखों को अलग-अलग कक्षों में सुरक्षित किया गया है। प्रतिष्ठान के अभिलेखागार में मुख्यत: निम्नलिखित ठिकानों एवं घरानों की सामग्री संग्रहित है-



(1.) बनेड़ा दानपत्र-संग्रह : देराश्री संग्रह में मूलतः बनेड़ा के दानपत्रों का संग्रह है। आजीविका हेतु दान में दी गई भूमि के लिए अभिलेखों में ग्रास, सांसण एवं डोहली शब्द प्रयुक्त हुए हैं। ग्रास शब्द का आशय आजीविका से है। ब्राह्मण एवं चारण जाति के लोगों के अतिरिक्ति राजपूतों को भी ग्रास के रूप में गांव दिए जाते थे। चारणों, भाटों एवं सन्यासियों को दान एवं इनाम में प्रदान की गई भूमि सासण कहलाती थी। ब्राह्मणों को दान में दी गई भूमि को डोहली कहा जाता था। इन अभिलेखों से ज्ञात होता है कि मेवाड़ के महाराणाओं की तरह बनेड़ा जैसे बड़े ठिकानेदारों की ओर से भी गांव और भूखण्ड दान में दिए जाते थे। इसके लिए पहले कागज पर कच्चा पट्टा तैयार

किया जाता था और फिर उसे ताम्रपत्र पर उत्कीर्ण किया जाता था। इन ताम्रपत्रों के साथ-साथ उपत भी अंकित की जाती थी।

भूमि किस प्रकार की है, जैसे माल (रहट से सिंचाई करने वाली भूमि), मगरा (कठोर भूमि), गोरमा (गांव के निकट की भूमि), आदि का भी उल्लेख किया जाता था। सांसण उपभोक्ताओं को बगीचा लगाने एवं बावड़ी खुदवाने के आदेश भी दिए जाते थे।

(2.) ठिकाना भीण्डर संग्रह : भीण्डर के पूर्व जागीदार, महाराणा प्रताप (ई. 1572-97) के छोटे भाई शक्तिसिंह के वंशज हैं, जो शक्तावत कहलाते हैं। इनकी उपाधि महाराज थी। ये मेवाड़ राज्य के प्रथम श्रेणी के उमराव थे। प्रतिष्ठान में भीण्डर ठिकाने की वि.सं. 1915 से 2007 तक की 199 बहियां सुरक्षित हैं।

(3.) ठिकाना पीपल्या संग्रह : वर्तमान में मध्यप्रदेश में स्थित पीपल्या ठिकाना मेवाड़ रियासत के द्वितीय श्रेणी जागीदारों में था। पीपल्या के पूर्व ठिकाणेदार, महाराणा प्रताप (ई.1572-97)के अनुज शक्तिसिंह के पुत्र राजसिंह के द्वितीय पुत्र कल्याणसिंह के वंशज हैं। इस ठिकाने की वि.सं. 1841 से 1999 तक की 220 बहियाँ एवं पट्टे-परवाने प्रतिष्ठान में संग्रहित हैं।

(4.) ठिकाना अठाणा संग्रह : अठाणा की जागीर चूण्डावत रावत सवाई मेघसिंह को दी गई थी। आठणा के जागीरदार उसी के वंशज थे। अठाणा पूर्व में मेवाड़ में था किन्तु मराठा काल में यह सिंधिया के अधीन चला गया। वर्तमान में यह मध्यप्रदेश राज्य में है। यहाँ की सामाजिक, आर्थिक एवं राजनैतिक व्यवस्था मेवाड़ी एवं मालवी मिश्रित रही। इस ठिकाने की वि.सं.1841 से 2025 तक की 888 बहियाँ संग्रहित हैं।

(5.) ठिकाना गोगुन्दा संग्रह : गोगुन्दा उदयपुर से 35 कि.मी. उत्तर-पश्चिम में स्थित है। यहाँ के ठिकाणेदार, झाला राजपूत थे। उन्हें 'राजराणा' की उपाधि प्राप्त थी। यह प्रथम श्रेणी (उमराव) का ठिकाना था। 16वीं शताब्दी के प्रथम दशक में हलवद (काठियावाड़) के राजा राजसिंह के दो पुत्र अज्जा एवं सज्जा मेवाड़ के महाराणा रायमल (ई.1473-1509) के पास आए। महाराणा ने उन्हें जागीर देकर अपना सामन्त बनाया। इस ठिकाने की 2 बहियों, तवारीख और हस्तलिखित ग्रंथों में वि.सं.1871 से 2024 तक की घटनाओं का सविस्तार वर्णन है।

(6.) ठिकाना विजयपुर संग्रह : विजयपुर ठिकाणे के जागीरदार बान्सी के राव नरहरदास के चौथे पुत्र विजयसिंह के वंशज थे। ये द्वितीय श्रेणी के जागीदार थे। विजयसिंह का वंशधर नवलसिंह हुआ। प्रताप शोध प्रतिष्ठान में विजयपुर ठिकाणे के वि. सं.1700 से 2000 तक के 105 पट्टे-परवाने संग्रहित हैं।

(7.) ठिकाना सरदारगढ़ संग्रह : यहाँ के ठिकाणेदार, शार्दुलगढ़ (काठियावाड़)

के सिंध डोडिया के वंशज थे। उन्हें ठाकुर कहा जाता था। महाराणा जगतसिंह (द्वितीय) (ई.1734–51) के समय जयसिंह के प्रपौत्र सरदारसिंह को लावा का ठिकाना मिला। उसने लावा में दुर्ग बनवाया, जो सरदारगढ़ कहलाता था। प्रताप शोध प्रतिष्ठान में वि.सं. 1938 से 2001 तक की 439 बहियाँ एवं 87 बस्तों में बंधी हुई लगभग 5600 मिसलें हैं, जिनमें सेटलमेन्ट सम्बन्धी दस्तावेज संग्रहित हैं।

(8.) ठिकाना दौलतगढ़ संग्रह : दौलतगढ़ के ठिकानेदार तृतीय श्रेणी के सरदार थे। ये देवगढ़ के राव गोकुलदास (प्रथम) के चौथे पुत्र दौलतसिंह के वंशज थे। महाराणा अमरसिंह (द्वितीय) (ई.1698–1710) ने यह जागीर दौलतसिंह को प्रदान की थी। इस ठिकाने के 29 पट्टे-परवाने प्रताप शोध प्रतिष्ठान में संग्रहित हैं।

(9.) ठिकाना सिंगोली संग्रह : मंगरोप के स्वामी महेशदास के छोटे भाई मोहकमसिंह के वंशज (मोकमसिंहोत पुरावत) थे। उनकी उपाधि 'बाबा' थी। महाराणा अरिसिंह (द्वितीय) (ई.1761–73) ने नवलसिंह को सिंगोली की जागीर दी। यह तृतीय श्रेणी के सरदार थे। इस ठिकाने की 11 बहियाँ एवं दस्तावेज टेग फाईलें 7 बस्तों में प्रताप शोध प्रतिष्ठान में संग्रहित हैं।

(10.) मथुरा के पण्डों का अभिलेख संग्रह : संस्थान में मथुरा के पण्डों से प्राप्त अभिलेखों का एक संग्रह स्थापित किया गया है। इन अभिलेखों में विछि, सोवनियों का मेड़ता, उड़ेसर, हेसरी, वीरपुर, मधन, करवर, बनेड़ा, खेड़ा, नारायणपुर, बडोली, टोडो, मलोद, पोसरियों, कोट, जाजपुरो, कल्याणपुरा, टोडरी, नपुर, रभखेडी, बीकानेर, बरसोढ़ो, देवगढ़, एमा, गवोती, पीथापुर, बड़गांव, खडार, वातम, वपनापर, ताबेतरा, खंडयारी, धोलखा, वनेरिया, भदोरा, वानेर, खेड़ी, दयावास, कुथवास, कलोली, वलाण्या, धरोल, कचनासी, जाजपुर, पगारा, बोरदा, टांटिया, जोगरा, नींबोरो, परावल, टोडरी, आमेट, वगड़ी, कोशीथल, खेमाणा, सावर, बीनोता आदि ठिकानों के वि.सं. 1600 से 2000 तक के 2,117 पट्टे-परवाने एवं दस्तावेज संग्रहित हैं। ये अभिलेख विभिन्न प्रकार के धार्मिक रिवाजों एवं क्रियाकर्मों की जानकारी देने के साथ-साथ इतिहास की टूटी हुई कड़ियों भी को भी जोड़ते हैं।

(11.) ठिकाना बेदला संग्रह : यह ठिकाना उदयपुर से लगभग साढ़े तीन किलोमीटर उत्तर में अरावली पहाड़ के निकट स्थित था। इसके ठिकानेदार मेवाड़ के प्रथम श्रेणी के उमराव थे। बेदला के सरदार दिल्ली-अजमेर के चौहान शासक पृथ्वीराज (तृतीय) के वंशज थे। बेदला ठिकाने की 211 बहियाँ एवं पट्टे-परवाने प्रताप शोध प्रतिष्ठान में संग्रहित किए गए हैं।

(12.) ठिकाना मोही संग्रह : जैसलमेर के रावल मनोहरदास की पुत्री से महाराणा राजसिंह का विवाह हुआ। इस सम्बन्ध के कारण मनोहरदास के पौत्र सबलसिंह का एक पुत्र महासिंह मेवाड़ आया और उसे मोही की जागीर मिली। इस ठिकाने की वि.सं.

1919 से 2023 तक की बहियाँ प्रतिष्ठान में संग्रहित की गई हैं।

(13.) ठिकाना कोशीथल संग्रह : कोशीथल भीलवाड़ा जिले की सहाड़ा तहसील में गंगापुर से 16 किलोमीटर उत्तर में स्थित है। महाराणा जगतसिंह (प्रथम) (ई.1628-52) ने आमेट के राव करणसिंह के ज्येष्ठ पुत्र नरहरदास को वि.सं.1705 में कोशीथल की जागीर प्रदान की थी। प्रताप शोध प्रतिष्ठान में कोशीथल ठिकाणे की वि. सं.1812 से 2016 तक की 122 बहियाँ, 1 ग्रंथ तथा 425 पट्टे-परवाने संग्रहित हैं।

(14.) ठिकाना बागोर संग्रह : बागोर के जागीरदार महाराणा सग्रामसिंह (द्वितीय) (ई.1710-34) के दूसरे कुँवर नाथसिंह के वंशज थे। उनकी उपाधि महाराज थी। बागोर से मेवाड़ के चार महाराणा क्रमशः सरदारसिंह (ई.1838-42), स्वरूपसिंह (ई. 1842-61), शंभूसिंह (ई.1861-74) तथा सज्जनसिंह (ई.1874-84) गोद आए। यह प्रथम श्रेणी का ठिकाना था। इस ठिकाने से वि.सं.1730 से वि.सं. 2006 (ई. 1673-1949) तक के 115 पत्र प्रताप शोध प्रतिष्ठान में लाए गए हैं।

(15.) ठिकाना केलवा संग्रह : मारवाड़ के राव सलखा (ई.1357-74) के द्वितीय पुत्र जैतमाल के वंशज राठौड़ बीदा को केलवा ठिकाणा प्राप्त हुआ था। महाराणा रायमल (ई.1473-1509) के पुत्रों में हुए आपसी संघर्ष में बीदा ने कुँवर सांगा का साथ दिया था। केलवा से प्रताप शोध प्रतिष्ठान को विभिन्न धार्मिक ग्रंथ और साहित्यिक ग्रंथ प्राप्त हुए, जो तत्कालीन धर्म एवं सामाजिक व्यवस्था की जानकारी प्राप्त करने की दृष्टि से उपयोगी हैं।

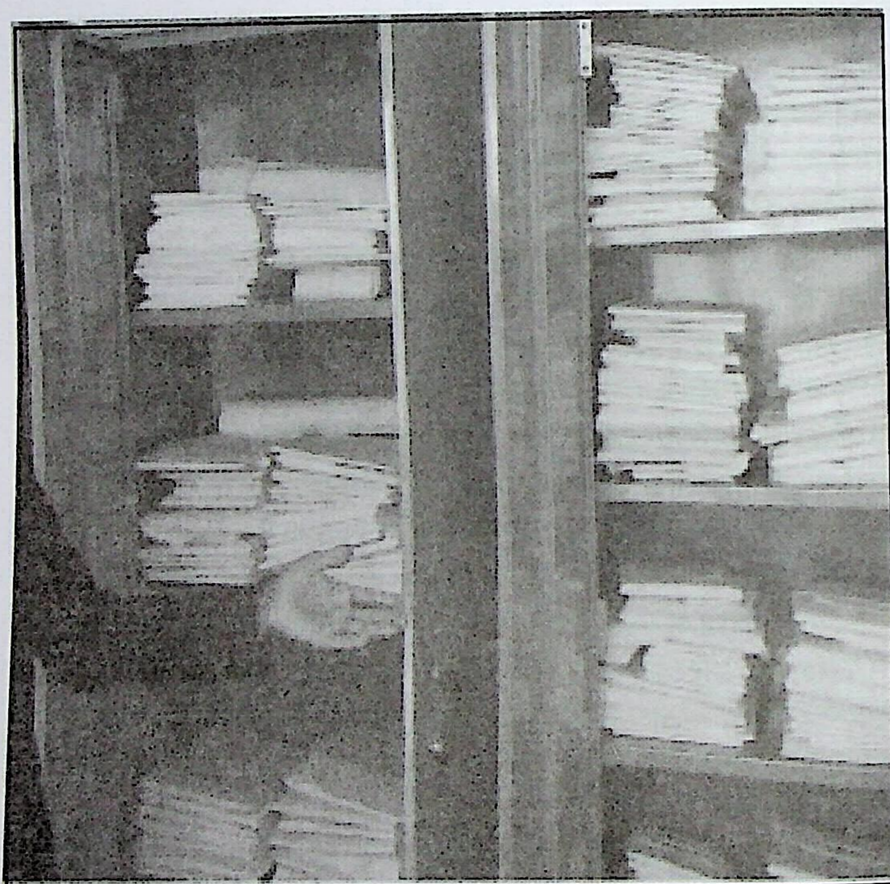
(16.) ठिकाना भूणास संग्रह : भूणास के सरदार, महाराणा राजसिंह (ई. 1652-80) के आठवें पुत्र बहादुरसिंह के वंशज थे। इन्हें 'महाराज' (बाबा) की उपधि प्राप्त थी। यह द्वितीय श्रेणी के सरदार थे। भूणास ठिकाणे से वि.सं.1880 से 2009 तक के 53 पट्टे-परवाने, बहियाँ तथा पत्र प्रताप शोध प्रतिष्ठान में संग्रहित हैं।

(17.) ठिकाना कारोई संग्रह : महाराणा जयसिंह (ई.1680-1698) के तृतीय पुत्र उम्मेदसिंह के वंशजों के पास कारोई ठिकाना रहा। इस ठिकाने से प्रताप शोध प्रतिष्ठान को वि.सं. 1838 से 1946 तक की 75 बहियाँ एवं 15 दस्तावेज प्राप्त हुए।

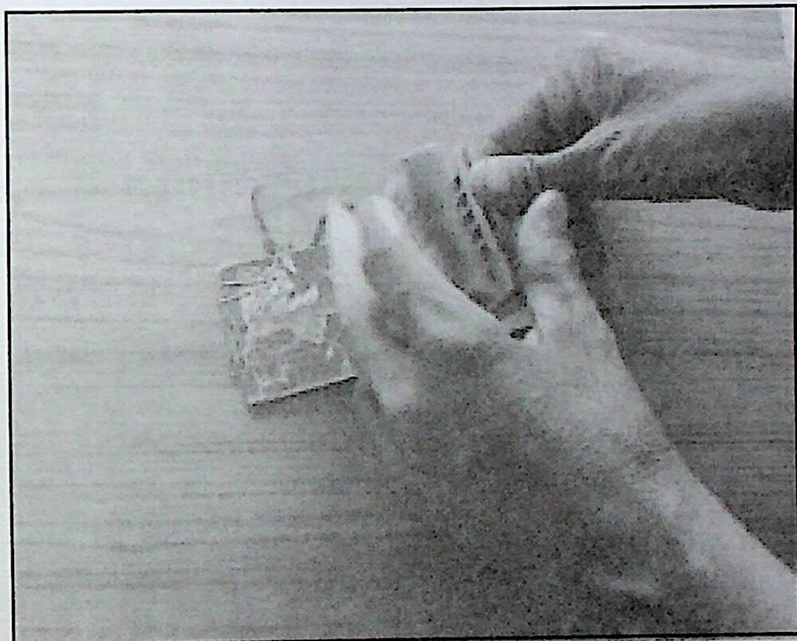
(18.) ठिकाना लसाणी संग्रह : ठिकाना लसाणी संग्रह की अभिलेखीय साम्रगी प्रताप शोध प्रतिष्ठान को भेंट स्वरूप प्राप्त हुई है।

जेराक्स सामग्री

विभिन्न ठिकानों, घरानों, व्यक्तियों एवं संस्थाओं में संरक्षित बहुमूल्य ऐतिहासिक सामग्री अभिलेखागारों को विक्रय अथवा भेंट नहीं की जाती। ऐसी स्थिति में सामग्री को जेराक्स कराकर प्रताप शोध प्रतिष्ठान में सुरक्षित किया जाता है। इस सामग्री में अनेक पाण्डुलिपियों, बहियों, पट्टे-परवानों की जेराक्स प्रति भी सुरक्षित की गई है। इनमें



जागीरों की पट्टा बहियाँ विशेष महत्व रखती हैं। जेराक्स सामग्री हेतु पूर्व ठिकानों, घरानों एवं ठाकुरों के बड़वों, भाटों, राणीमंगों, विविध संस्थाओं, महत्वपूर्ण व्यक्तियों से सम्पर्क कर ऐतिहासिक सामग्री का जेराक्स करवाया जाता है। जमीन अर करसों की विगत, पट्टाबही, ठिकाना भीण्डर के पट्टे-परवाने, बाजार तथा परचूनी लेखा की चौपनियों, बनेड़ा, राधोगढ़ और मारवाड़ के रुक्के, पट्टे, परवाने, पट्टाबही, ठिकाना गोगुन्दा की तवारीख, तवारीख ठिकाना पारसोली, ठिकाना बेगूं री तवारीख, ठिकाना बाँन्सी री तवारीख, तारीखे कानोड़, पड़ाखा 1919, पट्टाबही ठिकाना गोगुन्दा, राजसिंह (प्रथम) की पट्टाबही, राजसिंह (द्वितीय) की पट्टाबही, ताँबा पत्र बहीड़ो, देवस्थान की बही 1917, खरीता महाराणा श्री स्वरूप सिंहजी 1900 से 1926, महाराणा स्वरूप सिंहजी की बही 1905, चित्तौड़ उदयपुर पाटनामा, महाराणा राजसिंह की परगना बही, सगत रासो, महाराणा भीम री वार री पट्टाबही (दो भाग), सरदारो री हालपैदास री विगत 1907, महाराणा भीमसिंह री वार पट्टाबही, सरदारा री साख रो नामो, सूरजवंश, राज-प्रकाश, वंशावली राणाजी री-1, वंशावली राणाजी री-2, राणा जी री



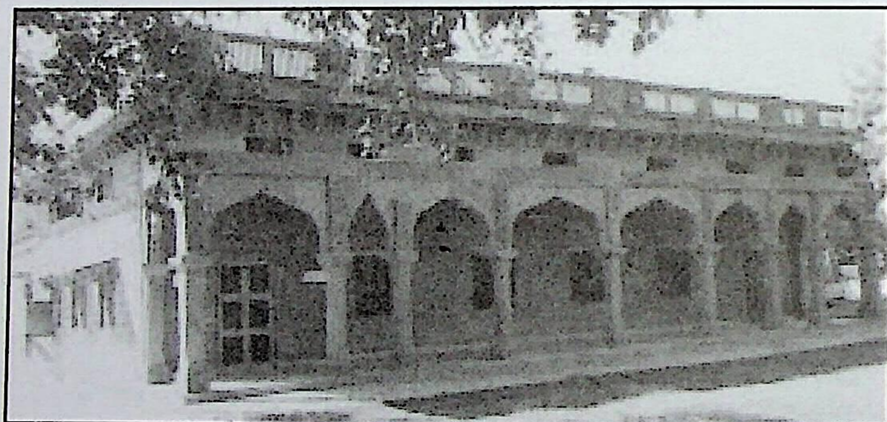
राजा-महाराजा यात्राओं में पूजा आदि के लिए गुटखे प्रयुक्त करते थे

वंशावली-3, वंशावली राणाजी री-5, सीसोद वंशावली-6, वातसंग्रह, जागीरदाराँ रे गांव-पट्टों राह मरजाद री हकीकत् 1877, सावर के शक्तावतों की वंशावली, हिस्ट्री ऑफ मेवाड़, रावल राणाजी री वात, राज विलास, रामपुरा का गौरवशाली इतिहास, ऐतिहासिक बातां, परम्परा, सही वाला अर्जुनसिंह जीवन चरित्र गजेटियर ऑफ मेवाड़, शक्तावतां री विगत, ठिकाना भीण्डर, मथुरा के पण्डे के पत्र, श्यामलदास संग्रह के मेवाड़ ठिकानों की सामग्री आदि सम्मिलित है।



अध्याय - 8

राजस्थानी शोध संस्थान, चौपासनी



राजस्थानी शोध संस्थान की स्थापना ई.1955 में डॉ. नारायण सिंह भाटी द्वारा की गई थी। विगत 73 वर्षों में इस संस्था ने शोधार्थियों को शोध सामग्री के प्राथमिक स्त्रोत उपलब्ध कराने में राष्ट्रीय स्तर पर ख्याति अर्जित की है। राजस्थान सरकार ई.1957 से इस संस्था को 90 प्रतिशत तक अनुदान प्रदान करना आरम्भ किया। यह अनुदान अब बंद कर दिया गया है। राजस्थान साहित्य अकादमी द्वारा भी राजस्थानी शोध संस्थान की परियोजनाओं को धन उपलब्ध कराया जाता था। इसे भी अब बंद कर दिया गया है। वर्ष 2015 में संस्थान ने चौपासनी शिक्षा समिति तथा मेहरानगढ़ म्यूजियम ट्रस्ट के साथ मेमोरेण्डम हस्ताक्षर किये जिसके बाद राजस्थानी शोध संस्थान की गतिविधियों में नवीन गति आई है।

राजस्थानी शोध संस्थान में 16,743 दुर्लभ पाण्डुलिपियों तथा मारवाड़ चित्रकला शैली के लगभग 300 चित्रों का संग्रह है। संस्थान के द्वारा राजस्थान के इतिहास, कला, संस्कृति एवं जनजीवन से सम्बन्धित दुर्लभ सामग्री, यथा बहियों, ख्यातों, काव्यों, इतिहास ग्रंथों, सूचीपत्रों का प्रकाशन किया गया है। संस्था द्वारा 'परम्परा' नामक त्रैमासिक जर्नल भी प्रकाशित किया जाता रहा है, जिसके 166 विशेषांक प्रकाशित किए गए हैं। संस्थान में राजस्थान के इतिहास, साहित्य, संस्कृति, परम्पराओं एवं कलाओं के विशेषज्ञ व्यक्तियों के व्याख्यान भी संग्रहित किए गए हैं। विभिन्न शोध पत्रों का भी संग्रह किया गया है। देश भर के विद्वान एवं शोधार्थी इस संस्थान का भ्रमण करते रहते हैं। संस्थान द्वारा शोधार्थियों, विद्यार्थियों एवं शिक्षकों के लिए पाण्डुलिपि पठन

कार्यशाला जैसे महत्वपूर्ण आयोजन करवाए जाते हैं। शोधार्थियों को शोध हेतु पाण्डुलिपियों के मुद्रित कैटलॉग उपलब्ध कराए जाते हैं।

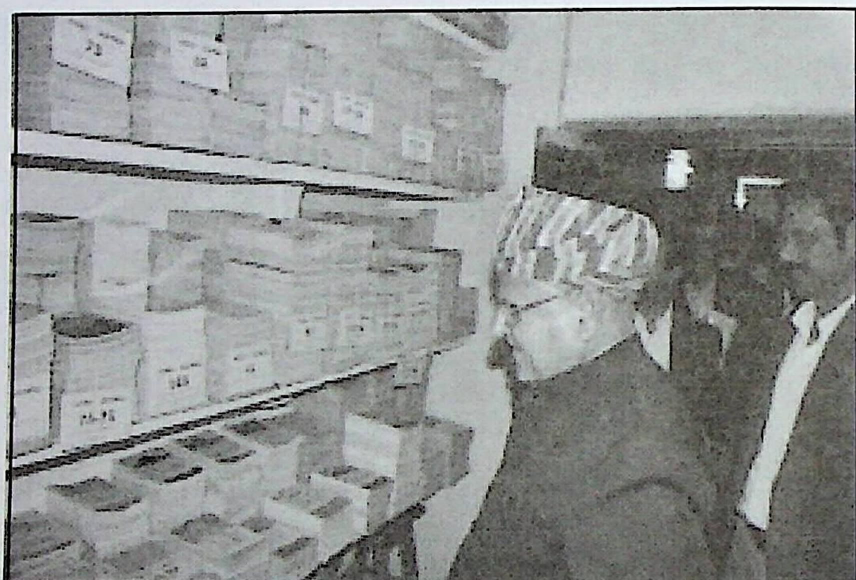
पाण्डुलिपि संग्रह

राजस्थानी शोध संस्थान में 14वीं से 19वीं शताब्दी ईस्वी की 16,743 पाण्डुलिपियों का संग्रह है। इन पाण्डुलिपियों को विभिन्न रियासतों, ठिकानों, मंदिरों, आश्रमों, मठों, विद्वानों, कबाड़ियों से प्राप्त किया गया है। शाहपुरा रियासत तथा उसके छह ठिकानों के अभिलेख भी इस संस्थान में रखे गए हैं। संस्थान में संग्रहित अनेक प्राचीन पाण्डुलिपियां जैन धर्म से सम्बन्धित हैं, जिनमें तत्कालीन समय की भाषा एवं संस्कृति की जानकारी मिलती है। मूल ग्रंथों के साथ-साथ टीका, बलवबोध, टब्बा, वार्तिक आदि भी संग्रहित की गई हैं जो उस काल की विद्याओं का ज्ञान करवाती हैं।

कुछ पाण्डुलिपियों में भागवत, पुराण, गीता तथा अनेक धार्मिक ग्रंथों के राजस्थानी भाषा के अनुवाद दिए गए हैं। बहुत सी पाण्डुलिपियों में प्राचीन एवं मध्य काल में प्रयुक्त होने वाले दोहा, गीत, छप्पय, निसानी, वचनिका, झमाल, छन्द शास्त्र, चारण साहित्य भी संग्रहित किया गया है। कुछ पाण्डुलिपियां बात, ख्यात, वचनिका, पीढ़ी, वंशावली, अनुवाद से सम्बन्धित हैं। आयुर्वेद, ज्योतिष, दर्शन से सम्बन्धित बहुत सी पाण्डुलिपियां हैं। ज्योतिष के कुछ संस्कृत ग्रंथों में ज्यामितीय रचनाएं एवं चित्र भी बनाए गए हैं। बहुत से मध्यकालीन कवियों की हिन्दी एवं राजस्थानी की रचनाएं भी पाण्डुलिपियों के रूप में उपलब्ध हैं। इनमें मंछाराम की रघुनाथ रूपक भी सम्मिलित है। कुछ सामग्री की छाया प्रतियां बनावाकर शोधार्थियों को उपलब्ध कराई जाती हैं।

राजस्थानी शब्द कोश

संस्थान द्वारा राजस्थानी शब्द कोश का प्रकाशन किया गया है, जो विश्व भर में अपनी तरह का एक अनूठा ग्रंथ है। इसे डॉ. सीताराम लालस ने 40 वर्ष के अथक् प्रयासों के पश्चात् तैयार किया। इसे इण्डो-यूरोपियन भाषा परिवार के शब्दकोश में एक अनूठा योगदान माना जाता है। लालस को इस कार्य के लिए भारत सरकार द्वारा पद्मश्री प्रदान की गई। राजस्थानी शोध संस्थान ने इस विशाल शब्दकोश का पहला खण्ड ई. 1962 में प्रकाशित किया। इसमें राजस्थानी भाषा के दो लाख शब्द थे। इसके प्रकाशन हेतु राजस्थान सरकार एवं भारत सरकार द्वारा वित्तीय सहायता प्रदान की गई। डॉ. नारायण सिंह भाटी द्वारा इस शब्द कोश का लम्बा आमुख लिखा गया। बाद में इसके आठ खण्ड और भी प्रकाशित हुए। इस प्रकार यह शब्दकोश कुल नौ खण्डों में प्रकाशित हुआ। इस शब्द कोश में शब्दों के अर्थ के साथ राजस्थानी साहित्य, ज्योतिष ग्रंथ, वैदिक ग्रंथ, दार्शनिक ग्रंथ, विभिन्न भाषा ग्रंथ, धार्मिक ग्रंथ, कृषि कहावतें आदि अनेक स्थानों एवं प्रसंगों से उदहारण लिखे गए हैं। प्रत्येक शब्द के अर्थ के साथ उसकी उत्पत्ति का



मूल अर्थ लिखा गया है। इस प्रकार यह शब्दकोश विश्व में अपने प्रकार की अकेली एवं अनूठी कृति बन गया। यही कारण था कि इस शब्दकोश को देशी-विदेशी विद्वानों ने राजस्थानी भाषा की श्रीवृद्धि की दिशा में महत्वपूर्ण कदम माना गया। बाद में इसका संशोधित एवं परिवर्ि)त संस्करण भी प्रकाशित हुआ। संस्थान द्वारा मुहावरा कोश भी प्रकाशित किया गया। संक्षिप्त राजस्थानी-हिंदी शब्दकोश भी प्रकाशित किया गया है।

ठिकाना बहियां

खेजड़ला, बीकमकोर, रोहट, बागावास, कोरना तथा सुरैता आदि ठिकानों से प्राप्त 1,581 बहियां रखी गई हैं। साथ ही चौपनियां एवं मर्दमशुमारी (जनगणना) भी संग्रहित की गई हैं। यह अभिलेख उन्नीसवीं एवं बीसवीं शताब्दी से सम्बन्धित है। यह अभिलेख मारवाड़ के परगनों में निवास करने वाली जातियों, भू-प्रबन्धन, प्रशासन, राजस्व संग्रहण, कृषि उन्नयन, जनजीवन, रीति-रिवाज, परम्पराओं तथा विभिन्न काम धंधों एवं रोजगार आदि के बारे में विश्वसनीय एवं महत्वपूर्ण जानकारी प्रदान करता है। इस अभिलेख से उस काल में जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में प्रयुक्त होने वाली शब्दावली का भी ज्ञान होता है।

संग्रहालय में प्राचीन एवं मध्यकालीन लगभग 300 चित्रों का दुर्लभ संग्रह उपलब्ध है, जो राजपूत चित्रशैली का अनमोल खजाना है। ये चित्र जोधपुर स्कूल से सम्बद्ध हैं। इनमें बारहमासा पेटिंग्स अद्‌भुत हैं। संग्रहालय में रखे ऐतिहासिक व्यक्तियों के चित्रों में राव अमरसिंह, उम्मेद सिंह सिसोदिया, महाराजा मानसिंह, दुर्गादास राठौड़, अजीतसिंह, खींवसर ठाकुर, महाराणा भीमसिंह, महाराजा बीकानेर आदि के चित्र

सम्मिलित हैं। भगवान विष्णु के विभिन्न अवतारों के चित्र, महावीर स्वामी के चित्र, नाथ सन्यासियों के चित्र, राग-रागिनियों के चित्र, शिकार दृश्य, वैवाहिक उत्सवों के दृश्य, प्रेम प्रसंगों के चित्र, ढोला-मारू तथा लैला-मजनूं प्रेमी युगलों के चित्र, राजाओं की मजलिसों (बैठकों) के चित्र सम्मिलित हैं। एक पेंटिंग मीराबाई तथा राजा जयमल की भी है जिसमें वे मेड़ता के चारभुजा नाथ की पूजा करते हुए दिखाए गए हैं।

संदर्भ पुस्तकालय

राजस्थानी शोध संस्थान के संदर्भ पुस्तकालय में इतिहास, साहित्य, कला, दर्शन एवं संस्कृति से सम्बद्ध 5,057 दुर्लभ ग्रंथ उपलब्ध हैं। इस पुस्तकालय में राजस्थानी-हिन्दी शब्दकोश, सेंसस रिपोर्ट्स, गजट, डिंगल कोश, रिसर्च जनरल, कैटलॉग भी उपलब्ध हैं।

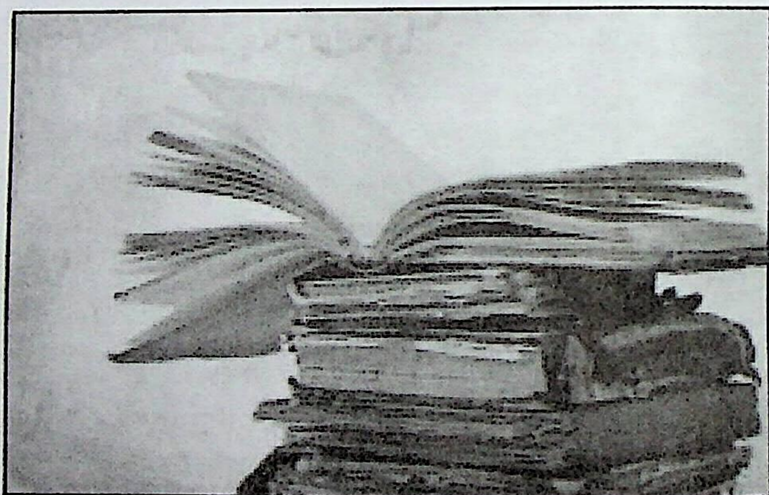
परम्परा शोध पत्रिका

संस्थान द्वारा वर्तमान में परम्परा का प्रकाशन छह माही आधार पर किया जाता है तथा प्रत्येक अंक राजस्थानी संस्कृति, इतिहास, साहित्य आदि किसी एक विषय पर केन्द्रित विशेषांक होता है। ये सभी अंक संग्रहणीय हैं। इनमें डिंगल कोश, राजस्थानी साहित्य का आदिकाल, राजस्थानी साहित्य का मध्यकाल, लोकगीत, ऐतिहासिक बातें आदि सम्मिलित हैं, जिन्हें विश्वविद्यालयों में संदर्भ पुस्तकों के रूप में सम्मिलित किया गया है। बात, ख्यात, गीत, झमाल आदि पर भी विशेषांक निकाले गए हैं।



अध्याय - 9

बहियात हिसाब दफ्तर, बीकानेर



ई.1872 में बीकानेर राज्य में महकमा माल स्थापित किया गया। इस महकमे के स्थापित होने से पहले बीकानेर राज्य में माल गुजारी एवं अन्य महकमों का हिसाब रखने के लिए अपने प्रकार की बहियों का प्रचलन था, जिनमें एक ही सीगे के हिसाब को अलग-अलग बहियों में दिखाया जाता था। जब महकमा हिसाब स्थापित हुआ तो इन बहियों में कई सुधार किए गए। महकमा हिसाब में 21 तरह की बहियों का प्रचलन था। इन बहियों में जो सूचनाएं मिलती हैं, उनसे बीकानेर राज्य की आर्थिक स्थिति, सामाजिक ढांचा तथा रीति-रिवाजों एवं परम्पराओं की जानकारी मिलती है। हिसाब दफ्तर की बहुत सी बहियां राजस्थान राज्य अभिलेखागार में संग्रहित की गई हैं। बड़ी संख्या में हिसाब दफ्तर की बहियां आज भी बीकानेर के पुराने किले जूनागढ़ में सुरक्षित हैं।

बही खरड़ा

इस बही में खजाने की साप्ताहिक जमा-खर्च उतारी जाती थी जिसकी नकल खजाने के रुक्कों की बही से ली जाती थी। बाद में इसी बही में साप्ताहिक के स्थान पर दैनिक आंकड़ों को भी उतारा जाने लगा तथा इसे रोजनामचे की बही कहने लगे।

बही लेखपाड़ सरदारान

इस बही में राज्य के समस्त सरदारों के तहसीलवार खाते मिलते हैं। राज्य सरकार

की ओर से सरदारों के लिए जितना बंधा (कर) निर्धारित होता था, वह उस सरदार के नाम के आगे लिखा जाता था। इसके अतिरिक्त हर माह के आंकड़े भी नामों के आगे मिलते हैं, जिनसे यह पता लगता है कि किस सरदार से कितनी राशि ली जानी थी, कितनी राशि जमा हुई है तथा कितने रुपये वसूल किए जाने शेष हैं।

बही चार ठोड़ों की

इस बही में राज्य के चार कारखाने रसोवड़ा, तबेला, फीलखाना एवं मोदीखाना के लिए मंडी से जो खरीद होती थी, उसकी रकम का जमा एवं खर्च लिखा पाया जाता है। हर सीगे के आगे राशि का विवरण मिलता है।

बही हबूब

इस बही में चीरा गांवों की रकम का गांव एवं आसामीवार विवरण दर्ज है। वर्ष के अंत में प्रत्येक तहसील से आसामीवार राशि की बही तैयार होकर आती थी। उसकी नकल आसामीवार उतार ली जाती थी। पहले चीरा गांव तथा परगनों की रकमों को अलग-अलग बहियों में उतारा जाता था, किंतु बाद में तालुक भी बना दिए गए। इन तीन बहियों की एक बही निजामतवार बना दी गई।

बही कारखानों की वरगों की खतौनी

इस बही में कारखानों से जो दैनिक खर्च की फर्द तैयार होकर आती थीं, उनकी खतौनी उतारी जाती थी। माह के अंत में कारखानों से जो आंकड़े आते थे, उनकी जांच कर ली जाती थी। उसके बाद उन्हें महकमे कौंसिल में स्वीकृति के लिए भेजकर महकमा-ए-हिसाब से जमा-खर्च कर लिया जाता था।

बही बन्धा के कागजातों की

इस बही में सरदारों के राज्य की ओर से जो बन्धे निर्धारित थे, उनकी प्रविष्टियां मिलती हैं। राज्य की ओर से जो सनद, मोहर-छाप आदि दी जाती थीं, उनकी नकलें भी इस बही में मिलती हैं।

बही उगाही

उगाही की बहियों में चार बहियां प्रमुख रूप से मिली हैं- दुकानों की उगाही, मांजी पूगलवानीजी साहिबा की उगाही, दादीजी राणावतजी साहिबा की उगाही, नाजर किशनुराम की उगाही। इन बहियों में राज्य की ओर से दिए गए कर्ज की उगाही अर्थात् वसूली होने पर प्राप्त होने वाली राशि को लिखा जाता था।

बही पट्टा

इन बहियों में पट्टों की नकलों की प्रविष्टियां मिलती हैं।

कमठाने के वरगों की खतौनी

इस बही में कमठाने कार्य के लिए जो वस्तुएं खरीदी जाती थीं, उनका जमा-खर्च तथा श्रमिकों एवं कारीगरों को किए गए दैनिक भुगतान का विवरण अंकित किया जाता था। श्रमिकों की दैनिक उपस्थिति भी इस बही में अंकित की जाती थी।

बही-स्टाम्प का जमा खर्च

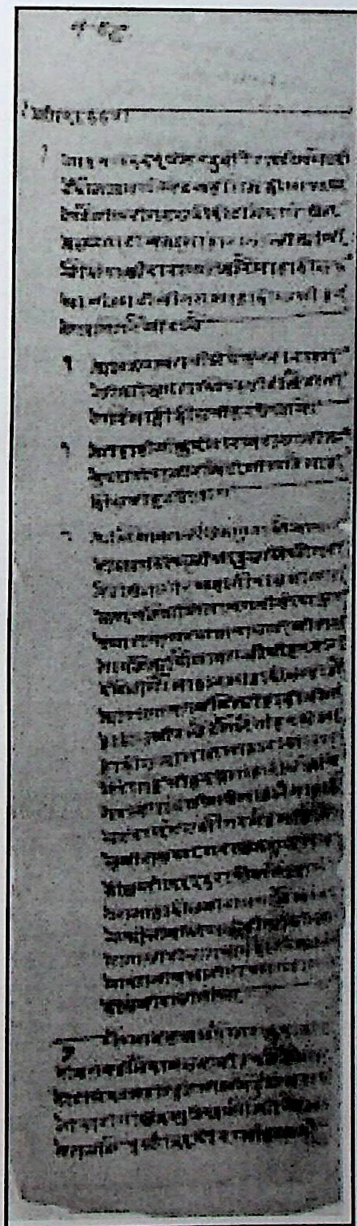
इस बही में महकमा हिसाब में जितने स्टाम्प काम में आते थे, उनका जमा-खर्च मिलता है।

बही रोजनामचा हिन्दी एवं उर्दू

जो पत्र एवं अभिलेख हिन्दी भाषा एवं देवनागरी लिपि में लिखे हुए महकमा हिसाब से आते एवं जाते थे, उनकी प्रविष्टि रोजनामचा हिन्दी में की जाती थी तथा उर्दू के कागज, रोजनामचा उर्दू में दर्ज किए जाते थे।

अध्याय - 10

महाराजा मानसिंह पुस्तक प्रकाश, जोधपुर



जोधपुर नरेशों में साहित्य, धर्म एवं कला के प्रति अटूट अनुराग था। इस कारण सैंकड़ों कवियों, गवैयों, चित्रकारों को राज्य द्वारा प्रश्रय दिया जाता था। बहुत से जोधपुर नरेश स्वयं भी धर्म, अध्यात्म, साहित्य, काव्य एवं संगीत के ज्ञाता थे तथा उन्होंने अनेक ग्रंथों की रचना की। इसलिए स्वाभाविक था कि जोधपुर स्थित मेहरानगढ़ दुर्ग में पुस्तकों एवं चित्रों का बहुमूल्य संग्रह तैयार होता रहा किंतु दुर्भाग्य से जब ई.1544 में राव मालदेव के समय अफगान शासक शेरशाह सूरी ने, ई.1565 में राव चंद्रसेन के समय मुगल शासक अकबर ने तथा ई. 1678 में महाराजा जसवंतसिंह की मृत्यु के बाद औरंगजेब ने जोधपुर दुर्ग पर अधिकार कर लिया। इस दौरान मुस्लिम आक्रांताओं द्वारा जोधपुर दुर्ग की अधिकांश अमूल्य साहित्यिक कृतियां, चित्र एवं अन्य कला-सामग्री नष्ट कर दी गई। जब दिल्ली की केन्द्रीय सत्ता से मुस्लिम शासकों का वर्चस्व नष्टप्राय हो गया, तब मारवाड़ में साहित्यिक कृतियों एवं कला-सामग्री को पुनः संग्रहित करने का कार्य आरम्भ हुआ।

महाराजा विजयसिंह (ई.1752-93) वैष्णव धर्म का परम अनुयायी था तथा संगीत एवं चित्रकला से प्रेम करता था। उसने जोधपुर दुर्ग में पुस्तकों एवं धार्मिक चित्रों का विशाल संग्रह करवाया। उसके द्वारा संगृहीत अधिकांश पुस्तकें एवं चित्र वैष्णव धर्म से सम्बन्धित थे। महाराजा विजयसिंह के काम को उसके पौत्र महाराजा मानसिंह (ई.1803-43) ने

आगे बढ़ाया। वह नाथ मत का अनुयायी था तथा उसे काव्य, साहित्य, संगीत और चित्रकला से विशेष अनुराग था। उसने स्वयं भी बहुत सी पुस्तकें लिखीं। उसने जोधपुर में देश भर में प्रसिद्ध कवियों, गवैयों, चित्रकारों आदि को जोधपुर में बुलाया। उसके सम्बन्ध में यह दोहा कहा जाता है-

जोधपुर बसायो जोधपुर, ब्रज कीनो ब्रजपाल।

लखनेऊ काशी दिली, मान कियो नेपाल।

अर्थात् राव जोधा ने जोधपुर नगर बसाया। महाराजा विजयसिंह ने जोधपुर में वल्लभ सम्प्रदाय को बढ़ावा देकर उसे ब्रज में बदल दिया। महाराजा मानसिंह ने देश भर से कत्थक, पण्डित, गवैये और योगी बुलाकर इसे सांस्कृतिक रूप से एक साथ ही काशी, दिल्ली और नेपाल की तरह समृद्ध कर दिया।

महाराजा मानसिंह ने मेहरानगढ़ दुर्ग में मानसिंह पुस्तक प्रकाश नामक ग्रंथ-संग्रह स्थापित किया जिसमें धर्म, अध्यात्म, काव्य, ज्योतिष एवं अन्य विविध विषयों की हस्तलिखित पोथियाँ तथा धार्मिक चित्र एकत्रित करवाए। उसके समय में सूरज प्रकाश, विविध पुराण तथा ढोला-मारू आदि ग्रंथों को चित्रित किया गया। महाराजा ने स्वयं भी कई गीत, कविताएं, समीक्षा, टीका आदि लिखे। उसके समय किया गया समस्त साहित्यिक कार्य महाराजा मानसिंह पुस्तक प्रकाश में उपलब्ध है। जब रजवाड़े समाप्त हो गए तो जोधपुर राज्य के वंशज महाराजा गजसिंह (द्वितीय) ने महाराजा मानसिंह पुस्तक प्रकाश को संरक्षण दिया तथा इसे साहित्य एवं संस्कृति शोध केन्द्र में बदल दिया। ई.1977 में इसे एक ट्रस्ट बना दिया गया। यह संस्था आज भी मेहरानगढ़ दुर्ग के संग्रहालय परिसर में संचालित है। इस संग्रह में अनेक अत्यंत दुर्लभ पाण्डुलिपियां उपलब्ध हैं। देश-विदेश के अनेक विख्यात शोधकर्ताओं एवं विद्वानों ने इस संस्थान में उपलब्ध पाण्डुलिपियों, चित्रों एवं दस्तावेजों का अध्ययन कर शोधकार्य किया है। यूनिवर्सिटी ग्रांट कमीशन तथा जयनारायण व्यास विश्वविद्यालय ने भी मानसिंह पुस्तक प्रकाश को शोध केन्द्र के रूप में मान्यता प्रदान की है।

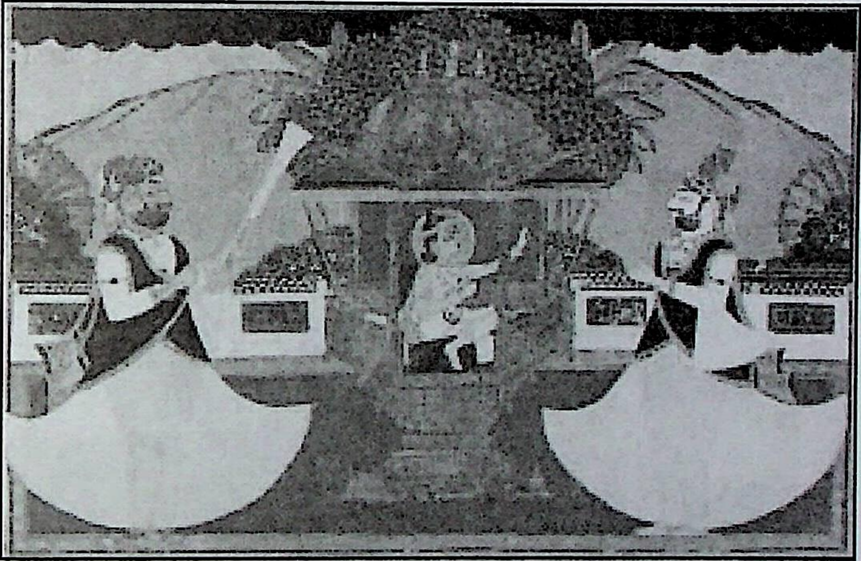
वर्तमान में इस संस्था में 7,500 से अधिक पाण्डुलिपियाँ तथा 5,300 से अधिक ग्रंथ उपलब्ध हैं। यह समस्त सामग्री हिन्दी, संस्कृत, राजस्थानी, अंग्रेजी आदि भाषाओं में है। 13 हस्तलिखित ताड़पत्र पोथियां भी इस संग्रहालय की विशिष्ट धरोहर है। शोधार्थियों की सुविधा के लिए पुस्तक प्रकाश की बहुत सी सामग्री को डिजिटाइज्ड कर दिया गया है। मानसिंह पुस्तक प्रकाश में उन कवियों एवं साहित्यकारों की संस्कृत एवं राजस्थानी भाषा की रचनाएं एवं पाण्डुलिपियां उपलब्ध हैं, जिन्हें राज्य द्वारा संरक्षण एवं प्रश्रय दिया गया।



इनमें से हजारों रचनाओं को अभी तक प्रकाश में नहीं लाया जा सका है। पूर्व राजपरिवार द्वारा इस संग्रह को राजपरिवार से सम्बन्धित 'जनाना ड्योढ़ी की बहियां' एवं 'कपड़ा का कोठार की बहियां' भी भेंट की गई हैं। ये बहियां सैंकड़ों की संख्या में हैं तथा बहियां शोधार्थियों के लिए उपलब्ध हैं। इन बहियों से मध्यकाल में राजपूताने में प्रचलित पोशाकों, कपड़ों, रीति-रिवाजों, खान-पान आदि की जानकारी मिलती है। इन बहियों से मारवाड़ राज्य के रनिवास तथा उसमें होने वाली गतिविधियों की वास्तविक तस्वीर उभर कर सामने आती है।



महाराजा मानसिंह पुस्तक प्रकाश द्वारा अनेक महत्वपूर्ण ग्रंथों का प्रकाशन करवाया गया है। इनमें अजितोदय महाकाव्य, पाबू प्रकाश, राजस्थानी-हिन्दी ग्रंथों की सूची, संस्कृत ग्रंथों की सूची आदि सम्मिलित हैं। संस्था द्वारा समय-समय पर इतिहास एवं साहित्य को लेकर विचार गोष्ठियां, सेमीनार, व्याख्यान आदि का आयोजन करवाया

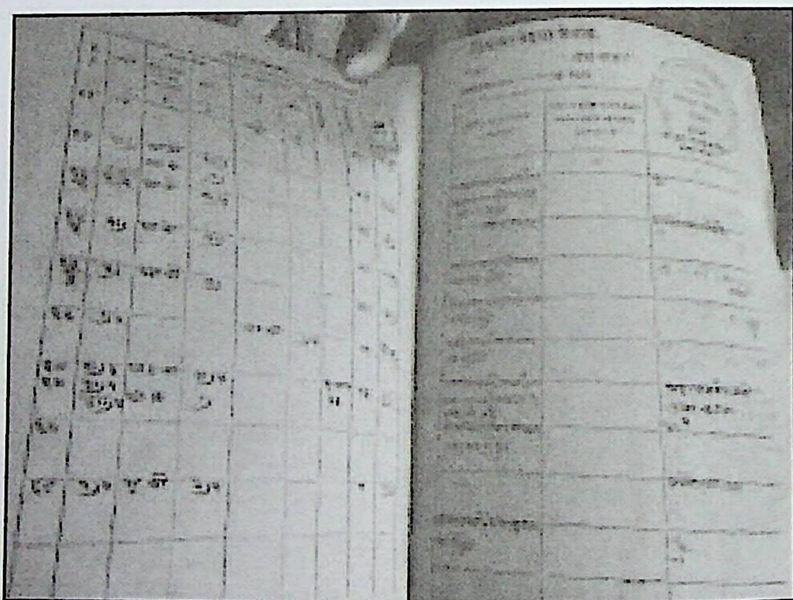


जाता है। निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि पूर्व राजाओं के रनिवासों में प्रचलित रीति-रिवाजों को जानने के लिए बहियां एवं पाण्डुलिपियां उपलब्ध करवाने वाला यह संसार भर का एक अद्‌भुत अभिलेखागार है।



अध्याय - 11

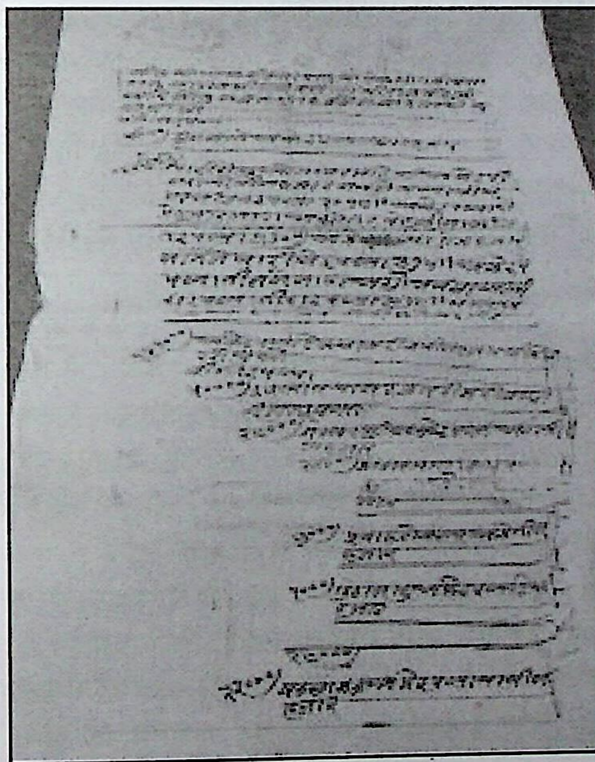
ठिकानों के अभिलेखागार



राजस्थान में 19 देशी रियासतें थीं जो मुगल काल से लेकर देश के स्वतंत्र होने तक किसी न किसी केन्द्रीय सत्ता के अधीन रहीं। देशी रियासतों के अधीन अनेक ठिकाने थे। इन ठिकानों की स्थिति बड़े राज्य के भीतर छोटे राज्य जैसी थी। इनके और रियासत के शासक के बीच कुछ लिखित एवं अलिखित समझौते थे, जिनके आधार पर युद्ध एवं शांतिकाल में ठिकानों द्वारा रियासत के शासक को कर, सेवा, सेना एवं सहायता दी जाती थी। अधिकतर मामलों में ठिकानेदार स्वयं को राजा के अधीन नहीं मानकर, रियासत की सत्ता में कनिष्ठ भागीदार मानते थे। जबकि राजाओं का यह प्रयास रहता था कि ठिकानेदारों को अधीनस्थ स्थिति में रखा जाए। इस कारण प्राय: रियासत के शासक एवं ठिकानेदारों के बीच मनमुटाव, अधिकारों की रस्साकशी एवं शीतयुद्ध जैसी स्थिति बनी रहती थी।

मुगलों के काल में, ईस्ट इण्डिया कम्पनी के काल में तथा ब्रिटिश क्राउन के काल में कई ठिकानेदारों ने केन्द्रीय सत्ता से सीधे सम्बन्ध स्थापित किए, जिनके बल पर इन ठिकाणेदारों ने रियासत के शासक के आदेशों एवं अधिकारों की अवहेलना की। कई बार तो ठिकानेदारों ने केन्द्रीय सत्ता का सहारा पाकर, अपनी मूल रियासत से स्वतंत्र होकर

अगल राज्य स्थापित करने में भी सफलता प्राप्त की। शाहपुरा एवं प्रतापगढ़ एवं झालावाड़ ऐसी ही रियासतें थीं। बहुत से राजाओं को अपने राज्य के ठिकानों के विरुद्ध सैनिक अभियान भी करने पड़ते थे। जोधपुर, बीकानेर तथा उदयपुर जैसे बड़े राज्य भी इस समस्या से ग्रस्त थे।



केन्द्रीय सत्ता के बदल जाने के साथ ही रियासतों के शासकों एवं ठिकानों के ठिकानेदारों के सम्बन्धों में भी परिवर्तन होते रहे। इस कारण रियासत एवं ठिकानों के बीच मुकदमेबाजियां भी हुई तथा लम्बे-पत्राचार हुए। चूंकि ठिकाना भी एक छोटी रियासत की तरह शासन करता था, इसलिए ठिकाने में भी बहुत से दस्तावेज लिखे एवं रखे जाते थे। यही कारण है कि सभी ठिकानों में कुछ न कुछ दस्तावेज, बहियां, पट्टे, ताम्रपत्र, सैटलमेंट रिपोर्ट्स आदि उपलब्ध हैं। इनमें पोकरण, बिलाड़ा, बिसाऊ, डिग्गी, नवलगढ़, गोगुन्दा, भिनाय, कानोड़, सरदारगढ़, शाहपुरा, बनेड़ा, अठाणा, विजयपुर, उनियारा, सलूम्बर, कोशीथल आदि ठिकाणों के अभिलेखों पर कुछ कार्य हुआ है। कर्नल टॉड ने भी एनल्स एण्ड एण्टीक्विटीज ऑफ राजस्थान लिखने के लिए कुछ ठिकानों के रिकॉड्र्स काम में लिए थे। इन अभिलेखों पर शोध करके उनके आधार पर सामंती इतिहास तथा रियासती भारत के सामाजिक इतिहास की पुनर्रचना की जा सकती है। इस पुस्तक में कुछ ठिकानों के दस्तावेजों का परिचय दिया जा रहा है।

❀❀❀

अध्याय - 12

बनेड़ा का पत्र संग्रह

बनेड़ा दुर्ग में एक संग्रहालय है, जिसकी स्थापना बनेड़ा के ठिकानेदारों ने की। रियासती काल में मेवाड़ राज्य में बनेड़ा एक महत्वपूर्ण ठिकाना था। यह ठिकाना महाराणा राजसिंह (ई.1652-80) के पुत्र भीमसिंह को मेवाड़ से स्वतंत्र राज्य के रूप में प्राप्त हुआ था। ई.1681 की मुगल-मेवाड़ संधि के बाद भीमसिंह मुगलों की सेवा में चला गया। इसके बाद 28 जुलाई 1681 को औरंगजेब ने भीमसिंह को यह परगना प्रदान किया। बनेड़ा राज्य का अपने पड़ौसी शाहपुरा राज्य से झगड़ा रहता था। इस कारण ई. 1756 में शाहपुरा राज्य ने बनेड़ा राज्य पर अधिकार कर लिया। इस पर बनेड़ा के राजा सरदारसिंह ने मेवाड़ से सैनिक सहायता प्राप्त कर पुनः बनेड़ा पर अधिकार किया। इसके पश्चात् बनेड़ा, मेवाड़ रियासत के अधीन एक ठिकाना हो गया। शाहपुरा द्वारा किए गए आक्रमण में बनेड़ा दुर्ग की अधिकांश सामग्री नष्ट हो गई। यही कारण है कि बनेड़ा के दस्तावेज उसके बाद की अवधि के हैं।

इस संग्रह में बहियां एवं बाहर से आए हुए पत्रों का अच्छा संग्रह है। इस संग्रहालय के रिकॉर्ड्स को लगभग 200 फाइलों में सुरक्षित किया गया है। इस संग्रहालय की विशेषता पत्रों का एक संग्रह है, जिसमें ई.1756 से लेकर रियासती काल की समाप्ति तक के पत्र रखे गए हैं। इस दुर्ग पर ई.1756 के पश्चात् कोई आक्रमण नहीं हुआ। इसलिए यह संग्रह आज भी सुरक्षित है। इस संग्रह में कई महत्वपूर्ण पत्र हैं, जिनमें उस काल का विश्वसनीय इतिहास उपलब्ध है। अधिकांश पत्रों में बनेड़ा के सामंतों एवं उसके अधिकारियों के नामों का उल्लेख हुआ है। बनेड़ा संग्रहालय के अनेक पत्रों में अठारह सौ सत्तावन की क्रांति का उल्लेख हुआ है। इन पत्रों से मेवाड़ के महाराणा का सैन्य क्रांति के प्रति रुख, जनसामान्य की प्रतिक्रिया तथा क्रांति की समाप्ति के पश्चात् अंग्रेज अधिकारियों द्वारा क्रांतिकारी सैनिकों के साथ किए गए अमानुषिक व्यवहार की जानकारी मिलती है। इन पत्रों से ज्ञात होता है कि मेवाड़ राज्य का जन-सामान्य, क्रांतिकारी सैनिकों के साथ सद्भावना रखता था, इसलिए मेवाड़ राज्य के अनेक ठिकानों के ठिकानेदारों ने क्रांतिकारी सैनिकों का साथ दिया। अंग्रेजों को यह भय था कि मेवाड़ का महाराणा स्वरूपसिंह (ई.1842-61) भी क्रांतिकारी सैनिकों की तरफ हो सकता है, इसलिए अंग्रेजों ने महाराणा पर दबाव बनाया कि वह सैनिक विद्रोह को दबाने में अंग्रेजों की सहायता करे तथा जो ठिकानेदार या सामंत, विद्रोहियों के प्रति सहयोग

दिखाते हैं, उन्हें दण्डित करे एवं उन पर नियंत्रण रखे।

इन पत्रों से यह भी ज्ञात होता है कि अंग्रेजी दबाव के चलते, महाराणा को अंग्रेजों के आदेशों की पालना करनी पड़ी, किंतु उसने क्रांतिकारियों अथवा क्रांतिकारियों का साथ दे रहे ठिकाणेदारों के विरुद्ध कोई कार्यवाही नहीं की। इस संग्रह के कुछ पत्रों से ज्ञात होता है कि विद्रोही सैनिकों को पकड़वाने वालों के लिए सरकार की तरफ से पुरस्कार की घोषणा भी की गई थी। बनेड़ा संग्रह में कई बहियां भी संग्रहित हैं, जिनसे अठारहवीं-उन्नीसवीं सदी में मेवाड़ राज्य के ठिकानों में प्रचलित मुद्राओं एवं आर्थिक परिदृश्य की जानकारी मिलती है।

संग्रहालय के एक दस्तावेज में बनेड़ा के राजा रायसिंह (ई.1758-69) के विवाह में हुए खर्च का उल्लेख है। यह विवाह वि.सं. 1816 (ई.1760) में पीसांगन में हुआ था। इसमें बनेड़ा वालों के 3480 रुपये व्यय हुए। मुख्य व्यय दो मदों पर हुआ। एक तो वर पक्ष द्वारा दुल्हन के लिए भेजे जाने वाले वस्त्रों, आभूषणों, मेवों आदि पर। दूसरा बड़ा व्यय वर पक्ष द्वारा विवाह के लिए अपनी राजधानी से रवाना होने के पूर्व दिए गए भोज पर हुआ। वस्त्रों के नाप एवं मूल्य का भी उल्लेख हुआ है। कपड़ा नापने के लिऐ गज एवं हाथ का प्रयोग किया गया था। वस्त्रों के निर्माण स्थल का भी उल्लेख हुआ है। खाद्य सामग्री की कीमतों एवं उनके प्रकारों का भी उल्लेख हुआ है। इस प्रकार इस दस्तावेज से उस समय के रीति-रिवाज, संस्कृति, अर्थ व्यवस्था आदि के विभिन्न पक्षों की जानकारी होती है। एक दस्तावेज में बनेड़ा के राजा हमीरसिंह (ई.1766-1805) की रानी मेड़तणी के निधन के पश्चात् उसके व्यक्तिगत सामान की सूची दी गई है। यह मेड़तिया वीरमदेव की पुत्री कुंवरी बाई थी। उसका विवाह वि.सं. 1831 में एवं निधन वि.सं. 1834 में हुआ। उस सूची में उसके बर्तन, कपड़े, आभूषणों की संख्या एवं नाम दिए गए हैं। आभूषणों एवं सोने-चांदी के बर्तनों की तोल भी दी गई है। इस सूचि के अनुसार मेड़तणी के पास 400 तोला सोना था। उसके पास मोती, मूंगे, माणक, पन्ना आदि के भी आभूषण थे। उसकी सामग्री में घरेलू उपयोग में आने वाली वस्तुओं की भी एक लम्बी सूचि दी गई है। इस सामान में सबसे भारी वस्तु सोने की एक तासली है, जिसका भार 86 तोला है। पीतल एवं लोहे के सामान की भी एक सूची है। वस्त्रों में सबसे अधिक संख्या साड़ियों की है। इस दस्तावेज से उस काल की सामंती व्यवस्था में रानियों की सम्पत्ति एवं संस्कृति का पता चलता है।



अध्याय - 13

पट्टा एवं ताम्रपत्र पुरालेखागार, मसूदा

अजमेर जिले में स्थित मसूदा पुरालेखागार में मध्यकालीन सैंकड़ों ऐतिहासिक अभिलेख, ताम्रपत्र, पट्टे, बहियां, सनदें एवं पत्र व्यवहार संग्रहित है। कुछ ताम्रपत्र एवं पट्टे ई.1819 से पहले के हैं। ये पट्टे अथवा सनद मसूदा के जागीरदारों द्वारा जारी किए गए थे। मसूदा के सामंत अथवा जागीरदार ने मसूदा के इस्तिमरारदार को अपने अधीनस्थ सामंत की तरह सनद जारी करने का अधिकार दिया। मसूदा के जागीरदार ने दांण (कस्टम), जमाबंदी (भू-अभिलेख) एवं बाव (उपकर) लगाने के अधिकार अपने पास रखे तथा शेष अवशिष्ट अधिकार इस्तिमरारदार को दे दिए, जो कि मसूदा परगने के 40 गांवों के सम्बन्ध में थे। इन अधिकारों के तहत इस्तिमरारदार की राजस्व राशि की रेख (सीमा) 44,800 रुपए बांधी गई।

मुगल बादशाह अकबर ने ई.1559 में भोपतसिंह मेड़तिया को मसूदा का परगना दिया था जो उस समय मेड़ता राज्य के अधीन था, किंतु बाद में मसूदा परगना जोधपुर राज्य के अधीन हो गया। मसूदा के सामंत ने ऐहिक एवं पारलौकिक कल्याण के लिए नाथों, जोगियों, आयस एवं ब्राह्मणों को कुछ भूखण्डों के पट्टे जारी किए, जिनका अभिलेख कुछ ताम्रपत्रों एवं कागजों पर अंकित है। यह अभिलेख मसूदा पुरालेखागार में उपलब्ध है। यहाँ रखे कुछ ताम्रपत्रों से जागीरी क्षेत्र की न्याय व्यवस्था एवं पंचायत व्यवस्था पर भी प्रकाश पड़ता है। कुछ ताम्रपत्रों से क्षेत्रीय जनजातियों के सामाजिक विधि-निषेधों की भी जानकारी मिलती है। साथ ही तत्कालीन दण्ड विधान की कठोरता, समाज की आर्थिक स्थिति, परगने की अर्थव्यवस्था आदि की भी जानकारी मिलती है।

मसूदा पुरालेखागार के अभिलेखों का वर्गीकरण एक-पक्षीय एवं बहु-पक्षीय आधार पर किया गया है। प्रथम वर्ग के अभिलेखों में स्वेच्छा से भू-अंतरण अधिकार का उपयोग करके अधिकृत भूमि को दूसरे के प्रति अंतरित करने की उद्घोषणा है। इसमें दूसरे पक्ष की सहमति प्राप्त करना अनिवार्य नहीं था। दूसरे वर्ग के अभिलेखों में बहुपक्षीय प्रलेख हैं, जिनमें दो या दो से अधिक पक्ष सम्मिलित रूप में निर्णय की उद्घोषणा करते हैं। इसके अंतर्गत समस्त पक्षों की सहमति होनी अनिवार्य है। लेखन की आधारभूत सामग्री के रूप में ताम्रपत्र एवं कागज दोनों पर पट्टे उपलब्ध हैं। अकारादि क्रम (Alphabetical Order) 1-3 एवं 22-25 कागज पर लिपिबद्ध प्रलेख हैं जबकि

अकारादि क्रम 4–21 ताम्रपत्र पर उत्कीर्ण प्रलेख हैं। कागज पर लिपिब) प्रलेखों पर अंतरक की सीमा में सत्यापन की मुद्रा भी अंकित है जो ताम्रपत्र पर नहीं मिलती। इसके अतिरिक्त अंतरण संरचना की दृष्टि से दोनों प्रकार के प्रलेख समान हैं। अकारादि क्रम 22 एवं 24 में आवासीय व्यवस्था भूतल एवं भवन के अंतरण (ट्रांसफर) का उल्लेख अकारादि क्रम 22 में टिप्पणी के रूप में एवं 25 में प्रलेख अंग के रूप में मिलता है। अभिलेख के 4 एवं 6–25 के स्वरूप एवं संरचना साम्य के आधार पर इनके स्वरूप (पैटर्न) को सुविधा की दृष्टि से नौ चारणों में विभक्त किया जा सकता है–

(1.) उपास्य देव स्मरण

(2.) अंतरक (Transferer) का नाम

(3.) अंतरी (Transferee) का नाम

(4.) अंतरण का उद्देश्य एवं प्रतिफल (Purpose of concederation)

(5.) अंतरित आधार (ऑब्जेक्ट ऑफ ट्रांसफर) (Object of Transfer)

(6.) अंतरण अवधि (पीरियड ऑफ ट्रांसफर) (Period of Transfer)

(7.) प्रलेखकार प्रमाणीकरण (Writer's Verification), अंतरक एषणा (Transferer's Intension), अंतरक के वरिष्ठ अधिकारी की सहमति, प्रलेखकार के हस्ताक्षर।

(8.) तिथि

(9.) अंतरक सत्यापन एवं मुद्रा (Seal of Atestation)

प्रलेख आलेखन कार्य भारतीय जीवन दर्शन एवं धर्म से अनुप्राणित है। प्रत्येक प्रलेख का आरम्भ उपास्य देव के विग्रह रूपा सौपाधिक नाम स्मरण के साथ हुआ है। जैसे– अकारादि क्रम 4, 17, 18, 20, 21–22 में श्री गोपाल एवं श्रीरामजी(अकारादि क्रम 7, 8, 10, 13, 14, 16 में श्री रामजी(अकारादि क्रम 6 में श्री प्रभुजी(अकारादि क्रम 11 में श्री(अकारादि क्रम 15 में श्री स्वजी (शिवजी) तथा श्रीरामजी(अकारादि क्रम 1–3 में श्री परमेश्वरजी सत्य छै का उल्लेख प्रलेख के आरम्भ में मिलता है।

द्वितीय चरण में पुरुष एवं महिला वर्ग दोनों अंतरक के रूप में विद्यमान हैं। अकारादि क्रम 11 एवं 23 में महिला वर्ग तथा अवशिष्ट में पुरुष वर्गीय अंतरक हैं। अकारादि क्रम 1–3 में जोधपुर के सामंत की पीढ़ी द्वय 4, 9, 10, 13, 16–25 में मसूदा के प्रशासक, अकारादि क्रम 15 में भाइपा मसूदा, अकारादि क्रम 6–8 में भिणाय के राजा, अकारादि क्रम 12 एवं 14 में अपरिचित प्रशासक द्वारा अंतरण का उपभोग हुआ है। अकारादि क्रम 25 को छोड़कर अवशिष्ट सभी प्रलेखों में अंतरी पुरुष वर्गीय है। अकारादि क्रम 1–3 में मसूदा के सामन्त की पीढ़ी द्वय, अकारादि क्रम 4 एवं 20 में नाथपंथी– 'आयस एवं जोगी' अकारादि क्रम 25 में 'मंदिर चारभुजा' एवं अवशिष्ट में

ब्राह्मण अंतरी है।

अकारादि क्रम 1–3 में शक्ति संतुलन के आधार पर सामंत सृजन की भावना प्रधान है। अकारादि क्रम 4, 6–25 में इहलोक एवं परलोक हिताय की भावना अनुप्रेरक के रूप में कार्य करती है। अकारादि क्रम 5 में सामाजिक जीवन की सीमा में विधि निषेध व्यवस्था की प्रतिष्ठा का प्रश्न प्रमुख है। इहलोक हिताय एवं परलोक हिताय भावना का केन्द्र बिंदु है- अंतरक के उपास्य देव का प्रसन्नता जन्य अनुग्रह। फलतः अंतरण का उद्देश्य है उपास्य देव के विग्रह को समर्पण।

अकारादि क्रम 4 में शिव प्रतिये, अकारादि क्रम 6–8 में किसनारपण, अकारादि क्रम 8, 9, 13, 21 में परमेसर प्रीति हेतु अंतरण कार्य सम्पादित किया गया है। कुछ प्रलेखों में दान की परम्परागत औपचारिकता के निर्वाह की दृष्टि से अंतरण कार्य सम्पादित हुआ है। अकारादि क्रम 11 में 'ब्राह्मण को दी', अकारादि क्रम 12 में 'धरम किनो', अकारादि क्रम 14, 15 में 'डोली', अकारादि क्रम 17 में 'दान एवं डोली', अकारादि क्रम 20 में 'उदक्त', अकारादि क्रम 24 में 'पुण्यार्थ भूमि' अंतरित की गई है। कुछ प्रलेखों में विशिष्ट अवसर- पुण्यकाल पर दान देने की धारणा से अनुप्रेरित भू-अंतरण कार्य सम्पादित हुआ है- 'चन्द्रग्रहण' के अवसर पर अकारादि क्रम 10 में 'सत कीयो जद' अकारादि क्रम 11 में 'गरुड़ पुराण पाठ' के अवसर पर, अकारादि क्रम 23 में 'छः माही श्राद्ध', अकारादि क्रम 25 में 'चारभुजा की सेवा-पूजा एवं बाल भोग की व्यवस्था' हेतु भू-अंतरण व्यवस्था सम्पादित हुई है।

अकारादि क्रम 5 में न्यायिक संस्था की प्रतिष्ठा हुई है। इसके अतिरिक्त सभी प्रलेखों में भू अंतरण का प्रश्न मूल आधार है। अकारादि क्रम 1–3 में अंतरी को जमाबंदी (भू-राजस्व) एवं बाव (उपकर) प्रतिफल के रूप में देता है। अकारादि क्रम 4 एवं 6–25 अंतरी को अंतरित भूमि के प्रतिफल में कुछ भी नहीं देना है, क्योंकि किसी भी प्रकार के लगान (भूराजस्व एवं किराया) की अदायगी के लिए उल्लेख नहीं है। अकारादि क्रम 16 में 'घूमौ सदाबंद ला छ तो लगसी' से प्रतीत होता है कि कोई धनराशि इस प्रलेख के निष्पादन की तिथि से पूर्व ही अंतरी, अंतरक को दे रहा है। अकारादि क्रम 21 में 'घूमा का रुपया लगछ सा लाग्या जासी' लिखा है। इससे प्रतीत होता है कि यह राशि भू-अंतरण के प्रतिफल के रूप में नहीं, अपितु यह एक प्रकार का 'ग्राम विकास व्यवस्था सम्बन्धी कर' है, कृषि भूमि सम्बन्धी नहीं।

अंतरित भूमि का नाप अकारादि क्रम 1–3 में अंकित नहीं है, वरन् इनके द्वारा सनद में निदित 40 गांवों की सीमा-परगना मसूदा जो भौगोलिक दृष्टि से मौके पर विद्यमान हो, उसे स्वीकार किया गया है। अकारादि क्रम 4 एवं 6–25 में भू-मापत का आधार क्षेत्रफल बीघा में गुहित है। अंतरित भूमि का क्षेत्रफल 3 बीघा से लेकर 187 बीघा तक है। अकारादि क्रम 18 से संकेत मिलता है कि भू-मापन कार्य में 84 हाथ की

डोरी काम में ली जाती थी।

अकारादि क्रम 18 में भू-सीमन का पूर्ण वितरण उपलब्ध है। इसमें पूर्व, पश्चिम उत्तर एवं दक्षिण वर्ती पार्श्व में स्थित भूखण्डों को संकेतित किया गया है। अकारादि क्रम 6-9, 11-13, 15-16 में भू-सीमन सम्बन्धी उल्लेख नहीं है। अकारादि क्रम 10, 14, 15, 19, 20, 21-25 में भू-सीमन के सम्बन्ध में स्थूल संकेत इस प्रकार लिखे गए हैं- 'नदी के ढाव' (नदी के ढलान में), 'गेलां बच' (रास्ते के बीच) आदि।

मसूदा पुरालेखागार में रखे भू-प्रलेखों में सिंचाई के साधनों के आधार पर भूखण्ड की प्रकृति एवं श्रेणियों के संकेत भी मिलते हैं। अकारादि क्रम 4 में पीवल, अकारादि क्रम 8 में चड़स 13 बीघा, सियालु 38, अकारादि क्रम 10 में 'कुवां-बावड़ी' की जमीन- चड़स 1, अकारादि क्रम 18 में 'ठीकलो', अकारादि क्रम 16 एवं 18 में 'जमीन', अकारादि क्रम 19 एवं 20 में 'तालाब म टूकडो', अकारादि क्रम 21 में 'चड़स भेरा पर' आदि शब्द भूखण्ड की श्रेणी एवं प्रकार की ओर संकेत करते हैं। कुआं, बेरा, भेरा, बावड़ी, चड़स, उनाली, पीप आदि शब्द कुएं से सिंचित भूमि को दर्शाते हैं, जबकि 'गोरम्यो' तथा 'ढीकलो' शब्दों का अर्थ तालाब द्वारा सिंचित भूमि है। 'तालाब में टुकड़ो' का आशय तालाब के क्षेत्र में नीचे की भूमि से है। कांकड़ एवं जमीन का आशय असिंचित भूमि से है। इसी प्रकार चाही, तालाबी, आबी एवं बारानी श्रेणियों के संकेत भी दिए गए हैं।

अंतरण अवधि में शाश्वतता एवं निरंतरता की भावना ध्वनित होती है। अंतरक की इच्छा है कि उसके जीवनोपरांत भी अंतरित भूमि का अंतरी एवं अंतरी के वंशजों द्वारा निर्बाध रूप से उपभोग होता रहे, अनुपालक के रूप में चाहे संगोत्रीय उत्तराधिकारी हो चाहे अगोत्रीय। अकारादि क्रम 6, 8, 10-13, 25 में शाश्वत अंतरण का उल्लेख है- 'पीडी दर पीडी खायां जाज्यो', 'पोता पीडच्य दर पीडच्य पाया जासी, उत्तरण पाव नहीं'। आदि ऐसे शाश्वत अंतरण सूचक वाक्य एवं उक्त शब्द साथ-साथ प्रयुक्त हुए हैं।

अकारादि क्रम 3 में डोली (किराया मुक्त अनुदान) इस प्रकार के भूखण्डों को अकारादि क्रम 40-6-25 में आधार माना गया है- देने के अधिकार पर प्रतिबंध लगाया गया है, किंतु वि.सं. 1863 में प्रतिबंध होते हुए भी डोली के अधिकार का उपभोग अकारादि क्रम 20 एवं 23 में मसूदा के इस्तिमरारदार ने किया है।

प्रलेख के अंतिम चरण से पहले वाले भाग में प्रमाणीकरण की सीमा का उल्लेख किया गया है। सर्वप्रथम प्रलेख में अंतरक की एषणा (ट्रांसफरर्स इन्टेन्शन) का संकेत किया गया है। इस तथ्य की व्यंजक शब्दावली अकारादि क्रम 21 में 'श्री परवानगी' अकारादि क्रम 10 में 'संकल्प कीयो सो सही', अकारादि क्रम 21 में 'कास परवानी श्रीमुख सही', का प्रयोग मिलता है।

प्रलेख के अंतिम चरण में प्रलेखकार के हस्ताक्षर हैं। इन प्रलेखों से यह ज्ञात नहीं हो पाता कि प्रलेखकार सामंत सेवा में नियुक्त कोई इकाई है या प्रलेखकार श्रेणी की कोई स्वतंत्र इकाई! प्रलेखकार अपने हस्ताक्षर द्वारा प्रमाणित करता है कि यह प्रलेख सामंत की इच्छा या आदेश पर निष्पादित किया गया है, तथ्य सामंत के वरिष्ठ राजस्व अधिकारी की सहमति का अभिव्यंजक भी हैं। सभी प्रलेखों में इस सार पर तिथि का अंकन किया गया है। इस संदर्भ में चंद्र मास, आवृत तिथि, वार तथा विक्रम संवत का अंकन है। मसूदा पुरालेखागार के समस्त प्रलेखों का निष्पादन विक्रम संवत 1686 से 1878 के बीच की अवधि में हुआ है।

प्रलेख लेखन की दृष्टि से इस पर अंतरक की स्वीकारोक्ति अनिवार्य है। इस दिशा में अंतरक अपने हस्ताक्षर न करके केवल स्वीकारोक्ति सूचक शब्दों को लिपिबद्ध कर देता है। अकारादि क्रम 4–5, 9, 12 में 'राम सही' अकारादि क्रम 1–3 एवं 16–18 में 'सही छै' का उल्लेख हुआ है। कागज पर लिपिबद्ध पट्टों में स्वीकारोक्ति मूलक उल्लेख के ऊपर है। अंतरक की मुद्रा पुष्टि की आवृति का बोध कराती है। ताम्रपत्रों पर इस प्रकार का मुद्रांकन नहीं है।

प्रथम श्रेणी एवं द्वितीय श्रेणी के प्रलेख में अंतर केवल तृतीय चरण, षष्ठ चरण एवं आंशिक रूप से नवम् चरण में संनिहित है। प्रथम कोटि के तृतीय चरण के अनुसार दो इकाइयां अंतरक एवं अंतरी प्रधान हैं। द्वितीय श्रेणी का प्रलेख एक राजीनामा है जो स्थानीय जनजाति के दो व्यक्तियों 'सांड़ला' एवं 'धाना' के मध्य हुआ है। इसमें मसूदा के तत्कालीन इस्तिमरारदार को सम्बोधित किया गया है। वही इस्तिमरारदार स्वयं एक पक्ष के रूप में भी स्वीकार किया गया है, क्योंकि इस समझौते में इन्हें बाध्य किया गया है कि- प्रलेख की सुरक्षा का दायित्व मसूदा इस्तिमरारदार पर होगा। एवं प्रलेख को आवश्यकता पड़ने पर पंच के अतिरिक्त किसी के सम्मुख प्रस्तुत नहीं करेंगे। यदि करेंगे तो 50 रुपए शुल्क लेकर। इसके अतिरिक्त जो भी पक्ष इस समझौते का पालन करने में असक्षम रहेगा, उस पर निर्धारित आर्थिक दण्ड रूप में धनराशि मसूदा इस्तिमरारदार को मिलेगी।

इस प्रलेख का उद्देश्य दो पक्षों– 'सांड़ला' एवं 'धाना' में उत्पन्न 'पुरसगारी विवाद' (Service in Community Meals) है। इसकी निवृत्ति दोनों पक्षों के पारस्परिक सहयोग एवं इस्तिमरारदार के प्रयत्नों पर निर्भर है। दोनों पक्षों की पंचायत के सर्वसम्मति के निर्णय द्वारा विवाद का अंत हुआ है। किसी भी पक्ष द्वारा इस निर्णय का उल्लंघन किए जाने पर गीरत 12 रुपए, मन दाणा 24 मण एवं उपरांत ग्यरा का 4 मूल्य 44 रुपए दण्ड रूप में इस्तिमरारदार के कोषागार में जमा कराना होगा। यह भी निर्णय लिया गया कि निर्णय ताम्रपत्र इस्तिमरारदार के पास सुरक्षित रहेगा। आवश्यकता पड़ने पर पंचायत के

अतिरिक्त कोई भी व्यक्ति या पक्ष देखने के लिए नहीं मांग सकेगा। यदि कोई मांगे तो इस्तिमरारदार को 50 रुपया खर्च के जमा करवाए।

इस ताम्रपत्र पर इस्तिमरारदार का सत्यापन अन्य प्रलेखों के समान ही विद्यमान है पर पंचायत के दोनों पक्षों के प्रतिनिधियों की स्वीकारोक्ति मूल वाक्यावलि या हस्ताक्षर नहीं हैं। संभवतः तत्कालीन इस्तिमरारदार की स्वीकृति या सत्यापन का साक्ष्य ही दोनों पक्षों के लिए पर्याप्त है तथा इस सत्यापन में ही दोनों पक्षों की स्वीकृति अनुस्यूत है। इस ताम्रपत्र से प्रतीत होता है कि इस्तिमरारदार जनजातियों में भी आस्था प्राप्त व्यक्ति हो गया था।

इस प्रकार मसूदा अभिलेखागार के अभिलेखों से सामंती युग की अनेक परम्पराओं, व्यवस्थाओं एवं सामाजिक विश्वासों की जानकारी मिलती है।



अध्याय - 14

कानोड़ ठिकाने की पट्टा–बहियाँ

कानोड़ ठिकानेदार, मेवाड़ रियासत का प्रथम श्रेणी का उमराव था। इस ठिकाने के सामंत, चूंडा के भाई अज्जा के पुत्र सारंगदेव के वंशज हैं। वे सारंगदेवोत कहलाते हैं। उनकी उपाधि रावत थी। कानोड़ ठिकाने के संग्रहालय में रियासत कालीन अनेक दस्तावेज संग्रहित हैं। इनमें पत्राचार, पट्टा, बहियां, चौपनियां, नत्थियां, आदि उल्लेखनीय हैं। इस सामग्री का कुछ अंश, श्रीमती सरयूदेवी ओझा संग्रह में उपलब्ध है।–इसमें पट्टे, परवाने, रुक्के एवं अधिकारियों के पत्र उपलब्ध हैं जिनसे उस काल की राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक स्थितियों की जानकारी मिलती है। इन दस्तावेजों से मेवाड़ राज्य द्वारा लगाए गए विभिन्न प्रकार के करों की भी जानकारी मिलती है। इनमें एक कर 'खड़लाकड़' भी था, जिसका उल्लेख इस संग्रह के परवानों में हुआ है। यह कर लकड़ी एवं चारे के रूप में लिया जाता था। जब महाराणा अपने राज्य में दौरा करता था, तब गांव के लोग खड़लाकल के रूप में यह कर दिया करते थे। खड़लाकल न दिए जाने की स्थिति में एक रुपया प्रतिदिन की दर से शास्ति लगाई जाती थी। कुछ पत्रों से पड़ौसी जागीरों से सीमा सम्बन्धी विवादों की जानकारी मिलती है। सीमाओं पर मवेशियों की चोरी की घटनाओं की बड़ी संख्या में जानकारी मिलती है।

कुछ दस्तावेजों से ज्ञान होता है कि राज्य में मराठों के उपद्रव बढ़ जाने के बाद से 'मुकाता' कर प्रणाली का अधिक प्रचलन हो गया था। कुछ दस्तावेजों से मेवाड़ राज्य की पट्टादारी व्यवस्था पर अच्छा प्रकाश पड़ता है। यह व्यवस्था मुगलों की मनसबदारी व्यवस्था के समानांतर एवं उसके जैसी ही थी। महाराणा प्रसन्न होने पर कुछ लोगों को गांव देते थे और अप्रसन्न होने पर गांवों को जब्त कर लेते थे। कुछ दस्तावेजों से जानकारी मिलती है कि इस काल में सेना का संचालन महत्वपूर्ण महाजनों एवं कायस्थ अधिकारियों को दिया जाता था। राज्य के सामंत इसी महाजन अथवा कायस्थ अधिकारी के अधीन रहकर लड़ते थे। कुछ अभियानों का नेतृत्व धाभाई करते थे।

कानोड़ ठिकाने की एक बही श्रीमती मांगबाई ओझा संग्रह में संग्रहित है। इस बही में 382 पट्टों की नकल है। यह बही 19वीं शताब्दी में कानोड़ क्षेत्र का भू-राजस्व एवं प्रशासनिक इतिहास जानने में महत्वपूर्ण सामग्री उपलब्ध कराती है। पट्टा का अर्थ उस घृति से होता है जो किसी को प्रदत्त की हुई हो। ऐसी प्रदत्त जागीर, जमीन, खेत, द्रव्य, सम्पत्ति भवन किराया, राज्य चुंगी और लागत का अंश होती थी। यह प्रदतियां

पत्राधिकार अथवा ताम्रपत्र द्वारा प्रदान की जाती थीं। इनकी प्रतिलिपियां पट्टा बहियों में लिखी होती थी। इस कारण इन बहियों में उस काल की राजनीतिक व्यवस्था, सामाजिक व्यवस्था, धार्मिक विश्वास आदि का अनायास ही उल्लेख हो जाता था। कानोड़ ठिकाने की पट्टाबही सिमटी हुई स्थिति में 11 इंच लम्बी तथा 7 इंच चौड़ी है। इस बही के पृ. 1, 2, 4, 44 एवं 45 आधे फटे हुए हैं। रावत उम्मेदसिंह (ई. 1850–83) कालीन पट्टाबही में दो पट्टे उम्मेदसिंह के पिता रावत अजीतसिंह द्वारा जारी किए हुए हैं। एक पट्टा ठाकुर सालमसिंह तथा एक पट्टा ठाकुर वैरिशाल द्वारा प्रदत्त है।

इस पट्टा बही से हमें कानोड़ ठिकाने की आर्थिक स्थिति का भी ज्ञान होता है। आवासीय भू–आवंटन के पट्टों तथा कृषि भूमि से सम्बन्धित पट्टों से हमें भूमि श्रेणीकरण की भी जानकारी मिलती है। यह श्रेणीकरण उत्पादन के आधार पर किया जाता था। इस बही के पट्टों से ज्ञात होता है कि पीवल भूमि का अर्थ ऐसी सिंचित भूमि से था जिसकी सिंचाई कुएं, तालाब अथवा नहर से होती हो। माल अथवा मालेटी ऐसी भूमि को कहते थे, जिसमें बिना सिंचाई के रबी की फसल होती थी। मगरा पहाड़ी पर स्थित भूमि को कहते थे। बीड़ अथवा बीडा घासयुक्त भूमि को कहते थे, जहाँ मवेशी चराए जाते थे। रांखड़ या रांकड़ बंजर तथा अनउपजाऊ भूमि को कहते थे। उसर भूमि का अर्थ था, जिसमें लवण की मात्रा अधिक हो। पड़त भूमि, उपजाऊ होते हुए भी बिना खेती के छोड़ी गई भूमि को कहते थे। वालरा उस भूमि को कहते थे, जो पहाड़ी ढलानों पर स्थित थी तथा जिन पर हल नहीं चलाया जा सकता था। गोरमा उस खेत को कहते थे, जो गांव के पास होता था और जिसमें वर्षा के समय गांव का पानी भरता था। कोयड़ उस भूमि को कहते थे जिसमें तिल, उड़द, मूंग आदि तिलहन एवं दलहन पैदा होते थे। उपज की दृष्टि से कोयड़ तथा पीवल सर्वश्रेष्ठ, माल अथवा मालेटी मध्यम तथा शेष भूमि कमजोर मानी जाती थी। इस बही से ज्ञात होता है कि उस काल में कुछ ब्राह्मण भी खेती करते थे। 15 सितम्बर 1873 के एक पट्टे में पुरोहित दौलतराम जोतराम केथुराम को एक पट्टा जारी किया गया है।

इस बही के पट्टों से ज्ञात होता है कि धर्मार्थ दान–पुण्य में दी गई भूमि अधिकांशतः रांकड़ हुआ करती थी, जिससे कि सम्बन्धित व्यक्ति उस जमीन को परिश्रम करके कृषि योग्य बनाए और अपना जीवन निर्वाह करे। यों भी पुण्यार्थ भूमि से ठिकाने को राजस्व नहीं मिलता था। इसलिए ठिकानेदार, बंजर भूमि को आबाद करने तथा पड़त की भूमि को निरंतर हांकने पर बल देता हुआ कृषकों को कुछ सुविधाएं प्रदान करता था। 10 जून 1868 के एक पट्टे में ठिकानेदार ने इच्छा व्यक्त की है कि बंजर जमीन हांककर आबाद करें। इस पर पहले छटो वाटो (छठा हिस्सा), दूसरे वर्ष पांचवा, तीसरे वर्ष चौथा, चौथे वर्ष तीसरा वाटा लिया जाएगा। 17 जुलाई 1870 के एक पट्टे में लिखा गया है कि– 'खेत एक पड़त है उसे हांकना, बोलना और हासल, भोग, लागत वलगत (लाग–बाग)

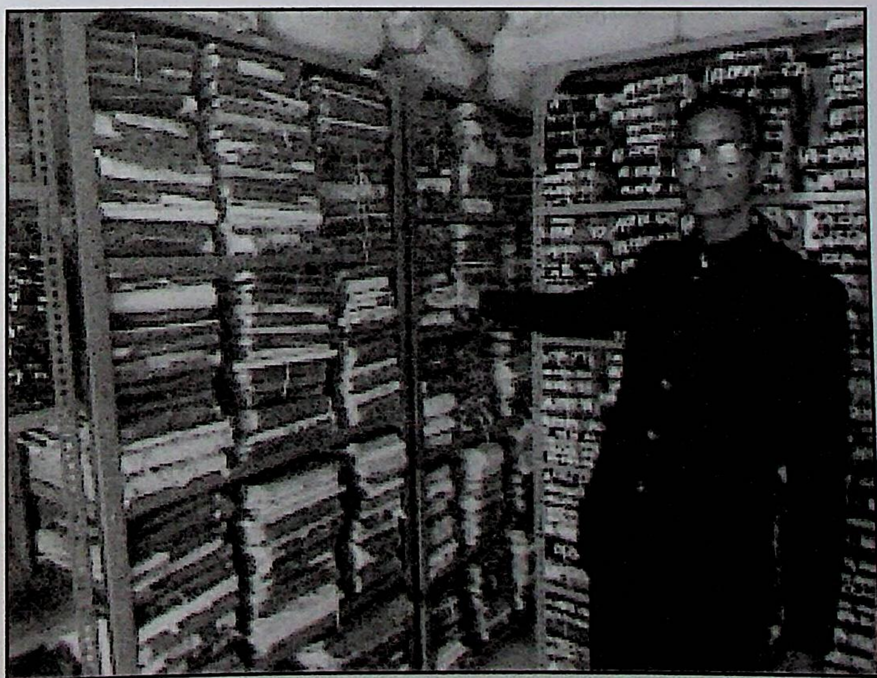
में कसर मत करना और जमीन पर खुशी से कुआं खोदना। पहले वर्ष का वाटा (हिस्सा) चौथा लिया जाएगा, इसके बाद लेते आवे उसके अनुसार लिया जावेगा। 31 अगस्त 1873 को नानजी गाड़री को दिए गए एक पट्टे में लिखा है कि जमीन पड़त नहीं रहनी चाहिए। 22 जुलाई 1876 को कीकावास के हीरा जाट को दिए गए पट्टे में लिखा है कि काम कमाई में कसर न रखें वरन् यह जमीन किसी अन्य को दे दी जाएगी।

19 अगस्त 1856 के एक पट्टे से ज्ञात होता है कि उस काल में वर्ष में दो फसलें ली जाती थीं, जिन्हें सियालू (खरीफ) तथा उन्हालू (रबी) कहा जाता था। इस पट्टे में लिखा है कि हमेर खां को 22 मण धान साख (फसल) सियालू में तथा 22 मण धान साख उन्हालू में दिया जाएगा। इस पट्टा बही से उस काल के भू-राजस्व एवं करों के बारे में ऐसे तथ्य उजागर होते हैं, जो अन्यत्र प्राप्त होने कठिन हैं। जागीरदार द्वारा भोग की निश्चित राशि के साथ-साथ कृषि उपज का दसवां भाग भी लिया जाता था, जिसे दसूंद कहा जाता था। एक मण के साथ सवामण लिया गया भोग सवाणा कहलाता था। भोग यदि सवा गुणा लिया जाता था तो उसे सवाई लागत कहते थे। खलिहान में एक लागत और लगती थी जिसे सूंखड़ी कहते थे जैसे ठिकानेदार सूंखड़ी। राजकुमार के नाम पर वसूल की गई अतिरिक्त राशि कुंवर मटकी (कुंवर सूंखड़ी) कहलाती थी। 'गांव-गजरा की लागत' नामक कर गांव का सामूहिक पंचायतन चंदा होता था। फसल के पकने तथा काटने से पहले, किसानों से कड़पा की लागत ली जाती थी। 7 जून 1860 को अजीतसिंह चूण्डावत को दिए गए पट्टे में कड़पा माफ किया गया था। कूंता निश्चित करने आए हुए लोगों, घोड़ों, सिपाहियों, देवता आदि के लिए पारम्परिक खुराक की निश्चित राशि को नूंद एवं गोठ कहते थे। गांव से ठिकानेदार को दी गई नूंद या गोठ को रावली नूंदर या रावली गोठ कहते थे। 30 जुलाई 1857 के एक पट्टे में देवता की गोठ, 11 मार्च 1878 के पट्टे में नूंद का उल्लेख हुआ है। पट्टों में चाकरी (सेवा) एवं छटूंद (1/6 भाग), का उल्लेख भी आया है। कृषि से सम्बन्धित एक कर खड़ लाकड़ भी था। खड़ का अर्थ घास एवं लाकड़ का अर्थ लकड़ी होता है। यह कर ठिकाने की प्रजा से वसूल करके राज्य में जमा करवाया जाता था। 30 जुलाई 1857 के एक पट्टे में उल्लेख किया गया है कि जगह की रेख, उपज के अनुसार छटूंद, बराड़, खड़लाकड़, देवता की गोठ सदैव से लागत लगती आई, वह लेवें। 14 अगस्त 1855 को जीवराज नागौरी को दिए गए पट्टे में लिखा है- 'श्री रावली तरफ से 62 रुपए जगात (दान, कर, वसूल, खैरात) लेकर जगह दी।'

जब शिल्पी, ठिकानेदार को कर नहीं देकर महीने में एक दिन ठिकानेदार का काम करता था तो उसे बैठ-बेगार कहते थे। 5 जुलाई 1856 को बहु झालीजी को दिए गए पट्टे में लिखा है कि बैठ-बेगार भाइयों के गांवों से ली जाएगी। 31 अगस्त 1873 को नानजी गाडरी को दिए गए पट्टे में लिखा है कि राजीखुशी से कुआं खोदना .... लागत

विगलत, बैठ–बेगार, धारता के अनुरूप है। 19 जुलाई 1874 के एक पट्टे में सेणकाई तथा अदकर की लागत का उल्लेख है। 12 अगस्त 1876 के एक पट्टे से ज्ञात होता है कि पटवारी, सेहणा, बलाई का धान भोग एक मण पर ढाई सेर कातीसरा का, पटेल देवा के गांव गजरों टांक दें। पटेल देवा के बैठ–बेगार नहीं रखनी, बैठ–बेगार होवे तो धणी की मरजी। 2 जनवरी 1877 को गमेती, वेणा, लखा, पेमा आदि को नया खेड़ा बसाकर आबाद करने का पट्टा प्रदान किया। उससे ज्ञात होता है कि तीसरे वर्ष में लाटा–कूंता और इसके बाद हांसल, भोग, लागत वलगत, उगाई परगना के अनुरूप देते रहना। भोग एवं कूता की पांती 6 में सवा लिया जाएगा। उगाई सामदी (प्रति सामद एक बीघा की फसल) प्रति सवा रुपया लिया जाएगा। लागत–वलगत, बैठ–बेगार परगना सरसते (अनुरूप) देते रहना। पट्टों में बार–बार लिखा गया है कि हांसल एवं भोग में किसी भी प्रकार की कमी मत आने देना।

ठिकाने की आय को बढ़ाने एवं अपने उपसामंतों का विश्वास प्राप्त करने के लिऐ ठिकानेदार समय–समय पर नवीन खेड़ा बसाने के लिए पट्टे जारी करता था। इन नवीन खेड़ों से हांसल, भोग, लाग–बाग के रूप में द्रव्य लिया जाता था। ठिकाने में बाहर से माल लाने एवं ठिकाने का माल बाहर ले जाने के लिए दाण, मापा (बिक्रीकर) और बिस्वास के प्रचलित राजस्व के साथ कई प्रकार की लागत ली जाती थी। ऐसी लागत प्रति बैलगाड़ी, प्रति बैल या पोठ्या, गधा एवं ऊँट पर ली जाती थी। जमीन–जायदाद



बेचने पर जगात लिया जाता था। महाजनों एवं व्यापारियों से दुमाला कर लिया जाता था। ठिकानेदार की नौकरी के बदले वेतन नगद नहीं दिया जाता था, अपितु वर्ष भर का धान एवं भूमि अनुदान रूप में दी जाती थी। इस प्रकार की भूमि का उपयोग व्यक्ति ठिकानेदार की नौकरी में रहते हुए ही कर सकता था। 19 अगस्त 1856 को हमेर खाँ फेरणा को दिए गए पट्टे में लिखा है कि- 'रोजगार वर्ष एक साख (फसल) 2, मास 12 का धान 45 मण और कपड़ों के 24 रुपए देने हैं इसलिए साख से साख प्राप्त कर लें। घोड़े फेरें और आदेशानुरूप घर में जेठ सुदि 15 को क्रमशः साढ़े बाइस मण धान, नगद रुपए 12 दिए जाएंगे। 4 जुलाई 1866 को मोची तुलछा को सवा ग्यारह बिस्वा के बाड़े का पट्टा दिया गया है जिसमें लिखा है कि यह बाड़ा सरकारी तरफ से है, अतः कमाई करना और आदेशानुसार सेवा करना।

इस प्रकार इस पट्टाबही में कानोड़ ठिकाने की भू-राजस्व एवं कर व्यवस्था की विश्वसनीय जानकारी मिलती है।



अध्याय - 15

सामंती व्यवस्था के प्रकाश–स्तम्भ उनियारा ठिकाने के पुरालेख

जयपुर रियासत का उनियारा ठिकाना चौदहवीं शती ईस्वी में जयपुर नरेश उदयकर्ण के पुत्र राव बरसिंह के समय अस्तित्व में आया। रियासती काल में यह जयपुर रियासत के अंतिम छोर पर बूंदी रियासत की सीमा के निकट स्थित था और अब यह टोंक जिले में स्थित है। इस ठिकाने के अभिलेख फारसी, राजस्थानी, उर्दू, मराठी एवं अग्रेंजी भाषा के हैं। उनियारा के रावराजा राजेन्द्रसिंह ने इन अभिलेखों को आठ बक्सों में सुरक्षित करवाया। इन अभिलेखों को बक्सों में रखने से पहले बस्तों में बांधा गया है। इन अभिलेखों में फरमान, पट्टे, परवाने, रुक्के, पत्र, ताम्रपत्र, वंशावली, सनद तथा हुक्मनामा आदि का संग्रह है। उनियारा के अभिलेखों से ज्ञात होता है कि यह ठिकाना कच्छवाहों की नरुका शाखा के अंतर्गत था। इन अभिलेखों से उनियारा की भौगोलिक स्थिति, राजनीतिक इतिहास, उनियारा के जागीरदारों का वंशक्रम, उनकी उपलब्धियां, उनियारा के जयपुर के कच्छवाहों, दिल्ली के मुगल शासकों, मराठा सरदारों एवं अंग्रेज अधिकारियों से सम्बन्धों की जानकारी मिलती है।

फारसी भाषा के अभिलेख

उनियारा ठिकाने के फारसी भाषा के अभिलेख बॉक्स संख्या 2, 3 एवं 4 में संग्रहित हैं। इनकी संख्या लगभग 1200 है तथा ये 15वीं शताब्दी से लेकर 19वीं शताब्दी तक की अवधि के हैं। इन अभिलेखों से उनियारा के जागीरदारों एवं मुगल शासकों के सम्बन्धों की जानकारी मिलती है। बॉक्स संख्या 2 में फ्रेम में जड़े हुए कुछ पुरालेख अत्यंत महत्व के हैं। अभिलेख संख्या 1 के अनुसार शाहजहाँ ने उनियारा के ठाकुर चन्द्रभान नरूका को 1500 सवार का ओहदा तथा उनियारा, नगर, ककोड़ एवं बनेठा नामक चार परगने जागीर के रूप में दिए थे। इस दस्तावेज पर शादूल्ला खां बन्दा शाहजहाँ की मुहर लगी हुई है।

अभिलेख संख्या 2 पर हिजरी सन् 1089 का उल्लेख है तथा वन्दे दरगाह नरोत्तमदास की मुहर है, यह अभिलेख चन्द्रभान नरूका के इन परगनों पर अधिकार की पुष्टि करता है। अभिलेख संख्या 3 में 1617 ईस्वी की तिथि अंकित है। इसमें ठाकुर चंद्रभान का इन परगनों में अमल-बरामद कराने के सम्बन्ध में लिखा गया है।

फारसी भाषा के अभिलेखों में बॉक्स संख्या 2, बस्ता संख्या 1 में निहित अभिलेख संख्या 8 से भी उनियारा एवं मुगल शासकों के मित्रतापूर्ण सम्बन्धों की जानकारी होती है। यह अभिलेख फरमान के रूप में है तथा मुगल बादशाह शाहआलम द्वारा उनियारा के रावराजा के नाम जारी किया गया है। इसमें उनियारा के रावराजा से अंग्रेजों के विरुद्ध सहायता के लिए आग्रह किया गया है। बॉक्स संख्या 2 बस्ता संख्या 4 के अंतर्गत अभिलेख संख्या 26 हिजरी 1234 का है। यह फारसी और राजस्थानी भाषाओं में लिखा गया है। इसमें उनियारा के रावराजा भीमसिंह के गुमास्ता को बमोर आदि गांवों पर अमल दिलाने हेतु इन गांवों के पटेल एवं पटवारियों को लिखा गया है।

उनियारा के कतिपय फारसी अभिलेखों से उनियारा एवं जयपुर राज्य के बीच राजनीतिक, सैनिक प्रशासनिक, आर्थिक सम्बन्धों पर भी जानकारी मिलती है। बॉक्स संख्या 3 के बस्ता संख्या 15 में रखे अभिलेख संख्या 5 जो कि एक हुकमनामा है तथा यह अदालत फौजदारी राज सवाई जयपुर द्वारा उनियारा के रावराजा को मोजा गोठेड़ा में थाना स्थापित करने के सम्बन्ध में जारी किया गया है। इस पर सवाई रामसिंह की मुहर और दिनांक 16 दिसम्बर 1844 अंकित है। इसी हुकमनामे में राजस्थानी भाषा में लिखा गया है कि उनियारा के रावराजा को मोजा गोठेड़ा में थाना स्थापित करने दिया जाए जिससे कि वहाँ बढ़ती हुई चोरी, अव्यवस्था एवं बदचलनी को व्यवस्थित किया जा सके। इस अभिलेख से स्पष्ट है कि उनियारा के रावराजा को पुलिस एवं प्रशासन सम्बन्धी अधिकार पूर्ण रूप से प्राप्त थे। बॉक्स संख्या 3 के बस्ता संख्या 15 के अभिलेख संख्या 4, 8, 9, 11 से 18 तथा बस्ता संख्या 16 के अभिलेख संख्या 1 से 5, 13 से 26 उनियारा के शासकों के पुलिस एवं न्याय सम्बन्धी अधिकारों को पुष्ट करते हैं।

फारसी भाषा के अभिलेखों से उनियारा के टोंक एवं बूंदी राज्यों के साथ सम्बन्धों की जानकारी होती है। बॉक्स संख्या 2 के अभिलेख संख्या 40, 67, 68, 83, 84, 85 एवं 86 उनियारा एवं टोंक के मध्य साखना एवं करोटी मोजों के झगड़ों की जानकारी मिलती है। बॉक्स संख्या 57 के बस्ता संख्या 6 के अभिलेख संख्या 7 से भी इसी विवाद की जाकारी मिलती है। बॉक्स संख्या 2 के बस्ता संख्या 3 के अभिलेख संख्या 1 एवं 26 मोजा ताखोली, जजावल, बुर्दली, देवरी, बोसरा, मालून्दा धार आदि के सम्बन्ध I में उनियारा एवं बूंदी के मध्य भूमि एवं सीमावर्ती विवादों के बारे में ऐतिहासिक जानकारी मिलती है। ये अभिलेख हिजरी 1236 के हैं।

फारसी अभिलेखों के बॉक्स संख्या 4 के बस्ता संख्या 6 में अभिलेख संख्या 2, 3, 17, 19अ, 21, 22 एवं 24 उनियारा के प्रति अंग्रेजी सरकार की नीति एवं सम्बन्धों पर प्रकाश पड़ता है। अभिलेख संख्या 17 से विशेष रूप से अंग्रेजों की उनियारा के प्रति नीति का स्पष्टीकरण देखने को मिलता है। यह अभिलेख हिजरी 1201 (ई.1814) का

है। इस अभिलेख से कलकत्ता स्थित उनियारा के वकील केसरीसिंह ने उनियारा के रावराजा भीमसिंह का ध्यान आकर्षित किया है कि अंग्रेजों की यह नीति है कि जिस वक्त एवं परिस्थिति में किसी भी राज्य को सहायता की आवश्यकता होगी, उसे सैनिक सहायता तुरंत पहुंचाई जाती है। इसी प्रकार अंग्रेजों की यह भी नीति है कि बिना कारण अंग्रेज किसी भी क्षेत्र में हस्तक्षेप नहीं करेंगे। इस दृष्टि से आप (उनियारा के रावराजा) निश्चिंत रहें। इसी प्रकार अंग्रेजों की यह नीति है कि कोई भी कार्यवाही एवं बातचीत महाराजा सवाई बहादुर के सम्बन्ध में हो, उस बात पर कलकत्ता प्रेसीडेन्सी को पूर्ण अधिकार प्राप्त है।

बॉक्स संख्या 4 के बस्ता संख्या 10 में अभिलेख संख्या 5, 9, 24 उनियारा एवं मराठों के बीच सैनिक सम्बन्धों की जानकारी मिलती है।

राजस्थानी भाषा के अभिलेख

उनियारा अभिलेख संग्रह के राजस्थानी भाषा में लिखे हुए अभिलेख बॉक्स संख्या 1, 2, 3, 4, 5, 6, 7 एवं 8 में रखे हैं। इनकी संख्या लगभग 3000 है। ये अभिलेख भी पंद्रहवीं शताब्दी से उन्नीसवीं शताब्दी की अवधि के हैं। इनसे उनियारा की राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक, न्यायिक एवं प्रशासनिक स्थितियों की जानकारी मिलती है। बॉक्स संख्या 7 के बस्ता संख्या 6 के अभिलेख संख्या 43 विशेष महत्व का है। यह अभिलेख जेठ सुदी 9, शुक्रवार, संवत् 1843 का है जिसे मुकाम सांगानेर से महाराजाधिराज महाराज श्री सवाई प्रतापसिंह ने उनियारा के रावराजा बिशनसिंह को तुंगा की लड़ाई में विजय एवं शौर्य प्रदर्शन के फलस्वरूप रावराजा का खिताब, एक मोरछल और दरबार में हाजिर होने एवं वापस जाने के समय पांच तोपों की सलामी का अधिकार हमेशा के लिए प्रदान किया था।

राजस्थानी भाषा के अभिलेख में विभिन्न रियासतों से भेजे गए रुक्के एवं परवाने बड़ी संख्या में उपलब्ध हैं। इन रुक्कों एवं परवानों में जयपुर के शासकों की विशेष मुहर भी अंकित है। ये रुक्के एवं परवाने उनियारा के शासकों को विभिन्न अवसरों एवं उत्सवों आदि पर उपस्थित होने एवं सैनिक सहायता उपलब्ध कराने के सम्बन्ध में हैं।

बॉक्स संख्या 1 के बस्ता संख्या 9 के अभिलेख संख्या 705 से 708 में उनियारा के सामाजिक जीवन- विवाह, नुकते आदि परम्पराओं की जानकारी मिलती है। बॉक्स संख्या 7, बस्ता संख्या 12 के अभिलेख संख्या 415 से 418 से भी उनियारा वासियों के विवाह नुकता आदि के अवसरों पर उनकी परम्परा एवं नियमों की जानकारी मिलती है। बॉक्स संख्या 8 के अभिलेख संख्या 1 से 15 उनियारा एवं बूंदी के मध्य भूमि सम्बन्धी एवं सीमा सम्बन्धी विवादों की जानकारी मिलती है। इन विवादों को सुलझाने में जयपुर रियासत की भूमिका का भी उल्लेख आया है। बॉक्स संख्या 7 के बस्ता संख्या 3 में अभिलेख संख्या 1 से 27 के द्वारा अंग्रेजों एवं उनियारा के सम्बन्धों की जानकारी मिलती

है।

संग्रह के अनेक परवानों से जानकारी मिलती है कि जयपुर के शासक समय-समय पर उनियारा के रावराजाओं को सैनिक सहायता के लिए अच्छी जमीयत भेजने का आग्रह करते थे तथा उनियारा के शासक सैनिक सहायता उपलब्ध करवाते थे। बॉक्स संख्या 6 के बस्ता संख्या 5 के अभिलेख संख्या 3 महाराजाधिराज महाराजा श्री सवाई जयसिंह द्वारा उनियारा के अजीतसिंह नरूका को परवाना भेजा गया। इस पर मार्गशीर्ष बदि 9 संवत् 1787 तिथि अंकित है। इसमें उनियारा के रावराजा से करौली की तरफ अच्छी जमीयत भेजने एवं इसमें ढील न करने का आग्रह किया गया है। अभिलेख संख्या 1, 4, 9, 14, 15, 19 आदि में सैनिक सहायता प्रदान करने का उल्लेख किया गया है।

बॉक्स संख्या 7 के बस्ता संख्या 5 तथा बॉक्स संख्या 3 के बस्ता संख्या 12 के अभिलेखों में उनियारा एवं टोंक रियासत के सीमावर्ती विवादों की जानकारी मिलती है। अभिलेख संख्या 21 उनियारा एवं सीकर के, अभिलेख संख्या 23 उनियारा एवं झालरापाटन के, अभिलेख संख्या 24 उनियारा एवं हाड़ौती के, अभिलेख संख्या 25, 27 एवं 31 उनियारा एवं कोटा के तथा अभिलेख संख्या 35 उनियारा एवं सवाईमाधोपुर ठिकाने के सम्बन्धों पर प्रकाश डालता है।

बॉक्स संख्या 4 के बस्ता संख्या 3 में जो अभिलेख इजारा एवं व्यवहारिक पत्रों के रूप में उपलब्ध हुए हैं, उनसे उनियारा एवं मराठों के सम्बन्धों पर प्रकाश पड़ता है। बॉक्स संख्या 1 के अभिलेखों से उनियारा की प्रशासनिक व्यवस्था की जानकारी प्राप्त होती है।

उर्दू भाषा के अभिलेख

उर्दू भाषा के अभिलेख बॉक्स संख्या 7 के बस्ता संख्या 12 में संग्रहित हैं। यह लगभग 800 हैं। इनमें अभिलेख संख्या 614 से 642 विशेष महत्व के हैं। इनसे उनियारा के ऐतिहासिक स्वरूप एवं महत्व की जानकारी मिलती है। इस अभिलेख में मुंशरिम भूरामल द्वारा तैयार की गई एक कैफियत भी है, जिसे ब्रिटिश सरकार के आदेश से उनियारा ठिकाना की पूर्ण तफसील प्रस्तुत करने हेतु उनियारा ठिकाने के महकमा खास में 22 फरवरी 1892 को उर्दू भाषा एवं अरबी लिपि में प्रस्तुत किया गया था। इस कैफियत में उनियारा के शासकों की पूर्ण वंशावली दर्ज है। इस दस्तावेज से ज्ञात होता है कि उनियारा के वंशज आमेर रियासत के शासक महाराजाधिराज उदयकरण के वंशज थे। इसी अभिलेख से ज्ञात होता है कि चन्द्रभान नरूका ने माघ बदी 13 संवत् 1652 में ककोड़ पर विजय प्राप्त की। संग्रामसिंह ने वैशाख सुदी 13 संवत् 1740 को उनियारा पर अधिकार प्राप्त किया, कार्तिक बदी 9 संवत् 1747 को नगर क्षेत्र पर अपना अधिकार स्थापित किया तथा संवत् 1751 में परगना बनेठा पर अधिकार स्थापित किया। रावराजा गुमानसिंह ने संत् 1933 में संग्रामसिंह को गोद लिया, जो गुमानसिंह के बाद उनियारा

का रावराजा बना।

ठिकाने के उर्दू अभिलेखों से उनियारा के राजस्व एवं आय की भी जानकारी मिलती है। इसी प्रकार उनियारा की दीवानी, फौजदारी व्यवस्था एवं अन्य प्रशासनिक प्रणाली की भी जानकारी मिलती है। इन अभिलेखों से उनियारा के रावराजाओं द्वारा आंवा, सांभर, भादों, तुंगा आदि युद्धों में जयपुर नरेश को दी गई सहायता की भी जानकारी प्राप्त होती है। इन अभिलेखों से उनियारा के रावराजाओं की जयपुर दरबार में प्रतिष्ठा, पद, पदवी, उपाधि, सुविधा आदि की भी जानकारी होती है।

अंग्रेजी भाषा के अभिलेख

उनियारा ठिकाने के संग्रह में अंग्रेजी भाषा में लिखे गए लगभग 700 अभिलेख सम्मिलित हैं, जो कि बॉक्स संख्या 1, 3, 4, 5, 8 में विभिन्न बस्तों में बंधे हुए हैं। इनसे भी उनियारा के ऐतिहासिक महत्व पर प्रकाश पड़ता है। बॉक्स संख्या 4 के बस्ता संख्या 6 के अभिलेख संख्या 7 से 16 में उनियारा के रावराजाओं एवं अंग्रेजों के बीच सम्बन्धों का विवरण उपलब्ध है। इन अभिलेखों से इस बात की पुष्टि होती है कि उनियारा के रावराजाओं के अंग्रेजों से सौहार्दपूर्ण सम्बन्ध थे तथा उनियारा ठिकाने में शांति व्यवस्था बनाए रखने के लिए अंग्रेजों ने कई बार ठिकाने में हस्तक्षेप किया था।

बॉक्स संख्या 4 के बस्ता संख्या 5 के अभिलेख संख्या 2 एवं 4 भी ऐतिहासिक महत्व के हैं। इनसे भी उनियारा के रावराजाओं एवं अंग्रेजों के बीच सम्बन्धों पर प्रकाश पड़ता है। इस अभिलेख में जॉन स्टीवर्ट द्वारा मालवा एवं राजपूताना के रेजीडेण्ट सर डेविड ऑक्टरलोनी को लिखा गया एक पत्र मौजूद है, जिसमें उनियारा ठिकाने की प्रशासनिक व्यवस्था का उल्लेख है। अभिलेख संख्या 1 से 4 एवं 97 भी उल्लेखनीय हैं। अभिलेख संख्या 97 पर 10 जुलाई 1841 की तिथि अंकित है तथा इस दस्तावेज से उस समय के जागीरदारों की स्थिति पर प्रकाश पड़ता है।

मराठी भाषा के अभिलेख

मराठी भाषा के अभिलेख बॉक्स संख्या 6, बस्ता संख्या 1 में रखे हैं। इन अभिलेखों के माध्यम से उनियारा ठिकाने एवं मराठों के सम्बन्धों का पता चलता है।

इस प्रकार उनियारा संग्रह के अभिलेख पंद्रहवीं से बीसवीं सदी में भारतीय शासन पद्धति में ठिकानेदारों की भूमिका को स्पष्ट करने की दृष्टि से अत्यंत महत्व रखते हैं।



अध्याय - 16

कोशीथल के ऐतिहासिक दस्तावेज



राजस्थान के बनने से पहले मेवाड़ रियासत का कोशीथल ठिकाना महत्वपूर्ण जागीरी ठिकाना था। अब यह भीलवाड़ा जिले में स्थित एक छोटा सा कस्बा है। महाराणा राजसिंह (प्रथम) (ई.1652-80) ने कोशीथल के जागीरदार नरहरदास को 32 हजार रेख टका के गांव जागीर में दिए। महाराणा भीमसिंह (ई.1778-1828) के समय ई.1823 में कोशीथल ठाकुर कनीराम की जागीर में रेख टका 5,700 रुपये, उपत 6,900 रुपये, हाल उपत 6,600 रुपये, असवार 13, पाला 14 का पट्टा था। महाराणा स्वरूपसिंह (ई.1842-61) के समय वि.सं.1907 (ई.1850) में 8,401 रुपये रेख के गांव एवं महाराणा भूपालसिंह (ई.1930-56) के समय ठाकुर चतरसिंह के पास 15,000 रुपये रेख टका की जागीर थी। इस ठिकाने में आज भी रियासत कालीन दस्तावेज उपलब्ध हैं, जिनमें समकालीन नागरिक जीवन, दण्ड विधान, भू-राजस्व एवं प्रशासनिक व्यवस्था की जानकारियां दी गई हैं। इन दस्तावेजों से ज्ञात होता है कि ठिकानेदार को अपने जागीर क्षेत्र में लगान वसूलने का अधिकार था। जागीरदार पर चोरों, डाकुओं एवं दंगाइयों से जनता के जान-माल की रक्षा करने का दायित्व था। जनता से लूटे गए अथवा चुराए गए धन का पता लगाना एवं अपराधियों को दण्ड देना भी स्थानीय

जागीरदार का दायित्व था।

इन दस्तावेजों से ज्ञात होता है कि ठिकानेदार को अपने क्षेत्र में शांति एवं व्यवस्था के साथ विकास के कार्य भी करने पड़ते थे जिनमें कृषि भूमियों के विस्तार, व्यापार वृद्धि के प्रयास तथा नये खेड़ बसाने के दायित्व सम्मिलित थे। कृषि एवं अन्य भूमियों के स्वामित्व हस्तांतरण तथा नागरिकों के उत्तराधिकार के हस्तांतरण करने एवं उनके अभिलेख को संभाल कर रखने का दायित्व भी स्थानीय ठिकानेदार पर था। उसके ठिकाने से होकर निकलने वाले राजकीय अतिथियों एवं महत्वपूर्ण व्यक्तियों की सुरक्षा, भोजन, प्रवास आदि का प्रबंधन भी इन्हीं ठिकानों की ओर से किया जाता था। जागीरदार द्वारा स्थानीय जनता के झगड़ों का निस्तारण किया जाता था और यदि जागीरदार जनता पर अत्याचार करता था तो जनता महाराणा के यहाँ मुकदमा दायर करती थी। महाराणा द्वारा दिए गए निर्णयों की पालना करना भी जागीरदार का प्रमुख कर्त्तव्य था।

ई.1818 में मेवाड़ रियासत ने ईस्ट इण्डिया कम्पनी के साथ अधीनस्थ सहयोग की संधि की थी। इसके बाद ई.1823 में कोशीथल ठिकाने की चकबंदी की गई। ठिकाने के दस्तावेजों में इस चकबंदी के महत्वपूर्ण दस्तावेज उपलब्ध हैं। चकबंदी के विवरण में ठिकाने में निवास करने वाले विभिन्न जातीय समूहों के पास उपलब्ध भूमियों का विवरण, कुल घरों की संख्या, हल संख्या, कुआं संख्या, पीवल कुआं आदि की जानकारी दी गई है, जो तत्कालीन ग्रामीण समाज के अध्ययन के लिए महत्वपूर्ण सामग्री है। इस विवरण के अनुसार सर्वाधिक आबादी महाजनों की थी, जिनके 95 घर थे। इन वर्ग के पास कोई हल अथवा किसी प्रकार की कृषि भूमि नहीं थी। महाजनों की उपस्थिति के कारण कोशीथल मेवाड़ रियासत का प्रमुख व्यापारिक स्थल था। महाजनों के बाद दूसरा समुदाय कृषकों का था, जिसमें जाट एवं अहीर प्रमुख थे। इनके पास घरों से अधिक हल थे जिससे अनुमान लगाया जा सकता है कि ये लोग संयुक्त परिवारों में रह रहे थे तथा कृषि पैदावार से ठिकाने को अच्छी आय होती थी। दस्तावेजों के आधार पर सिद्ध होता है कि उस काल में कोशीथल ठिकाने में तीसरा बड़ा समुदाय शिल्पियों एवं कर्मकारों का था जिनमें लुहार, नीलथर, तम्बोली, चमार, नाई, भील आदि विविध जातियां थीं। इनके पास भी हल एवं कृषि भूमि नहीं थी तथा इस समुदाय के लोगों की संख्या भी कम थी।

कोशीथल के कुछ दस्तावेजों से ज्ञात होता है कि अकाल एवं महामारी आदि की दशाओं में ठिकाने की ओर से व्यापारिक करों में छूट दी जाती थी। जनता द्वारा व्यापारियों को चुकाए जाने वाले बकाया में ठिकानेदार द्वारा जनता को सहयोग भी दिया जाता था। कुछ बैंकिंग सम्बन्धी दस्तावेज भी उपलब्ध हैं जिनसे ब्याज दरों, ऋण के पुनर्भुगतान की शर्तों एवं व्यवाय सुरक्षा आदि से सम्बन्धित जानकारी मिलती है। कुछ दस्तावेजों से तत्कालीन परिवहन साधनों की जानकारियां मिलती हैं जिनमें बैलगाड़ियों एवं पशुओं का

उल्लेख हुआ है। इन दस्तावेजों से ज्ञात होता है कि बंजारा जाति के लोग दूर-दूर तक परिवहन का काम करते थे। वि.सं.1908 (ई.1851) के दस्तावेजों में महाजनों की सम्पत्तियों के विवरण को देखने से ज्ञात होता है कि इस काल में ठिकाने के व्यापारिक समुदाय का बड़ा हिस्सा ठिकाना छोड़कर अन्यत्र चला गया। ठिकानेदार ने ऐसे व्यापारियों के मकान एवं दूकान दूसरे व्यापारियों को प्रदान किए तथा उन्हें व्यापार बढ़ाने के लिए प्रोत्साहित किया।

कोशीथल के कुछ दस्तावेजों से तत्कालीन समाज में प्रचलित तीज-त्यौहारों, भेंट-उपहार की प्रथाओं एवं सांस्कृतिक परम्पराओं का भी ज्ञान होता है। कुछ दस्तावेजों से उस काल में प्रचलित धार्मिक मान्यताओं, शुभ मुहूर्त साधकर कार्य आरम्भ करने की परम्पराओं आदि का भी ज्ञान होता है। कुछ दस्तावेजों से स्त्रियों की दशा, सती प्रथा, नाता प्रथा, मृत्युभोज, दैनिक मजदूरी, शैक्षणिक स्थिति की जानकारी होती है। कतिपय दस्तावेज एवं पत्र-व्यवहार से ठिकानेदार एवं महाराणा के परस्पर सम्बन्धों पर भी प्रकाश पड़ता है। कुछ दस्तावेजों में ऐसी घटनाएं भी अंकित हैं, जिनसे जागीरदार की सामाजिक जिम्मेदारियों की जानकारी होती है। उदाहरण के लिए एक दस्तावेज में लिखा है कि ठिकाने के एक व्यक्ति का बैल खो गया, इस पर ठिकानेदार ने उसे ठिकाने की ओर से बैल प्रदान किया।

विज्ञान का प्रथम संग्रहालय बिरला इंस्टीट्यूट पिलानी में स्थापित हुआ। उसके बाद कौंसिल ऑफ साइंटिकफिक एण्ड इण्डस्ट्रियल रिसर्च ने पहली बार ई.1956 में कलकत्ता में बिरला इण्डस्ट्रियल एण्ड टैक्निकल म्यूजियम स्थापित किया। ई.1978 से विज्ञान के समस्त संग्रहालय मानव संसाधन विकास मंत्रालय के अंतर्गत महानिदेशक की देखरेख में कार्य कर रहे हैं।



अध्याय - 17

सलूम्बर ठिकाना अभिलेखागार

मेवाड़ रियासत का प्रथम श्रेणी का ठिकाना सलूम्बर मूलतः भीलों का इलाका था। राठौड़ों ने भीलों से यह इलाका छीन लिया। मूथा नैणसी ने लिखा है कि उदयपुर से 35 कोस दूर छप्पनिये राठौड़ों का वतन है। ये राठौड़ सोनिंग के वंशधर एवं बड़े भूमिये हैं। महाराणा उदयसिंह (ई.1540-72) ने राठौड़ों के मेवासे तोड़ने आरम्भ किए। महाराणा प्रताप (ई.1572-97) के समय ये मेवासे टूटे, किंतु छूटे नहीं थे। छप्पन के इलाके में 224 गांव थे। यह क्षेत्र मेवल के नाम से भी जाना जाता था। महाराणा प्रतापसिंह के आदेश से रावत कृष्णदास चूंडावत ने सिंघ सलूम्बरिया को मारकर सलूम्बर पर अधिकार किया। उसके वंशजों का अधिकार इस ठिकाने पर तब तक बना रहा जब तक कि देशी रियासतें राजस्थान में विलय नहीं हो गईं। यहाँ के ठिकानेदार की पदवी रावत थी। मेवाड़ का राज्यप्रबंध करने, राज्य के पट्टे जारी करने, राज्य के परवानों पर चूण्डा के भाले का अंकन करने तथा शत्रु से होने वाले युद्धों में हरावल (अग्रभाग) में रहने का अधिकार चूंडा एवं उसके पाटवी वंशजों का होता था।

सलूम्बर ठिकाने पर चूंडावतों के अधिकार के बाद से ई.1947 तक के रावतों के शासनकाल का बहुत कम रिकॉर्ड मिलता है। रावत ओनाड़सिंह (ई.1901-26) का उत्तराधिकारी रावत खुमानसिंह सलूम्बर को छोड़कर उदयपुर रहता था, जहाँ उसने तीन निवास बदले- (1.) रावजी का हाटा में स्थित पुरानी सलूम्बर की हवेली, (2.) रवीन्द्रनाथ टैगोर मेडिकल कॉलेज जो उन दिनों सलूम्बर की बाड़ी कहलाता था, (3.) फतह सागर रोड पर बना सरकारी आर्यन बंगला (हिल हाउस)। इस कारण सलूम्बर ठिकाने का बहुत सा रिकॉर्ड रद्दी कागज के रूप में बेच दिया गया। फिर भी कुछ रिकॉर्ड नष्ट होने से बच गया है। इस रिकॉर्ड का संक्षिप्त विवरण इस प्रकार से है-

(1.) कामदार नाथूलाल कृत ठिकाना सलूम्बर, राज्य मेवाड़ की तवारीख : उर्दू-हिन्दी मिश्रित भाषा में लिखित यह महत्वपूर्ण दस्तावेज है। इसमें रावत खुमानसिंह (ई.1929-80) के समय का इतिहास लिखा गया है। इसे ठिकाने के कामदार नाथूलाल दरक से लिखवाया गया था। उसने यह कार्य ठिकाने के पुराने दस्तावेजों के आधार पर लिखा था। इस पाण्डुलिपि में रावत चूंडा से लेकर रावत निर्भयसिंह तक 27 पीढ़ियों का विवरण अंकित है। इसमें कुल 32 पृष्ठ हैं। इसमें सलूम्बर रावतों की पीढ़ियावली, रावतों के गद्दी पर बैठने का समय, मातमपुर्सी एवं तलवार बंधाई का विवरण, मेवाड़

महाराणाओं और सलूम्बर रावतों के सम्बन्ध, मेवाड़ रियासत की ओर से रावतों द्वारा लड़ी गई लड़ाइयों का वर्णन, सलूम्बर ठिकाने में किए गए निर्माणों की सूची, रावतों की संतति, रावतों की मृत्यु सम्बन्धी सूचनाएं, निःसंतान रावतों के गोद आए बच्चों की जानकारी, रावतों की शासन व्यवस्था आदि।

(2.) काजी कुतुबुद्दीन द्वारा हस्तलिखित पाण्डुलिपि भूगोल सलूम्बर : यह भी उर्दू-हिन्दी मिश्रित भाषा में है। इसमें ई.1916 में सलूम्बर ठिकाने की सीमाएं, पड़ौसी ठिकाने, ठिकाने के तालाब, कुएं, बावड़ी, मंदिर, शिकार, कोठी, जंगल, वनस्पति, जानवर, पैदावार, सिंचाई, उत्पादन, खान, फसल, खेत, खालसा एवं पट्टे के गांव, टकसाल, ठिकाने में बसने वाली जातियां एवं उनके काम, उनकी आय के स्त्रोत आदि की जानकारी दी गई है।

(3.) बड़वा की पोथी : यह दस्तावेज वि.सं.1927 भादवा वदि 10 का लिखा हुआ है। इसका लेखक सलूम्बर ठिकाने का बड़वा हमेर टोकरावाला है। इसमें राव चूंडा से लेकर रावत जोधसिंह के रावतों की ख्यात और पीढ़ियावली लिखी हुई है।

(4.) राणीमंगा की पोथी : रानियों की ख्यात लिखने वालों को राणीमंगा कहते थे। वे वंशानुगत रूप से यह कार्य करते थे। इस पोथी के 25 पृष्ठों में सलूम्बर ठिकाने के रावत और ठकुरानियों की नामावली मिलती है। इसकी भाषा अपठनीय है तथा इसमें काना-मात्रा का उपयोग नहीं किया गया है। इससे पता लगता है कि यह अत्यंत पुरानी पोथी है। कुछ ठकुरानियों की नामवली, गोत्र पीढ़ावली सहित मिलती है। कुछ ठकुरानियों के बाप-दादा से लेकर पन्द्रह पीढ़ियों तक के नाम लिखे गए हैं।

(5.) ठिकाना भंडारी सोनी हरदेराम की पीढ़ावली : ई.1576 में महाराणा प्रताप (ई.1572-97) ने सातवें रावत कृष्णदास को 'बम्बोरा' बक्शीश में दिया। रावत के साथ भंडारी हरदेराम सोनी का परिवार भी बम्बोरा आ गया। कृष्णदास पांच साल तक बम्बोरा पर शासन करता रहा। उन दिनों सलूम्बर पर सिंहा राठौड़ शासन करता था। वह महाराणा का कहना नहीं मानता था। इसलिए महाराणा प्रताप ने रावत कृष्णदास चूंडावत को सलूम्बर पर अधिकार करने भेजा। तब से सलूम्बर रावतों के अधिकार में रहा।

(6.) ठिकाना से प्राप्त पोथियां : सलूम्बर ठिकाने की केवल दो पोथियां प्राप्त हुई हैं। पहली पोथी में भण्डार में रखी सामग्री की सूचियां दी गई हैं। इस सामग्री में आभूषण, बर्तन, कपड़े, बिस्तर आदि का उल्लेख है। दूसरी पोथी में संग्रहित कागजों एवं अभिलेखों की सूची है। इस सूचि में रुक्के, पट्टे, पत्रावलियों से सम्बन्धित सूचनाएं हैं।

(7.) पत्रावलियां : इसमें रावत भीमसिंह (ई.1769-1800) और रावत केसरीसिंह (द्वितीय) (ई.1849-61) द्वारा राजपुर और बनेड़ा के सरदारों राजा

हमीरसिंह (राजपुर), राजा संग्रामसिंह (राजपुर) एवं राजा संग्रामसिंह (बनेड़ा) को लिखे गए 12 पत्रों का संग्रह है।

(8.) पट्टे-परवाने : सलूम्बर ठिकाने द्वारा समय-समय पर बहुत से पट्टे जारी किए जाते थे। इस संग्रह में कुछ पट्टे भी उपलब्ध हैं। इनसे ठिकाने की कार्यशैली, भू-राजस्व, भू-प्रबंधन आदि की जानकारी मिलती है।

(9.) ताम्रपत्र : इन ताम्रपत्रों में सलूम्बर राज्य द्वारा विभिन्न उद्देश्यों से दी गई जमीनों का उल्लेख है।

(10.) महकमे खास उदयपुर के कागजात : यह दस्तावेज संवत् 1966 सावन वदि 9 का है। यह महाराणा फतहसिंह (ई.1884-1930) तथा सलूम्बर रावत ओनाड़सिंह के बीच चले मुकदमे से सम्बन्धित है।

(11.) ठिकाना सम्पत्ति सम्बन्धित कागजात (फैसला जागीर कमिश्नर) : यह दस्तावतेज सलूम्बर ठिकाने की निजी सम्पत्ति से सम्बन्धित फैसले का है। इसमें जागीर कमिश्नर के अंग्रेजी में हस्ताक्षर युक्त निर्णय लिखा हुआ है। इस पर 20 नवम्बर 1956 की तिथि अंकित है।

(12.) जागीरियों के रद्दोबदल और पुनर्ग्रहण के दस्तावेज : सलूम्बर ठिकाने के रावत खुमानसिंह के समय ई.1947 में भारत स्वतंत्र हुआ और भारत सरकार द्वारा जागीर पुनर्ग्रहण कानून 1954 लागू हुआ। रावत खुमानसिंह ने अपने शासनकाल (ई.1933 से 22 अगस्त 1954) तक जागीरियों का रद्दोबदल किया एवं नई जागीरियां दीं। पुनः माफी में जमीन दी एवं हकदारी के पट्टे दिये, उनकी नकलें उपलब्ध हुई हैं।

(13.) खुमानगंज बसाने से सम्बन्धित दस्तावेज : रावत खुमानसिंह जब सलूम्बर ठिकाने की गद्दी पर बैठा, उस समय वह नाबालिग था। इस कारण मुन्सरमात (कोर्ट ऑफ वार्ड्स के अधिकार) मुन्सरिम हनवन्तमल के हाथों में रहे। उसके काल में सलूम्बर में नई आबादी बसाने के उद्देश्य से ठिकाने और मुन्सरीम के बीच कागजी कार्यवाही हुई। इसी से सम्बन्धित कुछ दस्तावेज मिले हैं।



अध्याय - 18

राज्याधिकारियों , साहित्यकारों, सेठों एवं मंदिरों के अभिलेख

रियासतों एवं ठिकाणों के संग्रह के साथ-साथ कुछ राज्याधिकारियों, नगर सेठों, बड़े व्यापारियों, बैंकरों, मंदिरों, महंतों, साहित्यकारों आदि ने भी अपने अभिलेखागार एवं संग्रह स्थापित किए। इनसे भी रियासत में घटी घटनाओं की विश्वस्त सूचनाएं एवं तत्कालीन इतिहास, सामजिक परम्पराओं आदि की जानकारी होती है। इनमें मेड़ता के लोकमणि परिवार का संग्रह (अब राजस्थान राज्य अभिलेखागार बीकानेर में), चूरू का पोतेदार संग्रह, नागौर का हरदयालचंद माथुर संग्रह, भादरा का कुमेरसिंह संग्रह, हारासर का जीवराजसिंह संग्रह, उदयपुर का महता संग्राम सिंह संग्रह, उदयपुर का चन्देला संग्रह, जैसलमेर का शालिमसिंह संग्रह, राजगढ़ के टीकमणी परिवार का अभिलेख, महत्वपूर्ण हैं।

बीकानेर नगर के सेठों एवं राज्याधिकारियों के संग्रह

बीकानेर का भैया संग्रह (अब राजस्थान राज्य अभिलेखागार बीकानेर में), राव गोपालसिंह संग्रह, वैद मेहता परिवार का अभिलेख, शिवकिशन व्यास के परिवार का अभिलेख, ब्रिगेडियर बाघसिंह के परिवार का संग्रह, गंगादास कौशिक के परिवार का संग्रह तथा रामनारायण शर्मा के परिवार का संग्रह आदि उल्लेखनीय हैं।

कविराजा बांकीदास-मुरारदान का संग्रह

जोधपुर के कविराजा बांकीदास-मुरारदान का संग्रह भी महत्वपूर्ण है। बांकीदास उच्च कोटि का कवि था। वह महाराजा मानसिंह का समकालीन था। उसने अपने संग्रह में पुस्तकों की संख्या में वृद्धि करने के लिए अनेक व्यक्तियों को पाण्डुलिपियों की नकल करने के लिए नियुक्त किया। साथ ही अपनी ऐतिहासिक जानकारियों को 'बातों' के रूप में लिपिबद्ध करवाया। इस प्रकार उसके पास ख्यातों, बातों, वंशावलियों, विगत एवं काव्यग्रंथों का अच्छा संग्रह तैयार हो गया। बांकीदास की मृत्यु के बाद उसके दत्तक पुत्र भारथदान ने भी इस काम को जारी रखा। भारथदान ने दूसरी भाषाओं में लिखे कतिपय ऐतिहासिक ग्रंथों का सरल राजस्थानी भाषा में अनुवाद भी करवाया। भारथदान द्वारा अनुवादित हिन्दुस्तान का इतिहास, दक्षिण का इतिहास, पंजाब रो अहवाल आदि ग्रंथ आज भी इस संग्रह में उपलब्ध हैं। भारथदान के पश्चात् कविराज मुरारदान ने इस

संग्रह को और समृद्ध बनाया। उसकी रुचि संस्कृत व्याकरण ग्रंथों में अधिक थी। उसने संस्कृत व्याकरण के बहुत से ग्रंथ एकत्रित किए। मुरारदान जोधपुर राज्य में महत्वपूर्ण राजकीय पद पर था। इस कारण उसे तत्कालीन घटनाओं की जानकारी अधिक रहती थी। उसके समय में ही जोधपुर की शहरपनाह की दीवार की एक ताक में मारवाड़ के राठौड़ों की वंशावलियों का वृहद् ग्रंथ मिला। वर्तमान में यह ग्रंथ राव उदैभाण चांपावत की ख्यात के नाम से प्रसिद्ध है। मुरारदान के समय मारवाड़ रियासत की जनगणना करवाई गई तथा मारवाड़ के विभिन्न गांवों एवं परगनों की राजस्व सम्बन्धी सूचियां बनवाई गईं। यह सामग्री भी मुरारदान के संग्रह में संग्रहित है।

ई.1914 में जब इटली का विद्वान भाषाविद् टैस्सीटोरी ग्रंथों की खोज में निकला तो उसने मुरारदान के संग्रह को देखा। उस समय यह संग्रह कविराज गणेशदान के संरक्षण में था। टैस्सीटोरी ने ग्रंथों के इस अमूल्य खजाने को पहचाना तथा इस संग्रह के कई ग्रंथों का परिचय अपने सर्वेक्षण प्रतिवेदन में छपवाया। टैस्सीटोरी द्वारा दिया गया विवरण पढ़कर ई.1974 में महाराजकुमार डॉ. रघुवीरसिंह ने इस संग्रह का अवलोकन किया। उस समय यह संग्रह कविराजा तेजदान के संरक्षण में था। ई.1976 में डॉ. रघुवीरसिंह ने इस सम्पूर्ण संग्रह को क्रय कर लिया। तब से यह संग्रह श्री नटनागर शोध संस्थान में चला गया। आज भी यह संग्रह वहाँ उपलब्ध है। इस संग्रह में 245 ग्रंथ हैं जिनमें से 155 ऐतिहासिक महत्व के हैं। इस संग्रह में 17वीं शताब्दी से लेकर 20वीं शताब्दी तक की पाण्डुलिपियां हैं।

मेवाड़ का पुरोहित संग्रह

यह संग्रह मेवाड़ राज्य के दरबारी प्रबन्धकर्ता के परिवार द्वारा संग्रहित है। इस परिवार का पूर्वज 'वागेश्वर' ई.1527 में खानवा के युद्ध में महाराणा सांगा की तरफ से लड़ता हुआ रणखेत रहा था। यह परिवार महाराणा सांगा के जीवन काल (ई. 1509-27) से लेकर ई.1948 में मेवाड़ रियासत के राजस्थान में विलीन होने तक मेवाड़ राज्य की सेवा में रहा। इस परिवार के सदस्यों का काम दरबारी प्रबंधकर्ता के रूप में दैनिकी लेखन का होता था। वह उत्सव सम्बन्धी अभिलेख भी लिखता था। मेवाड़ राज्य का अंतिम दरबारी प्रबंधकर्ता पुरोहित देवनाथ एक प्रसिद्ध इतिहासविद् हुआ। पुरोहित संग्रह में महाराणा जयसिंह (ई.1680-98) से लेकर महाराणा भूपालसिंह (ई. 1930-56) के शासन काल की ऐतिहासिक सामग्री विद्यमान है। इस संग्रह में 1000 से अधिक अभिलेख विद्यमान हैं। इनमें महाराणा की बैठकों की सूचनाएं, कुंवरों के जन्म एवं विवाह सम्बन्धी विवरण, सरदारों की राहमरजाद, महाराणाओं की तीर्थयात्राएं विषयक बहियां एवं रुक्के उपलब्ध हैं।

महाराणा जयसिंह (ई.1680-98) के काल से उपलब्ध बैठक सूचियों में दरबारियों के बैठने का क्रम उपलब्ध है। महाराणा अमरसिंह (द्वितीय) के समय सरदारों

का वर्गीकरण प्रथम, द्वितीय एवं तृतीय श्रेणी में किया गया। ई.1708 की एक बही में जोधपुर नरेश अजीतसिंह (ई.1707-24) एवं जयपुर नरेश जयसिंह (ई.1699-1743) की उदयपुर यात्रा का विवरण लिखा हुआ है। सरदारों की राहमरजाद बहियों में महाराणा द्वारा मेवाड़ के सरदारों को प्रदान किए गए सम्मान का विवरण है, जिसे राहमरजाद कहा जाता था। महाराणाओं द्वारा सरदारों को विशेष अवसरों पर बैठक, ताजीम, जींकारा, स्वर्ण, सीख का बीड़ा तथा स्वर्णछड़ी आदि दी जाती थी। ई.1870 की एक बही में देलवाड़ा के सरदार की राहमरजाद का विवरण दिया गया है। इन बहियों में सरदारों की तलवारबंदी का विवरण भी मिलता है।

हकीकत बहियों में महाराणा की दिनचर्या, गृहस्थ जीवन, त्यौहार, उत्सव, मृत्यु, शोक आदि के विवरण है। ई.1792 की एक बही में महाराणा भीमसिंह (ई. 1778-1828) के ईडर विवाह का वर्णन है। ई.1884 की एक बही में विभिन्न रजवाड़ों के शासकों एवं ब्रिटिश अधिकारियों की महाराणा भीमसिंह से भेंट का विवरण अंकित है। ई.1828 की एक बही में महाराणा भीमसिंह की मृत्यु होने पर उसकी शवयात्रा का विवरण है। ई.1889 की एक बही में महाराणा फतहसिंह (ई. 1884-1930) के आखेट-प्रेम की जानकारी मिलती है। ई.1916 की एक बही में नवरात्रि के पर्व पर महाराणा फतहसिंह द्वारा हाथी-घोड़ों का पूजन एवं यज्ञ-हवन करने का उल्लेख है।

जोधपुर के मोहनसिंह तंवर का पत्र संग्रह

जोधपुर निवासी मोहनसिंह का पितामह केसरीसिंह अलवर जय पलटन में वि.सं. 1870 (ई.1817) के आसपास सेवारत था। उसके कागजों में जोधपुर नरेश महाराजा मानसिंह (ई.1803-43) तथा उसके राज्याधिकारियों के उल्लेख से युक्त कुछ पत्र हैं। ये पत्र एक रजिस्टर में रखे हुए हैं। पत्रों की भाषा डिंगल एवं लिपि देवनागरी है। ऐसा प्रतीत होता है कि केसरीसिंह के पास ये पत्र जोधपुर राज्य के ही किसी पदाधिकारी ने सुरक्षित रखने के लिए दिए होंगे। मानसिंह का शासन, आंतरिक शासन की दृष्टि से अत्यंत उथल-पुथल भरा था। पूर्ववर्ती शासक भीमसिंह की विधवा रानियों का पक्ष लेकर कुछ सामंत कई वर्षों तक उत्पात मचाते रहे। पिण्डारी अमीर खाँ ने मेहरानगढ़ दुर्ग के महलों में घुसकर महाराजा के गुरु एवं राज्याधिकारियों की हत्या कर दी। जयपुर राज्य भी जोधपुर राज्य को नष्ट करने पर तुला हुआ था। संभवतः इसी कारण इन पत्रों को दुर्ग से बाहर केसरीसिंह अथवा किसी अन्य व्यक्ति को रखने के लिए दिया गया होगा, जो कि महाराजा का भी विश्वस्त रहा होगा।

इन पत्रों में महाराजा मानसिंह को राज्य दिलवाने वाले सिंघी इन्द्रराज, जलन्धरनाथजी के मंदिर के पुजारी आयस देवनाथ, सेनापति गंगाराम भण्डारी तथा इन्द्रराज के पुत्र मुसाहिब फतेराज का उल्लेख मिलता है। सभी पत्रों के ऊपर 'श्रीजलंध

ारनाथ संत' लिखा है। उसके बाद एक गोल सील अंकित है। कुछ पत्रों में उर्दू में राजराजेश्वर महाराजधिराज मानसिंह लिखा है। कुछ पत्रों में देवनागरी लिपि में कस्यमुद्रिका, करवसु, कस्यमुद्रवा और हस्तमुद्रका शब्द अंकित हैं। पत्रों का आरम्भ सिंघवी इन्द्रराज लिखावत, सिंघवी श्री फतेराज खिवंत और स्वरूप श्री राजरोश्वरी महाराजाधिराज महाराजा श्री मानसिंहजी महाराज कंवर श्री बतरसिंह जी वचनात लिखा है। इतिहासकारों ने मानसिंह के पिता का नाम गुमानसिंह माना है, जबकि इन पत्रों में मानसिंह के पिता का नाम बतरसिंह दिया गया है। इन पत्रों में उस काल में जोधपुर रियासत के कुछ राज्याधिकारियों का भी उल्लेख हुआ है जिनमें- प्रतापमल, लिखमीचंद, भगवानदास, मानमल भगवानदासोत, उदेयसिंह, मारमीनमलजी, रामदास, हमीरमल, सोनीरामदत्त आदि सम्मिलित हैं। कुछ स्थलों- मेडावास, मांडसर, डीडवाना, मोविनी, तखतगढ़, जोधपुर सिरोही आदि का भी उल्लेख हुआ है। पत्रों का विषय- झगड़ में बंदगी, अच्छी करने पर इनाम, रेख सहित किसी गांव का दान, कुशलता के समाचारों का आदान-प्रदान, पैसे के भुगतान की आज्ञा, दण्डमाफी आदि हैं। ये पत्र काफी बड़ी संख्या में हैं।

बंशीलाल माथुर कानूनगो संग्रह

नागौर जिले के डीडवाना कस्बे में निवास करने वाले बंशीलाल माथुर कानूनगो ने अपने संग्रह में बहुत से दस्तावेज सुरक्षित किए। बंशीलाल माथुर के पूर्वजों को मुगलों के काल में दौलतपुरा के पास डीडवाना कांकड़ में जागीर की सनद मिली थी। इस परिवार ने कायस्थ बासनी बसाया। कानूनगो इस परिवार के पास पीढ़ी दर पीढ़ी बनी रही। ये लोग 12 बास और 12 बासनियों की हासिल की वसूली करते थे। इन्हें पानी, नमक, ईंधन तथा अनेक वस्तुएं निःशुल्क उपभोग करने का अधिकार प्राप्त था। मकानों के पट्टे भी माफ थे। बंशीलाल माथुर के संग्रह में उपलब्ध अभिलेख में ई.1857 की क्रांति, अंग्रेजी सेनाओं की गतिविधियां, बीकानेर महाराजा की पुष्कर यात्रा, उसकी बूंदी के शासक के साथ भेंट तथा अजमेर जाकर अंग्रेज साहब से भेंट करने के उल्लेख वाले दस्तावेज उपलब्ध हैं। इस संग्रह से उस काल में लाग-बाग, तीज-त्यौहार, उत्सव, धार्मिक आयोजन, राजस्व सम्बन्धी आंकड़े लाटा, निर्माण कार्य, सामाजिक तथा राजनीतिक हलचलों की अच्छी जानकारी मिलती है।

बुधमल कानूनगो संग्रह

इस संग्रह में राजस्थानी भाषा में लिखी हुई 30 बहियां हैं, जो रियासती काल में जनगणना, दान खिराज तथा विभिन्न प्रकार के रियासती करों की जानकारी देती हैं।

मोतीचंद खजांची संग्रह, बीकानेर

मोतीचंद खजांची का जन्म बीकानेर राजपरिवार से सम्बद्ध एक जौहरी परिवार में



हुआ। मोतीचंद खजांची ने 15 वर्ष की आयु से ही भारत के अनेक भागों का भ्रमण करना आरम्भ किया। वह अपनी यात्राओं के दौरान विभिन्न क्षेत्रों में प्रचलित चित्रशैलियों के चित्र एकत्रित करता था। उसने स्थान-स्थान पर आयोजित होने वाली प्रदर्शनियों एवं नीलामियों से भी चित्र खरीदे। इस कार्य में उसे विपुल धन व्यय करना पड़ता था। इस कारण वह प्राय: अपने पिता से बड़ी राशि उधार लेता। इस कार्य के दौरान देश में बहुत से बड़े चित्रकारों से उसकी मित्रता हो गई। जैसे-जैसे मोतीचंद का चित्र संग्रह बढ़ता गया वैसे-वैसे उसकी प्रसिद्धि चित्रकला विशेषज्ञ के रूप में होती गई। उसने हस्तलिखित एवं चित्रित पाण्डुलिपियों का संग्रहण एवं अध्ययन भी किया जिससे चित्रकला में धर्म, दर्शन, अध्यात्म एवं साहित्यिक संदर्भों के सम्बन्ध में उसके ज्ञान में विपुल वृद्धि हो गई। जब सुप्रसिद्ध कला-विज्ञ तथा भारत कला भवन वाराणसी के संस्थापक राय कृष्णदास ने मोतीचंद के खजांची के कला-कोश को देखा, तो राय कृष्णदास इस संग्रह से बहुत प्रभावित हुआ। राय कृष्णदास ने मोतीचंद को सलाह दी कि वह इन चित्रों को किसी कला प्रदर्शनी अथवा संग्रहालय में प्रदर्शित करे, ताकि जन-साधारण इस संग्रह का लाभ उठा सके।



ई.1960 में राय कृष्णदास तथा कार्ल खण्डालवाला ने खजांची संग्रह के बहुमूल्य चित्रों को ललित कला अकादमी नई दिल्ली, बम्बई तथा कलकत्ता में प्रदर्शित किया। उन्होंने इस चित्रों की विभिन्न संग्रहालयों को सूचियां भी उपलब्ध कराईं जिनमें से कुछ सूचियां एवं चित्र आज भी राष्ट्रीय संग्रहालय नई दिल्ली में उपलब्ध हैं। इस संग्रहालय में बीकानेर, मेवाड़, जयपुर, बूंदी, किशनगढ़ जयपुर तथा जोधपुर शैलियों के चित्र बड़ी संख्या में उपलब्ध हैं। कुछ चित्रों के पीछे की ओर कलाकारों के हस्ताक्षर भी उपलब्ध हैं। इनमें से कुछ चित्र

बीकानेर राजपरिवार के व्यक्तिगत संग्रह से सम्बन्धित हैं। इस संग्रह में ई.1628 में चित्रित रागमाला भी उपलब्ध थी। इसमें 42 दुर्लभ चित्र थे जिनमें से केवल 12 चित्र ही उपलब्ध हो पाए। मोतीचंद खजांची संग्रह राजस्थान राज्य अभिलेखागार को समर्पित कर दिया गया है किंतु रागमाला के चित्र राष्ट्रीय संग्रहालय नई दिल्ली, भारत कला भवन वाराणसी तथा म्यूजियम ऑफ फाइन आर्ट्स बोस्टन (अमरीका) को भेज दिए गए हैं।

भैय्या संग्रह के अभिलेख

राजस्थान राज्य अभिलेखागार बीकानेर में ईस्ट इण्डिया कम्पनी के सरकारी कार्यालय अभिलेखों, एजीजी कार्यालय के अभिलेखों, रियासती अभिलेखों के साथ-साथ लगभग 10 व्यक्तियों के निजी संग्रहालयों के अभिलेखों को भी संग्रहित किया गया है। इनमें भैय्या संग्रहालय महत्वपूर्ण है। भैय्या परिवार बीकानेर का पुराना एवं प्रतिष्ठित परिवार है। इस परिवार का बीकानेर के शासकों से सीधा सम्बन्ध रहा। यह एक कायस्थ परिवार था, जो महाराजा अनूपसिंह (ई.1669-98) के समय में नागौर से बीकानेर आकर रहने लगा। जब बीकानेर नरेश जोरावरसिंह नि:संतान मर गया, तब भूकरका के ठाकुर कुशलसिंह और मेहता बख्तावरसिंह ने बीकानेर शहर एवं दुर्ग की व्यवस्था को अपने हाथ में ले लिया। तब अमरसिंह, तारासिंह तथा गुदड़सिंह ने लाडनूं से आकर गांव गाढ़वाले में जिंद के खेजड़े के नीचे डेरा डाला। वे अवसर का लाभ उठाकर बीकानेर राज्य को नष्ट करना चाहते थे। जब राजकुमार अमरसिंह के पुत्र राजकुमार गजसिंह को इस बात की जानकारी हुई, तब वह भी अपनी सेना लेकर आ गया और उसने भोमियादेव के खेजड़े के नीचे डेरा डाला। तब ठाकुर कुशालसिंह, मेहता बख्तावरसिंह आदि राज्याधिकारियों ने परस्पर वार्ता करके राजकुमार गजसिंह को बीकानेर का राजा बनाया। इन राज्याधिकारियों में पंचोली आलमचंद भी एक था। उसकी सेवाओं को देखते हुए महाराजा गजसिंह ने वि.सं. 1802 (ई.1745) में उसे भैय्या की पदवी दी। पंचोली आलमचंद न केवल बीकानेर के महाराजा गजसिंह (ई. 17745-87) का विश्वासपात्र था, अपितु जयपुर नरेश सवाई प्रतापसिंह से भी उसके व्यक्तिगत सम्बन्ध थे। इसलिए वह बीकानेर राज्य की राजनीति में प्रमुख व्यक्तियों में माना जाने लगा।

भैय्या परिवार के वंशजों को बीकानेर राज्य की ओर से तनबक्शी, सहरकोट की किलेदारी, हाकिमी और हवलदारी आदि पद मिलते रहे। महाराजा गजसिंह से गंगासिंह तक इस परिवार की राजदरबार में महत्वपूर्ण भूमिका रही। इस परिवार ने रियासती आदेश, रुक्के, परवाने, पट्टे, सनद, गांव एवं शासन के अनुदान पत्र आदि को सम्भाल कर रखा, जिसे भैय्या संग्रह कहा जाता है।

इस संग्रह के दस्तावेजों से ज्ञात होता है कि जब महाराजा जोरावरसिंह (ई. 1736-46) का नि:संतान अवस्था में निधन हुआ तो भैय्या परिवार के आलमचंद एवं

उसके छोटे भाई बींजराज सिंह ने महाराज गजसिंह को बीकानेर की गद्दी पर बैठाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। बीकानेर का महाराजा बनने पर वि.सं.1802 में गजसिंह ने भैय्या परिवार को ताजीमी सम्मान दिया तथा साथ ही दरबार में बैठने एवं भैय्या पदवी प्रदान की। वि.सं.1809 में भैय्या आलमचंद को तनबक्शी का पद दिया गया जो वि.सं. 1845-46 में उसकी मृत्यु होने तक उसके पास रहा। बींजराजसिंह को भी राज्य की ओर से किलेदारी, चौकी खास महल, हाजिर बाशी और सेना में मुसाहिबी आदि पद दिए गए। वि.सं.1841 में पद्मा नारनोत के आक्रमण के समय बींजराज ने अपने प्राणों की परवाह न करके महाराजा गजसिंह की रक्षा की तथा वि.सं.1847 में वह राजगढ़ के निकट युद्ध करता हुआ मारा गया।

भैय्या संग्रह के दस्तावेजों से बीकानेर रियासत के तत्कालीन इतिहास की विश्वसनीय जानकारी मिलती है। साथ ही रियासत के कर्मचारियों के जीवन और जिम्मेदारियों की भी जानकारी उपलब्ध होती है। कुछ दस्तावेजों से बीकानेर राज्य की प्रशासनिक, आर्थिक, सैनिक सांस्कृतिक स्थिति की जानकारी मिलती है। कुछ पत्रों में तत्कालीन रियासतों की परस्पर कूटनीति एवं षड़यंत्रों आदि का भी उल्लेख है। इस संग्रह के कुछ पत्र भैय्या नथमल एवं जेठमल द्वारा लिखे गए हैं। ये पत्र नोहर से जेठमल को एवं जेठमल ने बीकानेर से नथमल को दरबार की ओर से लिखे थे। भैय्या परिवार के सदस्य राजपूताना की विभिन्न रियासतों में बीकानेर राज्य के दूत के रूप में भी भेजे जाते थे। उन्होंने इस दौरान जो पत्र लिखे, उनसे विभिन्न रियासतों की राजनीतिक स्थिति एवं बीकानेर रियासत से उनके सम्बन्धों का भी पता चलता है।

जब मराठों ने जोधपुर नरेश विजयसिंह पर आक्रमण किया तो विजयसिंह ने बीकानेर नरेश से सहायता मांगी। इस सहायता का पूरा विवरण भैय्या संग्रह के पत्रों से ज्ञात हो जाता है। इस संग्रह के कुछ पत्रों से ज्ञात होता है कि बीकानेर रियासत ने उस काल में पुरानी कड़वाहटों को भूलकर विभिन्न रियासतों से मधुर एवं विश्वसनीय सम्बन्ध स्थापित किए, जिनके कारण राजपूताने की रियासतों में महाराज गजसिंह का सम्मान होता था और उनकी बातों पर विश्वास किया जाता था। मराठा प्रतिरोध में बीकानेर ने जोधपुर राज्य को सहायता दी, जिससे बीकानेर नरेश की दूरदृष्टि का पता चलता है। इस संग्रह के कुछ पत्र जयपुर, जोधपुर एवं बीकानेर रियासतों के त्रिपक्षीय सम्बन्धों पर भी प्रकाश डालते हैं। इस संग्रह के दस्तावेजों से ज्ञात होता है कि उदयपुर नरेश अरिसिंह तथा जोधपुर नरेश विजयसिंह ने गोड़वाड़ प्रदेश पर अधिकार सम्बन्धी विवाद को सुलझाने में बीकानेर नरेश की सहायता ली।

भैय्या संग्रह के अभिलेखों से बीकानेर महाराजा सूरतसिंह (ई.1787-1828) के समय जयपुर रियासत से कूटनीतिक सम्बन्धों में बदलाव का उल्लेख मिलता है। इस संग्रह से बीकानेर नरेश सूरतसिंह के समय बीकानेर रियासत के जागीरदारों एवं ठाकुरों

द्वारा किए गए विद्रोहों की भी विस्तृत जानकारी मिलती है। इस संग्रह के दस्तावेजों के अनुसार बीकानेर ने इस समस्या के निस्तारण के लिए सिक्खों से सहायता प्राप्त की, किंतु सिक्ख भी बीकानेर के सरदारों को दबा नहीं सके। जब बीकानेर का राजा सिक्खों को उनका पैसा नहीं चुका सका तो सिक्खों ने बीकानेर रियासत की भूमि दबा ली। इस समय भैय्या नथमल नोहर में हवालदार थे और वे उस तरफ के सारे समाचार बीकानेर में भैय्या जेठमल को भेज रहे थे। ये पत्र इतिहास की दृष्टि से काफी उपयोगी हैं। इस गंभीर परिस्थिति में ही बीकानेर रियासत को ईस्ट इण्डिया कम्पनी का संरक्षण प्राप्त करना पड़ा।

इस संग्रह के दस्तावेजों से ज्ञात होता है कि बीकानेर के अधिकांश ठिकानेदार रियासत को कर नहीं दे रहे थे। सिक्खों द्वारा दबाई गई भूमि से भी कर मिलना बंद था। अत: बीकानेर नरेश ने धन एकत्रित करने के लिए प्रजा पर अत्यधिक कर लगाए, जिनके कारण प्रजा भी राजा की विरोधी हो गई और जनता से कर संग्रहण करना अत्यंत कठिन हो गया। सरकारी कारिंदे गांव में जाकर अपना शिविर भी नहीं लगा पाते थे। ऐसी परिस्थितियों में भाटियों एवं जोहियों ने रामगढ़ लूट लिया। इस लूट का पूरा विवरण भैय्या संग्रह के दस्तावेजों में उपलब्ध है। भैय्या संग्रह के अभिलेख इस बात की पुष्टि करते हैं कि इन सब कारणों से जनता बीकानेर रियासत से पलायन करने लगी और जनसंख्या में भारी कमी आ गई। भैय्या संग्रह के कुछ दस्तावेज इस ओर संकेत करते हैं कि इन परिस्थितियों में भैय्या परिवार ने भी कई बार बीकानेर रियासत छोड़ने का मन बनाया क्योंकि दरबार में चल रहे षड़यंत्रों एवं धन की कमी के कारण भैय्या परिवार का जीवन यापन भी कठिन हो गया था।

शिवकिशन व्यास संग्रह

शिवकिशन व्यास संग्रह, राजस्थान राज्य अभिलेखागार को समर्पित कर दिया गया है। इसमें संग्रहित दस्तावेज बीकानेर रियासत के राजपरिवारों की 19वीं एवं 20वीं शताब्दी ईस्वी की जीवनशैली पर प्रकाश डालते हैं। शिवकिशन व्यास के पिता महेशदास बीकानेर नरेश गंगासिंह (ई.1887-1943) तथा महाराजा सार्दुलसिंह (ई. 1943-49) तक बीकानेर राज्य के शिष्टाचार विभाग (Ceremony Department) में कार्यरत रहे। महेशदास व्यास द्वारा संग्रहित एवं लिपिबद्ध डायरियां, बहियां, नत्थियां एवं पत्रावलियों में बीकानेर के राजपरिवार के दैनिक जीवन, खान-पान, रहन-सहन, सामाजिक और धार्मिक अनुष्ठान, दरबार आयोजन की विधि, अतिथि सत्कार, उत्सव, विवाह, शोक आदि पर होने वाले व्यय तथा रीति-रिवाजों का उल्लेख है।

विजयसिंह पथिक संग्रह

यह संग्रह भी राजस्थान राज्य अभिलेखागार बीकानेर का समर्पित कर दिया गया है। इस संग्रह में विजयसिंह पथिक के प्रलेख, उनके द्वारा लिखित साहित्य, विभिन्न

विषयों पर लिखित आलेख आदि सम्मिलित हैं। यह संग्रह रियासती काल की शिक्षा व्यवस्था एवं राजनीतिक स्थिति पर प्रकाश डालता है। विजयसिंह पथिक के कुछ पत्रों का संग्रह राष्ट्रीय अभिलेखागार की जयपुर शाखा में भी उपलब्ध है। इन पत्रों में राजस्थान के स्वतंत्रता आंदोलन की गतिविधियों का उल्लेख हुआ है।

छगनराज चौपासनी वाला संग्रह

यह संग्रह भी राजस्थान राज्य अभिलेखागार बीकानेर का समर्पित कर दिया गया है। जोधपुर राज्य में स्थित चौपासनी गांव के स्वतंत्रता सेनानी छगनराज चौपासनी वाला के संग्रह में मारवाड़ राज्य में राजनैतिक जागृति और प्रजामण्डल आंदोलन से सम्बन्धित प्रलेख हैं। इस सम्बन्ध में उपलब्ध डायरी, पत्र-व्यवहार और पम्फंलेट, समाचार पत्र आदि सामग्री से जोधपुर राज्य में उत्तरदायी शासन के लिए हुए संघर्ष का इतिहास तैयार किया जा सका है। इस संग्रह में अखण्ड भारत, तरुण राजस्थान और राजस्थानी संदेश नामक समाचार पत्रों की प्रतियां भी उपलब्ध हैं।

मोहता सालमसिंह संग्रह जैसलमेर

मोहता सालमसिंह संग्रह भी राजस्थान राज्य अभिलेखागार बीकानेर का समर्पित कर दिया गया है। इस संग्रह में उपलब्ध दस्तावेजों से जैसलमेर राज्य के राजनैतिक एवं सामाजिक जीवन पर पर्याप्त प्रकाश पड़ता है।

कानमल मेहता अभिलेख संग्रह

यह संग्रह भी राजस्थान राज्य अभिलेखागार बीकानेर का समर्पित कर दिया गया है। इस संग्रह में उपलब्ध बहियों से ई.1652 से 1813 तक की अवधि में रियासती शासन में सैनिक विभाग, शासन प्रबंध और व्यय आदि की सूचनाएं मिलती हैं।

हंसराज बस्ती चंद चौधरी प्रलेख संग्रह

इस संग्रह में उपलब्ध बही से जालोर परगने के गांवों की सूची एवं कर व्यवस्था की जानकारी मिलती है।

उदयचंद मेहता संग्रह

यह संग्रह जालोर परगने के आर्थिक इतिहास को जानने में सहायता करता है। यह संग्रह राजस्थान राज्य अभिलेखागार की जोधपुर शाखा में रखा हुआ है।

राव गोपाल सिंह वैद संग्रह

राव गोपालसिंह वैद बीकानेर के वैद मेहता परिवार से थे। इस परिवार के अनेक सदस्य बीकानेर राज्य में उच्च पदों पर नियुक्त हुए। इस परिवार के राव हिन्दूमल ब्रिटिशकाल में बीकानेर राज्य के वकील थे। उनका बीकानेर राजपरिवार पर गहरा प्रभाव था। मेवाड़, जयपुर और जोधपुर राज्यों में भी उनकी अच्छी प्रतिष्ठा थी। अनेक अंग्रेज अधिकारियों से उनके सम्बन्ध रहे। इस संग्रह में ई.1754 से लेकर ई.1887 तक

के दस्तावेज हैं। महाराजा सरदार सिंह (ई.1851-72), महाराजा डूंगरसिंह (ई. 1872-87), कप्तान टालबोट, राजपूताना के एजीजी जेम्स सदरलैण्ड, राजपूताना के एजीजी मेजर सी. थॉर्सबी और सी. सी. वाटसन के पत्र भी सम्मिलित हैं। यह संग्रह बीकानेर राज्य की 19वीं शताब्दी की शासन व्यवस्था, सामाजिक परम्पराएं एवं रीति-रिवाज, सिक्खों के इतिहास तथा बीकानेर रियासत के अंग्रेजों से सम्बन्धों पर अच्छा प्रकाश डालता है।

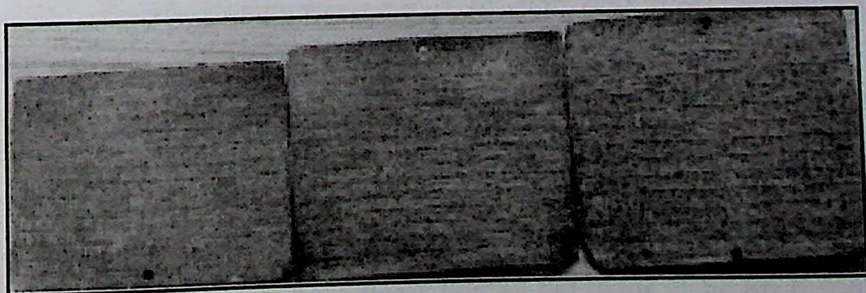
गंगादास कौशिक संग्रह

इस संग्रह में बीकानेर के स्वतंत्रता सेनानी गंगादास कौशिक द्वारा ई.1942 से 1954 की अवधि में संग्रहित समाचार पत्र, पत्रिकाएं, पेम्पलेट, पत्रावलियां आदि का संग्रह है। इस संग्रह से राजपूताना देशी राज्य परिषद्, राजपूताना प्रांतीय कांग्रेस कमेटी, बीकानेर प्रजा परिषद और राजपूताना राज्यों के एकीकरण आदि की सूचनाएं मिल सकती हैं।

लोकमणि व्यास संग्रह

इस संग्रह में नागौर परगने के मेड़ता नगर में रहने वाले लोकमणि व्यास परिवार के द्वारा संग्रहित अभिलेख हैं। इन अभिलेखों से नागौर परगने के सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक इतिहास का अध्ययन किया जा सकता है। इस परिवार के लोकमणि व्यास ने जोधपुर नरेश अभयसिंह और विजयसिंह के समय कई धार्मिक अनुष्ठान करवाए थे। इस संग्रह में ई.1709 से लेकर ई. 1767 तक की अवधि की बहियां, रुक्के, परवाने, सनद आदि देखी जा सकती हैं। साथ ही उस काल में वस्तुओं के भाव, ब्याज की दर, धार्मिक अनुष्ठानों एवं लोक-विश्वास आदि की जानकारी मिलती है।

बालकृष्ण लाल की हवेली जोधपुर के ताम्रपत्र



जब औरंगजेब ने उत्तर भारत से समस्त मंदिरों को गिराने के आदेश दिए तो ब्रज क्षेत्र के मंदिरों के पुजारी एवं गुसाईं अपने इष्ट देवों के विग्रहों को लेकर राजपूताना की रियासतों में आए। गोवर्धन पर्वत पर स्थित श्रीनाथजी का विग्रह किशनगढ़ होता हुआ जोधपुर पहुंचा तथा वहाँ से मेवाड़ ले जाया गया जहाँ यह नाथद्वारा में आज भी विराजमान

है। उसके बाद से जोधपुर में पुष्टि सम्प्रदाय की गतिविधियां बढ़ गईं। महाराजा अभयसिंह (1724-49) ने कामवन में जाकर गोस्वामी मुरलीधर से भेंट की तथा उनसे नाम सुनकर वैष्णव बना। महाराजा ने चौपासनी गांव में श्याममनोहर प्रभु की हवेली बनवाई तथा चोखा गांव गुसाईंजी को भेंट स्वरूप प्रदान किया। महाराजा विजयसिंह (ई. 1752-93) के काल में जोधपुर में प्रमुख पुष्टिमार्गी मंदिर कुंजबिहारी का मंदिर, महाप्रभुजी का मंदिर, बालकृष्ण का मंदिर आदि मंदिरों का निर्माण हुआ। बालकृष्ण मंदिर में कुछ महत्वपूर्ण ताम्रपत्र उपलब्ध हैं जो मंदिर को दिए गए दान, भेंट, उपहार में दी गई भूमियों से सम्बन्धित हैं। ये ताम्रपत्र 8 गुणा 6 एवं 8 गुणा 12 इंच के आकार में हैं। इनमें से कुछ ताम्रपत्र इस प्रकार हैं-

श्री परमेश्वरजी सत्य छै

श्री राजराजेश्वर महाराजाधिराज महाराजा श्री विजैसिंघजी महाराज कंवर श्री जालमसिंघ जी वचनात तथा गुसांईजी .... महाराज रै परगनै मेडता रो गांव लारबोन ऐ अणदपुर रो रेष 4000/1 चार हजार री मै भेट कीयो है जो किंणी पीठी तफावत न करै। संवत् 1839 रा सांवण सुद 14 मुकाम पाय तखत गढ जोधपुर

श्री परमेश्वरजी सत्य छै

श्री गुसांई जी श्री व्रजपत जी महाराज री भेंट गढ जोधपुर रो गांव या पावसत रै पीपाड रेष 3500/1 साठा तीन हजार री मै राजा भीवसिंघ वठायो है सो किणी पीठी तफाव न करै संवत् 1859 रा कातीवद 9 मुकाम पाय तखत गढ जोधपुर

श्री परमेश्वरजी सत्य छै

श्री गुसांई जी श्री वृजाधीस जी महाराज री भेंट गढ जोधपुर रो गांव बोलत पीपाड रो रेष 4000/1 चार हजार री में राजा विजैसिंघ कवर फतेसिंघ चढायो है सो किणी पीठी तफावत न करै। संवत् 1824 सांवण सुद 10 मुकाम पाय तखत गढ जोधपुर र...........
....

श्री परमेश्वरजी सत्य छै

श्री राजराजेश्वर महाराजाधिराज महाराजा श्री विजैसिंघ जी महाराज कंवर श्री फतेसिंघ जी वचनात। तथा गुसांई जी .... महाराज रै परगनै परबतसर रो गांव मावास रेष 2500/1 अढाई हजार री भैंट कीयो है सो किणी पीठी तफावत न करै। संवत् 1829 रा जेठ वद 13 मुकांम पाय तखतगढ जोधपुर....................

श्री परमेश्वरजी सत्य छै

श्री श्री श्री राजराजेश्वरमहाराजाधिराज महाराजा श्री भींवसिंघजी वचनात। तथा जोधपुर मै....................... रै मदर गांव दईझर रो बेरो एक राम सरी नाजर गंगादास

बिणायो बंधायो सो जाव बीघा 51 इकावन सुघो नै सीवणू षेत ह लवाएकरा बीघा 210 दोयसो दस दर बार सु भेंट कीया है, तिण रो हासल पोची या कर सी। संत् 1853 रा भादवा सुद 3 मुकाम पायत तखत गढ जोधपुर................

।। श्री राम जी ।।

श्री श्री गोस्वामी श्री 109 श्री श्री ब्रजाधीश जी महाराज रे वेरो 1 भेट कीयो राज श्री बीडघसिंघ जी तीण री जमी बीघा 45 पेतालीस उगवणी कानी व्यास बैनामो षेत नु तराद कानी प्रौ।। रो बेटो आथुणी कानी जाट षीया रो बेरो दीषणाद कानी मारग वहै छै सो वेरो नीव सीव सुधो भेंट कीनो है सो सांष सावणु उनालु रा हासल आवसी सु महाराजा रे आवसी अपदत परद तजे लोपत वी संध राते नर नर का जीव ते जबल गांवद्र दीवा करासी।। 1856 रा मिती भादवा सुदि 2 ....



अध्याय - 19

लोक संस्कृति शोध संस्थान नगर – श्री, चुरू



चूरू नगर में स्थित लोक संस्कृति शोध संस्थान नगर श्री की स्थापना वर्ष 1964 में सुप्रसिद्ध इतिहासकार गोविंद अग्रवाल एवं उनके भाई सुबोध कुमार अग्रवाल ने रामनवमी के दिन की। उन्होंने अपने साधनों से सीकर, झुंझुनूं, चूरू, नागौर, बीकानेर, आदि जिलों की यात्राएं करके वहाँ के लोक जीवन से जुड़े विविध प्रसंगों को एकत्रित किया। वर्ष 1989-90 में संस्थान के लिए एक भवन क्रय किया गया तथा भवन में एक मंच का निर्माण करवाया गया। संग्रहालय को भी इसी भवन में स्थानांतरित कर दिया गया।

इस संस्थान में लगभग डेढ़ हजार छोटे-बड़े छायाचित्र लगे हुए हैं। जिनमें सार्वजनिक, धार्मिक एवं ऐतिहासिक स्थलों के साथ-साथ महापुरुषों, स्वतंत्रता सेनानियों, साहित्यकारों, लोक कलाकारों, विद्वानों आदि के विविध अवसरों पर लिए गए चित्र सम्मिलित हैं। ये चित्र शेखवाटी एवं बीकानेर क्षेत्र के लोकजीवन की सजीव झांकी प्रस्तुत करते हैं। संस्थान के संग्रहालय में प्राचीन मूर्तियों, सिक्कों, ताड़पत्रीय प्रतियों, हस्तलिखित पुस्तकों, प्राचीन लेखा बहियों इत्यादि का दुर्लभ संग्रह किया गया है। शोध यात्राओं के दौरान भाड़ंग, कालीबंगा, रंगमहल, करोती, सोथी एवं पल्लू आदि के थेड़ों से प्राप्त हजारों वर्ष पुरानी पुरातात्विक सामग्री भी संग्रहित की गई है। यहाँ मुड़िया लिपि में लिखी गई अनेक पुरानी लेखा बहियों में मारवाड़ी व्यापारियों द्वारा डेढ़

सौ वर्ष पहले किए गए लाखों रुपयों के व्यावसायिक लेन-देन की प्रविष्टियां देखी जा सकती हैं। कई बहियां तो 15 किलो वजन की भी हैं।

संस्थान में पुरानी फारसी में लिखे हुए कुछ अभिलेख हैं, जिनका हिन्दी रूपांतरण भी कराया गया है। ये दस्तावेज नाभा, पटियाला, जीन्द, कपूरथला, कश्मीर आदि रियासतों के शासकों तथा ईस्ट इण्डिया कम्पनी के अधिकारियों के बीच हुए पत्राचार से सम्बन्धित हैं। लोक संस्कृति शोध संस्थान- नगर-श्री चूरू में संग्रहालय के साथ-साथ पुस्तकालय, प्रकाशन विभाग तथा शोध प्रभाग स्थापित किए गए हैं।

पोतेदार संग्रह के अभिलेख

चूरू के पोतेदार सेठों ने अठारहवीं शताब्दी ईस्वी में राजस्थान से बाहर अपना व्यापार फैलाने में सफलता प्राप्त की। इस परिवार के सेठ मिर्जामल ने बीकानेर नरेश सूरतसिंह (ई॰1787-1828) एवं महाराजा रत्नसिंह (ई॰1828-51) के साथ घनिष्ठ सम्पर्क स्थापित किया। बीकानेर, खेतड़ी एवं सीकर के राजाओं एवं महाराजाओं के साथ पोतेदार सेठों का लेन-देन रहता था। यह संग्रह चूरू के लोक संस्कृति शोध संस्थान नगर - श्री में उपलब्ध है।

रियासती दस्तावेज

बीकानेर रियासत के साथ हुए पत्र व्यवहार एवं ऋणपत्र आदि

पोतेदार परिवार के संग्रह में बीकानेर रियासत एवं पोतेदार सेठों के बीच हुए पत्र व्यवहार एवं ऋणपत्र आदि उपलब्ध हैं। इनसे ज्ञात होता है कि बीकानेर रियासत ने पोतेदार सेठों से 500 रुपए से लेकर 4 लाख रुपए तक के ऋण कई बार लिए। ये ऋण अल्पकालीन एवं दीर्घकालीन दोनों प्रकार के थे। एक अभिलेख से ज्ञात होता है कि बीकानेर सरकार ने इस दस्तावेज के माध्यम से 350 रुपये प्रतिदिन के हिसाब से पूरे एक वर्ष के लिए 360 दिन हेतु 1,26,000 रुपए उधार लिए। ब्याज कटवा मिती से एक रुपया सैंकड़ा तय हुआ। इन दस्तावेजों से यह भी ज्ञात होता है कि ऋण का पुनर्भुगतान अवधि के पश्चात् रुपयों में नहीं होता था अपितु ऋणों की ब्याज सहित आपूर्ति हेतु राज्य की आय के कुछ स्रोत जिन्हें ठोड़ कहा जाता था, ऋणदाता को सौंप दिए जाते थे। इन ठोड़ों का उल्लेख ऋणपत्र में किया जाता था और ऋण के चुकता होने पर वे ठोड़ें ऋणदाता से पुनः प्राप्त कर ली जाती थीं।

ऋणदाता को प्रदत्त ठोड़ों के रुपये भर्ती करवाने हेतु उसकी ओर से जो आदमी नियुक्त किये जाते थे उनको कई बार राज्य की ओर से रोजगार अर्थात् वेतन एवं पेटिया अर्थात् पूरे परिवार हेतु भोजन सामग्री दी जाती थी। ऋणदाता ऋणपत्र में स्पष्ट उल्लेख करता था कि उसने ऋण किन रुपयों में दिया है। यदि ऋण चुकाते समय अन्य प्रकार के रुपयों का उपयोग किया जाता था तो उसकी कीमत के अनुपात में बट्टा या बाधा जोड़ा या

घटाया जाता था। पोतेदार संग्रह के दस्तावेजों से ज्ञात होता है कि उस समय बीकानेर क्षेत्र में गजशाही, सूरतशाही, डूंगरशाही, कलदार एवं 'दिल्ली चलन' आदि प्रकार के सिक्के प्रचलन में थे। सामान्यत: ऋण लेने वाला व्यक्ति शपथ पूर्वक लिखकर देता था कि वह ऋण का भुगतान ब्याज सहित करेगा। कई मामलों में तृतीय पक्ष की प्रतिभूति भी ली जाती थी। ऋण का भुगतान एक मुश्त होगा या किश्तों में, यह भी ऋणपत्र में स्पष्ट किया जाता था।

इस प्रकार इन अभिलेखों से उस काल की बैंकिंग तथा ऋणों के लेन-देन एवं पुनर्भुगतान के तरीकों की जानकारी होती है। साथ ही प्रत्याभूति, ब्याज, हुंडावन, आढ़त, दलाली, बट्टा, छूट, कसर, वेतन की दर आदि के सम्बन्ध में उपयोगी जानकारी होती है। वि.सं. 1884 भादों सुदि 5 के एक राजकीय अभिलेख से ज्ञात होता है कि मिर्जामल की मार्फत रहने वाले इमामबख्श को एक रुपया प्रतिदिन एवं उसके नीचे रहने वाले आठ सवारों को आठ आना प्रति सवार, प्रतिदिन मिलता था। मुंशी सेढू को दस रुपये मासिक एवं सिक्के को 5 रुपये मासिक मिलते थे। वेतन चुकाते समय एकादशी के दिनों का वेतन काट लिया जाता था। इसी तरह इन कागजों से व्यापारियों, श्रमिकों, कर्मचारियों, किसानों, जागीरदारों एवं जनसाधारण पर लगने वाले करों, पारस्परिक झगड़ों, चोरी, डकैती, अपहरण, आवास, निष्क्रमण, न्याय, उपहार, भेंट एवं दण्ड आदि विषयों की जानकारी मिलती है।

बीकानेर, सीकर, खेतड़ी के साथ-साथ पंजाब के राजाओं के साथ भी पोतेदार सेठों का लेन-देन एवं पत्र-व्यवहार था। महाराजा रणजीतसिंह (ई.1792-1801) के दरबार में सेठ मिर्जामल का आना-जाना था। महाराजा ने एक अवसर पर सेठ मिर्जामल को मोतियों का कीमती हार उपहार स्वरूप दिया था जिसका रंगीन चित्र, पोतेदार संग्रह में है। सेठ मिर्जामल के नाम लिखे गए महाराजा रणजीतसिंह के एक परवाने से ज्ञात होता है कि महाराजा ने मिर्जामल को अनेक वस्तुओं के साथ-साथ बीकानेर की लतीफ मिसरी का क्रय आदेश भी दिया था। इससे अनुमान लगाया जा सकता है कि बीकानेर की मिसरी की उस समय कितनी प्रसिद्धि थी।

नाभा नरेश देवेन्द्रसिंह के एक कागज से ज्ञात होता है कि मिर्जामल ने नाभा में एक व्यापारिक कोठी स्थापित की थी, जिसमें नाभा राज्य की ओर से पचास हजार रुपये बिना ब्याज के लगाकर साझा किया गया था। इस प्रकार पंजाब के अन्य राजाओं एवं अनेक अंग्रेज अधिकारियों के पत्र भी इस संग्रह में उपलब्ध हैं, जिनसे उस काल की अर्थव्यवस्था एवं बैंकिंग पद्धति को समझा जा सकता है।

पोतेदार संग्रह के राजकीय अभिलेखों पर विभिन्न प्रकार की मोहरें लगी हुई हैं। ये गोल, चौकोर, अण्डाकार, पहलूदार, साधारण, अलंकृत आदि प्रकार की हैं। ये मोहरें फारसी, हिन्दी, गुरुमुखी में हैं। महाराजा रणजीतसिंह की मोहरें आकार में छोटी हैं तथा

उनमें गुरुमुखी में 'अकाल सहाय रणजीतसिंह' लिखा हुआ है। महाराजा सूरतसिंह की मोहरें विविध प्रकार की हैं, जिनमें से किसी किसी में मुगल बादशाह शाह आलम या अकबर शाह (द्वितीय) का नाम भी अंकित है। अंग्रेज पदाधिकारियों की मोहरें फारसी या हिन्दी एवं फारसी तथा हिन्दी में हैं।

उस काल में भारत के अनेक शहरों में पोतेदारों का कारोबार फैल रहा था। इन केन्द्रों से हिसाब के कागज पोतेदारों के मुख्यालय अर्थात् बीकानेर आते थे। ये कागज गोलाकार लपेटे हुए होते थे जिन्हें उतारे कहा जाता था। इनमें सम्बन्धित केन्द्र का हिसाब-किताब रहता था। इस संग्रह के अनेक उतारे बहुत लम्बे हैं। इनमें से एक उतारे की लम्बाई 41 फुट है। आयातित माल पर लगने वाले राजकीय कर आदि के भी बहुत से दस्तावेज हैं। इन दस्तावेजों से उस काल के व्यापारिक मार्गों का भी ज्ञान होता है क्योंकि आयतित माल पर कहाँ-कहाँ चुंगी अथवा राजकीय शुल्क चुकाया गया, उनका विवरण भी इन उतारों में लिखा गया है।

पोतेदार संग्रह में विभिन्न प्रकार की फर्मों की भी बहुत सी बहियां हैं, जिनमें से अधिकांश बहियां मोटी एवं भारी हैं जिन पर चमड़े के पुट्ठे चढ़े हुए हैं। सबसे मोटी बही का भार 15 किलो 850 ग्राम है। यह जिंदाराम, मिर्जामल की चूरू की दुकान की 'रजनांवे' की बही है, जो वि.सं.1897 से वि.सं.1948 तक की अवधि की है। एक दूसरी बही लेखापाड़ की है, जो मिर्जामल मगनीराम की दिल्ली दुकान की है जो वैशाख सुदी 7 सं.1884 से प्रारम्भ होती है। इस बही में चतुर्भुज जिंदाराम का एक लम्बा खाता है, जिसमें लगभग 16-17 लाख रुपयों की हुण्डियों का आदान-प्रदान हुआ। अधिकतर हुण्डियां मियादी हैं। उदाहरण के लिए अमृतसर की हुण्डियां 27 दिन की अवधि की हैं। इस बही से ज्ञात होता है कि उस काल में रकम का ब्याज फैलाते समय एक चौथाई आंक (Product) तक का हिसाब लगाया जाता था।

ब्रिटिश परवानों का अद्भुत संग्रह

ईस्ट इण्डिया कम्पनी ने ई.1817-18 में देशी रियासतों से अधीनस्थ सहयोग की संधियां कीं। कम्पनी के अधिकारियों को रियासतों में शांति स्थापित करने एवं व्यापार बढ़ाने में अत्यंत रुचि थी, ताकि कम्पनी को कर एवं शुल्क आदि से आय मिलती रहे। अंग्रेज अधिकारी फ्रांसिस विल्डर ने देशी राज्यों में बसने वाले समृद्ध व्यापारियों को पत्र लिखकर अंग्रेजों के संरक्षण में अपना व्यापार बढ़ाने के लिए प्रोत्साहित किया। उसने व्यापारियों को हर प्रकार की सुविधा एवं सुरक्षा प्रदान की तथा उनकी अन्य समस्याओं को भी सुलझाने में रुचि दिखाई।

विल्डर ने देशी रियासतों में रहने वाले व्यापारियों को अपना माल अन्य स्थानों को ले जाने पर मार्ग में सुरक्षा देने तथा करों की दरों में कमी करने का काम किया। चूरू के पोतेदार एवं अभिलेख संग्रह में इस समय की बहुत सारी मूल सामग्री सुरक्षित है। इन

पोतेदारों की दुकानें एवं व्यापारिक कोठियां अजमेर एवं मुम्बई आदि शहरों में थीं। अतः इस अभिलेख संग्रह में दुकानों की बहियां एवं राजकीय मोहर छाप शुदा सरकारी दस्तावेज उपलब्ध हैं, जिनसे राजपूताना की तत्कालीन व्यापारिक स्थिति एवं अंग्रेजों की व्यापार नीति पर महत्त्वपूर्ण प्रकाश पड़ता है।

चूरू के पोतेदार संग्रह में राजस्थान के आर्थिक एवं व्यापारिक इतिहास से सम्बन्धित दस्तावेज संग्रहित हैं जिनमें 19वीं शताब्दी की अर्थ-व्यवस्था, बैंकिंग, वाणिज्य, व्यापार, आदि से सम्बन्धित प्रामाणिक तथ्य उपलब्ध हैं। इस संग्रह में आंतरिक एवं अंतर्राष्ट्रीय व्यापार सम्बन्धी विश्वसनीय साक्ष्य भी मिलते हैं जिनसे यह सिद्ध होता है कि वाणिज्य व्यापार बैंकिंग के क्षेत्र में राजस्थान के व्यापारी अग्रणी रहे हैं। यह महत्वपूर्ण संग्रह चूरू के पोतेदार सेठ चतुर्भुज, उसके पुत्र मिर्जामल एवं पौत्र जिंदाराम आदि से सम्बन्धित है। इस संग्रह के परवानों एवं अन्य दस्तावेजों से ज्ञात होता है कि पोतेदार चतुर्भुज, मिर्जामल एवं जिंदाराम 19वीं शताब्दी ईस्वी के ख्याति प्राप्त बैंकर तथा व्यापारी थे।

पोतेदार संग्रह में उपलब्ध प्रथम परवाना 22 जुलाई 1818 का है। इस पर फ्रांसिस विल्डर बहादुर के नाम की, फारसी एवं हिन्दी भाषा में, चौकोर मोहर लगी हुई है। मोहर के बाईं ओर अंग्रेजी में विल्डर के हस्ताक्षर एवं तिथि अंकित हैं। मूल कागज फारसी में चूरू के चतुर्भुज-जिंदाराम साहूकारान के नाम लिखा हुआ है, जिसमें कहा गया है कि तुम लोग विश्वास के साथ अपनी-अपनी दुकानें अजमेर में लगाओ और माल आस-पास से मंगवाओ। हर हालत में तुम व्यापारियों की परवरिश सरकारवाला से की जायेगी। दूसरा परवाना 28 अप्रेल 1821 का है, जिस पर फ्रांसिस विल्डर बहादुर की वैसी ही मोहर एवं हस्ताक्षर हैं। यह दस्तावेज फारसी लिपि, हिन्दी भाषा एवं शेखावाटी बोली में लिखा हुआ है जिसमें कहा गया है कि अब इलाका जोधपुर के हासिल का बंदोबस्त हो गया है, जो नागौर के रास्ते शेखावाटी-पाली मार्ग पर चार रुपये चार आने के हिसाब से लगेगा। अतः अब अजमेर का भी उसी माफिक लगेगा। किसी से ज्यादा नहीं लिया जायेगा और न ही किसी को परेशान किया जायेगा। अतः पूरी जमाखातिरी से माल अजमेर के रास्ते ही लाओ।

तीसरे परवाने पर भी फ्रांसिस विल्डर की मोहर एवं हस्ताक्षर हैं। यह कागज भी फारसी एवं हिन्दी दोनों में लिखा गया है। इसमें कहा गया है कि तुम्हारी अर्जी आई, हाल मालूम हुआ। तुमने चैत बदी दो को हुजूर से मिलने के लिए रवाना होने की बात लिखी है तो ठीक है। तुम्हारी कोशिश एवं दौलतख्वाही से हुजूर को बड़ी खुशी हुई। तुम्हारे साथ के लिए दो सवार यहाँ से सुरक्षा हेतु भेजे जा रहे हैं, सो इन सवारों के साथ जमा खातिरी से आ जाओ।

चौथा परवाना फ्रांसिस विल्डर की ओर से इज्जत आसार सेठ मिर्जामल के नाम तसल्लीनामा के रूप में 24 मई 1822 को लिखा गया है। इस पर भी वैसी ही मोहर एवं हस्ताक्षर हैं। इसमें कहा गया है कि तुम पूरी जमा खातिरी से अजमेर की मण्डी में दुकानें एवं कारखाने स्थापित कर व्यापार करो। यह बात छिपी नहीं है कि अधिकतर राजपूत सरदार कम्पनी अंग्रेज सरकार के खैरख्वाह बन चुके हैं। वे भी तुम्हें किसी प्रकार से कष्ट नहीं दे पायेंगे। तुम बड़ी खुशी से दुकानें खोलो, दिसावरों- पाली, मुम्बई, जैसलमेर, भावनगर, भिवानी आदि से माल अजमेर के रास्ते लाओ-ले जाओ। हासिल वगैरह सब नियमानुसार वसूल किया जायेगा, कोई ज्यादती नहीं होगी। तुम्हें किसी प्रकार का अन्देशा नहीं, चाहे जहाँ आना-जाना रखो। कोई भी भोमिया या मकानदार तुम्हारे साथ अनुचित व्यवहार नहीं करेगा और कदाचित किसी की तरफ से तुम्हारे हक में ज्यादती होगी तो सरकार की ओर से तुम्हारी मदद की जायेगी तथा उससे बदला लिया जायेगा।

पांचवा परवाना 29 दिसम्बर 1822 का है। सेठ मिर्जामल हरभगत पोतेदार ने अजमेर में बसने के लिए 20 दिसम्बर 1822 को फ्रांसिस विल्डर के सामने 10 शर्तें रखी थीं, जिन्हें 29 दिसम्बर 1822 को फ्रांसिस विल्डर ने इस दस्तावेज के माध्यम से स्वीकृति प्रदान की। इससे ज्ञात होता है कि विल्डर हर प्रकार से व्यापारियों को संतुष्ट करके उन्हें अजमेर में बसाने का इच्छुक था।

छठे परवाने से ज्ञात होता है कि सुपरिण्टेण्डेण्ट विल्डर फ्रांसिस ने मोहनदास रामजीदास को अजमेर में बाग लगवाने के लिए 15 बीघा, 17 बिस्वा जमीन दी जिसमें उन लोगों ने बड़ा सुहावना बगीचा बनाया। बाद में गर्वनर जनरल की ओर से भी इसकी मंजूरी मिल गई। गवर्नर जनरल ने अजमेर के चौधरियों एवं अहलकारों आदि के नाम आदेश दिया कि सम्मानित मोहनराम और रामजीदास ने फ्रांसिस विल्डर साहब बहादुर की आज्ञानुसार उक्त शहर के पास के जमीन के हिस्से में जो खालसा सरकार दौलत मदार की आराजी है, 15 बीघा 17 बिस्वा में एक बेहतरीन बाग एक हिस्से में लगाया, तामीर और बड़े ढंग से बगीचे को तरतीब दी है। सिलसिले से बराबर मेवेदार फलदार दरख्त लगाए हैं। बहुत ही सुहावना बगीचा लगाया है और इस आराजी की सनद, पट्टा मिलने की बाबत बहुजूर नवाब गवर्नर जनरल साहब बहादुर की सेवा में अर्जी पेश की है। सरकार दौलतमदार की हमेशा दिली लगन, तवज्जही यही है कि सरकार वाला की जनता को फायदा हो और वह खुशहाल और सुखी रहे। तमाम मुमालिके मेहरुसा के मुताअल्लिक के शहर, कस्बे और देहात एवं खास तौर पर दारुल खैर अजमेर शहर के सरसब्जो-शाबाद हरे-भरे रहें और जिससे रौनक खुशहाली हो। बस इन्हीं खयालात से, कौंसिल की बैठक में बहुत ही मेहरबानी फरमा कर उक्त आराजी बख्श दी जाने बाबत आदेश प्रदान किया। तुम्हें चाहिये कि उक्त बाग में जिसकी जमीन 15 बीघा 17 बिस्वा

की आराजी है, किसी भी प्रकार से उलझन न डालें, रोकथाम नहीं होवे। और उक्त दोनों व्यक्ति अपने आपको अपने वारिसों को पीढ़ी दर पीढ़ी असलन बाद नसल ऊपर लिखी आराजी पर गांव कुआं और तमाम वृक्षों आदि पर अपना कब्जा और हक बिना किसी की शिरकत के समझें और इस लिखे को पुख्ता मुसतनद सनद समझें और इस बख्शीश का शुक्रिया अदा करते रहें। दिनांक 11 मार्च 1825 ईस्वी, मुताबिक दिनांक 20 रजब सन् 1240 हिजरी को लिखी गई।

फ्रांसिस विल्डर की ओर से दिनांक 1 अक्टूबर 1819 को अंग्रेजी में लिखे गए दो कागज परिचय पत्र के रूप में मिले हैं। ये दोनों परिचय पत्र रामगढ़ के व्यापारी मिर्जामल को दिये गए हैं, जो दिल्ली जा रहा था। इनमें से एक परिचय पत्र तो सर डेविड ऑक्टरलोनी के नाम लिखा गया है किंतु दूसरा किसके नाम लिखा गया है, यह स्पष्ट नहीं होता। इन परिचय पत्रों से ज्ञात होता है कि मिर्जामल ने अजमेर में कई दुकानें खोली हैं और अजमेर की तात्कालिक समृद्धि में उसका बड़ा योग रहा है।

उन दिनों अजमेर में कारोबार करने वाला कोई व्यापारी जब बाहर जाता था, तब कम्पनी सरकार की ओर से क्षेत्र के चौकीदारों को लिखित निर्देश दिये जाते थे कि वे उक्त व्यापारी के साथ किसी भी प्रकार का अनुचित व्यवहार न करें और उसे अपनी सीमा से सुरक्षित निकाल दें। इस आशय का एक पत्र, इस संग्रह में उपलब्ध है जिस पर फ्रांसिस विल्डर की मोहर, हस्ताक्षर एवं 10 जून 1822 की तिथि अंकित है। इस पत्र का सारांश इस प्रकार से है-

दस्तक राहदारी चौकीदारान एवं गुजरबानांन तमाम बंदोबस्त करने वाला रास्ता इलाका सरकार के नाम का जो मिर्जामल फोतेदार रामगढ़ का, जिसकी एक कोठी तिजारती अजमेर की मण्डी में है। किसी काम के लिए जयपुर के रास्ते होकर दिल्ली जा रहा है और महीना आसोज में वहाँ से वापिस आएगा। तो चाहिये कि रास्ते में कोई किसी तरह से उनके साथ मुजाहिम गैर वाजिब नहीं करे और अपनी हद से अच्छी तरह पहुँचा देवे। उनके साथ आदमी 30, हथियार 15 एवं 8 घोड़े और ऊँट हैं।

ई.1824 के मध्य में जब मि. विल्डर का स्थानांतरण सौगोर तथा नर्बदा क्षेत्र में किया गया तब अजमेर तथा उसके चारों ओर भयानक अकाल पड़ा हुआ था। 16 दिसम्बर 1824 से 21 अप्रेल 1825 तक मूर के पास अजमेर के सुपरिण्टेण्डेण्ट के पद का कार्यभार रहा। पोतेदार संग्रह के दस्तावेजों से ज्ञात होता है कि ई.1831 में लेफ्टिनेंट अलेक्जैण्डर बर्नज ने इंग्लैण्ड के राजा की ओर से सिक्ख महाराजा रणजीतसिंह को घोड़े उपहार में भेजे थे, जिन्हें सिंध नदी द्वारा नावों में लाहौर पहुंचाया गया। बर्नज की इस यात्रा का उद्देश्य सिंध नदी मार्ग की जानकारी प्राप्त करना एवं उस प्रदेश में अंग्रेजी प्रभाव के विस्तार की संभावनाओं का पता लगाना था।

पोतेदार संग्रह के एक पत्र से ज्ञात होता है कि ई.1832 में ब्रिटिश प्रतिनिधि कर्नल पोटिंजर ने सिंध के अमीरों के साथ एक व्यापारिक संधि की, जिसके परिणामस्वरूप सिंध की नदियां एवं सड़कें भारत के व्यापारियों के लिए खोल दी गईं। सतलज नदी के माध्यम से इस मार्ग को जोड़ने के लिए महाराजा रणजीतसिंह के साथ संधि करना आवश्यक था किंतु महाराजा रणजीतसिंह इस संधि के दुष्परिणामों से परिचित था। इसलिए वह इस संधि के लिए इच्छुक नहीं था। इस पर गवर्नर जनरल ने लुधियाना के ब्रिटिश पॉलिटिकल एजेण्ट क्लॉड मार्टिन वेड को इस कार्य के लिए नियुक्त किया, जो महाराजा को इस संधि पर हस्ताक्षर करने के लिए सहमत करे। संग्रह में उपलब्ध एक मूल पत्र से यह प्रमाणित होता है कि व्यापारिक मामलों में महाराजा रणजीतसिंह अपने राज्य के प्रमुख व्यापारियों की राय लेता था। इस संधि पर हस्ताक्षर करने से पहले उसने व्यापारियों की एक पंचायत बुलाकर उनकी राय ली।

पोतेदार संग्रह में लाहौर तथा भावलपुर दरबार में ब्रिटिश प्रतिनिधि के रूप में नियुक्त ब्रिटिश पॉलिटिकल एजेंट कप्तान क्लॉड मार्टिन बेड द्वारा अमृतसर के प्रमुख व्यापारियों के नाम फारसी लिपि में लिखा गया एक पत्र उपलब्ध है। इस पत्र पर अष्टकोणीय फारसी मोहर अंकित है तथा क्लॉड के हस्ताक्षर अंग्रेजी में हैं। इस पत्र का हिन्दी अनुवाद इस प्रकार है-

हस्ताक्षर एवं मोहर

सम्मानित अमरतसर के बोहरियान खुश हों। इसलिए कि सरकार दौलतमदार कम्पनी अंग्रेज बहादुर तथा महाराजा साहब मुशफिक मेहरबान, करमफरमा महाराजा रणजीतसिंह बहादुर के बीच में कानूनन बकौली करार, दोनों सरकारों के दरया-ए-सिंध और सतलज के महसूल का मामला चल रहा है और यह निश्चित है कि उक्त महाराजा साहब ने बाहमी आपसी राय-मशवरे तथा भलाई के लिए अमरतसर के साहूकारों की पंचायत बुलाई है। आप लोग नामी, विश्वासी साहूकार लोग हैं। यहाँ से भी उस पंचायत में शरीक होने के लिए आप लोगों के नाम सम्मानित महाराजा साहब के पास भिजवा दिए हैं एवं यह मुनासिब है कि मशवरे के समय पहुंच जाएं और इस मामले में बगैर, सोच-विचार, छान-बीन करने के बाद ही निश्चित बात पर राय दें। तमाम भलाई-बुराई, जनता की भलाई, व्योपारियों की तरक्की तथा दोनों सरकारवाला की खुशहाली और नेकनामी इसी पर है। बहुत ही सोच-विचार कर निश्चित करें। फकत.........

दिनांक 25 दिसम्बर 1832

∞ ∞ ∞

पोतेदार संग्रह के कुछ पत्रों से ज्ञात होता है कि महाराजा रणजीतसिंह एवं ईस्ट इण्डिया कम्पनी के बीच व्यापारिक मार्गों को सुरक्षा प्रदान करने की संधि हो जाने के

बाद भी राजस्थान के व्यापारियों की हिम्मत नहीं पड़ी कि वे अपने माल को अनजाने प्रदेशों में लेजाकर अपना व्यापार फैलाएं। इस पर अंग्रेज पॉलिटिकल एजेण्ट कप्तान वेड ने सेठ मिर्जामल एवं उनके परिवार के सदस्यों को एक पत्र लिखकर उनके माल की सुरक्षा के लिए आश्वस्त किया। इस पत्र से यह भी ज्ञात होता है कि देशी रियासतों में अपनी गतिविधियां विस्तारित करने के साथ ही अंग्रेज इस बात के लिए भी उत्सुक थे कि व्यापारिक गतिविधियों का भी विस्तार हो, ताकि ईस्ट इण्डिया कम्पनी को कर एवं चुंगी आदि से अधिक आय मिल सके। यह पत्र काली स्याही से फारसी भाषा में लिखा गया है जिस पर कप्तान वेड की मोहर एवं हस्ताक्षर हैं। पत्र का हिन्दी अनुवाद इस प्रकार है-

हस्ताक्षर एवं मोहर

सेठ साहबान......... सम्मानित मिर्जामल सेठ, जगन्नाथ, हरसहायमल, रामरतन, फकीरचंद, केसरीसिंह......... आदि साहूकारान निवासी रामगढ़ और चूरू खुश रहें।

चूंकि इन दिनों में सरकारवाला ने इस बात पर अपनी पूरी तवज्जह देने का निश्चित इरादा कर लिया है कि सौदागरों, साहूकारों को लेन-देन में सुभीता हो और उन्हें काफी लाभ हो। इसी कारण बहुत सी तजवीजों पर सरकारवाला ने गौर किया और कर रही है। उनमें एक तजवीज दरया सतलज और दरया सिन्ध के बारे में है जिसके बारे में महाराजा रणजीतसिंह बहादुर के मशवरे-राय से नियम बनाए जाकर दोनों सरकारवाला........... तमाम इलाकेदारों तथा जागीरदार लोगों से जो कि इन दरयाओं के किनारे बसते हैं, उन सबसे कौल-करार, अहदोपैमान कर लिखवा लिया जाए कि हर एक व्यक्ति अपने-अपने इलाकों का स्वयं बंदोबस्त करे। चोर-डाकुओं से, लुटेरों से रक्षा करने की पूरी जिम्मेदारी ली जाए। कोई भी बढ़कर, शरारत पेशा लोगों को अपने इलाके में पनाह नहीं दे। अगर मानो कभी किसी के इलाके में डाका पड़े या लूटमार हो तो बिना किसी हील-हवाले के चोरी, लूटमार का माल इस इलाके के मालिक से अदा कराया जाए, यानि उसकी सारी जिम्मेदारी लेन-देन की वह अपनी समझे। फकत..........

और हुजूरवाला की तवज्जह से चोरों तथा लुटेरों की बन्दिश होने पर दरिया कि किनारे के हिस्सों में तथा उधर भावलपुर व्योपारियों ने अपना मालोअसबाब तिजारत का उनमें भरवा कर हुजूरवाला के साथ कोट मथन और शिकारपुर ले गए तथा बहुत लाभ हुआ और उसके बाद फिर से किश्तियों को माल से भरवाकर मिस्टर सेक्सन साहब बहादुर के साथ रवाना हुई तथा रक्षा के लिए सरकार लाहौर की पलटन के सिपाही, मार्ग के सिपाहियों के साथ नियुक्त हुए कि पूरी हिफाजत के साथ अपनी मंजिल पर पहुंचा दें। फकत............

और दूसरी किश्तियां तैयार हैं जिनमें मालो-असबाब के लेन-देन का भी लाभ

मिलने की आशा है। अब यह तमाम जिम्मेदारी मालोअसबाब की तुम साहूकारों, सौदागरों, व्योपारियों की हिम्मत पर ही है कि खरीदो फरोख्त के लायक माल व्योपार का उनमें भरवाकर, व्योपारियों से जो कोटमथन, मुम्बई आदि के हैं लेन-देन हेतु रवाना करें। फकत.............

तुम्हारे इस मालोअसबाब को सुरक्षित अपनी-अपनी जगह पहुंचाने की जिम्मेदारी, उनकी संभाल, देख-रेख सब हुजूरवाला पर है। अब आशा है कि आप लोग अपने-अपने गुमाश्तों को ताकीद कर दें कि किश्तियों को मालो-असबाब से जो व्योपार के लायक हों, भरवा दें ताकि उधर के व्योपारी लेन-देन कर सकें। किश्तियां भरवाने के बाद हुजूर को सूचना दें ताकि सिपाहियों को नियुक्त कर पूरी सावधानी देख-रेख से तुम्हारा मालो-असबाब अपनी-अपनी मंजिल पर सुरक्षित पहुंचा दें। फकत...............

और जो भी सौदागर इस बात पर तैयार होकर हिम्मत करके अपना मालोअसबाब किश्तियों में भरवाकर उधर के व्योपारियों के लिए रवाना करेगा, हुजूर और सम्मानित सरकारवाला से अपने समय के व्योपारियों में बहुत ही सम्मानित तथा आदरणीय होगा। फकत............

दिनांक 22, सन् 1834 ईस्वी।

∞ ∞ ∞

संग्रह के एक अन्य परवाने से ज्ञात होता है कि मिर्जामल ने लुधियाना से माल की एक बड़ी किश्ती भरकर अपने गुमाश्ते हलासीराम के साथ शाह बंदर की ओर रवाना की। किश्ती का प्रधान अधिकारी कादरबख्श था। इस परवाने पर पॉलिटिकल एजेंट कप्तान क्लॉड मार्टिन बेड, लाहौर दरबार के प्रतिनिधि किशनचंद एवं बहावलपुर दरबार के प्रतिनिधि हमीयतराय के हस्ताक्षर एवं मोहरें हैं। तीनों राज्यों का महसूल एक मुश्त लिए जाने की सूचना भी इस परवाने में अंकित है। इस परवाने का हिन्दी अनुवाद इस प्रकार है-

हस्ताक्षर एवं मोहर

सब इलाकेदार लोग, थानेदार और रक्षक लोग जो दरया सिन्ध और सतलज के किनारे के मुल्कों- लुधियाना से लगायत शाहबंदर तक वाले जानें कि इस समय एक मंजिल किश्ती जिसके ऊपर कादरबख्श नाम का मल्लाह नियुक्त है, वह किश्ती मिर्जामल सेठ साहू के व्योपार के मालो-असबाब से, उसके गुमाश्ते हुलासीराम के नाम से मुकाम लुधियाने से ले जा रहा है। और उन नियमों पर सरकार वाला की सरकार से तय है- लाहौर, बहावलपुर और सिंध के रईसों के अनुभव जो उन्हें रास्तों का है, उन्हीं के निश्चित आधार पर सिन्ध और सतलज के दरयाइ रास्तों की तजवीज की गई है। और वाकई करारदाद दी गई है। उसके अनुसार ही उक्त गुमाश्ते ने नियमानुसार उक्त लदी हुई

किश्ती का निम्नांकित महसूल सरकार के कारोबारियों से हुजूर की मार्फत सरकार दौलतमदार कम्पनी बहादुर से, सतलज और सिन्ध के दरयाई रास्तों के बंदोबस्त हेतु जो कस्बा लुधियाना से बराबर करने पर नियुक्त है, उन सब से अपनी-अपनी देख-रेख, बंदोबस्त की जिम्मेदारी लेकर इस परवाने के जरिए जिस पर मोहरें तथा हस्ताक्षर करके उधर के तमाम विश्वास पात्रों के पास भिजवाएं........

चाहिए के इस परवाने को देखने के बाद कोई रास्ते में महसूल लेने तथा राहदारी के सिवाय जो कि नियमानुसार लेना तय हो गया है, और किसी प्रकार का नहीं लें, न किसी प्रकार की रोकथाम करें बल्कि अपने-अपनी हदों में बिना किसी ढिलाई, सुस्ती के सुरक्षित पहुंचा दें। जिस जगह की रात्रि के समय इनकी सफीना ठहरे वहाँ का इलाकादार वहाँ तत्काल ही रक्षा के हेतु चौकी तथा पहरा नियुक्त कर दे और स्वयं भी चौकस रह कर चौकसी दरया आदि की करें। फकत............

अगर उक्त गुमाश्ता रास्ते में लेन-देन करे और उक्त माल को किसी जगह बेचे या लेन-देन करे तो जिस जगह लेन-देन हो, वहाँ उस इलाकेदार को चाहिए कि वहाँ के नियमानुसार महसूल ले। इन सब आदेशों को लाजमी समझकर लिखे अनुसार बराबर इनका पालन करे। फकत...........

तफसील................

और हर चौकी पर के नियुक्त हैं। परवाने के अनुसार उन्हें दिखला कर लेन-देन की जाय.............।

23 मई, सन् 1835 ई.

इस समय एक मंजिल किश्ती जो मिर्जामल सेठ साहू के मालो-असबाब से भरी हुई है, लुधियाने से कोटमथन रवाना हुई है। लाजिम है कि थानेदारों, रक्षकों और सब घाट वालों में से हर एक सरकारवाला के आपसी सम्बन्ध और मित्रता के बन्धनों के पालनार्थ तथा इस परवाने के अनुसार किसी भी प्रकार से उनकी बजा आवरी में कोताही, कमी और सुस्ती न आने पाये। लिखे अनुसार बराबर पालन किया जाए। किश्ती का महसूल कानूनन लुधियाने में ही एक मुश्त ले लिया गया है। दिनांक 14 माह जेठ सं. 1892

मोहर किशनचंद

मोहर और यह हस्ताक्षर-बन्दा दरगाह किशनचंद वकील हुजूर अकदस आला श्री महाराजा साहब महाराजाधिराज रणजीतसिंह बहादुर दाम इकबालहू-हाजिर बाश साहबवाला साहब कप्तान क्लॉड मार्टिन वेड साहब बहादुर पोलिटिकल एजेण्ट लुधियाना का। फकत...........

इस समय एक मंजिल किश्ती जो मिर्जामल सेठ साहू के मालो-असबाब से भरी हुई है, लुधियाने से कोट मथन रवाना हुई है। हर एक थानेदार, मार्ग रक्षक और सब घाटवाले सरकारवाला की आपसी दोस्ती और आपसी मित्रता के पालनार्थ दोनों सरकारों के बीच में निश्चित हुए हैं ओर जिनके आधार पर यह परवाना जारी हुआ है, जिसके लिखे अनुसार बराबर नियमों का पालन किया जाए। किसी प्रकार की ढिलाई, कमी नहीं आने पाए। किश्ती का महसूल कानूनन लुधियाने में ही एक मुश्त ले लिया गया है। फकत...........

लेख........... दिनांक 28 मुहर्रम, सन् 1251 हि.

मोहर हमीयतराय

मोहर और हस्ताक्षर-बन्दा हमीयतराय, वकील सरकार आली हजरत खान साहब नासिर रुकनुद्दौला नुसरतजंग मुखलिसुद्दौला हाफिजुल मुल्क, मुहम्मद भावलखां साहब अब्बासी बहादुर दाम इकबालहू........... हाजिर बाश खिदमत में............ साहब वाला शान कप्तान क्लॉड मार्टिन साहब बहादुर पॉलिटिकल एजेन्ट लुधियाना। फकत.........
..

∞ ∞ ∞

इसी संदर्भ में दो अन्य परवाने भी इस संग्रह में उपलब्ध हैं। इसमें से एक पर 'मैक्सन ब्रिटिश एजेण्ट फॉर दी नेवीगेशन ऑफ दि इण्डस' के हस्ताक्षर हैं एवं दूसरे पर हेनरी............ की मोहर एवं हस्ताक्षर हैं। दोनों परवानों के मुख्य पाठ एक जैसे हैं जो फारसी में लिखे गए हैं। इनमें एक परवाने का पाठ इस प्रकार है-

परवाना हस्ताक्षर कप्तान मेक्सन साहब बहादुर ब्रिटिश एजेण्ट, दरया ए सिन्ध और सतलज वाला। इस मजमून का कि...........

आलि, कारकुन, चौकीदार और सब हिफाजत रक्षा करने वाले लोग कोट मथन से लगायत जो ताअल्लुका दरया-ए-शीरीं के रास्ते से दरया-ए शैर के बन्दरगाहों तक जो अलग-अलग मुमालिक सिन्ध के हैं, उनको मालूम होना चाहिए कि इस समय जहाज, बनाम पीरबख्श, जिस पर 31 इकतीस पैमाने खरबार भरे हुए हैं और जिसका नाखुदा कादरबख्श्या के नाम वाला है, वह मुकाम लुधियाने से शिकारपुर की तरफ हुलासीराम किराये पर ले जा रहा है। रास्ते में मोहरी (कर) आदि लेने में किसी प्रकार की रोकथाम न करें, चूंकि मुबालिग रकम मोहरी उनसे करादाद नियमानुसार जहाँ-जहाँ अदा कर दी जाएगी। अगर किराया करने वाला व्यक्ति रास्ते में कहीं जहाज से पसंद का सामान उतारे या बेचे-खरीदे और तिजारत कर फायदा उठावे तो उसे छूट है कि वह ऐसा बिना किसी रुकावट के कर सकता है। हां उसे महसूल आदि नियमानुसार चुकाना होगा। इस लिखित परवाने के अनुसार नियमों का पालन किया जाए।

दिनांक अगस्त 1835 ई. संवत-मुताबिक

हस्ताक्षर अंग्रेजी में

इसी प्रकार इस संग्रह में अनेक महत्वपूर्ण परवाने सुरक्षित हैं जिनसे उन्नीसवीं सदी के पूवार्द्ध में व्यापारिक गतिविधियों की जानकारी मिलती है। महाराजा रणजीतसिंह के साथ-साथ नाभा, पटियाला, जींद, नाहन (सिरमौर), जयपुर, बीकानेर, नागपुर आदि राजाओं, नवाबों एवं ब्रिटिश अधिकारियों के अनेक परवानों की मूल प्रतियां उपलबध हैं। इन परवानों पर ईस्ट इण्डिया कम्पनी की ओर से सर चार्ल्स थियोफिल्स मेटकाफ, सर डेविड ऑक्टरलोनी, जार्ज रसल क्लार्क, एडवर्ड कोलब्रुक, क्लॉड मार्टिन बेड, एच. एम. लॉरेंस, फ्रांसिस विल्डर, ट्रेवेलियन, हेनरी मिडलटन, एफ. मैक्सन आदि वरिष्ठ पॉलिटिकल अधिकारियों के हस्ताक्षर उपलब्ध हैं।

पोतेदार संग्रह के बाद की तिथियों के दस्तावेजों को देखकर सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है कि पोतेदार सेठों का व्यापार उत्तर में काश्मीर से लेकर दक्षिण में मालवा तक एवं पूर्व में कलकत्ता से लेकर पश्चिम में मुल्तान तक फैल गया था। बम्बई स्थित उनकी फर्म जिंदाराम-मिर्जामल से इंग्लैण्ड को काश्मीरी शॉल, रेशम, जूट, कॉफी, चीनी, हाथीदांत, रुई, कछुए की खाल की ढालें, टिन, मसाले, बबूल का गोंद, दालचीनी, कालीमिर्च, तेजपत्ता, जायफल, सौंठ, दवाइयां, कपूर, सनाय, इलायची, हींग, गोंद, लोयबान आदि वस्तुओं का निर्यात करती थी। देशी रियासतों एवं ब्रिटिश शासित क्षेत्र अजमेर में निवास करने वाले अन्य अग्रवाल सेठों को भी अंग्रेजों की नीतियों के कारण व्यापार-व्यवसाय में बहुत लाभ हुआ था। पोतेदार संग्रह के दस्तावेजों से उस काल में विभिन्न वस्तुओं की मांग एवं आपूर्ति की स्थिति का भी ज्ञान होता है।



अध्याय – 20

राजस्थान राज्य अपराध अभिलेख ब्यूरो

राजस्थान राज्य अपराध अभिलेख ब्यूरो की स्थापना 2 फरवरी 1980 को 'पुलिस कम्प्यूटर केन्द्र' के रूप में हुई। इस संस्था में विश्व का आधुनिकतम कम्प्यूटर स्थापित किया गया था ताकि राज्य के अपराध-अभिलेखों को सुरक्षित रखा जा सके। वर्ष 1986 में इसका नाम बदलकर 'राज्य अपराध अभिलेख ब्यूरो' कर दिया गया। अपराधों का विवरण रखने के लिए इस संस्था में नेशनल क्राइम रिकॉर्ड ब्यूरो द्वारा सुझाए गए आधुनिकतम एकीकृत प्रपत्र लागू किए गए, ताकि राज्य अपराध ब्यूरो का डाटा पूरे देश में लागू एकीकृत प्रणाली से समानता रख सके। इस प्रणाली को अपनाने से अंतरराष्ट्रीय एवं राष्ट्रीय स्तर पर किसी भी राज्य की पुलिस अथवा अन्य अपराध शोध संस्था द्वारा, राज्य में हुए अपराधों अथवा राज्य से सम्बन्धित अपराधियों का विवरण मांगने पर तत्काल उसी प्रारूप में उपलब्ध कराना संभव हो गया, जिस प्रारूप में विश्व भर की अपराध अन्वेषण संस्थाएं डाटा रखती हैं।

राज्य अपराध ब्यूरो में चार प्रमुख शाखाएं हैं-

(1.) कम्प्यूटर अनुभाग,

(2.) डाटा संकलन अनुभाग,

(3.) फिंगर प्रिंट अनुभाग,

(4.) कार्य प्रणाली अनुभाग।

कम्प्यूटर अनुभाग, राज्य अपराध ब्यूरो की महत्वपूर्ण शाखा है। इस शाखा के मुख्य कार्यों में बदलते हुए समय के अनुसार नए सॉफ्टवेयर सिस्टम तथा प्रोग्राम तैयार करना, उन्हें राज्य में लागू करना, पुराने डाटा को समय-समय पर अपडेट करना, चाही गई सूचना को तीव्र गति से कम्प्यूटर से प्राप्त करके सम्बन्धित संस्था को उपलब्ध कराना आदि सम्मिलित हैं। कम्प्यूटर में अपराध, अपराधियों और उनकी कार्य प्रणाली, गिरफ्तारी, वांछित गुमशुदा, भगोड़े, अपहरण, अज्ञात शव, चोरी गए सामान, जब्त सामान, बरामद वाहन, जब्त वाहन, हथियार आदि की सूचनाएं एवं अपराधियों के फिंगर प्रिण्ट रखे जाते हैं।

क्राइम-क्रिमिनल सूचना प्रणाली के द्वारा अपराध एवं अपराधियों की कार्य प्रणाली से सम्बन्धित डाटा रखा जाता है। इस अभिलेखागार में कई लाख अपराधियों की

सूचनाएं उपलब्ध हैं। प्रोपर्टी रिकवरी सिस्टम के द्वारा प्राप्त गुमशुदा वाहन, हथियार, आदि का डाटा रखा जाता है एवं विभिन्न स्रोतों से प्राप्त सूचनाओं से मिलान करके उन्हें सम्बन्धित पुलिस थाने को उपलब्ध कराया जाता है। तलाश प्रणाली के अंतर्गत वांछित एवं गिरफ्तार अपराधियों के साथ-साथ भगोड़े, गुमशुदा, अपहृत, अज्ञात शव आदि का विवरण रखा जाता है। कम्प्यूटर के 40 डिजिट सिस्टम में फिंगर-प्रिंट का कोडिफाइड डाटा फीड किया जाता है जिससे फिंगर-प्रिंट सम्बन्धी इन्क्वायरी का तत्काल जवाब दिया जा सकता है। एकीकृत इनपुट डाटा एण्ट्री में पुराने रिकॉर्ड को भी आधुनिक प्रारूप में जमाया गया है तथा उन्हें ब्यूरो में उपलब्ध क्राइम-क्रिमिनल की मास्टर फाइलों में अपडेट करवाया गया है।

इस प्रकार राजस्थान पुलिस विभाग का यह अभिलेखागार संसार भर में अनूठा है। आने वाली शताब्दियों में इस अभिलेख का उपयोग, राज्य के इतिहास को नए सिरे से लिखने में हो सकेगा।



संदर्भ सूची

शोधपत्र

- अग्रवाल, गोविंद : आधुनिक राजस्थान के आर्थिक इतिहास का नवीन स्रोत : एक निजी अज्ञात संग्रह, राजस्थान हिस्ट्री कांग्रेस प्रोसीडिंग्स, कोटा सत्र, 1976.
- अग्रवाल, गोविंद : अजमेर सम्बन्धी कुछ नवीन साक्ष्य, राजस्थान हिस्ट्री कांग्रेस प्रोसीडिंग्स, चौपासनी (जोधपुर) 1979.
- अग्रवाल, गोविंद : पोतेदार संग्रह से उन्नीसवीं सदी के व्यापार सम्बन्धी कुछ महत्वपूर्ण साक्ष्य, राजस्थान हिस्ट्री कांग्रेस प्रोसीडिंग्स, जयपुर, 1979.
- ओझा, जे .के. (डॉ.) : 19वीं शताब्दी की आर्थिक जानकारियों का स्रोत कानोड़–ठिकाना की पट्टाबही, राजस्थान हिस्ट्री कांग्रेस प्रोसीडिंग्स, उदयपुर सत्र, 2005.
- खन्दूड़ी, आर. सी. (डॉ.) एवं मीणा, गोविंद सिंह : राजस्थान में गेरूवर्णी मृदभाण्ड संस्कृति – एक अध्ययन, राजस्थान हिस्ट्री कांग्रेस प्रोसीडिंग्स, जोधपुर, 2009.
- गुप्ता, के. एस. (डॉ.) : 1857 की क्रांति सम्बन्धित बनेड़ा संग्रहालय, राजस्थान हिस्ट्री कांग्रेस प्रोसीडिंग्स, ब्यावर सत्र, 1973.
- परमार, ब्रजमोहन सिंह : राजस्थान के संग्रहालयों में जहांगीर के राशिबोधक सिक्के, राजस्थान हिस्ट्री कांग्रेस प्रोसीडिंग्स, अजमेर सत्र, 1972.
- भाटी, विक्रम सिंह (डॉ.) : कतिपय अलभ्य दस्तावेज (जोधपुर के संदर्भ में), राजस्थान हिस्ट्री कांग्रेस प्रोसीडिंग्स, जोधपुर 2009.
- महोबिया, कुमकुम : भैय्या संग्रह का ऐतिहासिक महत्व, राजस्थान हिस्ट्री कांग्रेस प्रोसीडिंग्स, पाली सत्र, 1975.
- माथुर, घनश्यामलाल : पंचोली अमलचंद सम्बन्धी 18वी शताब्दी के कुछ निजी प्रलेख, राजस्थान हिस्ट्री कांग्रेस प्रोसीडिंग्स, ब्यावर सत्र, 1973.
- माथुर, घनश्यामलाल : बंशीलाल कानूनगो संग्रह में सन् 1857 की गतिविधियां, राजस्थान हिस्ट्री कांग्रेस प्रोसीडिंग्स, अजमेर सत्र, 1975.
- माथुर, दुर्गालाल : राजस्थान के इतिहास निर्माण में जैन ग्रन्थ संग्रहालयों का महत्व, राजस्थान हिस्ट्री कांग्रेस प्रोसीडिंग्स, जयपुर सत्र, 1968.
- रस्तोगी, साधना (डॉ.) : जोधपुर के राजा मानसिंह से सम्बन्धित कतिपय पत्र, राजस्थान हिस्ट्री कांग्रेस प्रोसीडिंग्स, जयपुर, सत्र 1979.
- राठौड़, मोहब्बतसिंह (डॉ.) : ठिकाना कोशीथल (मेवाड़) के दस्तावेजों का ऐतिहासिक

महत्व, राजस्थान हिस्ट्री कांग्रेस प्रोसीडिंग्स, चौपासनी सत्र, 2001.

- व्यास, श्यामप्रसाद (डॉ.) : जोधपुर के बालकृष्णलाल की हवेली के अप्रकाशित ताम्रपत्र, राजस्थान हिस्ट्री कांग्रेस प्रोसीडिंग्स, उदयपुर सत्र, 2005.
- शर्मा, गिरजाशंकर : बहियात हिसाब दफ्तर–बीकानेर, राजस्थान हिस्ट्री कांग्रेस प्रोसीडिंग्स, ब्यावर सत्र, 1973.
- शर्मा, वसुमती (डॉ.) : प्राच्य विद्या संस्थानों में विभिन्न विषयक पोथी चित्र, राजस्थान हिस्ट्री कांग्रेस प्रोसीडिंग्स, चौपासनी सत्र, 2001.
- शर्मा, वसुमती (डॉ.) एवं सांखला, कमल किशोर (डॉ.)(ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में आयुर्वेद चिकित्सा पद्धति : अश्व एवं गजायुर्वेद के विशेष संदर्भ में, राजस्थान हिस्ट्री कांग्रेस प्रोसीडिंग्स, जोधपुर 2009.
- सक्सेना, हरीश मोहन : उनियारा के पुरालेखों का ऐतिहासिक महत्व, राजस्थान हिस्ट्री कांग्रेस प्रोसीडिंग्स, चौपासनी (जोधपुर) 1979.

साक्षात्कार

- डॉ. मोहब्बत सिंह राठौड़, निदेशक, प्रताप शोध प्रतिष्ठान, उदयपुर।
- डॉ. कृष्ण पाल सिंह, प्रोफेसर, जनार्दनराय नागर विद्यापीठ विश्वविद्यालय उदयपुर।
- डॉ. मयंक गुप्ता : डिप्टी सेक्रेटरी (डवलपमेंट), महाराणा ऑफ मेवाड़ चेरिटेबल फाउण्डेशन, उदयपुर।
- डॉ. महेन्द्र खड़गावत : निदेशक, राजस्थान अभिलेखागार, बीकानेर।
- श्री शिशिर चतुर्वेदी : अतिरिक्त निदेशक, ऑफिसर्स ट्रेनिंग स्कूल, राजस्थान सरकार, बीकानेर।
- श्री वीरेन्द्र कविया : उपनिदेशक, राजस्थान पुरातत्व एवं संग्रहालय विभाग, कोटा।
- डॉ. विनीत गोधल : राजस्थान पुरातत्व एवं संग्रहालय विभाग, उदयपुर।
- श्री शरद केवलिया : सहायक जनसम्पर्क अधिकारी, बीकानेर।
- श्री प्रद्युम्न शर्मा : वरिष्ठ पत्रकार, झालावाड़।

फोल्डर/लीफलेट/बुकलेट

- संरक्षित स्मारक, राजस्थान पुरातत्व एवं संग्रहालय विभाग, उदयपुर वृत्त, वर्ष 1975, मूल्य 50.00
- श्री बांगड़ राजकीय संग्रहालय, पाली, पुरातत्व एवं संग्रहालय विभाग, राजस्थान, जयपुर।
- पुरातत्व एवं संग्रहालय विभाग, जयपुर, राजकीय संग्रहालय झालावाड़।
- राजकीय संग्रहालय आबू पर्वत, पुरातत्व एवं संग्रहालय विभाग, राजस्थान, जयपुर।
- राजकीय संग्रहालय आहड़–उदयपुर, पुरातत्व एवं संग्रहालय विभाग, राजस्थान, जयपुर।
- राजकीय संग्रहालय उदयपुर, पुरातत्व एवं संग्रहालय विभाग, राजस्थान, जयपुर।
- श्री बांगड़ राजकीय संग्रहालय, पाली, पुरातत्व एवं संग्रहालय विभाग, राजस्थान, जयपुर।
- राजमाता देवेन्द्र कुंवर राजकीय संग्रहालय, डूंगरपुर, पुरातत्व एवं संग्रहालय विभाग, राजस्थान, जयपुर।

- सरदार राजकीय संग्रहालय जोधपुर, पुरातत्व एवं संग्रहालय विभाग, राजस्थान, जयपुर।
- पंकज शर्मा, क्यूरेटर (संकलन), सिटी पैलेस, जयपुर एक परिचय, महाराजा सवाई मानसिंह द्वितीय संग्रहालय ट्रस्ट, सिटी पैलेस, जयपुर।
- Rajmata Devendra Kunwar Government Museum, Dungarpur, Department of Archaeology and Museum, Government Of Rajasthan, Jaipur.
- Government Museum, Ahar-Udaipur, Department of Archaeology and Museum, Government Of Rajasthan, Jaipur.
- Bharatpur Museum, Department of Art, Literature & Culture, Government Of Rajasthan, Jaipur, Rs. 250.00, Year 2008.
- Government Museum, Jhalawar, Archeology & Museum department, Jaipur.
- Nand Lal Alawada (Ed.), Jhalawar & Jhalarapatan City, not for sale, 2012
- Virendra Kavia The Government Museum Mandore, Archeology & Museum department, Rajasthan, Jaipur

पत्र/पत्रिकाएं

- राजस्थान सुजस, सूचना एवं जनसम्पर्क विभाग, राजस्थान सरकार, जयपुर।
- मज्झमिका, राजस्थान के ठिकानों एवं घरानों की पुरालेखीय सामग्री, प्रताप शोध प्रतिष्ठान, भूपाल नोबल्स संस्थान, उदयपुर।
- वैचारिकी, द्वैमासिक शोध पत्रिका, भारतीय विद्या मंदिर, कोलकाता।
- परम्परा, चौपासनी शोध संस्थान, जोधपुर।

प्रकाशित हिन्दी ग्रंथ

- आशुतोष गुप्त (प्रधान सम्पादक), डॉ. अमरसिंह राठौड़ (सम्पादक) : राजस्थान सुजस संचय, सूचना एवं जनसम्पर्क निदेशालय, राजस्थान, जयपुर, वर्ष 1998, मूल्य 300.00
- प्रो. के. एस. गुप्त : आर्थिक एवं सांस्कृतिक इतिहास के कतिपय पहलू बनेड़ा दस्तावेज (1759-1777), प्रताप शोध प्रतिष्ठान, भूपाल नोबल्स संस्थान, उदयपुर, मूल्य 15.00
- डॉ. जमनेश कुमार ओझा (सम्पादक) : कानोड़ ठिकाने के अभिलेख (18वीं शताब्दी), प्रताप शोध प्रतिष्ठान, भूपाल नोबल्स संस्थान, उदयपुर, मूल्य 15.00
- डॉ. मोहनलाल गुप्ता :
- जयपुर संभाग का जिलेवार सांस्कृतिक एवं ऐतिहासिक अध्ययन, राजस्थानी ग्रंथागार जोधपुर, चतुर्थ संस्करण 2015, मूल्य 400.00
- जोधपुर संभाग का जिलेवार सांस्कृतिक एवं ऐतिहासिक अध्ययन, राजस्थानी ग्रंथागार जोधपुर, सप्तम् संस्करण 2017, मूल्य 600.00
- उदयपुर संभाग का जिलेवार सांस्कृतिक एवं ऐतिहासिक अध्ययन, राजस्थानी ग्रंथागार जोधपुर, छठा संस्करण 2016, मूल्य 400.00
- बीकानेर संभाग का जिलेवार सांस्कृतिक एवं ऐतिहासिक अध्ययन, राजस्थानी ग्रंथागार जोधपुर, तृतीय संस्करण 2011, मूल्य 250.00

- कोटा संभाग का जिलेवार सांस्कृतिक एवं ऐतिहासिक अध्ययन, राजस्थानी ग्रंथागार जोधपुर, चतुर्थ संस्करण 2017, मूल्य 400.00
- अजमेर संभाग का जिलेवार सांस्कृतिक एवं ऐतिहासिक अध्ययन, राजस्थानी ग्रंथागार जोधपुर, तृतीय संस्करण 2011, मूल्य 400.00
- भरतपुर संभाग का जिलेवार सांस्कृतिक एवं ऐतिहासिक अध्ययन, राजस्थानी ग्रंथागार जोधपुर, तृतीय संस्करण 2011, मूल्य 250.00
- राजस्थान के ऐतिहासिक दुर्ग, राजस्थानी ग्रंथागार, जोधपुर, प्रथम संस्करण 2017, मूल्य 600.00
- राजस्थान ज्ञानकोश, राजस्थानी ग्रंथागार, जोधपुर, तेरहवां संस्करण 2016, मूल्य 900.00
- विजय कुमार वशिष्ठ : राजस्थान के अभिलेखागारीय एवं निजी स्रोत, राजस्थान अध्ययन केन्द्र जयपुर, वर्ष 2014.
- डॉ. हुकुमसिंह भाटी : मेवाड़ ठिकानों के अभिलेख, बनेड़ा, भींडर, सरदारगढ़, गोगुंदा, कानोड़, प्रताप शोध प्रतिष्ठान, भूपाल नोबल्स संस्थान, उदयपुर, प्रथम संस्करण 1964, मूल्य 180.00
- Published English Books
- Chandra Mani Singh (Ed.), Treasures Of The Albert Jall Museum Jaipur, Department of Archaeology and Museums, Rs. 1295.
- Chandra Mani Singh (Ed.), Museums Of Rajasthan, Jawahar Kala Kendra, Jaipur, Year 2009.
- Sharma, V.N.; Jantar Mantar, Department of Art, Literature & Culture, Government Of Rajasthan, Jaipur, Rs. 200.00, Year 2008.
- Abdul Lateef Usta, Arabic Persian Research Institute, Tonk, Department of Art, Literature & Culture, Government Of Rajasthan, Jaipur, Rs. 200.00, Year 2008.
- P. L. Chakravarti and Dharmendra Kanwar, Alwar Museum, Department of Art, Literature & Culture, Government Of Rajasthan, Jaipur, Rs. 250.00, Year 2008.
- Chandra Mani Singh and Sumahendra, Alwar Museum, Department of Art, Literature & Culture, Government Of Rajasthan, Jaipur, Rs. 250.00, Year 2008.



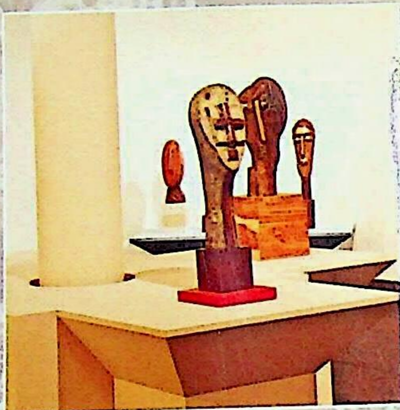
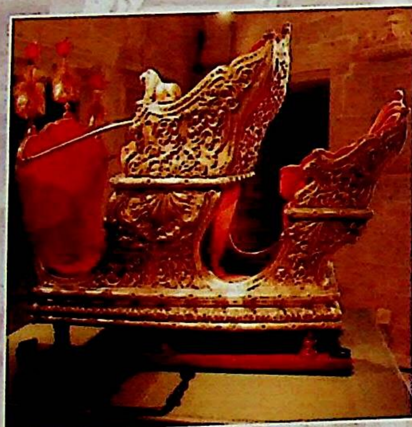
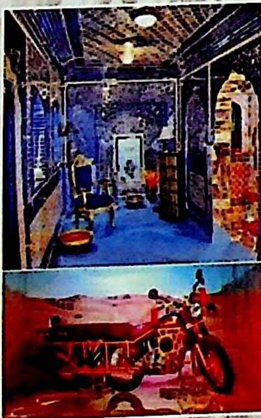
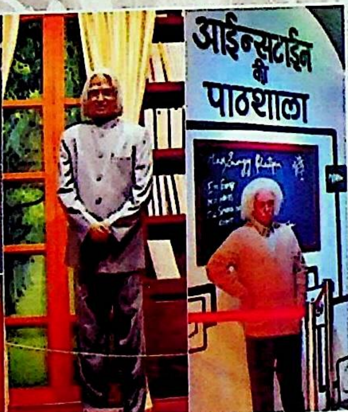
डॉ. मोहनलाल गुप्ता

आधुनिक समय के जाने-माने लेखक डॉ. मोहनला गुप्ता ने देश भर के युवाओं के लिये विश्वविद्यालय पाठ्यक्रमों पर आधारित ग्रंथों से लेकर विभिन्न प्रतियो परीक्षाओं के लिये तथा विविध विषयों पर लगभग सा दर्जन पुस्तकें लिखी हैं, जो विगत दो दशकों से पूरे देश युवाओं में चर्चित हैं। इन पुस्तकों के कई-कई संस्कर प्रकाशित होना इन पुस्तकों की लोकप्रियता के बारे बताता है।

प्राचीन भारत का इतिहास, मध्यकालीन भारत इतिहास, आधुनिक भारत का इतिहास, हल्दीघाटी औ महाराणा प्रताप, राष्ट्रीय राजनीति में मेवाड़ का योगदा ब्रिटिश शासन में राजपूताने की रोचक एवं ऐतिहासि घटनाएँ, राजशाही का अंत, सात खण्डों में प्रकाशि राजस्थान का सम्भागवार और जिलेवार ऐतिहासिक ए सांस्कृतिक अध्ययन, राजस्थान की पर्यावरणीय संस्कृ राजस्थान ज्ञानकोश, जनगणना 2011 एवं उसके संद राजस्थान में वन एवं वन्य जीवन, जालोर का राजनीति एवं सांस्कृतिक इतिहास, नागौर का राजनीतिक ए सांस्कृतिक इतिहास, अजमेर का वृहत् इतिहास सहि दर्जनों पुस्तकों ने प्रतियोगी परीक्षाओं के लिये युवाओं उच्च कोटि की पठनीय सामग्री उपलब्ध कराई है।

डॉ. गुप्ता के ऐतिहासिक उपन्यासों ने देश-विदेश अपनी अलग पहचान बनाई है। राजस्थान हिस्ट्री डॉ कॉम, अमेजन बुक्स और गूगल बुक्स स्टोर पर डॉ. गु की पुस्तकें ई-बुक्स के माध्यम से विश्व भर के देशों पढ़ी और खरीदी जा रही हैं।

www.rajasthanhistory.com
mlguptapro@gmail.com





www.rgbooks.net



डॉ. मोहनलाल गुप्ता